कुछ कहना चाहते थे, वह सब अुन्हींके शब्दोंमें दिया गया है। अिसमें विद्यार्थी-जीवनके हर पहलूको छुआ गया है। परन्तु गांधीजीने सबसे ज्यादा जोर धर्म, चारित्र्य और सेवा पर दिया है। देशके विद्यार्थी-गण गांधीजीके अिस अमर संदेशका गहरा अध्ययन करके अुस पर हृदयसे अमल करेंगे, तो अुनका और अुनके साथ सारे राष्ट्रका जीवन अुन्नत बनेगा।

की० २–०–०   डाकखर्च ०–१४–०

शिक्षाका माध्यम

लेखक : गांधीजी

भारतमें शिक्षाके माध्यमका प्रश्न अभी तक संतोषप्रद ढंगसे हल नहीं हो सका है। अिस विषयमें पुस्तिकामें दिये गये गांधीजीके अिन विचारोंसे हमें सबक लेना चाहिये कि शिक्षा जब तक बालककी मातृभाषाके माध्यम द्वारा नहीं दी जाती, तब तक वह बालककी शक्तियोंका पूरा विकास करनेका और अुसे समाजके जीवनमें पूरी तरह सहयोग देने लायक बनानेका अपना हेतु भलीभांति सिद्ध नहीं कर सकती।

शिक्षाकी समस्या

गांधीजी

अनुवादक

रामनारायण चौधरी

तमसो मा ज्योतिर्गमय।

प्रकाशकका निवेदन

अिस पुस्तककी पहली आवृत्ति सन् १९५४ में प्रकाशित हुअी थी। ब पुस्तककी माग होनेसे अुसका पुनर्मुद्रण हो रहा है। पहली आवृत्तिके रिशिष्ट १, २ और ३ में जो लेख छपे थे, अुन्हें अिस आवृत्तिके हले, दूसरे और तीसरे भागमें यथास्थान जोड दिया गया है। अिस तरह ह पुस्तक अब पूर्ण व्यवस्थित रूप लेती है।

आज तक हम गांधीजीके शिक्षा-विषयक विचारोंसे सम्बन्ध रखने-ाली पांच पुस्तकें प्रकाशित कर चुके हैं। अुनके नाम अिस प्रकार हैं : . नअी तालीमकी ओर, २. बुनियादी शिक्षा, ३. शिक्षाका माध्यम, . शिक्षाकी समस्या और ५. सच्ची शिक्षा। 'विद्यार्थियोंसे' नामक ुस्तक भी अिसी विषयसे सम्बन्ध रखती है। गांधीजीके शिक्षा-सम्बन्धी वेचारोंको पूरी तरह समझनेके लिअे जिज्ञासु पाठकों और शिक्षामें रस लेनेवालोंको ये सभी पुस्तकें देख जाना चाहिये।

स्वतंत्र भारतमें हमें शिक्षाके क्षेत्रमें जिन समस्याओंका सामना आज करना पड़ रहा है, अुन्हें हल करनेके लिअे अिन पुस्तकोंसे सही मार्गदर्शन मिल सकता है। गांधीजीके अिन विचारों पर गहरा विचार करके यदि हम अुन पर अमल करनेका साहस दिखायें, तो शिक्षाके सारे प्रश्न हल हो सकते हैं और देशका कायापलट हो सकता है।

२०-४-'५८

पाठकोंसे

[गांधीजीने अपने प्रत्येक लेखका अध्ययन करनेवालोंको जो चेतावनी दे रखी है, अुसे अिस पुस्तकके अभ्यासियों तथा जिज्ञासुओंके सामने रखनेकी हम अिजाजत चाहते हैं।]

मेरे लेखोंका परिश्रमपूर्वक अध्ययन करनेवालों तथा अुनमें रस लेनेवालोंसे मैं कहना चाहता हूं कि मुझे सदा अेकरूप ही दिखनेकी बिलकुल परवाह नहीं है। सत्यकी अपनी खोजमें मैंने अनेक विचारोंका त्याग किया है और अनेक नयी वस्तुअें मैं सीखा हूं। आयुमें भले मैं वृद्ध हो गया होअूं, परन्तु मुझे अैसा नहीं लगता कि मेरा आन्तरिक विकास रुक गया है या अिस देहके छूटनेके बाद मेरा विकास रुक जायगा। मुझे अेक ही बातकी परवाह है; और वह है प्रतिक्षण सत्यनारायणकी वाणीका अनुसरण करनेकी मेरी तत्परता। अिसलिअे किसीको मेरे दो लेखोंमें विरोध जैसा मालूम हो, तब यदि अुसे मेरी बुद्धिमत्तामें श्रद्धा हो, तो अेक ही विषय पर लिखे गये दो लेखोंमें से बादके लेखको वह प्रमाणभूत माने।

हरिजनबंधु, ३०-४-'३३

जीवनभरके प्रयोगोंका निचोड़

वर्धाकी शिक्षा-परिषद्के अन्तमें जब हमारी कमेटी बैठी, तब गांधीजीने कहा कि, "मैंने आज तक हिन्दुस्तानको जो बहुतसी चीजें दी हैं, अुन सबमें शिक्षाकी यह योजना और पद्धति सबसे बड़ी चीज है, और मैं नहीं मानता कि जिससे ज्यादा अच्छी कोअी चीज मैं देशको दे सकूंगा।"

वर्धाकी योजनाको मुहूर्त अच्छा मिल गया था। सरकारी शिक्षासे सभी अूब गये थे। विदेशी सरकारको खुद अपनी शिक्षा-पद्धतिके बारेमें अुत्साह, आशा या विश्वास नहीं था। जितनेमें कांग्रेसने प्रान्तीय शासन चलानेकी जिम्मेदारी अपने सिर ली। हमारे शिक्षामंत्री दिशादर्शनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। जिसी वक्त गांधीजीने तीन चार स्पष्ट और निश्चित प्रस्तावोंके रूपमें अपने विचार पेश किये। राष्ट्रीय शिक्षामें दिलचस्पी रखनेवाले सौ सवा सौ छोटे-बड़े लोगोंने वर्धामें बैठकर अुन पर विचार किया। देशमें अुनकी बहुत चर्चा हुअी। हरिपुराकी कांग्रेसने गांधीजीकी योजनाके मुख्य तत्त्व स्वीकार कर लिये। कांग्रेसी प्रान्तोंकी सरकारोंने जिस योजनाको अमलमें लानेका काम हाथमें लिया। जितनेमें अुसमें कुछ अैसी मन्दता आ गअी, मानो काम रुक ही गया हो। जिस समयका लाभ अुठाकर नवजीवन प्रकाशन मन्दिरने गांधीजीके शिक्षा-सम्बन्धी विचारोंको दो भागोंमें प्रकाशित किया है।

'सच्ची शिक्षा' और 'शिक्षाकी समस्या' जिन दो पुस्तकोंमें गांधीजीके शिक्षा-संबंधी सारे लेख और अधिकतर विचार आ जाते हैं। शिक्षाशास्त्रियोंको और देशका भला चाहनेवालोंको जिन लेखोंका गहरा अध्ययन करना चाहिये, क्योंकि हमारी संस्कृतिकी सम्पूर्ण परम्परा और भविष्यकी दिशा दोनोंका जिन्होंने अधिकसे अधिक स्पष्ट दर्शन किया है, अैसे हमारे राष्ट्रपिताके वर्तमान समयका मार्गदर्शन करनेवाले विचारोंका जिनमें संग्रह किया गया है। शिक्षाशास्त्री और देशके नेता जिसका विचार करें या न करें, लेकिन जनताको और जनताके साथ ओतप्रोत हो कर अुसकी सेवा करनेवाले नम्र सेवकोंको जिन दो पुस्तकोंका शुरूसे आखिर

तक गहरा अध्ययन करना चाहिये। चूंकि गांधीजीने जो कुछ लिखा है और कहा है, वह सब अैसे लोगोंको ही ध्यानमें रखकर लिखा और कहा है, अिसलिअे अुनकी सादी और सीधी भाषा और विश्वव्यापी होने पर भी अुनकी घरेलू दृष्टि आम लोगोंके लिअे ज्यादा आकर्षक और पोषक है।

क्या शिक्षा भी गांधीजीका क्षेत्र है? कुछ छिछला विचार करनेवाले लोगोंके मनमें अकसर अैसी शंका अुठा करती है कि जिन गांधीजीको अपनी बचपनकी शिक्षा पूरी होते ही राजनीतिक मैदानमें अुतरना पड़ा और जिन्हें अुस कामसे किसी दिन सिर अुठाने तककी फुरसत नहीं मिली, वे क्या शिक्षाके बारेमें कोअी निश्चित बात कह सकेंगे? दूसरी तरफ जिन शिक्षाशास्त्रियोंका गांधीजीके साथ सम्पर्क बढ़ता जा रहा है, वे कहते हैं कि गांधीजी तो स्वयंभू शिक्षाशास्त्री हैं। दरअसल देखा जाय तो अुनकी सारी प्रवृत्तियां अुनकी शिक्षाकी पद्धतिके ही अलग-अलग पहलू हैं। वे सिर्फ बच्चों और जवानोंको ही शिक्षा नहीं देते; बल्कि अुन्होंने सारी जनताको, राष्ट्रको और महा-प्रजाओंको शिक्षा देनेका काम अपने सिर पर ले रखा है। गांधीजी मुख्यतः शिक्षाशास्त्री ही हैं। फर्क अितना ही है कि तथाकथित शिक्षाशास्त्रियोंका तरीका अधूरा होता है। गांधीजीने शिक्षाके सारे दर्शनको सम्पूर्ण बनाया है। तत्त्वचर्चाका रहस्य जाननेवाले लोग कहते हैं कि जो कोअी सचाअीकी खोजमें अपना सारा जीवन लगा देता है और पूरी तरह अहिंसाको मानता है, वह जरूर शिक्षाशास्त्री ही होना चाहिये। जिसका जबरदस्तीमें विश्वास नहीं, सत्यके दर्शन किये बिना जिसको सन्तोष नहीं होता, जिसका जीवन कर्ममय है और अिसीलिअे विचारमय है, अुसके लिअे शिक्षाके सिवा दूसरा कोअी मार्ग ही नहीं है।

१९०८में गांधीजीने 'हिन्द स्वराज्य' लिखा और अुसमें अपना सार्वभौम जीवन-दर्शन जनताके सामने पेश किया। जैसा कि श्री राजगोपाला-चार्यने अुस समय लिखा था, गांधीजीके साथ आप सहमत हों या न हों, आपको अितना तो मानना ही पड़ेगा कि जीवनके — समग्र जीवनके — सारे अंग-अंगोंका विचार करनेवाली और हरअेक सवालका अपने ढंगसे निश्चित हल बतानेवाली यह अेक सार्वभौम जीवन-दर्शन है। और यह

अेक अैसी सर्वांग-सुन्दर, सपूर्ण और अर्थपूर्ण अिमारत है, जिसकी अेक अीट या कंकरी भी आप कहीसे हिला या निकाल नही सकते।

'हिन्द स्वराज्य' को लिखे हुअे आज तीस साल हो गये। अिन तीस वर्षोंमें गाधीजीने जीवनको शुद्ध और समृद्ध बनानेवाले प्रयोग लगातार किये है। अुनका कार्यक्षेत्र जितना व्यापक होता जा रहा है, अुतना ही गहरा भी होता जा रहा है। अिस कारण अुनके सिद्धान्त पल पलमें शुद्ध सचाअीकी कसौटी पर — जीवन पर — कसे जा रहे है। और यह साबित होता जा रहा है कि वे सब सिद्धान्त सौ टच शुद्ध सोना है।

फिर भी जनताने अुनके सिद्धान्तों और विचारोको पूरी तरह ग्रहण नहीं किया। हिन्दुस्तानकी सस्कृति और हिन्दुस्तानकी अितिहास-परम्परा अितनी अनोखी है कि आजकलके लोग गाधीजीके विचारोंको और गांधीजीके रास्तेको छोड भी नही सकते और पूरी तरह ग्रहण भी नही कर सकते। हृदय तो अुसे मानना है, मगर जीवनकी अपूर्णता और साधनाकी कमी यह सब ग्रहण करते हिचकिचाती है।

'हिन्द स्वराज्य' में गाधीजीने जीवनकी सार्थकताकी जो तसवीर दी है, अुसीके अनुसार वहा शिक्षाका अपना आदर्श भी पेश किया है। मनुष्यसे यह तो कहा नहीं जाता कि हम अिस आदर्शको नही मानते, और मान लेनेके बाद अुसके अनुसार अपना जीवन बनानेकी तैयारी भी नहीं होती। मनुष्य-जाति अैसी दयनीय स्थितिमें है। गाधीजीमें सच्चे शिक्षककी करुणा भी है और जिसे प्रेमपूर्ण कठोरता कह सकते है वह दृढता भी है। अिसलिअे वे जनताकी सद्‌बुद्धि और मगल कामनासे पूरा लाभ अुठाकर अिस पुराने राष्ट्रको सजीव करनेकी और अुसे सच्ची शिक्षा देनेकी अपनी कोशिशें जारी ही रखते हैं। परेशानीमें पड़े हुअे अिस राष्ट्रका जितना भरोसा अपने अूपर है, अुससे ज्यादा भरोसा गाधीजीका अिस पर (राष्ट्र पर) है। समर्थ शिक्षाशास्त्रीका यही खास लक्षण है।

गाधीजी कल्पनावीर नही, बल्कि कर्मवीर हैं। यानी अखंड प्रयोग करके ही वे अपने विचारोंका विकास करते है। दुनियाके तमाम पैगम्बरोंकी तरह वे अेक अमर श्रद्धा लेकर अिस दुनियामें आये है और अिस श्रद्धाको मूर्त रूप देनेके लिअे वे निरंतर साधना करते रहते हैं। सच्चे शिक्षाशास्त्रीके

सामन यही काम होता है। जिसे आजकलके शिक्षाशास्त्री विद्यार्थियोंकी आजादी कहते हैं, आत्म-विकास कहते हैं, अुसीको गांधीजी सत्याग्रहकी खोज और अहिंसाकी साधनाका रूप देते हैं।

शिक्षाकार यनकर शिक्षाकी संस्था गांधीजीने खुद किसी दिन नहीं चलाओी। अिसीलिअे अुनके विचार शिक्षाकी पुरानी पद्धतिके शिकार नहीं हुअे। दक्षिण अफ्रीकामें पिताकी हैसियतसे अपने लडकोंकी शिक्षाका भार अुनके सिर पर आ पड़ा था। गांधीजी अपने और परायेका भेद जानते न थे; अिसलिअे अुन्होंने अिस परिस्थितिमें जितने बच्चे अनकी देखभालमें आये, अुन सबकी शिक्षाका सामूहिक विचार किया। लोग आम तौर पर अैसा माना करते हैं कि अूँचे वर्गके बच्चोंका मजदूर और गरीब वर्गके बच्चोंसे साथ मिलना-जुलना अच्छा नहीं। गांधीजीने अिस खयालको शुरूमें ही छोड़ दिया। अिससे अुनका मनुष्य-हृदय पर अटूट विश्वास साबित होता है। अगर अुन्होंने यह पहली हिम्मत न की होती तो अुन्हें जीवन या शिक्षाके मर्मका दर्शन ही न हुआ होता। जैसा अटूट विश्वास गांधीजीका मनुष्यके हृदय पर है, वैसा ही कुदरत पर भी है। अिसीलिअे वे निडर होकर सारे प्रयोग कर सकते हैं।

दक्षिण अफ्रीकामें भी, जहां सब जगह अंग्रेजी भाषा ही चलती थी, गांधीजीने अपने लडकोंको मातृभाषामें ही शिक्षा देनेका आग्रह रखा; यह भी साबित करता है कि वे सच्चे शिक्षाशास्त्री हैं। अखंड अुद्योग, अखंड परिश्रम, अखंड मेहनत ही जीवनका मूल मंत्र है; जिसके बिना जीवन सड़ जाता है — यह भी गांधीजीका पक्का विश्वास होनेसे अुन्होंने फिनिक्सकी शिक्षामें अिस चीजको प्रधान पद दिया। आजादी, निर्भयता, श्रद्धा और आदर अुनकी शिक्षाका कुदरती वायुमण्डल था। वे पहलेसे ही जानते थे कि अैसे वायुमण्डलके बिना सत्यकी अुपासना हो ही नहीं सकती।

दक्षिण अफ्रीकाके अपने शिक्षाके प्रयोगोंमें गांधीजीने यह भी सिद्ध कर दिया कि शिक्षाशास्त्रीका काम सिर्फ बुद्धिको रास्ता दिखाना, सिर्फ ...ना बढ़ाना नहीं, बल्कि चरित्रका विकास करना, चरित्रको दृढ़ ... और दबी हुआी आत्माको आजाद होनेके लिअे पूरी शक्ति प्रदान ... भी है। यह काम शिक्षककी कुर्बानीके बिना नहीं हो सकता; और

जहा सच्चा प्रेम है वहा यह कुर्बानी स्वाभाविक है। अिस तरह शिक्षाके शास्त्रमें आत्म-बलिदानका तत्त्व जोड कर अुन्होंने अुसे पूर्णता प्रदान की।

हिन्दुस्तानमें आकर स्थिर हो जानेके बाद गाधीजीने सत्याग्रह आश्रम कायम किया। यह शिक्षाका ही अेक बडा प्रयोग था। आश्रममें आकर रहनेवाले स्त्री-पुरुषोंको गाधीजी शिक्षा देने लगे और बच्चोंको शिक्षा देनेकी जिम्मेदारी गाधीजीने अुन स्त्री-पुरुषोंको सौंपी। अिन प्रयोगोंमें गाधीजीके धीरजकी जितनी कसौटी हुअी, अुतनी शायद ही और कही हुअी होगी। देशको जगानेमें, लोगोंमें प्राण फूकनेमें, और राष्ट्रको अपनी आत्मा पर भरोसा रखनेवाला बनानेमें अपना सारा समय लगाते हुअे भी, जब जब मौका मिला तब तब गाधीजी आश्रमकी शिक्षाका मार्गदर्शन करते रहे। अिन दिनों धार्मिक शिक्षाकी तरफ गाधीजीने खास ध्यान दिया। अलग-अलग प्रान्तोंके बीच कैसा सम्बन्ध हो, स्त्री-पुरुषके सहजीवनमें आजादी और पवित्रता कैसे रखी जा सकती है, जीवन-धर्म स्वदेशीके चारो तरफ सारे काम कैसे गूथे जा सकते हैं, मनुष्यके कुटुम्बी जैसे गाय-बैल वगैरा जानवरोंके बारेमें हमारा रुख कैसा हो, शास्त्रीय खुराक और शास्त्रीय रहन-सहनका ज्ञान गांव-गांवमें किस तरह फैलाया जा सकता है, वगैरा कअी विषयोंकी अुन्होंने शिक्षकोंके साथ गहरी चर्चा की। दक्षिण अफ्रीकामें क्या और सत्याग्रह आश्रममें क्या, गाधीजीने बच्चोंके लिअे जो अुपवास किये और अपनी आत्मा अुडेलकर आश्रमवासियोंके सामने रखी, वह हमारे समाजकी सबसे कीमती पूजी है।

गाधीजी अफ्रीकासे हिन्दुस्तान आये तब ब्रिटिश साम्राज्य पर विश्वास लेकर आये थे। अुनके जैसा प्रामाणिक या अुत्कट विश्वास अुस समय बहुत ही थोडे लोगोंमें होगा। साम्राज्यको लडाअीमें जिस आत्मीयताके साथ अुन्होंने मदद दी, अुतनी ही आत्मीयताकी अुन्होंने सरकारसे भी आशा रखी थी। जब अुनकी यह आशा टूटी, तब ब्रिटिश सल्तनत पर से अुनका यह विश्वास अुठ गया; अुनका पुण्यप्रकोप जागा और अुसीमें से अुन्होंने राष्ट्रको सत्य, अहिंसा और तेजस्विताकी असाधारण शिक्षा दी। असहयोगका जमाना आया और गांधीजीकी राष्ट्रीय शिक्षा जगह-जगह फैल गअी। गुजरात विद्यापीठ, काशी विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ, तिलक

महाराष्ट्र विद्यापीठ, जामिया मिलिया अिस्लामिया वग़ैरा कभी संस्थायें देशमें कायम हुअी और राष्ट्रीय शिक्षाने अेक अैसा प्रचण्ड रूप धारण किया, जिसका पहले कभी खयाल भी नहीं किया गया था। सरकारी शिक्षाका बहिष्कार, अपनी सभ्यता और संस्कृतिके लिअे आदर, बाहरके और घरके अन्यायोंका विरोध, हिन्दू-मुसलमान वग़ैरा सब कौमोंकी हार्दिक अेकता, खादीकी प्रतिष्ठा, त्याग और सेवाका जीवन, मातृभाषाकी प्रतिष्ठाके जरिये लोगोंकी सेवाका आरंभ, स्वदेशी साहित्य, संगीत और कलाको प्रोत्साहन, गांवकी जागृति, बलिदानका महोत्सव वग़ैरा कभी अमृतफल अिस राष्ट्रीय शिक्षासे पैदा हुअे और देशने अुनका थोड़ा-बहुत स्वाद चखा। गांधीजीने कभी बार हिमालयसे कन्याकुमारी तकका दौरा करके अिस शिक्षाको जड़ोंको सींचा और संकटके अवसरों पर अिस शिक्षासे छोटे-बड़े सिपाही पैदा किये। गांधीजीका यह आदर्श है कि जीवन-साधकको, जिसने राष्ट्रीय शिक्षा पाअी है, मौका पड़ने पर स्वातन्त्र्य-युद्धका सैनिक और हमेशाके लिअे ग़रीब जनताका अनन्य सेवक होना ही चाहिये।

अितना अनुभव लेने और विकास करनेके बाद गांधीजीने वर्धा-योजना देशके सामने रखी है और देशके नेताओं और नौजवानोंको अुसके लिअे खूब निमन्त्रण दिया है। अंग्रेज़ोंकी जारी की हुअी शिक्षाके बदौलत हम शिक्षाका अितना ही मतलब समझते थे कि वह किताबोंकी शिक्षा, अूंचे वर्गके लोगोंकी शिक्षा, आरामसे बैठकर जिन्दगी पूरी करनेकी शिक्षा और धन, प्रतिष्ठा तथा सत्ताकी वृद्धि करानेकी शिक्षा है। अिसके बजाय गांधीजीने शिक्षाको यह नया अर्थ दिया कि शिक्षा चरित्रकी अुन्नति, कुशलताकी पराकाष्ठा, सेवाका आनंद और धर्मनिष्ठाका समभाव है। लोग Material standard of life (जीवनका भौतिक स्तर) बढ़ाकर Moral Standard of Life (जीवनका नैतिक स्तर) घटा रहे थे, यानी जीवनकी दुनियवी ज़रूरतोंको बढ़ाकर आत्माको संकुचित बनाते जा रहे थे। और नैतिक जीवनका ह्रास कर रहे थे। गांधीजीने देशको जिन दुर्गुणोंसे बचानेकी कोशिश की और अन्तमें कहा कि अक्षरज्ञान वग़ैरहकी शिक्षाका प्रचार करनेके लिअे अुसमें धाराका अुद्योग जोड़ देना ही काफी नहीं होगा। अिस तरह न तो अुद्योग बनेगा और न शिक्षा ही [illegible]

बनेगी। अुद्योगके ज़रिये ही शिक्षा देंगे तो वह अपने-आप स्वावलंबी बन जायगी और आसानीसे लोगोंका भला भी कर सकेगी।

जिसका सत्य और अहिंसा पर विश्वास है, वह अन्तमें स्वदेशी या विदेशी किसी भी सरकार पर या बड़े भारी संगठन पर आधार रख कर नहीं बैठेगा। गांधीजीका यही आदर्श है कि जैसे जीवन प्रत्येक मनुष्यमें स्वतंत्र रूपसे स्फुरित होता है और कृतार्थ होता है, वैसे ही राष्ट्रीय जीवन भी आत्म-संस्कृतिके ज़रिये ही शुद्ध और समृद्ध होकर जाग्रत और समर्थ बन सकता है।

तीस सालके सोच-विचार और प्रयोगोंका निचोड़ गांधीजीने वर्धा-योजनामें हमें दिया है और राष्ट्रीय शिक्षाकी पहेलीका हल देशको सुझाया है। अब देखना है कि राष्ट्र अिनकी सीख किस तरह ग्रहण करता है। संभावना तो अैसी दीखती है कि दयालु परमेश्वर अिसमें भी हिन्दुस्तानको भूल करनेका मौका देनेके बजाय परिस्थिति ही अैसी पैदा कर देगा कि 'नान्यः पन्था विद्यते अयनाय।' — अैसा जानकर हिन्दुस्तान गांधीजीकी अिस योजनाका भी अिच्छासे या अनिच्छासे अनुसरण करेगा और अनुभवसे विश्वास हो जाने पर कृतज्ञतापूर्वक बोल अुठेगा 'हे बापू! त्वं हि नः पिता यो अस्माकं अविद्यायाः परं पारं तारयसि।'

बम्बअी,
गांधी-सप्ताह, १९३८

दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर

अनुक्रमणिका

पहला भाग

असहयोग और आधुनिक शिक्षा

दूसरा भाग

राष्ट्रीय शिक्षाका प्रयोग

तीसरा भाग

हरिजनोंकी शिक्षा

चौथा भाग

निराकरणकी दिशा

पांचवां भाग

वर्धा-योजना

शिक्षाकी समस्या

पहला भाग

असहयोग और आधुनिक शिक्षा

१

आधुनिक शिक्षा*

'शिक्षा' शब्द आजकल हम सबके मुंहसे सुनते हैं। स्कूल सरकारी हों या खानगी, विद्यार्थियोंसे भरे रहते हैं। कॉलेजोंमें जगह नहीं होती। गुजरात कॉलेजसे कितने ही अुम्मीदवारोंको निराश होकर वापस जाना पड़ा। शिक्षाके लिअे अितना मोह होने पर भी अिस बातका शायद ही विचार किया जाता है कि शिक्षा क्या चीज है, आज तक मिली हुअी शिक्षासे हमें लाभ हुआ है या नुकसान, अथवा जितनी मेहनत की गअी है अुतना लाभ हुआ है या नहीं। जैसे शिक्षाके अर्थके बारेमें बहुत कम विचार होते देखा जाता है, वैसे ही अुसके हेतुके बारेमें कहा जा सकता है। मुख्य हेतु तो यही पाया जाता है कि शिक्षा पाकर हम अेक खास तरहकी नौकरी पाने लायक हो जायं। अलग-अलग धंधेवाले लोग शिक्षा पानेके बाद अपना धंधा छोड़कर नौकरी ढूंढने लग जाते हैं और नौकरी मिलते ही अैसा समझ लेते हैं कि हम आगे बढ़ गये हैं। हमारे स्कूलोंमें राज, लुहार, बढ़अी, दरजी, मोची वगैरा जातियोंके लड़के पढ़ते देखे जाते हैं; पर,पढ़कर वे अपने बापदादोंके धंधेको आगे बढ़ानेके बजाय अुसे बिलकुल नीचा समझकर छोड़ देते हैं और क्लार्ककी नौकरी पानेमें अिज्जत समझते हैं। मां-बाप भी अिसी विचारका अनुकरण करते है; और अिस तरह हम जाति और कर्म दोनोंसे गिरकर गुलामीमें फंसते जा रहे हैं। अैसी हालत मैंने हिन्दुस्तानके सफरमें चारों तरफ देखी है और अिस पर मेरा दिल बहुत बार रोया है।

शिक्षा कोअी साध्य वस्तु नहीं, बल्कि साधन है; और जिस शिक्षासे हम चरित्रवान बन सकें, वही शिक्षा सच्ची मानी जा सकती है। यह कोअी नहीं कह सकता कि स्कूलोंमें जो शिक्षा दी जाती है, अुससे अैसा नतीजा

---

* यह लेख 'समालोचक' (गुजराती)के अक्तूबर १९१६ के अंकमें छपा था।

निकला है। स्कूलमें आकर चरित्र खो बैठनेके तो बहुतसे अुदाहरण
आयेंगे। अेक निष्पक्ष अंग्रेज लेखकने कहा है कि जब तक हिन्दुस्तानमें ह
स्कूलों और घरोंमें मेल नहीं बैठेगा, तब तक विद्यार्थी दोनों तरफसे
होंगे। घरमें मां-बापसे और हमारे आसपासके वायुमण्डलसे हमारे नौजवान
अेक तरहका ज्ञान मिलता है और स्कूलोंमें अुसके विरुद्ध ज्ञान मिलता
स्कूलोंका रहन-सहन अक्सर घरके रहन-सहनसे अुलटा पाया जाता
हमारी पाठ्यपुस्तकोंमें दी हुअी शिक्षा 'पर-अुपदेश-कुशल' लोगों द्वारा
हुअी शिक्षा जैसी मानी जाती है। अुसमें से कुछ भी हम अपनी घर-गृहस्
कामोंमें दाखिल नहीं कर सकते। हम क्या सीखते हैं, अिस बारेमें मां-बाप
कोअी परवाह नहीं होती। ज्यादातर पढ़ाअी परीक्षा देनेके लिअे की
वेगार ही मानी जाती है और परीक्षा देनेके बाद अुसे जल्दीसे जल्दी
जानेकी कोशिश की जाती है। हम पर कुछ अंग्रेजोंने जो यह आ
लगाया है कि हम नकल करनेवाले लोग हैं, वह निरा अर्थ-रहित नहीं
अुनमें से अेकने तो हमें सभ्यताके स्याहीसोख कागजकी अुद्धत अुपमा दी
जैसे स्याहीसोख कागजका काम अधिक स्याहीको चूस लेनेका होता है, वैसे
हम सभ्यताकी अतिशयता यानी अुसकी बुराअीको ही ले लेनेवाले हैं — अ
अिस लेखकने माना है। हमें मान लेना चाहिये कि किसी हद तक हमा
यही हालत हो गअी है। अिस हालतके कारणोंका विचार करने पर मु
अैसा लगा है कि खास दोष हमारे अंग्रेजी द्वारा शिक्षा पानेमें है। मैट्रिक
लेशन तककी पढ़ाअी पूरी करनेमें आम तौर पर बारह वर्ष लगते हैं। अि
वर्षोंमें हमें बहुत कम साधारण ज्ञान मिलता है। पर हमारी कोशिश अि
ज्ञानका हमारे कामके साथ मेल बैठानेकी — अुसका अुपयोग करनेकी न
होती, बल्कि किसी न किसी तरह अंग्रेजी भाषा पर काबू पानेकी होती है
विद्वान लोगोंने अपनी राय दी है कि मैट्रिक्युलेशन तकका ज्ञान सबको अपनी
अपनी भाषाओंमें दिया जाय, तो कमसे कम पांच बरस बच सकते हैं। अि
तरह हर दस हजार मैट्रिक्युलेटों पर जनताको पचास हजार सालका नुकसा
होता है। यह बड़ा गंभीर परिणाम है; अितना ही नहीं, बल्कि अिससे ह
अपनी खुदकी भाषाओंको कंगाल बनाते हैं। अक्सर जब मैं यह वाक्य सुनत
हूं कि 'गुजराती भाषा गरीब' है, तब मुझे गुस्सा आ जाता है। य

संस्कृतकी अेक लाड़ली बेटी गरीब हो जाय, तो अिसमें कसूर भाषाका नहीं बल्कि हमारा है, जो अिस भाषाके संरक्षक हैं। हमने अुसका तिरस्कार किया है, हम अुसे भूल गये हैं। तब अुसमें जो तेज और शौर्य वगैरा होने चाहिये, वे कहांसे आयें? हमारे और हमारे घरबारके बीच रुकावट पैदा हो गअी है। मां-बाप और दूसरे कुटुम्बी लोग, हमारी स्त्रियां, हमारे नौकर-चाकर, जिनके साथ हमें बहुत समय तक रहना है, सबके लिअे हमारी स्कूली शिक्षा अेक गुप्त धन जैसी है। यह अुनके कुछ काम नहीं आती। हमें अपने-आप यह समझ लेना चाहिये कि जहां अैसी अुलटी दशा हो, वहां जनता कभी अुठ नहीं सकती। अगर हम स्याहीसोख कागज न होते, तो ५० सालसे मिलनेवाली शिक्षाके बाद आम लोगोंमें कोअी नअी प्रवृत्ति देखनेमें आअी होती। जनताको हम पहचानते नहीं। जनता हमें सभ्य समझकर अलग कर देती है। हम आम लोगोंको जंगली समझकर नीची निगाहसे देखते हैं।

कॉलेजोंमें मिलनेवाली शिक्षाका विचार करने बैठें, तो भी यही नतीजा पाया जाता है। वहां ज्ञानकी अच्छी बुनियाद डालनेमें हमारा समय जाता है। वहां हम अपनी भाषाको भूलना शुरू करते हैं। कअियोंको अपने बापदादोंकी भाषाके प्रति तिरस्कार पैदा हो जाता है। हम अपना आपसी व्यवहार गलत अुच्चारण और व्याकरणके दोषोंसे भरी हुअी अंग्रेजीमें करते हैं। अलग-अलग शास्त्रोंके पारिभाषिक शब्द हमने अपनी भाषाओंमें निश्चित नहीं किये हैं और अंग्रेजीके अुन शब्दोंको हम पूरी तरह समझते नहीं। कॉलिजकी पढ़ाअी पूरी करनेके बाद हमारी बुद्धिमें शौर्य नहीं रह जाता और हमारे शरीर कमजोर हो जाते हैं। दवाकी बोतल जिन्दगीभरके लिअे हमारे पीछे लग जाती है। अितने पर भी जनता मानती है और हम भी मानते हैं कि हम जनताकी नाक हैं, अुसके संरक्षक हैं और जनताका भविष्य हमारे हाथमें है। कॉलेजसे निकले हुअे गुजराती नौजवान गहरा विचार करके जनताके संरक्षक होना स्वीकार करेंगे, तो मैं अुन्हें हिम्मतवाले समझूंगा। हालांकि मैंने हमारे यहांकी शिक्षा-पद्धतिका बहुत ही निराशाजनक चित्र खींचा है, फिर भी अिस निराशामें बड़ी आशाके बीज भी समाये हुअे हैं। अिस लेखका आशय यह नहीं कि किसी भी हिन्दुस्तानीको अंग्रेजी भाषा जाननी ही न

चाहिये। जैसा रूसमें हुआ और जैसा दक्षिण अफ्रीका और जापानमें हो र
है, वैसा ही हम भी करें। जापानमें थोड़ेसे आदमी अूचे प्रकारका अंग्रेजी ज्ञा
लेकर यूरोपकी सभ्यतामें से जो कुछ लेने लायक होता है, अुसे आसा
बनाकर जापानी भाषामें जनताके आगे रख देते हैं और जनताको अंग्रे
भाषाकी जानकारी प्राप्त करनेकी व्यर्थ मेहनतसे बचा लेते हैं। हम
अब बहुतसे लोगोंको अंग्रेजीका ज्ञान हो गया है। वे भले ही अुसे बढ़ायें
और जिनकी शरीर-संपत्ति अच्छी हो और जिनका मानसिक अुत्साह क
न हुआ हो, वे अंग्रेजी वगैरा भाषाओंसे जनताकी भलाअीके विचार लेक
अुन्हें गुजराती भाषाके जरिये प्रकट कर सकते हैं। लगातार कोशि
करके हम अपनी शिक्षाका क्रम बदल सकते हैं और नये शास्त्रों और न
विचारोंका ज्ञान सिर्फ गुजराती भाषाके जरिये दे सकते हैं। अैसी कोअ
बात ही नहीं कि चिकित्सा-शास्त्र, नौका-शास्त्र और विद्युत-शास्त्रकी पूर
जानकारी गुजराती भाषामें नहीं कराअी जा सकती। अैसा कोअी निया
नहीं है कि अंग्रेजी भाषा जाननेके बाद ही शरीरके विभिन्न अंगोंका ज्ञान हो
सकता है, या अुसके बाद ही जीते मनुष्यकी हड्डियाँ चीरी जा सकती हैं

हिन्दुस्तानकी कमसे कम ८५ फीसदी आबादीका धन्धा खेती
है। १० फीसदीका धन्धा कारीगरी है, जिसमें ज्यादातर बुनाअीका
काम करनेवाले लोग हैं। बाकी ५ फीसदी पढ़े-लिखे राजनीतिज्ञ, वकील,
डॉक्टर वगैरा लोग हैं। यह आखिरी वर्ग अगर सचमुच लोगोंकी सेवा
करना चाहे, तो अुसे ९५ फीसदी आदमियोंके धन्धोंकी कुछ न कुछ
जानकारी हासिल करनी ही चाहिये। ९५ फीसदी लोगोंका यह फर्ज माना
जाना चाहिये कि अुनके मा-बाप जो धन्धा करते हैं, अुसका ज्ञान वे
प्राप्त करें। अगर यह खयाल सही हो, तो हमारे स्कूलोंमें अिन दो
धन्धोंकी जानकारी बचपनसे ही कराअी जानेकी सहूलियत होनी चाहिये।
खेती और बुनाअी वगैराका सुन्दर ज्ञान देने लायक हालत पैदा करनेके
लिअे हमारे तमाम स्कूल गांवों और शहरोंके घनी बस्तीवाले हिस्सोंमें
न होकर अैसी जगह होने चाहिये, जहां बड़े-बड़े खेत तैयार किये
जा सकें और शिक्षा लगभग खुली हवामें दी जा सके। अैसे स्कूलोंमें
लड़कोंका खेलकूद स्कूलोंके खेतोंमें हल चलानेका होगा। यह खयाल

झूठा है कि अगर बच्चों और नौजवानोंके लिओ फुटबॉल, क्रिकेट वगैरा न हों, तो अुनकी जिन्दगी शुष्क बन जायगी। हमारे किसानोंके लड़कोंको क्रिकेट वगैरा नसीब नहीं होते, फिर भी अुनमें आनन्द या निर्दोष मस्तीकी कमी नहीं पाओ जाती।

अिस तरह शिक्षाका क्रम बदलना कोओ मुश्किल बात नहीं! लोकमत अिस तरहके विचार रखनेवाला हो, तब तो सरकारका काम फेरबदल किये बिना चल ही नहीं सकता। लोकमत तैयार होनेसे पहले जिन लोगोंको अूपर बताओ हुओ शिक्षा पसन्द हो, अुन्हें अुसके प्रयोग करना चाहिये। और अगर जनता अुनकी कोशिशका अच्छा नतीजा देखेगी, तो वह अपने-आप वैसा ही करना चाहेगी। मुझे अैसा लगता है कि अिस तरहके प्रयोगके लिओ ज्यादा खर्चेकी जरूरत नहीं है। लेकिन यह लेख व्यापारके खयालसे नहीं लिखा गया है। लिखनेका मुख्य हेतु यह है कि अिस लेखके पढ़नेवाले अिस बातकी खोज करें कि सच्ची शिक्षा क्या है; और यह खोज करनेमें अिस लेखसे कोओ मदद मिल सके, तो अिसे लिखनेका परिश्रम सफल समझा जायगा।

२

आजादीकी लड़ाओकी पुकार

१

[ता० २८-९-'२० को शामके समय अहमदाबादके विद्यार्थियोंके सामने दिये हुओ भाषणका मुख्य भाग।]

अपमान अितना ही नहीं किया गया था कि पंजाबमें विद्यार्थियोंको १६-१८ मील तक चलाया गया और कुछ लड़कोंको कोड़े लगाये गये थे, बल्कि विद्यार्थियोंको यूनियन जैकको सलामी देनेके लिओ भी बुलाया जाता था। अिस तरह जबरन् यूनियन जैकको और खुद परमेश्वरको भी सलामी दिलवाओ जाय, तो जिन पर यह जबरदस्ती की गओ हो, अुन पर और खुद परमेश्वर पर अिसका क्या असर होगा, यह सोचनेका

काम मैं विद्यार्थियोंको ही सौंपता हूं। अिसके सिवा, कुछ लोगोंको कॉलेजसे निकाल दिया गया था। अैसे कुछ *विद्यार्थियोंके* पत्र मेरे पास आते थे। अुन्हें तो अैसा ही लगता था कि वे बेहाल हो गये हैं और सब कुछ खो बैठे हैं। विद्यार्थियोंको अगर पंजाबकी घटनाओंसे कुछ सीखना है तो यही कि वे कॉलेजोंका मोह छोड़ दें और यह खयाल दिलसे निकाल दें कि कॉलेजमें नहीं जायेंगे तो रोटी नहीं मिलेगी। जब मैं लाहोर गया था तब विद्यार्थियोंके चेहरों पर जो खुशी थी, अुसमें मैंने देखा कि अुनका कॉलेजोंका मोह कुछ कम हुआ है। अगर मैं विद्यार्थियोंके साथ घबरा जाता और अैसी गलत हमदर्दी दिखाता कि हम कॉलेजोंमें नहीं जायेंगे तो आदमी ही नहीं रह जायेंगे, तो अुनका मोह बढ़ता। *अगर विद्यार्थी* सरकारी कॉलेजोंमें न होते, तो सरकार अुनका क्या कर लेती? मैं कहता हूं कि विद्यार्थी सरकारी कॉलेजोंमें न होते, तो सरकार अुनका बाल भी बांका नहीं कर सकती थी; अुन्हें सलामी देनेको मजबूर नहीं कर सकती थी। विद्यार्थियोंको सबसे बड़ा डर अिसी बातका था कि हम यूनियन जैकको सलाम करने नहीं जायेंगे तो बरबाद हो जायेंगे। अगर वे विद्यार्थी स्वतंत्र यानी सरकारसे कोअी वास्ता न रखनेवाले स्कूल-कॉलेजोंमें पढ़ते होते, तो अुन लोगोंका कोअी कुछ बिगाड़ नहीं सकता था। लेकिन *विद्यार्थियोंके सरकारी स्कूल-कॉलेजोंमें* होनेसे ही सरकार अुन पर *ज्यादा काबू रख सकी और अुसने जनताकी नाक काट ली।* विद्यार्थियोंकी बदौलत ही हम आजादी लेंगे और विद्यार्थियोंकी कमजोरीसे ही हम गुलामीमें फंसे रहेंगे। यह सच है कि मैंने कौंसिलोंके बहिष्कार पर खूब जोर दिया है। मैं जानता हूं कि हर मनुष्य मूर्तिपूजा करनेवाला होता है। अिसलिअे जब अैसे नेता, जो प्रतिनिधि बननेके लायक हैं, धारासभाओंमें जाना छोड़ देंगे, तो थोड़ी देरके लिअे अुसका बहुत बड़ा असर होगा। यह काम चूंकि अभी किया जा सकता है, अिसलिअे तुरंत होना चाहिये। अुसका असर भी बहुत होगा। फिर भी मैं यह वचन देता हूं कि सरकारके मातहत चलनेवाले सारे स्कूल-कॉलेज खाली हो जायं, तो आप अेक महीनेके भीतर हिन्दुस्तानका चेहरा बदला हुआ देखेंगे। हर विद्यार्थी अेकाअेक कल ही निकल जाय, तो अिसका

जनता और सरकार दोनों पर जो असर पड़ेगा, वह और किसी बातका नहीं पड़ेगा। जितना असर विद्यार्थियोंके स्कूल-कॉलेज छोड़नेका होगा, अुतना वकीलोंके अदालत छोड़नेका भी नहीं हो सकता। जब विद्यार्थी सरकारी स्कूल-कॉलेजोंसे निकल जायेंगे, तब सरकार समझ जायगी कि अब हमारा टान्सा वॉटर वर्क्स — अितनी दूर किसलिअे जाय? दूधेश्वर वॉटर वर्क्स — बंद हो गया। विद्यार्थियों पर ही हिन्दुस्तानकी आजादी निर्भर करती है, क्योंकि विद्यार्थी नौजवान हैं। वकील बुजुर्ग माने जाते हैं। अुनके साथ अुनके काम-धंधे लगे हुअे हैं। पर विद्यार्थियोंकी जिन्दगी निर्दोष होती है। वकीलोंके पीछे स्वार्थ (पेट भरनेका) लगा हुआ है, अिसलिअे वकीलोंसे वकालत छुड़वाना मुश्किल है। परन्तु विद्यार्थियोंके कोअी स्वार्थ न होनेके कारण वे सिर्फ सरकारी शिक्षा-संस्थाओंका मोह छोड़ दें, तो अुनके लिअे अिन्हें छोड़ना आसान होगा।

कोअी कहेगा कि विद्यार्थियोंको अैसा क्यों करना चाहिये? स्कूल-कॉलेज किसलिअे छोड़े जाय? अिस आन्दोलनके विरुद्ध हमारे बड़े, धर्म-धुरंधर, जनताकी सेवामें खूब तपे हुअे पंडित मदनमोहन मालवीयजी, हिन्दुस्तानके बहुत विचार करनेकी शक्तिवाले शास्त्रीजी और हमारे दूसरे नेता — लाला लाजपतराय तक, अैसा कह रहे हैं कि विद्यार्थियोंसे स्कूल-कॉलेज छुड़वाना बड़े जोखिमका काम है। मैं यह नहीं चाह सकता कि तुम पर अुनके विचारोंका असर न हो। अिसलिअे विद्यार्थियोंको मैं यह बात सुझा रहा हूं कि हमारे अैसे देशभक्त नेताओंके कहने पर तुम पूरी तरह विचार करना; और अिस तरह विचार करने पर भी अगर तुम्हें लगे कि मैं जो बात कह रहा हूं वही ठीक है, तो ही स्कूल-कॉलेज छोड़ना।

कोअी यह सवाल कर सकता है कि हम जो शिक्षा पा रहे हैं, वह आज ही जहर जैसी क्यों बन गअी? सरकार कितनी ही खराब क्यों न हो, पर जिन स्कूलों और कॉलेजोंमें हम जाते हैं, अुनका अिन्तजाम अच्छा हो, वहाके प्रोफेसर अच्छे हों, शिक्षक अच्छे हों, तो हमें अुन्हें क्यों छोड़ना चाहिये? यह प्रश्न हरअेकके मनमें अुठ सकता है।

पंजाबकी घटना घटी और खिलाफतका मामला हुआ, तब सरकारकी नीति बरदाश्त होने लायक थी। मैं तुम्हें निश्चयके साथ कहना चाहता हूं कि मैं जब वहां था, तब मुझे यह विश्वास था कि हमें न्याय जरूर मिलेगा। मुसलमान भाअियोंसे भी मैं यही कहता था कि आपको जो वचन प्रधानमंत्री लायड जॉर्जने दिया है, अुतना तो जरूर मिलेगा। फिर भी हमें पंजाबके बारेमें सख्त आघात लगा और अुस अन्यायको दबा देनेके लिअे बुरेसे बुरे षड्यंत्रोंसे काम लिया गया। खिलाफतके मामलेमें अैसा वचन-भंग किया गया, जिसे बच्चा भी समझ सकता है।

पंजाबमें जिन-जिन लोगों पर ज्यादतियां की गयीं, वे कोअी मामूली आदमी नहीं थे। बल्कि जिन पढ़े-लिखे लोगोंको सरकारने शिक्षा दी थी, अुन्हीं पर जितना अत्याचार करना था, किया गया।

सरकारने हिन्दुस्तानका स्वत्व छीन लिया है। अगर कोअी लुटेरा हमारा घरबार लूट ले जाय और हमीसे आकर कहे कि 'मैं तुम्हारा जो धन लूट ले गया हूं, अुसीसे बनी हुअी अिस पाठशालामें पढ़ो', तो मुझे यकीन है कि हम अुस डाकूको यही जवाब देंगे कि 'हमें तुम्हारी शिक्षा नहीं चाहिये।' मेरा घर कोअी डाकू लूट ले जाय, तो अुसे मैं सह सकता हूं; क्योंकि मैं दूसरा सामान जुटा सकता हूं। परन्तु मेरा मानभंग हो जाय, मेरा पुरुषत्व या स्त्रीत्व लूट लिया जाय, तो वह मुझे वापस कैसे मिल सकता है? मेरी नाक काट ली जाय, तो अुसे फिर कैसे साबित किया जा सकता है? काठियावाड़के डाकू मुसाफिरोंकी नाक काट लेते थे और अेक डॉक्टर अैसा था, जो कटी हुअी नाकको साबित बना देता था। मगर हिन्दुस्तानकी नाकको, जो कट गअी है, चपटी हो गअी है, नुकीली बनानेवाला कोअी डॉक्टर है ही नहीं। अिस नाकको अगर कोअी नुकीली बना सकता है तो हमी बना सकते हैं। जैसे अच्छेसे अच्छे दूधमें भी जहर पड़ जाने पर हम अुसे फेंक देते हैं, अुसी तरह हमें मान ही लेना चाहिये कि अच्छीसे अच्छी शिक्षामें भी जहर पड़ जाय, तो वह छोड़ने लायक हो जाती है। मुझे यह शक जरूर होता है कि जितना दर्द मुझे अिन घटनाओंसे हुआ है, अुतना पण्डित

मालवीयजी और शास्त्रीजीको हरगिज नहीं हो सकता। सरकारने जो राज-नीति दिखाओी है, वह अुन्हें दूधकी शक्लमें दिये हुअे जहरकी-सी लगती हो, तो जो बात मैं कहता हूं वही वे भी कहेंगे। मुझे कहना चाहिये कि सरकारकी शिक्षामें मिले हुअे जहरको हमारे ये महान नेता नहीं पहचान सकते।

अगर हम अिस हालतमें कुछ भी नहीं करेंगे, तो हमारी नाक सदाके लिअे कट जायगी; कितने ही समय तक जनता अपना स्वत्व अिस दुनियाके सामने बतानेके लिअे अयोग्य बन जायगी। यह तो कहा ही नहीं जा सकता कि तुम विद्यार्थी बच्चे हो। अिसलिअे तुम अपने मा-बाप वगैरा बड़ोंको आदरके साथ सूचना दे कर कल ही स्कूल-कॉलिज छोड़ दो। लेकिन मैं चाहता हूं कि जिस आजादीका अुपयोग सोलह बरससे अूपरके लड़के और लड़कियां कर सकती हैं, अुसकी शर्तें तुम पूरी तरह समझ लो।

जिन्हें बुखार चढ़ गया है — दिमागी और दिली — और जो यह मानते हैं कि 'अिस सरकारकी सल्तनत मुझसे अेक पल भी नहीं सही जा सकती, जिस सल्तनतमें अन्यायका जहर फैल गया है अुसमें रहना मेरे लिअे शर्मकी बात है', अुन्हींको शाला छोड़नेका हक है। जैसे कोअी लुटेरा हमारा सब-कुछ छीन ले, तो हम अुसके हाथका दान नहीं ले सकते, वैसे ही सरकार द्वारा दी हुअी शिक्षा हम न लें। अिसीमें माके प्रति, पिताके प्रति, गुरुके प्रति और नेताओंके प्रति हमारा विनय है; अिसीमें हमारी अधीनता है। जिस किसीको अन्दरसे दिलकी आवाज आती है कि 'मुझे यह काम करना ही चाहिये', अुसीको अैसा करनेका हक है। तुम्हें अिन बातों पर भरोसा होना हो, तो मैं चाहता हूं कि तुम कलसे ही स्कूल और कॉलिज छोड़ दो।

दूसरे स्कूल-कॉलिज कहां हैं, अैसा पूछनेवाले विद्यार्थियोंको मेरा जवाब यह है कि तुम्हें अभी राह देखनेकी जरूरत है, मा-बापके साथ सलाह करनेकी जरूरत है, क्योंकि तुम्हें अभी शक है। जिस घरमें सांप रहता हो, अुससे निकल जानेमें मुझे शक किस बातका हो सकता है? अगर तुम यह सोचना चाहते हो कि कांग्रेसने जो प्रस्ताव पास किया है अुसका क्या अर्थ है, तो मैं तुमसे कहता हूं कि अुस प्रस्तावमें

नये स्कूल-कॉलेज मिलनेकी शर्त नहीं है। हमें नये स्कूल-कॉलेज मि
या न मिलें, पर जो स्कूल-कॉलेज हमारे लिअे जहर हो गये हैं, अु
तो छोड़ना जरूरी ही है।

अिससे कोअी यह न समझ ले कि मैं शिक्षाके खिलाफ हूं
या शिक्षाके बारेमें मेरे जो विचार हैं, अुनका प्रचार करना चाहता हूं।
अुन विचारोंका प्रचार मैं राष्ट्रीय पाठशालाओंके जरिये कर रहा हूं
और जब मुझे अुस तरहकी शिक्षाका प्रचार बढ़ाना होगा, तब मैं आगे
साधन ढूंढ लूंगा। मगर अिस वक्त जिस खयालसे मैं स्कूल-कॉलेज छुड़
वाना चाहता हूं, वह खयाल सिपाहीका है। जब लड़ाअी छिड़ जाती है
तब विद्यार्थी पढ़ना छोड़ देते हैं, अदालतें खाली हो जाती हैं और बैं
भी खाली कर दी जाती हैं। जेलमें रहनेवाले कैदी भी अपना स्वभाव
छोड़ देते हैं और लड़ाअीमें कूद पड़ते हैं। अुसी तरह हमारे लिअे
यह युद्धका समय आ गया है। अगर देशकी जनता हथियार अुठानेवाली
होती, तो हिन्दुस्तानमें कभीसे बेशुमार नंगी तलवारें निकल आतीं; मगर
हिन्दुस्तानमें आज यह चीज चल नहीं सकती। अभी तो मैं साधारण
विचारसे, दुनियावी खयालसे ही यह सवाल जनताके सामने रख रहा
हूं कि जिस सरकारके हाथों हमारा अितना अपमान हुआ है, अुससे हम
दान नहीं ले सकते, मदद नहीं ले सकते। अिसलिअे अगर यह सिद्धान्त
मंजूर हो, तो यह सवाल रहता ही नहीं कि शालायें हैं या नहीं।
अिसलिअे तुम्हें तो अिस दृष्टिसे सोचना है कि विद्यार्थियोंका अभी
तुरन्त शालायें छोड़ना फर्ज हो गया है या नहीं। शालायें छोड़कर
विद्यार्थी क्या करें? संधिकालमें जो विद्यार्थी बेकार बन जायें, वे क्या
करें? ये सब सवाल तुम पूछ सकते हो। सिद्धान्त वही है, जो मैंने
बता दिया है। अुसमें से जो छोटे-मोटे सिद्धान्त निकलते हैं, अुन्हें मैं
तुम्हारे सामने रखता ही नहीं। मुख्य सिद्धान्तके अनुसार विद्यार्थी
अपने दिलमें जो फैसला करें, अुसी पर अटल रहकर अुन्हें अमल करना
चाहिये। मगर यह कहना भी मेरा फर्ज है कि शक मिट जानेके बाद
कमजोरीके मारे अेक भी विद्यार्थीको कॉलेज या स्कूलमें रहनेका
अधिकार नहीं है। यह वक्त जनताकी कमजोरी दिखानेका नहीं है।

२

[दूसरे दिन शामको अुसी जगह शिक्षकोंको ध्यानमें रखकर गांधीजीने जो भाषण दिया था अुसका सार।]

अेक बार मैं खुद शिक्षकोंमें से ही था। यह दावा किया जा सकता है कि अब भी मैं शिक्षक हूं। मुझे शिक्षाका अनुभव है। मैंने अुसके प्रयोग करके देखे हैं। यह काम करते-करते मुझे अैसा लगा कि जिस जातिके शिक्षक पुरुषत्व खो बैठे हैं, वह जाति कभी अुठ नहीं सकती।

हमारे शिक्षक अपना पुरुषत्व जरूर गवा बैठे हैं। जो बात वे नहीं करना चाहते, वही वे जबरन् करते हैं। मारपीट कर अुनसे कोओी कुछ नहीं कराता, लेकिन सूक्ष्म बलात्कार तो अुन पर होता ही है। अपने बड़े अफसरोंकी धमकियों, वेतनके नुकसान या वेतन न बढ़ सकनेकी धमकियों या सूचनाओंसे शिक्षक घबरा जाते हैं। अब हमारे सामने अैसा मौका आ खड़ा हुआ है, जब शिक्षक और शिक्षिकाअें अपनी जान, अपना माल और अपना वेतन सब कुछ जोखिममें डाल कर भी जो चीज जैसी है, वैसी ही हिम्मत करके विद्यार्थियोंके सामने रख दें। अगर वे अैसा नहीं कर सकते, तो अपनी आजीविकाका साधन अुन्हें छोड़ देना चाहिये। अितना अगर आज मैं शिक्षकोंको बता दूं, तो मेरा आजका काम निपट गया। मेरे खिलाफ शास्त्रीजी जैसे महान शिक्षक हैं। पंडित मालवीयजी भी, जिन्होंने हिन्दू युनिवर्सिटी जैसी संस्था कायम की है, मानते हैं कि मैं जनताको अुलटे रास्ते ले जा रहा हूं। जो राष्ट्रीय पक्षके हैं, अुन्हें भी शंका है। फिर भी मुझे लगता है कि मैं सही रास्ते पर हूं।

बगदादमें आये हुअे अेक सज्जनने मुझे वहांका अपना अनुभव सुनाया, जिससे मैं चकित हो गया हूं। मैं कहता हूं कि हिन्दुस्तानमें रहना मेरे लिअे मुश्किल हो गया है। अगर मैं चौबीसों घण्टे असहयोगका ही विचार न करता रहूं — सोते वक्त भी मेरा मन अिसी विचारसे शान्त होता है — तो मेरे लिअे हिन्दुस्तानमें रहना असंभव हो जाय। मैं मानता हूं कि बगदादके अपढ़ अरब हमसे करोड़ों दरजे आगे बढ़े हुअे

हैं। ये सज्जन कोअी मामूली आदमी नहीं हैं। वे बगदादमें सरकारी नौकरीमें बड़े ओहदे पर थे। वे अंग्रेज सरकारके दुश्मन नहीं हैं। अुन्होंने मुझे वही कहा है, जो अुन्हें अनुभव हुआ। गंगाबहनने अुन्हें पूछा "क्या वहां अंग्रेजोंका राज्य कायम रहेगा?" अुन्होंने कहा: "वह क्या हिन्दुस्तान है?" जब तक अेक भी अंग्रेज मैसोपोटेमियामें रहेगा, तब तक अरब चैनसे नहीं बैठेंगे। अरबोंके पास गोला-बारूद या तलवार वगैरा सामान नहीं है — होगा भी तो निकम्मा। किन्तु अेक सामग्री अुनके पास जरूर है। वे मानते हैं "यह देश हमारा है। हमारे अिस देशमें जिसे हम न रहने दें, वह अेक पल भी नहीं रह सकता।"

अंग्रेज सरकारने वहां जितने सिक्ख भेजे, अुन सबको अुन्होंने काट डाला। मैं हिन्दुस्तानको यह सीख नहीं देता। मैं तो अुलटे अिस तरफ जानेसे लोगोंको रोकता हूं। अरबोंका सिक्खोंसे कोअी विरोध नहीं था। हमें तो यही देखना है कि अरबोंका मकसद क्या था। अंग्रेजोंने अुन्हें बड़ी-बड़ी आशाअें दिलाअीं। बगदादमें अितनी गरमी पड़ती है कि आप सब जैसे यहां बैठे हैं, वैसे वहांकी रेतमें नहीं बैठ सकते। वहांकी रेत अितनी तप जाती है कि अुस पर खाना पकाया जा सकता है। अंग्रेज सरकारने कहा कि हम तुम्हारे लिअे पक्की सड़कें बनायेंगे, रेल लायेंगे और जिनसे तुम्हें सुख मिले वे सब सहूलियतें कर देंगे। तुम्हें शिक्षा देंगे। मोटर भी अरबोंने पहले-पहल अभी अभी ही देखी। किन्तु अरब तो अेक ही बात जानते थे। अुन्होंने कहा, 'तुम हमारा मुल्क लेने आये हो।' यहांके मुसलमानोंसे पहले ही मैसोपोटेमियाके मुसलमान अंग्रेजोंको अपने देशसे निकाल रहे हैं।

अंग्रेजोंके हवाअी जहाज अुन्हें डरा नहीं सकते। हवाअी जहाज हों या और कुछ हो, अरबोंको अिससे क्या? वे तो मौतको हथेलीमें लिये फिरते हैं। अुनके पास है क्या, जो कोअी ले लेगा? वे अपने सुखके लिअे नहीं लड़ते। अुनके कपड़े चमड़ेके होते हैं। वे तम्बूमें रहनेवाले ठहरे। अपने देशको — भले ही वह रेतीला हो — अुन्हें बचाना है। बगदाद शरीफमें, जो पाक जमीन है और जहां कअी पीर हो चुके हैं, अिजाजतके बिना कौन जा सकता है? वहां अंग्रेज, सिक्ख या अुनके भाअीबंधु कोअी नहीं रह सकते।

अरब हमसे कहीं ज्यादा बढ़े-चढ़े हैं। "यह हमारा देश है, अिस र कोओ अंगुली अुठाये तो हम अुसकी अुंगली काट डालेंगे, तीसरेको यहां हने न देंगे।" — यह जोश जिनमें है वे ही सच्चे सुखी हैं। हम मानते ही कि अरब जंगली हैं और हम सभ्य हैं, तो हम अुनके और खुद अपने ाथ बेअिन्साफी करते हैं। हमें गुलाम होने पर भी थोड़े-बहुत सुख और ोग मिलते हैं। जब तक अिस तरहके भोग-विलासकी अिच्छा हम रखते ैं, तब तक हम अरबोंसे नीचे ही हैं।

हमारे बापदादा कह गये हैं, वेदों और अुपनिषदोंमें कहा गया है कि वित्र भूमिको अपवित्र न होने दो। दूसरे लोग तुम्हारी धरती पर पैर खें, तो मेहमान बनकर ही रह सकते हैं। जिसने आजादीको खो दिया, ुसने सब-कुछ खो दिया, अपना धर्म भी खो दिया।

मैं यह नहीं मानता कि अंग्रेजी राज्यमें हम अपना धर्म शांतिसे पाल कते हैं और मुसलमानी राजमें नहीं पाल सकते थे। मैं जानता हूं कि ुसलमानी राज्य प्राण-पीड़क था; अुसमें घमण्ड था। आजका अंग्रेजी ाज्य तो नास्तिक है, धर्मसे विमुख है। अिस राज्यमें हमारा धर्म ोखिममें पड़ गया है।

हमारे आसपासके मुल्कोंमें पठानों, औरानियों और अरबोंकी हालत मसे अच्छी है। हमारे जैसी शिक्षा अुन्हें नहीं मिलती, फिर भी वे हमसे ढ़कर हैं।

अिस तरह हमारी दीन दशाका चित्र खींचनेके बाद मैं शिक्षकोंके ामने अपना मामला पेश करता हूं। जब तक हम अपनी शिक्षाको रबाद करनेके लिअे तैयार न होंगे, तब तक हम देशको स्वतंत्र नहीं र सकेंगे।

आजकल बहुतसे विद्यार्थी मेरे पास आकर अपनी बात अिस ढंगसे हते हैं कि दिल टुकड़े-टुकड़े हो जाता है। फिर भी मैं देखता हूं कि वे बराये हुअे हैं। वे अैसे सवाल करते हैं कि आज हम स्कूल छोड़ दें, तो ल ही दूसरा स्कूल मिलेगा या नहीं। यह शिक्षाका मोह है। यह कोओ

नहीं कह सकता कि मैं शिक्षाका विरोधी हूं। मैं पलभर भी पढ़े या विचार किये बगैर नहीं रहता। लेकिन जब चारों तरफ आग लगी हो तो हम डिकन्सन या बाअिबल लेकर पढ़ने नहीं बैठ सकते। अिस वक्त देशमें दावानल सुलगा हुआ है। अिस शिक्षाका मोह हमें हरगिज न रखना चाहिये।

अगर आप निश्चित रूपसे यह मानते हों कि अंग्रेजोंने पंजाब और खिलाफतके मामलेमें हिन्दुस्तान पर जुल्म किया है, अुसे दगा दिया है, तो जब तक अिस जुल्मका वे पूरा प्रायश्चित्त न करें, अपना मैला दिल पूरी तरह साफ न कर लें, तब तक किसी भी तरहका दान या वेतन या शिक्षा अुनसे लेना बड़ा भारी पाप है। हम गधागधे शिक्षा नहीं ले सकते। मैले हाथोंसे दिया जानेवाला शुद्धसे शुद्ध शिक्षण भी मैला ही है। अंग्रेज तो अपनी गंदगीको भी सफाअी कहकर बताते हैं।

अिस वक्त हममें जो दीनता है, पामरता है और हम जिस भ्रममें पड़े हुअे हैं, वह अंग्रेजी शिक्षाका ही प्रताप है। यह कहना सरासर झूठ है कि हमें अंग्रेजी शिक्षा न मिली होती, तो हम अिस वक्त कोअी हलचल न करते होते।

देशके लिअे मर मिटनेकी जो वृत्ति अरबोंमें है, वह हममें नहीं है। मैं भविष्यवाणी करता हूं कि जब तक हम अैसी गिरी हुअी हालतसे बाहर नहीं निकलेंगे तब तक हिन्दुस्तान आजाद नहीं हो सकेगा।

शिक्षकों और प्रोफेसरोंसे मैं हिम्मतके साथ कहता हूं कि प्रजामें अुमंग और अुत्साह भरना हो, तो आप कल ही अिस्तीफा दे दें। अिस्तीफा देनेवाला शिक्षक विद्यार्थियोंको बड़ेसे बड़ा सबक सिखायेगा।

अगर शिक्षकोंमें वीरता या बहादुरी आ जाय, अुन्हें समझमें आ जाय कि वो सल्तनत अिन्साफ नहीं करती और अपने अन्यायका प्रायश्चित्त नहीं करती, अुसकी तनखाह नहीं ली जा सकती, तो गुजरातमें आज ही स्वराज्य हो जाय। शिक्षक अगर हिम्मत करके कहें कि हम भीख मांगकर भी सच्ची राष्ट्रीय शिक्षा ही देंगे, तो आकाशमें देवता भी देखने आयेंगे और फूलोंकी वर्षा करेंगे।

३

[ता० ६–१०–'२० को सूरतके विद्यार्थियोंके सामने दिये हुअे भाषणसे।]

मैंने सरकारकी हुकूमतका हिसाब लगाया, तो लाभके बजाय हानि ही ज्यादा निकली। सुधारों (रिफार्म्स) में देनेके बजाय ले लेना ही दिखाओी दिया। सरकारकी ताकत मशीनगनोंमें नहीं है, बल्कि हमारा अुसके लिअे जो मोह है अुसमें है। यह मोह तीन तरहका है। द्विजेन्द्रनाथ टागोरने जिसे मायामृग कहा है वह धारासभाओंका मोह, अदालतोंका मोह और शिक्षाका मोह। खिताबों और पदवियोंको तो मैं छोड़ ही देता हूं, क्योंकि ये बहुत कम लोगोंके पास हैं। मगर अिन तीन मोहोंमें हम बहुत लोग फंसे हुअे हैं। हमारे विद्वान और बुजुर्ग नेता लाला लाजपतराय भी अिसमें फंसे हुअे हैं। मालवीयजी महाराज मेरे लिअे सदा पूजनीय हैं। वे भी मानते हैं कि मेरी बुद्धि मारी गअी है और मैं सबको अुलटे रास्ते ले जा रहा हूं। वे समझते हैं कि कौन्सिलोंमें जाना धर्म है, शालाओंमें जाना धर्म है। मेरे खयालसे कौन्सिलोंमें जाना पाप है, अदालतोंमें जाना पाप है और स्कूलोंमें जाना महापाप है।

मैं वकीलोंको अगर नहीं समझा सकता तो अिसका कारण है। मैं जानता हूं, अुनमें कितनी माया भरी है। बालबच्चोंका, आराम-कुरसीका और मोटर-गाड़ीका मोह छोड़ना मुश्किल है। पर विद्यार्थियोंके लिअे अैसा कुछ भी नहीं। अुन्हें जिधर मोड़ो, अुधर ही वे मुड़ जायंगे। वे गुलामीकी तालीम लें, नौकरीके लिअे स्कूल-कॉलेजोंमें जाते ही रहें और मैं अुन्हें न रोकूं, तो विदेशी हुकूमतकी जड़ नहीं अुखड़ सकती। मैं यह जड़ अुखाड़ना चाहता हूं। विद्यार्थियोंके जरिये हुकूमतको खाद-पानी मिलता है। यह पानी नायगरा प्रपात जैसा — गंगा, जमुना और ब्रह्मपुत्राके अिकट्ठे प्रपात जैसा — है। आप अिशारेमें समझ सकते हैं कि यह वहमी विद्या, गुलामीकी विद्या, हमें नहीं चाहिये। मैं जब तक गुलामी छोड़नेका अलिफ बे — ककहरा — न सिखाअूं, तब तक और सब सिखाना बेकार है। मैले बर्तनमें दूध डालते रहें तो बर्तन साफ नहीं होगा, पर दूध मैला हो जायगा। हम गुलामीके बर्तनसे बिगड़े होंगे,

तब तक शिक्षा बेकार ही रहेगी। अगर देशभक्त हों और ये देखें कि हिन्दुस्तान कैसा बना है, तो शिक्षाकी बुनियाद फिजूल है। अिसलिअे पहले शुद्ध बनो। कानून और डॉक्टरीका ज्ञान अगर नहीं मिलेगा, तो हिन्दुस्तान रसातलमें नहीं चला जायगा, किन्तु गुलामीमें धंसा जायगा। तब हिन्दुस्तान अिन्सानोंका नहीं, बल्कि हैवानोंका देश माना जायगा। मनुष्य किसीसे — *बड़ी हुकूमतसे भी — दबकर अपने दिलकी सच्ची बात न कह सके,* अिसीका नाम गुलामी है। अिससे छुटकारा पाना हमारा पहला मकसद है। जो लगन मुझे लगी है, वही जलियांवाला बागके अुदाहरणसे और अिस्लामके अपमानसे सबको लगे।

४

['काशीमें गांधीजी' नामक लेखसे]

कुछ महीने पहले मैंने तुमसे संयमके बारेमें कुछ कहा था। आज भी तुम्हारे पास अपने ढंगसे मैं संयमकी ही बात करने आया हूं। आजकल अैसा कहा जाता है कि मैं विद्यार्थियोंको बहका रहा हूं। मैं अपनी जिम्मेदारी समझकर कहता हूं कि मैं किसीको बहकाना नहीं चाहता। मैं विद्यार्थियोंको बहका ही नहीं सकता। मैं भी अेक विद्यार्थी था और विद्यार्थीकी हालतमें भी जो कुछ काम करता था, अदबसे करता था। अिसके सिवा मैं चार बेटोंका बाप हूं और सैकड़ों लड़के मेरे पास आ चुके हैं, जिनके लिअे पिताके बराबर होनेका मैं आज भी दावा करता हूं। अैसे आदमीके मुंहसे बहकानेकी बात निकल ही नहीं सकती।

लेकिन आज जमाना अैसा है कि मैं जो कुछ कर रहा हूं, अुससे बुजुर्ग लोग समझते हैं कि मैं अुनके साथ अन्याय कर रहा हूं। अुन्हें लगता है कि जिस सत्यका मैं आग्रह करता हूं, अुससे भी मैं कुछ विचलित हुआ हूं और जिस विवेकका मैं दावा करता रहा हूं, वह विवेक भी आज मेरी भाषामें नहीं रहा। अिन सब बातोंका मैं विचार कर रहा हूं। पर मेरी आत्मा गवाही देती है कि मैं अविवेकी भाषाका प्रयोग नहीं करता।

*   *   *

पण्डितजीका अेक व्याख्यान 'लीडर' में आया है। मैं देखता हूं कि वह अुनकी सम्मति लेकर छापा गया है। अुसके अेक वाक्यकी तरफ मैं तुम्हारा ध्यान खींचना चाहता हूं। वह यह है कि 'सब कुछ सोच-विचार कर अपनी अन्तरात्मा कहे वही करना'। मैं भी यही बात कहना चाहता हूं। और तुम्हें अन्तरात्माकी आवाजके बारेमें कुछ भी शक हो, तुम अपने दिलमें फैसला न कर सको, तो तुम मेरी बात न मानना, और किसीकी बात न मानना, सिर्फ अपने पूज्य नेता पंडितजीकी ही बात मानना।

* * *

पण्डितजीको अैसा खयाल हो गया है कि तुममें से कुछ लोग बिना विचारे कदम अुठा रहे हैं; और बिना विचारे कुछ भी करोगे, तो अपनी जगहसे गिर जाओगे। लेकिन तुम्हें अैसा लगता हो कि अिस संस्थामें पढ़ना पाप है, तो तुम अिसे फौरन छोड़ देना। और पण्डितजी तुम्हें आशीर्वाद देंगे। लेकिन तुम्हारी आत्मा जाग्रत न हुआी हो, तो तुम पण्डितजीकी ही बात सुनना।

जब तुम्हारा काम साफ हो, अुसका हेतु साफ हो और अुसका नतीजा साफ हो, तभी वह अन्तरात्माकी प्रेरणासे हुआ माना जायगा। लेकिन अुस पर अेक और पाबन्दी शास्त्रोंने लगाओी है। जो संयमी है, जो अहिंसा, सत्य और अपरिग्रहका पालन करनेवाला है, वही कह सकता है कि मुझे अन्तरात्माका आदेश हुआ है। तुम ब्रह्मचारी न होओ, तुम्हारे दिलमें दया न हो, मर्यादा न हो, सचाओी न हो, तो तुम्हारा कोओी काम अन्तरात्माकी आवाजसे प्रेरित नहीं कहा जा सकता। पर मैंने बताया वैसा तुम्हारा दिल हो, तुमने पश्चिमी ढंग छोड़ दिया हो, तुम्हारे स्वच्छ हृदय-मंदिरमें प्रभुका निवास हो, तो तुम अपने मां-बापका भी सविनय अनादर कर सकते हो। अुस हालतमें तुम आजाद हो और अिसलिअे यह कदम अुठा सकते हो। मुझे मालूम है कि पश्चिममें स्वेच्छाचारका दौरदौरा है। लेकिन मैं हिन्दुस्तानके विद्यार्थियोंको स्वेच्छाचारी नहीं बनाना चाहता। अिस पवित्र काशी क्षेत्रमें, अिस पवित्र जमीन पर, मैं तुम्हें स्वेच्छाचारी बनाना चाहूं, तो मैं अपने कामके लायक नहीं हूं।

मैं लड़कोंको क्यों समझा रहा हूं कि स्कूल छोड़ना तुम्हारा धर्म है? क्या मैं तुम्हारा पढ़ाओीका जीवन खराब करना चाहता हूं? नहीं। मैं अब

तक अभ्यासी जीवन बिता रहा हूं, विद्यार्थी हूं। पर मैं कहना चाहता हूं कि जिसे स्वतंत्रताकी तालीम नहीं मिली — और वह बेशक मिलकी 'लिबर्टी' पढ़नेसे नहीं मिलती — वह स्वतंत्र नहीं कहलाता।

*   *   *

रावणके पकवान और दास-दासियोंको छोड़कर अशोक वाटिकामें सिर्फ फल-फूलसे गुजर करनेवाली सीताजीकी तरह शान्तिमय असहयोग करनेकी ताकत तुममें न आयेगी, तो अिसमें जरा भी शक नहीं कि हिन्दुस्तान नष्ट हो जायगा और गुलामीमें ही सड़ा करेगा।

अगर आज हिन्दुस्तानके हर स्त्री-पुरुषकी अेक ही भावना हो जाय, तो हिन्दुस्तान आज ही आजाद हो सकता है। पर जिन-जिन मुल्कोंने अैसी लड़ाअी छेड़ी है, अुनमें मतभेद भी रहे ही हैं। अिन सबमें से पार होकर वे स्वतंत्र हुअे हैं। *अुन्होंने जो तकलीफें अुठाअी हैं, अुन तकलीफोंको सहे* बिना हमारा देश भी आजाद नहीं हो सकता। तुम अपनी सभ्यता न छोड़ो, विनय न छोड़ो, नम्रता न छोड़ो। तुम्हारा साथ न देनेवाले विद्यार्थियोंसे नफरत न करो, अुन्हें सताओ नहीं। तुम अैसे काम करो जिससे तुम्हारे बारेमें हमारे माननीय नेताओंमें जो अविश्वास है, वह मिट जाय। तुम विद्यालयसे निकलकर अपना धर्माचरण बढ़ाओगे, तो अुनका आशीर्वाद तुम्हें मिल जायेगा। तुम बिना सोचे कॉलिज छोड़कर अपना स्वार्थ साधोगे, दंभी बनोगे, व्यसनी बनोगे, सेवाधर्म छोड़ोगे, तो अुनकी आत्माको और मेरी आत्माको दुःख होगा। तुम किसीकी सलाह चाहते हो तो पण्डितजीकी ही सलाह मानना। मगर तुम्हें किसीकी सलाहकी जरूरत न रही हो, और तुमने निश्चय कर लिया हो, तुम्हारा दिल पुकारकर कहता हो कि असहयोग तुम्हारा धर्म है, तो तुम बेशक निकल आना और पण्डितजीका आशीर्वाद लेकर निकल आना, वे तुम्हें पलभर भी न रोकेंगे।

*   *   *

असहयोग बहुत बड़ा संयम-धर्म है। तुममें असहिष्णुता हो तो तुम असहयोगी नहीं हो सकते। मां-बापके प्रति तुम्हारा जो फर्ज है, अुसके बारेमें अितना ही कहता हूं कि तुमने निश्चय कर लिया हो, तो बड़े अदबसे विनयके साथ अुनके पास चले जाओ और अुनसे साथ दलील करो।

और तुम्हें अैसा लगे कि अुनकी बातसे तुम्हारा दिल हिल गया है, तो तुम जरूर अुनकी बात मानो। मैं तुम्हारे हर काममें विनय चाहता हूं, धर्म चाहता हूं। अगर धर्म-पालनको तुच्छ समझोगे तो जो प्रतिज्ञा करके तुम कॉलेज छोड़ोगे, वह प्रतिज्ञा भंग हो जायगी। अिसलिअे तुम्हें विनयकी तालीम पहले लेनी पड़ेगी और तुम्हें भारी बलिदान देना पड़ेगा। 'भारी' अिसलिअे कहता हूं कि आजकी दीन दशामें हम नामर्द हो गये हैं और आजीविकाका साधन छोड़ना भी बड़ा बलिदान है।

अन्तमें भी मैं बार-बार कहता हू कि 'तुम्हारा जिन पर भरोसा हो, अुन अध्यापकों और मालवीयजीसे मिलकर नया निश्चय करके कॉलेज छोड़ना और अुनका आशीर्वाद लेना है।'

नवजीवन, ५-१२-'२०

३

वर्तमान शिक्षा-पद्धति

[अेक बातचीत]

हिन्दुस्तानी भाअी — तो क्या मौजूदा शिक्षा-पद्धति गलत है?

गांधीजी — यह सवाल ही पैदा नहीं होता। फिर भी अुसका जवाब देनेमें मुझे कोअी दिक्कत नहीं। मैं कहता हूं कि 'हां, वह गलत है।' शिक्षाका माध्यम अंग्रेजी होनेके कारण विद्यार्थियोंके दिमाग पर दोहरा बोझ पड़ गया है। मै अपने विचार आपसे क्या कहूं? प्रोफेसर जदुनाथ सरकार जैसे लोग कहते हैं कि अिस विदेशी माध्यम द्वारा शिक्षा पाये हुअे लोगोंका दिमाग निर्वीर्य हो गया है। हमारी कल्पनाशक्ति या सर्जनशक्ति ही नष्ट हो गअी है। हमारा सारा वक्त पराअी भाषाके अुच्चारण और मुहावरे याद रखनेमें जाता है। यह काम ही बेगार जैसा है और नतीजा यह हुआ है कि हम यूरोपीय सभ्यताके स्याहीसोख बन गये हैं। अुनकी अच्छाअियां लेनेके बजाय हमने अुनका तुच्छ अनुकरण ही किया है। दूसरा परिणाम यह हुआ है कि हमारे और आम लोगोंके बीचमें अेक बड़े समद्र

जितना अन्तर पड़ गया है। अिस भाषामें वे समझ सकते हैं, अुसमें हम राजनीतिक विषय तो क्या, तन्दुरुस्ती और लोकहितकी बातें भी नहीं समझा सकते। अिस जमानेमें हम मूल शासकों जैसे बुरे बन गये हैं, बल्कि अुनसे भी ज्यादा बुरे। क्योंकि अुनके दिल मैले न थे; वे राष्ट्रकी सम्पत्ताके 'ट्रस्टी' जैसे थे। हम तो वह भी नहीं रहे। हम अपनी शिक्षाका अनुचित अुपयोग कर रहे हैं और फिर भी अैसा बरताव कर रहे हैं जैसे आम लोगोंके संरक्षक हों। मैं चाहता हूं कि आप अिस मामलेमें मुझसे जिरह करें। मगर अितना कह देता हूं कि ये विचार मेरे आजके नहीं, बल्कि कअी सालके अनुभवसे बने हैं।

अंग्रेज भाअी — हमने अिस बारेमें विचार ही नहीं किया। अिसलिअे अितना ही कह सकते हैं कि अिस पर हम विचार करेंगे।

गांधीजी — यह ठीक है। अेक बात कहना भूल गया। यह तो मैंने कहा ही नहीं कि अिस प्रथासे हमारी आत्मा नष्ट हो गअी है। आप अधार्मिक शिक्षाकी ही पूजा करते आये हैं, अिसलिअे हिन्दुओंको धार्मिक शिक्षा कुछ भी नहीं मिल सकी। अिंग्लैंडमें अिसका दुष्परिणाम अितनी हद तक नहीं पहुंचा। वहां पादरी लोग कुछ न कुछ धार्मिक शिक्षा देनेका बन्दोबस्त कर लेते हैं।

हिन्दुस्तानी भाअी — सच तो यह है कि लूटके धनसे आप अपने बच्चोंको शिक्षा नहीं देना चाहते; क्यों ठीक है न?

गांधीजी — हां, लूटके धनसे ही नहीं, लूट मचानेवालोंके झण्डेके नीचे भी नहीं। मैंने कहा है कि जिस सरकारके लिअे हमारे दिलमें कोअी अिज्जत नहीं रह गअी है, प्रेम नहीं रह गया है, अुस सरकारके मातहत जो स्कूल-कॉलिज हैं, अुनके साथ हमें कोअी सम्बन्ध नहीं रखना है। मैं आपसे अेक सादी बात कहूं। अेक समय था जब मैं खुद 'गॉड सेव दि किंग' (जुग-जुग जीवो महाराजा) बड़ी अुमंगसे गाता था। अितना ही नहीं, मैंने अपने अंग्रेजी न जाननेवाले लडकोंको भी यह गीत जबानी याद कराया था। जब मैं अफ्रीकासे राजकोट आया, तब मैंने ट्रेनिंग कॉलिजके विद्यार्थियोंको भी यह गीत सिखाया था, क्योंकि मैं समझता था कि सच्चे

राजभक्तको यह गीत आना ही चाहिये। मगर आज क्या हालत है? आज मैं अपनी छाती पर हाथ रखकर अुसे गा ही नहीं सकता और न किसीसे गानेको कह सकता हूं। मैं यह कह सकता हूं कि अेक सज्जनकी हैसियतसे राजा जॉर्ज खूब जियें; मगर मैं यह तो नहीं गा सकता कि जो साम्राज्य मनुष्य और अीश्वर दोनोंकी नजरमें नीचा हो गया है, वह पलभरके लिअे भी जिन्दा रहे।

हिन्दुस्तानी भाअी — आप कह चुके हैं कि मुझे अिस बातकी परवाह नहीं कि शिक्षा-पद्धति कैसी है।

गांधीजी — हां, सच है।

हिन्दुस्तानी भाअी — हमारी युनिवर्सिटियां तो हिन्दुस्तानी ही चलाते हैं; अुनकी नीति भी हिन्दुस्तानी ही बनाते हैं।

गांधीजी — हां, सच बात है। युनिवर्सिटीवाले मेरी बात सुनें, तो मैं अुन्हें यही कहूं कि आप अपने 'चार्टर' (अधिकार-पत्र) फाड डालिये। तब मैं यह कहूंगा कि वह युनिवर्सिटी मेरी ही है। अगर वे यह कहें कि सरकारसे मिलनेवाला रुपया बन्द हो जायगा, तो मैं अुन्हें यकीन दिलानेके लिअे तैयार हूं कि रुपया मैं ला दूंगा। मैं सिर्फ अितना ही कह रहा हूं कि आप अपनी युनिवर्सिटियोंको राष्ट्रीय बना दें। पण्डितजीको भी मैंने क्या कहा? यही कि 'वाअिसरॉयको चार्टर लौटा दीजिये और महाराजा लोग भी चाहें तो अुन्हें भी अुनका रुपया वापस कर दीजिये। रुपयेकी कमी रहेगी तो हम भीख मांग लेंगे। आपमें अगर राजा-महाराजाओंसे भीख मांगनेकी अनुकरण करने लायक शक्ति है, तो मैं आम लोगोंसे भीख मांगनेकी थोड़ी शक्ति जरूर रखता हूं।'

हिन्दुस्तानी भाअी — पर 'चार्टर' ने क्या बिगाड़ा है?

गांधीजी — अरे 'चार्टर' आया कि अुसके साथ सरकारका सब कुछ आ गया। 'चार्टर' है, अिसीलिअे तो हिन्दू विश्वविद्यालय ड्यूक ऑफ कनॉटका आदर करेगा। मैं यह कैसे सह सकता हूं? नहीं, मैं तो सच कहता हूं कि श्रीमती बेसेण्ट द्वारा अेक बार कही गअी यह बात सही है कि 'तुम तो विप्लव — बगावत — करना चाहते हो'। अलबत्ता, यह

विप्लव लिये 'विप्लवपूर्ण' नहीं, बल्कि धीरे-धीरे विकास करनेवाला विप्लव (evolutionary revolution) होना चाहिये। पर विप्लव तो ऐसा ही चाहिये। अुसके सिवा कोअी चारा नहीं है।

नवजीवन, ३०-१२-'२०

४

असहयोगकी प्रतिज्ञाकी तीन शर्तें

['विद्यार्थियोंके बीचमें बातचीत' नामक लेखसे।]

असहयोगको माननेवाला किसी भी विद्यार्थीके हाथों मैं शान्ति-भंग देखना नहीं चाहता। असहयोगको माननेवालेको अिसकी तीन शर्तें मंजूर होनी चाहियें। अुनमें से पहली शर्त है शान्ति। तुम अपने दिलमें यह रखना कि हमें शान्ति भंग नहीं करना है, न किसीको गाली देना है, न गुस्सा करना है, न किसीको तमाचा मारना है और न 'शर्म शर्म' की आवाजें लगाना है। जब तक अैसा न हो, कोअी अिस लड़ाअीमें शरीक नहीं हो सकता।

असहयोग शान्तिपूर्ण, बिना तलवारके, होना चाहिये। जबान भी तलवार है, हाथ भी तलवार है और लोहेका धारदार टुकड़ा भी तलवार है। दूसरी शर्त संयम या अपने पर काबू रखना है और तीसरी शर्त यज्ञ है। हम जब शुद्ध होते हैं, तब यज्ञ या बलिदान कर सकते हैं। बलिदान किये बिना कोअी पवित्र नहीं हो सकता और शुद्ध हुअे बिना तुम्हें अपनी शाला न छोड़ना चाहिये। यहां आज लगभग ६० विद्यार्थी हैं। अुनमें से पांच विद्यार्थी ही रह जायं, तो अुनसे भी विद्यापीठ अपना काम चला लेगा। अुसकी बुनियाद शुद्ध होगी, तो अुस बुनियाद पर स्वराज्य कायम होगा। जिसने अपनी शुद्धि नहीं की, वह अिस पवित्र बुनियादकी शुद्धतामें वृद्धि नहीं करेगा, बल्कि अुसे बदनाम करेगा। अिसलिअे अिस महाविद्यालयमें भरती होनेकी अिच्छा रखनेवाले

विद्यार्थियोंसे मैं कहता हूं कि तुम असहयोगकी अिन शर्तोंका पालन न करना चाहो, तो मुझे छोड़ देना।

नवजीवन, १५-११-'२०

५

सूतके धागेसे स्वराज्य

१

[गुजरात महाविद्यालयके आचार्य, अध्यापकों और विद्यार्थियोंसे गांधीजी तारीख १३-१-'२१ को महाविद्यालयमें मिले थे, अुस समय दिये हुअे भाषणसे।]

अपनी जिन्दगीमें खास-खास चीजोंको मैं खास-खास वक्त पर ही बिलकुल साफ तौर पर देख सकता हूं, जैसे रौलट बिलके आन्दोलनके समय नडियादमें मुझे अेक दिन अचानक सूझा कि कानूनको विनयके साथ तोड़नेके लिअे अभी जनता तैयार नहीं। अिसी तरह आज तीन-चार दिनसे अेक बात मेरे मनमें पैदा हो गअी है। अगर हम असहयोगको सफल बनाना चाहते हैं, विद्यार्थियोंको अिसमें शरीक करना चाहते हैं और अेक वर्षमें स्वराज्य लेना चाहते हैं, तो हमें क्या करना चाहिये? जो बात मैं पहलेसे ही मानता आ रहा हूं, वही बात मैं अब आपके सामने रखता हूं। मेरा विश्वास तो अिस चीजमें शुरूसे ही अटल रहा है। मगर यह विश्वास क्यों है, अिसका अेक पहलू जैसा मैं अब समझता हूं, वैसा पहले नहीं समझता था।

कुलपतिकी हैसियतसे मैं आपसे कुछ भी कहने नहीं आया हूं। बड़े भाअी या बुजुर्गके नाते सलाह देने और मशविरा करने आया हूं। यह सलाह आपहीके साथ मुझे जरूर देनी है। जितनी दृढ़ता और विश्वासके साथ यह चीज मैं आज कहूंगा, अुतनी दृढ़ता और विश्वासके साथ मैंने पहले कभी अुसे आप लोगोंके सामने नहीं रखा था। अगर आपका

कहना यह हो कि शालाअें छोड़ना, शिक्षाके बिना रहना, आत्महत्या करनेके बराबर है, तो मैं आपसे कहूंगा कि शालामें रहनेका पाप छोड़कर आप जरूर आत्महत्या कीजिये। अिस आत्महत्याके लिअे ओीश्वर आपको माफ कर देगा। अब तक मैं आपको कअी तरहकी बानगियां परोसता रहा हूं; आज मैं यह कहने आया हूं कि आप असहयोगको सच्चा साबित करना चाहते हों, तो अपना सारा वक्त सूत कातनेमें ही लगाअिये। यह आपको नयी बात लगेगी, अिससे आपको आघात पहुंचेगा। जिन्हें बी० अे० होनेकी अिच्छा है और जिन्हें यह विश्वास दिलाया गया है कि विद्यापीठ यह डिग्री देगा, अुनसे मैं कहता हूं कि आज हिन्दुस्तानके लिअे चरखा चलाना ही सबसे बड़ी डिग्री है। मैं यहां तक जाता हूं, क्योंकि मेरे विचारोंमें जिस वक्त जितनी तेजी है, अुतनी ही तेजी मैं आपमें भी आअी हुअी देखना चाहता हूं।

हिन्दुस्तान हमारे हाथसे अिसलिअे गया कि हमने स्वदेशी-धर्मको छोड़ दिया। हिन्दुस्तानमें सूत कातना कोअी अलग धन्धा नहीं था। हरअेक वर्गकी हरअेक स्त्री सूत कातती थी। कुछ मर्द भी कातते थे। ढाकेकी मलमलका सूत कातनेवाले पुरुष थे। मगर यह तो मैंने कुछ पेशेवर आदमियोंकी बात कही। आम तौर पर कातना कोअी पेशा नहीं था, बल्कि कर्तव्य समझा जाता था, धर्म माना जाता था। जब तक हिन्दुस्तानमें कातना जारी था, तब तक हिन्दुस्तान खुशहाल था, मालामाल था। हमारा पैदा किया हुआ कपड़ा सिर्फ देशकी भीतरी मांगको ही पूरा नहीं करता था, बल्कि पिछला अितिहास बताता है कि कपड़ा अुसमें भी ज्यादा पैदा होता था और विदेशोंमें भी जाता था। ओीस्ट अिंडिया कम्पनीने कैसे-कैसे पवित्र या अपवित्र साधनोंसे कपड़ा बुननेका अुद्योग बरबाद किया, करोड़ों रुपये कमानेके लिअे लड़ाअियां लड़ीं, बन्दरगाह हथिया लिये, व्यापार पर कब्जा किया और अन्तमें यहां राज कायम कर लिया! हम जब तक पश्चात्ताप न करेंगे, बापदादों पर गुजरे हुअे जुल्मोंके लिअे जब तक प्रायश्चित्त नहीं करेंगे, तब तक स्वराज्य किस तरह ले सकते हैं? दण्ड देकर हरगिज न ले सकेंगे, दण्ड देनेवा... पड़ेगा। दण्ड देकर नहीं, बल्कि अपनी शुद्धि करके ही

कभी नहीं घटती। मेरा अपना तो यह अनुभव है कि जब मैं जेलमें था और पढ़नेके लिअे मुझे कोअी पुस्तक नहीं मिलती थी, तब मैं ज्यादा विचार कर सकता था। हमारे दिमाग पढ़-पढ़कर सड़ गये हैं। अिसलिअे मैंने आपसे कहा कि आप छह घंटे कातिये और बाकीके समयमें पढ़िये। आपसे तो मैं यह भी कहता हू कि आप अगर कातनेमें होशियार हो जायं, तो गावोंमें भी जा सकते हैं। अगर आपको अपने अूपर अितना भरोसा न हो, तो आप कॉलिजमें भी रह सकते हैं। मगर मुझे अितना भरोसा है कि सबके चार-छह घंटे रोज कातनेमें दिये बिना हमें स्वराज्य नहीं मिल सकता। अेक महीनेमें या ज्यादासे ज्यादा तीन महीनेमें आप कातना सीखकर देहातमें पहुंच जानेके लिअे तैयार हो सकेंगे और वहां अुसका प्रचार कर सकेंगे। सूतका अकाल मिटाकर हम हिन्दुस्तानको जितना आगे बढ़ा सकते हैं, अुतना और किसी तरह नहीं बढ़ा सकते। अिसके सिवा अगर अैसा नहीं करेंगे, तो अब हमें कांग्रेसके विधानके अनुसार जो मतदाता-संघ बनाना है, वह कैसे बन सकेगा? गुजरातके गावोंको आज मैं क्या सन्देश पहुंचा सकता हूं? अंग्रेजोंको गाली देनेको कहूं? या अुन्हें तलवार-बन्दूक दूं? तब अुन्हें क्या कहूं? मेरा संदेश यही है कि सब सूत कातने लग जायं। कोअी गावका आदमी अहमदाबाद आकर जब कपड़ा ले जाता है, तो अुससे मुझे दुःख होता है। मेरा स्वदेशी-धर्म यह है कि हरअेक गाव अपनी जरूरतकी चीजें खुद ही बना ले। अिस पुराने रिवाजको हम फिर जारी कर सकें, तो हिन्दुस्तान पर कोअी बुरी नजर नहीं डाल सकेगा। आचार्य महोदय और अध्यापकोंसे मैं निवेदन करता हूं कि अेक सालके लिअे तो आप यही तरीका अख्तियार कर लीजिये और विद्यार्थियोंको गावमें भेजनेके लिअे तैयार कीजिये।

अिस सालके भीतर आपकी शिक्षा अितनी हो जाय तो काफी है: अपनी गुजराती सुधारिये, अंग्रेजीको छोड़ दीजिये, हिन्दुस्तानी सीखिये, अुर्दू लिपि सीख लीजिये और चरखा चलाना सीख लीजिये। अितना करेंगे तो हम अगले सालके लिअे तैयार हो जायंगे। मैं तो चाहता हूं कि स्वराज्य मिलने तक यही तरीका जारी रखा जाय। अैसा न हो सके, तो कमसे कम अेक बरसके लिअे तो जरूर रखिये। यही मेरा आजका संदेश है।

अिसे सच्ची फिकर यह है कि वे हिन्दुस्तानका कपड़ेका अकाल मिटा दें। आज हिन्दुस्तानमें कपड़ेका अकाल है, अनाजका अितना अकाल नहीं। अिस कपड़ेके लिये ६० करोड़ रुपये हर साल बाहर चले जाते हैं। हिन्दुस्तान आज ४० करोड़ रतल सूत बाहरसे मंगाता है। अितना सूत हमें घरोंमें कात लेना चाहिये। बुननेवालोंकी हमारे यहां कमी नहीं, कातनेवालोंकी अिस वक्त कमी है। बुननेवालोंकी संख्याका ठीक-ठीक आंकड़ा अभी मुझे नहीं मिला है, पर अुनकी संख्या पचास लाख या अुससे ज्यादा है। अगर हमें यह रुपया बचाना है, तो सूत कातने लग जाना चाहिये। यह तो सोचिये कि ६० करोड़ रुपयेका व्यापार देशमें ही हो, तो कितने आदमियोंको रोजी मिले। कपड़ेका पूरी तरह अिस्तेमाल करना चाहिये। हमारी अैसी हालत नहीं कि हम जितना चाहें अुतना कपड़ा खर्च कर सकें। सिर्फ लुंगीसे काम चलता हो, तो और कुछ नहीं पहनना चाहिये। छोटी धोतीसे काम चल सकता हो, तो लम्बी नहीं पहनना चाहिये। ६० करोड़ रुपये बचानेके लिअे अुतना ही बड़ा बलिदान देना पड़ेगा।

विद्यार्थी अगर यह पूरा साल अिसी काममें लगा दें, तो कांग्रेसके प्रस्तावके अनुसार अेक बरसके भीतर स्वराज्य आ सकता है। मगर अिसके लिअे बड़ी भारी कोशिश करनेकी जरूरत है। किसी खास शर्त पर ही आप अपना यह ध्येय प्राप्त कर सकते हैं। विद्यार्थी अपनी पढ़ाअी बन्द करके हिन्दुस्तानके लिअे मजदूर बन जायं। अगर आप अपनी मजदूरीके लिअे कुछ मेहनताना न लें, तो आपकी मेहरबानी है; मगर जिसे लेना हो वह खुशीसे ले सकता है।

अगर मैं आपको सलाह देने लायक माना जाअू, तो मैं सलाह दूंगा कि आप अपने कॉलेज छोड़ दीजिये। स्वराज्यकी लड़ाअीमें आप पूरा हाथ बटाना चाहते हों, तो हिन्दुस्तानके लिअे जितना सूत कात सकते हों कातिये। रोज छह घंटे या अुतना न हो सके तो कमसे कम चार घंटे तो कातनेमें जरूर लगाअिये। मेरा यह आग्रह नहीं कि आप पढ़ाअी बिलकुल छोड़ दें। मैं नहीं मानता कि छोड़ भी दें, तो अुससे आपकी विचार-शक्ति कम हो जायगी। जिसका मन मैला नहीं होता, अुसकी सोचनेकी ताकत

ऌ मानना कि कातना शिक्षा नहीं, हमारी पहली
कि बलिदान शिक्षा नही, दूसरी भूल है। कल ही
ास जायं कि पढाअीका बलिदान करके देशकी सेवा
ी क्षण समझ लूगा कि मेरा अेक बरसका काम

ग्राओमें अैसा फेरबदल करनेसे असहयोगकी हल-
ुचेगा ?

। सरकारी स्कूल-कॉलेज छोडनेवालेको यह समझकर
ारी शिक्षा गन्दी चीज है। अगर वे अिस विद्यालयके
ा, तो अुन्हे अपने कॉलेज ही मुबारक हैं। जिन्हे
ना हो, वे भले ही अिस तरहका अलग कॉलेज
सूझता हो कि हमारा यही कर्तव्य है, सालभर
देशको फायदा होगा, हम स्वराज्यके साधन बन
ाम करना ही चाहिये।

प यह नहीं मानते कि सिर्फ चरखेकी तरफ ही
ाक्षाको हम भूल जायेंगे ?

कामसे स्वतंत्र होकर हम अक्षर-ज्ञान लेनेके लिअे
। अिस तरह चरखेके कामसे तो मौजूदा

आप बेधड़क होकर जो शंका हो, पूछ लेना। जिसे श्रद्धा न हो, अैसा अेक भी विद्यार्थी अिस नअी बातको अपनाये यह मैं नहीं चाहता। आपकी बुद्धि और हृदय माने, तो ही मेरी बात मानना।

सवाल-जवाब

विद्यार्थी — चरखेसे असहयोग आन्दोलनको क्या मदद मिलेगी?

गांधीजी — चरखेसे हिन्दुस्तानकी आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त की जा सकेगी। जब तक आर्थिक स्वतंत्रता नहीं मिलेगी, तब तक हम स्वराज्य नहीं भोग सकेंगे। हम साबुनके बिना, सुअीके बिना या पिनके बिना काम चला सकते हैं। मगर कपड़ेके बिना काम नहीं चल सकता। जिस वक्त जितना माल हम बाहरसे लाते हैं, अुतना दे नहीं सकते। अिससे हर साल आर्थिक घाटा बढ़ता जाता है। फौजका भारी खर्च हमें अुठाना ही पड़ता है। ६० करोड़ कपड़ेमें दे देते हैं और दूसरा व्यर्थकी जरूरतोंमें चला जाता है सो अलग। यह सही हो तो हमें आर्थिक स्वतंत्रता हासिल कर ही लेनी चाहिये। जो ६० करोड़ रुपया हम बचा सकते हैं, वह बचा लें। ६० करोड़ बचा लेंगे तो और भी बचानेकी शक्ति आ जायगी, या अुस वक्त वैसी चीजें बाहरसे मंगाना भी बरदाश्त किया जा सकेगा। घड़ी या पिनका कारखाना हिन्दुस्तानमें न हो, तो हिन्दुस्तान अनाथ नहीं हो जायगा। लेकिन कपड़े बिना तो हिन्दुस्तान सचमुच अनाथ जैसा हो जायेगा।

विद्यार्थी — चरखा जारी करनेसे विद्यार्थियोंमें फिर खलबली मच जायगी।

गांधीजी — खलबलीमें तो विद्यार्थी अूबे अुठते हैं। खलबली पैदा करना मेरा और अध्यापकोंका धर्म है। जिस वक्त विद्यार्थी जागते हुअे भी सो रहे हैं। जहां मा-बापके साथ, दुनियाके साथ और अपने साथियोंके साथ अिस प्रकारकी तकरार होती है, वहां संभव है कुछ लोग जाग अुठें। अिसमें पतन नहीं है।

विद्यार्थी — विद्यार्थियोंके सिवा दूसरे लोगोंसे आप कातनेको क्यों नहीं कहते? विद्यार्थियोंसे पढ़ाअी क्यों छुड़वाते हैं?

गांधीजी — यह मानना कि कातना शिक्षा नहीं, हमारी पहली भूल है। यह मानना कि बलिदान शिक्षा नहीं, दूसरी भूल है। कल ही यदि तमाम लड़के समझ जायं कि पढ़ाओीका बलिदान करके देशकी सेवा करनी है, तो मैं अुसी क्षण समझ लूंगा कि मेरा अेक बरसका काम पूरा हो गया।

विद्यार्थी — शालाओंमें अैसा फेरबदल करनेसे असहयोगकी हलचलको धक्का नहीं पहुंचेगा ?

गांधीजी — नहीं। सरकारी स्कूल-कॉलिज छोड़नेवालेको यह समझकर अुन्हें छोड़ना है कि सरकारी शिक्षा गन्दी चीज है। अगर वे अिस विद्यालयके लालचसे ही छोड़ते हों, तो अुन्हें अपने कॉलिज ही मुबारक हैं। जिन्हें सिर्फ अक्षर-ज्ञान ही देना हो, वे भले ही अिस तरहका अलग कॉलिज खोलें। अगर हमें यह सूझता हो कि हमारा यही कर्तव्य है, सालभर यह काम करेंगे तो देशको फायदा होगा, हम स्वराज्यके साधन बन सकेंगे, तो हमें यह काम करना ही चाहिये।

स॰ — क्या आप यह नहीं मानते कि सिर्फ चरखेकी तरफ ही ध्यान देनेसे मौजूदा शिक्षाको हम भूल जायंगे ?

ज॰ — चरखेके काममें स्वतंत्र होकर हम अक्षर-ज्ञान लेनेके लिअे सच्ची लियाकत हासिल करेंगे। अिस तरह चरखेके कामसे तो मौजूदा शिक्षा प्राणवान बन जायगी।

२

['बंगालकी जागृति' शीर्षक महादेव देसाअीके पत्रसे]

आज मैं तुम्हें अेक नया सन्देश देने आया हूं। ज्यादा सुन्दर सन्देश देने आया हूं। अगर तुम अेक सालके भीतर स्वराज्य लेनेका आग्रह रखते हो, अगर तुम्हें अेक बरसके अन्दर स्वराज्य चाहिये, तो अुसे लेनेका रास्ता, मैं जो सलाह देना चाहता हूं अुसे मानकर, ज्यादा साफ और आसान बनानेके लिअे मैं तुमसे कहता हूं। जिन्होंने स्वराज्य लेनेके लिअे अपना जीवन अर्पण कर दिया है, अुनका मार्ग अधिक सरल और सुगम करनेके लिअे मैं तुमसे कहता हूं।

अगर तुम यह मानते हो कि स्कूल-कॉलेज आज जैसे चल रहे हैं, वैसे ही चलते रहनेसे स्वराज्य मिल जायेगा, तो तुम भारी भूल करते हो। किसी भी देशको कष्टोंके अुठाये बिना और बलिदान दिये बिना आजादी नहीं मिली, नया जन्म प्राप्त नहीं हुआ। त्याग या बलिदानका अर्थ क्या है? अंग्रेजीका 'सेक्रिफाअिस' शब्द 'पवित्र करना' धातुसे निकला है। असहयोग आत्मशुद्धिकी क्रिया है और आत्मशुद्धिके खातिर मौजूदा कामकाज छोड़ना पड़े तो भी छोड़ देना चाहिये। अगर मैं बंगालको जानता हूं, तो मुझे लगता है कि तुम यह कर्तव्य नहीं छोड़ोगे और मुझे ठीक जवाब दोगे।

हमारी शिक्षामें दो बड़ी खामियां हैं। हमारा शिक्षाक्रम तैयार करनेवालोंने शरीर और आत्माकी शिक्षाकी अुपेक्षा की। असहयोग करनेसे ही तुम्हें आत्माकी शिक्षा मिल जाती है, क्योंकि असहयोगका अर्थ पापका सम्पर्क छोड़ना है। अगर हम यह सम्पर्क सच्चे दिलसे सोच-समझकर छोड़ते हैं, तो हम ओश्वराभिमुख होकर चलते हैं। अितना होने पर आत्माकी शिक्षा शुरू हो जाती है या पूरी हो जाती है। लेकिन हमारी शारीरिक शिक्षाकी तरफ ध्यान नहीं दिया गया और हिन्दुस्तान चरखा छोड़कर और थोड़ेसे लाभके लिअे भारी नुकसान अुठाकर गुलाम बन बैठा है। अिसलिअे मैं तुम बंगाली युवकोंके सामने चरखा रखनेमें हिचकिचाता नहीं। मैं चाहता हूं कि आत्मशुद्धिके अिस अेक सालमें चरखा सीखना और जितना हो सके अुतना सूत पैदा करना ही तुम्हारा मुख्य अुद्देश्य और मुख्य काम हो जाय। तुम अपनी मामूली पढ़ाओ स्वराज्य कायम होनेके बाद शुरू करना। मेरी मांग यह है कि आज बंगालका हरअेक युवक और युवती अपना सारा समय और शक्ति कातनेमें ही लगा दे।

नवजीवन, ३–२–'२१

६

असहयोग और पढ़ाओ

['मेरी टिप्पणी' से लिया हुआ भाग।]

पढ़ाओकी जरूरत तो है ही। अक्षर-ज्ञान भी चाहिये। मगर लिखना-पढ़ना ही सब कुछ नहीं। यह साध्य नहीं, सिर्फ साधन है। जिसे समझ है, अुसे अक्षर-ज्ञान न हो तो क्या? दुनियाके बड़े शिक्षक — सुधारक पढ़े-लिखे नहीं थे। पैगम्बर ओसा मसीहको, पैगम्बर मुहम्मदको कहा अक्षर-ज्ञान था? फिर भी अुन्होंने दुनियाको जो अक्ल दी और अुसकी सेवा की, वैसी बड़े-बड़े तत्त्ववेत्ताओं या अर्थशास्त्रियोंने नहीं की, न कभी करेंगे। बोअरोंके प्रेसिडेण्ट क्रूगरको लिखना-पढ़ना अितना कम आता था कि वे मुश्किलसे अपने दस्तखत करते थे। अफगानिस्तानके भूतपूर्व अमीरको भी अितना ही अक्षर-ज्ञान था। मगर अिन दोनोंकी समझ-शक्ति अपार थी।

लेकिन कोओ कहेगा कि यह तो मैंने असाधारण पुरुषोंकी बात की। यह सही है। मगर अिससे मैंने बताया कि अक्षर-ज्ञानके बिना काम चल ही नहीं सकता, सो बात नहीं। आज भी दुनियाका बहुत बड़ा हिस्सा पढ़ा-लिखा नहीं है, पर वह जड़ नहीं है। अुसीके बूते पर हम जीते हैं। अुसकी मामूली समझसे दुनियाका काम चल सकता है। यह सब लिखनेका मतलब अितना ही है कि हमारे बच्चे आजादीकी लड़ाओ जारी रहने तक पढ़ाओके बिना रह जायेंगे, तो अिससे अुनको और जनताको लाभ होगा। जैसे किसी मकानमें जहरीली हवा पैदा हो गओ हो, तो अुस वक्तके लिये अुसे छोड़ देनेमें ही हमारी समझदारी है, वैसे ही अिन जहर जैसी सरकारी शालाओंको छोड़नेमें ही फायदा है।

मगर अुतने समय तक बच्चे क्या करें? जनतामें ज्ञान हो तो जनताके बड़े-बड़े मकान वगैरा हमारे काम आ सकते हैं और अुनमें बच्चोंको पढ़ाया जा सकता है। मगर वे भी न मिलें, तो हम बच्चोंको

गुणोंमें तालीम दें। अुनसे कसरतें, भजन गवायें और कवायद करायें। मॉण्टेसरीके प्रस्तावके अनुसार बहुतेरे शिक्षकोंको तो जेल-यात्राकी तैयारी करनी पड़ेगी। अिसलिअे अब शिक्षाका स्वरूप अैसा बनायें कि जिसमें कमसे कम शिक्षकोंसे हम अपना काम चला सकें। और स्त्रियोंके हाथमें बच्चोंको सौंपनेमें मुझे जरा भी हिचक नहीं होती। वे माता तो बनती ही हैं। वे बच्चोंकी देखरेख करें। अगर हमने अपने बच्चोंको विनय सिखाया होगा, तो वे स्त्रियोंका ज्यादा आदर करके ज्यादा विवेकी बनेंगे और स्त्रियां भी सेवा करने लग जायंगी।

नवजीवन, १५-१-'२२

७

असहयोग संकुचित धर्म है?

[असहयोग पर कविवर रवीन्द्रनाथ टागोर द्वारा किये गये आक्षेपोंके 'अंग्रेजी विद्या और रविबाबू' नामक जवाब में।]

आज अगर लोग अंग्रेजी पढ़ते हैं, तो व्यापारी बुद्धिसे और कथित राजनीतिक फायदेके लिअे ही पढ़ते हैं। हमारे विद्यार्थी अैसा मानने लगे है (और अभीकी हालत देखते हुअे यह बिलकुल स्वाभाविक है) कि अंग्रेजीके बिना अुन्हे सरकारी नौकरी हरगिज नहीं मिल सकती। लड़कियोंको तो अिसीलिअे अंग्रेजी पढ़ाओी जाती है कि अुन्हें अच्छा वर मिल जायगा! मैं अैसी कअी मिसालें जानता हूं, जिनमें स्त्रिया अिसलिअे अंग्रेजी पढ़ना चाहती है कि अंग्रेजोंके साथ अंग्रेजी बोलना आ जाय। मैंने अैसे कितने ही पति देखे हैं कि जिनकी स्त्रिया अुनके साथ या अुनके दोस्तोंके साथ अंग्रेजीमें न बोल सकें, तो अुन्हें दुःख होता है! मैं अैसे कुटुम्बोंको भी जानता हूं, जिनमें अंग्रेजी भाषाको अपनी भाषा 'बना लिया' जाता है! सैकड़ों नौजवान अैसा समझते है कि अंग्रेजी जाने बिना हिन्दुस्तानको स्वराज्य मिलना नामुमकिन-सा है। अिस बुराओीने समाजमें

अितना घर कर लिया है, मानो शिक्षाका अर्थ अंग्रेजी भाषाके ज्ञानके सिवा और कुछ है ही नहीं। मेरे खयालसे तो ये सब हमारी गुलामी और गिरावटकी साफ निशानियां हैं। आज जिस तरह देशी भाषाओंकी अुपेक्षा की जाती है और अुसके विद्वानों व लेखकोंको रोटीके भी लाले पड़े हुअे हैं, सो मुझसे देखा नहीं जाता। मा-बाप अपने बच्चोंको और पति अपनी स्त्रीको अपनी भाषा छोड़ कर अंग्रेजीमें पत्र लिखे तो वह मुझसे कैसे बरदाश्त हो सकता है?

मुझे लगता है कि कवि-सम्राटके बराबर ही मैं भी खुली हवाकी स्वतंत्रता पर मुग्ध हूं। मुझे भी खुली हवा पर श्रद्धा है। मैं नहीं चाहता कि मेरा घर सब तरफ खड़ी हुअी दीवारोंसे घिरा रहे और अुसके दरवाजे और खिड़कियां बन्द कर दी जायं। मैं भी यही चाहता हूं कि मेरे घरके आसपास देश-विदेशकी संस्कृतिकी हवा बहती रहे। पर मैं यह नहीं चाहता कि अुन हवासे जमीन परसे मेरे पैर अुखड़ जायं और मैं औंधे मुंह गिर पड़ूं। मैं दूसरेके घरमें अतिथि भिखारी या गुलामकी हैसियतसे रहनेके लिअे तैयार नहीं। झूठे घमण्डके वश होकर या कथित सामाजिक प्रतिष्ठा पानेके लिअे मैं अपने देशकी बहनों पर अंग्रेजी विद्याका नाहक बोझ डालनेसे अिनकार करता हूं। मैं चाहता हूं कि हमारे देशके जवान लड़के-लड़कियोंको साहित्यमें रस हो, तो वे भले ही दुनियाकी दूसरी भाषाओंकी तरह ही अंग्रेजी भी जी भरकर पढ़ें। फिर मैं अुनसे आशा रखूंगा कि वे अपने अंग्रेजी पढ़नेका लाभ डॉ० बोस, राय और खुद कवि-सम्राटकी तरह हिन्दुस्तानको और दुनियाको दें। लेकिन मुझे यह नहीं बरदाश्त होगा कि हिन्दुस्तानका अेक भी आदमी अपनी मातृभाषाको भूल जाय, अुसकी हंसी अुड़ावे या अुससे शरमाये या अुसे यह भी लगे कि वह अपने अच्छेसे अच्छे विचार अपनी भाषामें नहीं रख सकता। मैं संकुचित या बन्द दरवाजेवाले धर्ममें विश्वास ही नहीं रखता। मेरे धर्ममें अीश्वरकी पैदा की हुअी छोटीसे छोटी चीजके लिअे भी जगह है। मगर अुसमें जाति, धर्म, वर्ण या रंगके घमण्डके लिअे कोअी स्थान नहीं। मुझे यह देख कर बहुत अफसोस हुआ कि अिस अंतर-शुद्धिके, सुधारके और सारी दुनियाका भला करनेवाले देशाभिमानके महान आन्दोलनके बारेमें कवि-सम्राटको गलतफहमी हुअी

है। कवि-सम्राट धीरज रखेंगे, तो वे देखेंगे कि हिन्दुस्तान आज अैसी कोअी बात नहीं कर रहा है, जिससे अुन्हें विदेशोंमें अपने देशभाअियोंके लिअे अफसोस करना पड़े या नीचा देखना पड़े। अुन्हें मैं नम्रताके साथ चेतावनी देता हूं कि वे अैसा न मान लें कि अिस आन्दोलनके सिलसिलेमें जो थोड़ीसी अफसोस करने लायक घटनाअें हो गअी हैं, वे ही अिस आन्दोलनका सच्चा स्वरूप हैं। डायर और ओडायर परसे अंग्रेजोंकी कीमत आंकना जितना गलत है, अुतना ही गलत लंदनमें बताअी हुअी कुछ विद्यार्थियोंकी नासमझी या मालेगावकी ज्यादतियों परसे असहयोगकी कीमत लगाना भी है।

नवजीवन, १३-६-'२१

८

असहयोगी विद्यार्थी

१

मैं सुना करता हूं कि मेरी कही हुअी कुछ बातोंसे असहयोगी विद्यार्थियोंमें खलबली मची हुअी है। कुछ विद्यार्थी मुझे पत्रोंके जरिये शब्द-बाण भी मार रहे हैं।

मुझे विद्यार्थियोंके किये हुअे त्याग पर अभिमान है। मैं जानता हूं कि विद्यार्थियोंने देशकी सेवा की है। मगर विद्यार्थियोंने बहुत कुछ किया है, तो अुससे करोड़ों गुना ज्यादा करना अभी बाकी रहा है। त्यागकी हद नहीं होती। 'अितना त्याग बहुत है' यह कहनेवालेको घमंड आया और अुसका त्याग बेकार गया। पूरे त्यागके बाद स्वराज्य आता है। यही हमारी कसौटी है। जब तक स्वराज्य नहीं मिलता, तब तक त्याग अधूरा ही है।

अिसके सिवा, जो त्याग दुःख देता है, वह त्याग नहीं। जिस त्यागसे मनुष्यका दिल हलका होता है, शान्त होता है, खुश होता है, वही सच्चा त्याग है। बुद्धको भोगविलास दुःखदायी बन गया तो अुसने

अुसे छोड़ दिया। वह त्याग ही अुमके लिअे भोग बन गया अिसलिअे टिक गया।

सरकारी स्कूलोंका वही त्याग सच्चा, जिसके बादमें विद्यार्थियोको अैसा लगे कि, 'हा, अब मैं आजाद हुआ'। सोनेके पिंजरेमें रहनेवाले तोतेको सांप वगैराका कोअी खतरा नही होता। अुसे खाने-पीनेको बराबर मिलता रहता है। अितने पर भी मालिक पिंजरेका दरवाजा खोल दे, तो वह वहासे भाग जायगा और किसी पेडकी डाली पर जा बैठेगा और वहा झूलनेमें ही खुशी मानेगा। वह जानता है कि अपनी अिस आजादीके साथ ही साथ अुसे अब खाना तलाश करनेकी चिन्ता करनी पडेगी और साप और बड़े पक्षियोका डर भी रहेगा। मगर अिसकी अुसे परवाह नहीं। सोनेके पिंजरेके साथ, और अुसके मालिकके साथ, तोतेका यह असहयोग हमेशा निभेगा, क्योकि तोतेने त्यागको — असहयोगको — सुख माना है। मालिकका प्रेम अुसे स्वार्थभरा मालूम होता था। मालिकके यहा मिलने-वाले सुभीते अुसे अड़चन मालूम होते थे। तोता समझता था कि आजादीकी कीमत ही नहीं हो सकती। जवाहरातसे जड़ा हुआ पिंजरा भी आखिर तो पिंजरा ही है, अैसा विश्वास तोतेको हो गया था, अिसीलिअे पिंजरा खुलते ही वह भागा।

जिन विद्यार्थियोने सरकारी स्कूलोको मोहजाल समझकर छोडा है, अुन्हें वे सोनेके लगें तो भी वे वहा वापस नही जायगे — फिर भले ही अुनके लिअे स्वतंत्र विद्यालय हों या न हों। अैसे त्यागी विद्यार्थियोको ही सरकारी स्कूलोमे बाहर रहनेका अधिकार है। असहयोग मुलतवी करनेका अर्थ यह है कि असहयोगकी कीमत जिनकी समझमें अभी तक न आयी हो, अुन्हें असहयोगको छोड़नेकी सहूलियत मिले और अिसमें कोअी बदनामी न माने — कोअी अुनकी बुराअी न करे। जो त्याग हमसे सहा न जा सके, भूल-भरा लगे, अुस त्यागसे हमें फायदा नही होता। अैसे त्यागियो परसे कांग्रेसका नियंत्रण दूर हो जायगा और वे निडर होकर वापस सरकारी स्कूलोमें जा सकेंगे।

मगर जिन्हें सरकारी स्कूल कैदखाने जैसे लगेंगे, वे जब तक स्वराज्य नहीं मिलेगा, तब तक जान चली जाय तो भी अपना त्याग जारी रखेंगे।

अिस तरह विद्यार्थियोंके लिअे और दूसरे असहयोगियोंके लिअे भी सवाल तो जो पहले था, वही आज भी है। फर्क सिर्फ अितना ही है कि जिनके लिअे कांग्रेसके प्रस्तावकी पाबन्दी थी, वे अुससे छूट जायेंगे। लेकिन जिन्हें अपनी आत्माका बंधन था और जो आत्माकी आवाजके वश होकर अिसमें पड़े थे, अुनके लिअे वह पाबन्दी कायम ही है।

अिस तरह सरकारी शिक्षा और राष्ट्रीय शिक्षाका फर्क सदाकी है, क्योंकि यह सिद्धान्तका फर्क नहीं है। सिद्धान्त-भेद तो झगड़ेका है, स्वामित्वका है। मेरे घरमें और दूसरेके घरमें बननेवाली रोटी अेक ही किस्मकी होने पर भी, वह दूसरेकी होनेके कारण अुसे लेना चोरी है और अिसलिअे त्याज्य है। कैदखानेमें घर जैसा खाना मिलता हो, तो भी कैदखानेका खाना लेने लायक नहीं। अिसी तरह जिस विद्यार्थीको सरकारी स्कूल कैदखाने जैसा न लगे, अुसके लिअे अुसमें वापस चला जाना अुचित है। अुसकी टीका करनेका दूसरोंको अख्तियार नहीं। अेकके लिअे जो चीज कैद जैसी हो, वही दूसरेके लिअे आजादी जैसी हो सकती है।

सच्चा आन्दोलन विचारको बदल देना है। आचार विचारके पीछे आता ही है। मगर बिना विचारका आचार विचारशीलको बोझ-सा लगता है, विचारशून्यको अुससे कोअी नफा-नुकसान नहीं होता। जो विचार नहीं करता, वह दूसरेकी नकल करता है। और आम तौर पर हम विचार-शून्य होते हैं। अिसीलिअे भक्तोंने सत्संगकी बड़ाअी की है।

अब जमाना सोच-समझकर असहयोग करनेका ही रह गया है। कांग्रेस वगैराकी बाहरी पाबन्दियां दवाकी पुड़ियाकी तरह थोड़े दिन काम दे सकती हैं। तीन-चार सालके प्रयोगके बाद हम देखते हैं कि बहुतसे विद्वान लोगोंको विद्यालयोंके असहयोगके बारेमें शक होने लगा है। अगर अुन्हींकी राय मानी जाय, तो अुनका बहुमत सरकारी स्कूलोंको छोड़नेके खिलाफ ही निकलेगा। अैसे प्रतिकूल वातावरणमें थोड़े ही विद्यार्थी स्वतंत्र विचार करके अपना असहयोग कायम रख सकते हैं। अैसे थोड़ेसे विद्यार्थियोंकी मदद करना राष्ट्रीय विद्यालयोंका काम है। मैं कुलपति माना जाता हूँ। अिस जगहके लिअे मेरी योग्यताका आधार मेरी विद्वत्ता पर तो जरा भी नहीं हो सकता। मुझमें कुलपतिकी योग्यता हो भी, तो अुसका कारण

असहयोगीके रूपमें मेरी विशेषता ही हो सकती है। असलिअे अगर मैंने पढ़ाअीके सिलसिलेमें असहयोगको बल पहुचानेवाले अंगों पर ज्यादा जोर दिया है, तो वह माफीके लायक ही नही, बल्कि तारीफके काबिल समझा जाना चाहिये।

मगर मेरी अिस स्थितिका अर्थ यह लगाया गया है कि मैं पढ़ाअी-लिखाअी — विद्वत्ता — का शत्रु हू। सत्य तो अिससे अुलटा ही है। मैं नही चाहता कि राष्ट्रीय विद्यालयोमें पढ़ाअी-लिखाअी बन्द करके सिर्फ कातना-पीजना ही सिखाया जाय या कराया जाय। मैं चाहता हू कि विद्यार्थियोंको काफी और मुनासिब अक्षर-ज्ञान दिया जाय। मैं चाहता हू कि वे पढ़ने-लिखनेमें सरकारी स्कूलोंके विद्यार्थियोंकी बराबरी कर सकें।

मगर मुझे सिर्फ अक्षर-ज्ञानसे संतोष नहीं हो सकता। सरकारी स्कूलोंमें नौकरीका, मुन्शीगिरीका अुद्देश्य सामने रखकर सिर्फ पढ़ना-लिखना ही सिखाया जाता है। राष्ट्रीय शालाओंका हेतु स्वराज्य, आजादी, स्वावलम्बन है, असलिअे विद्यार्थियोंको अक्षर-ज्ञानके साथ-साथ हृदयबल और शरीरश्रमकी तालीम देनी चाहिये। राष्ट्रीय शालाओंमें स्वराज्यकी ताकत पहुंचानेवाली चीजें होनी चाहिये। राष्ट्रीय स्कूलोंमें पढ़ाअी-लिखाअीको साध्य समझनेके बजाय अुसे चरित्रबल बढ़ानेका और स्वराज्यके कामका साधन मानना चाहिये। दिलको मजबूत बनानेके लिअे हृदयबलवाले शिक्षक चाहिये। और चरखा स्वराज्य लेनेका अेक जबरदस्त साधन होनेके कारण, जिस राष्ट्रीय विद्यालयमें चरखेकी अिज्जत न हो, अुसे मैं राष्ट्रीय हरगिज नही मान सकता। कांग्रेसने अपने प्रस्तावोंमें चरखेको खूब महत्व दिया है। यह सच है कि अिन प्रस्तावोंको पास करनेवाले अुन पर अमल नही करते। जो प्रस्ताव कांग्रेसने पास किये हैं, अुन पर अगर सदस्योंने ही पूरी तरह अमल किया होता, तो आज हम स्वराज्य लेकर शान्तिसे बैठ गये होते या अुस दरवाजेके चमकीले तोरण बड़ी आतुरतासे देख रहे होते। लेकिन सदस्योंकी सुस्ती और बेवफाअीकी असहयोगी विद्यार्थियोंको नकल न करनी चाहिये। बच्चे बड़ोंकी बराबरी करने जायगे, तो मर जायगे। तुलसीदासजीने कहा है कि 'समरथको नहि दोष गुसाअी'। लेकिन हम मामूली लोग समर्थ बनने चलें तो हमारा

नाश हो जाय। जिस राष्ट्रीय विद्यालयमें हिन्दी, अुर्दू सिखाना लाजिमी न हो, अुससे राष्ट्रको ताकत नहीं पहुंचती। जो राष्ट्रीय विद्यालय अछूतोंका बहिष्कार करे, अुस विद्यालयके बंद हो जानेमें ही देशका भला है। राष्ट्रीय विद्यालयमें हिन्दू, मुसलमान, पारसी, अीसाअी सभी जातियोंके विद्यार्थियोंको सगे भाअियोंकी तरह पढ़ना चाहिये। मेरे खयालमें ये सब बातें विद्यालयके राष्ट्रीय होनेके चिह्न हैं। अिसमें मुझे शक नहीं कि राष्ट्रीय शिक्षाकी ज्यादा पुकार बिना सोचे-समझे की जाती है। पढ़ाअीकी किताबोंमें फेरबदल, अितिहास वगैरा पढ़ानेके तरीकेकी विचित्रता वगैरा गौण चीजें हैं। अिनके लिअे बेशुमार रुपया नहीं खर्चा जा सकता, अलग संस्थाअें नहीं खोली जा सकतीं। कोशिश करनेसे अैसे फेरबदल सरकारी स्कूलोंमें भी कराये जा सकते हैं। अैसे फेरबदल न होनेसे सरकारी स्कूलोंको छोड़ना शोभा नहीं दे सकता, संभव नहीं हो सकता। सरकारी स्कूलोंको छोड़नेके कारणोंकी जांच मैं कर चुका। सरकारी शालाओं और राष्ट्रीय शालाओंमें जो फर्क रहना चाहिये, अुस पर भी मैं नजर डाल चुका। अिस फर्कमें व्यवस्थापकोंकी, शिक्षकोंकी और विद्यार्थियोंकी कसौटी है। यह फर्क असहयोगकी बाहरी निशानी है। असहयोगमें अिसके सिवा दूसरी बहुतसी बातें भले ही हों, मगर जिस असहयोगमें ये चिह्न नहीं, वह असहयोग हरगिज नहीं हो सकता।

नवजीवन, २१-१२-'२४

२

अेक भाअी लिखते हैं .

"गुजरात महाविद्यालयके आपके भाषण और दूसरे लेख पढ़ने पर भी जो सच्चाअी है वह ध्यानमें से नहीं जाती।

"विद्यार्थियोंने असहयोग करके अपना फर्ज अदा किया है; किसी पर अुपकार तो हरगिज नहीं किया। तब भी यह बात तो ध्यानमें रखनी ही चाहिये कि अुन्होंने सबसे ज्यादा आर्थिक नुकसान अुठाया है।

"अिस वक्त असहयोग मुलतवी हो जाने और आन्दोलन ठंडा पड जानेके कारण समाजमें स्नातकोंका मान-मरतबा नहीं रहा।

है भी तो नाममात्रको। कितने ही भावनामें रहें, तो भी पेट तो सभीके लगा है। अिस पर भी यह तो आप जानते ही हैं कि हमारे विद्यार्थियोंको पढ़ाओके साथ-साथ कुटुम्बका भरण-पोषण भी करना पड़ता है।

"आप यह मानते हैं कि पढ़ाओका नतीजा आजीविकाकी प्राप्ति होना चाहिये, मगर अुसमें भी आज बहुतसी मुश्किलें हैं।

"और सब लोग तो असहयोग मुलतवी करके अपना असली कारबार फिरसे शुरू कर सकते हैं। पर विद्यार्थी अैसा करना भी चाहें तो नहीं कर सकते।

"असहयोग करके प्रसिद्ध होनेके बाद वे वकील भी, जिन्हें पहले मुकदमे नहीं मिलते थे, अब बहुत अच्छी कमाओी कर रहे हैं। विद्यार्थियोंका कोओी भाव तक नहीं पूछता। अुलटे अुनकी तरफ घृणासे देखा जाता है।

"आप १५ तारीखको राजकोट पधारनेवाले हैं। देशी राजाओंको तो काबिल आदमियोंसे काम है। मुझे मालूम नहीं अुनके लिअे कोओी अैसी सरकारी पाबन्दी है कि वे बम्बओी युनिवर्सिटीके स्नातकोंको ही रखें। तो फिर आप देशी रियासतोंको विद्यापीठके स्नातकोंको रखनेकी सलाह नहीं दे सकते? मैं मानता हूं कि आप और कहीं नहीं तो भी राजकोट और भावनगरकी प्रजा-प्रतिनिधि-सभामें अिस बारेमें प्रस्ताव पास करा सकते हैं और शासकोंकी मंजूरी भी दिला सकते हैं। अिसके सिवा, आप जब राजकोटमें राष्ट्रीय शालाकी नींव डालनेके मौके पर जा रहे हैं, तब तो अिस मामलेके लिअे यह समय खूब अनुकूल हो सकता है। अिसमें शक नहीं कि अिस तरह देशी राजा विद्यापीठको अप्रत्यक्ष ढंगसे मदद दे तो सवाल बहुत आसान बन जाय।"

विद्यार्थियोंके त्यागका जिक्र तो मैं कओी बार कर चुका हूं। पर यह अपवादरहित नियम है कि जो अपने त्यागका खुद बखान करते हैं, अुनके त्यागकी दुनिया कद्र नहीं करती। क्योंकि जिस त्यागका जिक्र खुद त्याग करनेवालेको करना पड़ता है, वह त्याग ही नहीं। त्याग अपने

आप जाहिर होनेवाली चीज है। विद्यार्थी अपने किये हुअे त्यागकी कीमत लगानेके बजाय अिस बातका हिसाब क्यों न करें कि अुन्हें लाभ क्या-क्या हुअे ?

जो यह नहीं जानता कि राष्ट्रीय शिक्षा पानेमें ही अुसकी कीमत है, वह कुछ नहीं जानता। स्नातकको यह माननेकी कोअी जरूरत नहीं कि विद्यापीठके स्नातकोंका भाव आज घट गया है। अिस तरह स्नातक अपना भाव क्यों घटायें ? मैं राष्ट्रीय विद्यापीठके स्नातकोंसे आत्म-विश्वासकी आशा रखता हूं। अुन्हें दीन भिखारी न बनना चाहिये। अुन्हें अीश्वर पर विश्वास रखना चाहिये। स्नातक मेरे द्वारा देशी राज्योंमें भीख मंगवाना क्यों चाहें ? स्नातक अपने ज्ञान और चरित्रबलके कारण महंगे क्यों न बनें ? अैसा वक्त आना चाहिये कि जब दूसरी तरफसे राष्ट्रीय स्नातकोंकी मांग हो। अैसे समयको लानेका दारमदार अिन्हीं स्नातकों पर है। कचरेके ढेरमें पड़ा हुआ हीरा पहचान ही लिया जाता है। वैसा ही राष्ट्रीय स्नातकोंका होना चाहिये। मैं तो अपने काठियावाड़के दौरेमें स्नातकोंके बारेमें अेक शब्द भी नहीं बोलना चाहता। मैं काठियावाड़में खादी और चरखेके प्रचारके लालचसे जा रहा हूं। अधिकारियोंको खादी-प्रेमी बनाने जा रहा हूं और राजाओंसे अपने धर्मकी तरफ ध्यान देनेके लिअे प्रार्थना करने जा रहा हूं। अगर खादी और चरखेकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी, तो समझ लीजिये कि राष्ट्रीय स्नातकोंकी भी बढ़ेगी ही, क्योंकि जो चरखा-शास्त्रको घोलकर नहीं पी गये हैं, वे राष्ट्रीय स्नातक नहीं। मैं अिस तरहका वातावरण काठियावाड़में पैदा करनेके लोभसे जा रहा हूं कि जैसे अधिकारियोंको होशियार अंग्रेजी जाननेवाले मंत्रीकी जरूरत पड़ती थी वैसे अब होशियार चरखा-शास्त्रीकी जरूरत हो।

अब लिखनेवाले भाअीकी दलीलकी भूलें सुधारनेकी अिजाजत लेता हूं। यह खयाल ठीक नहीं कि असहयोगी विद्यार्थी और वकीलोंकी तरह अपना असहयोग मुल्तवी नहीं कर सकता। दुःख और शर्मकी बात तो यह है कि हमारे विद्यार्थी असहयोग करनेके बाद वापस सहयोगी बन गये और अब भी बनते जा रहे हैं। दुःख और शर्मकी बात तो यह है कि कुछ असहयोगी स्नातकोंने राष्ट्रीय प्रमाणपत्र लेकर भी सरकारी

परीक्षायें दी हैं। अिससे अुलटे कितने ही वकीलोंकी सनदें अदालतोंने छीन ली हैं और वे जबरदस्ती असहयोगी जैसे बन गये हैं। अिनके सिवा कितने ही सरकारी नौकरोंकी, जो नौकरियां छोड़ बैठे हैं, हालत दीन समझी जा सकती है, मगर अुनमें से कुछको अपनी हालत दीन न लगकर बादशाहों जैसी लगती है, क्योंकि जहां सरकारी नौकरीमें वे पराधीन थे, वहां अब नौकरी छूटने पर स्वाधीन हैं स्वतन्त्र हैं और अिसलिअे अपनेको भाग्यवान समझते हैं।

अिसलिअे जो विद्यार्थी निराश हो गये हैं, अुन्हें मैं कहना चाहता हूं कि अुन्हें नाअुम्मीद होनेका कोअी कारण नहीं, अितना ही नहीं अुन्हें तो आगे बढ़ना है। हां, अिसमें अेक शर्त है। असहयोगी विद्यार्थियोंके बारेमें यह खयाल होना है कि वे ओमानदार, निडर, सयमी, अुद्यमी और देशसेवक होते हैं। अैसे विद्यार्थियोंके लिअे कभी निराशाका कारण नहीं। अुन पर देशका अुद्धार निर्भर है। अुन्हीं पर आजादीकी देवीका स्वर्ण-मन्दिर खड़ा होगा।

नवजीवन, १५-२-'२५

९

शिक्षामें असहयोग

१

['विद्यार्थी क्या करें' शीर्षक लेख से।]

असहयोगके दूसरे हिस्सोंमें चाहे जो परिवर्तन हो, पर राष्ट्रीय शालाओंका काम तो चलना ही चाहिये, चलेगा, और न चले तो जनताकी नाक कट जायगी।

अितना ही नहीं, समय पाकर राष्ट्रीय स्कूल बढ़ने चाहियें। स्वराज्य मिलने पर असहयोगी वकील अदालतोंमें वकालत करने जायेंगे, मगर असहयोगी स्कूल कायम ही रहेंगे। दूसरे स्कूल अुन स्कूलोंके माफिक होंगे, असहयोगी शालायें सरकारी शालाओंके माफिक नहीं होंगी।

यह स्वराज्य भले ही आज न आये, भले ही अुसे अनेक युग लग जायं। मगर अुस वक्त जो असहयोगी शालाअें मौजूद होंगी, वे नमूनेकी होंगी और जनता अुन पर न्योछावर होगी।

अिसलिअे मुझे कहना चाहिये कि जहां-जहां असहयोग मुलतवी करनेकी मेरी सूचनासे घबराहट पैदा होती है, वहां-वहां मैं असहयोगके बारेमें अश्रद्धा देखता हूं। जिसे अपने असूलके बारेमें या कामके बारेमें श्रद्धा होगी, वह दूसरेकी अश्रद्धासे या दूसरेके त्यागसे क्यों डरेगा, क्यों घबरायेगा, क्यों अनिश्चित बनेगा? श्रद्धालु आदमी दूसरेकी अश्रद्धासे दुगुना पक्का बनता है। सुरक्षित आदमी रक्षकोंके न रहने पर जैसे असावधानी छोड़कर सावधान बनता है, वैसे श्रद्धालु अपने साथियोंको भागते हुअे देखकर खुद दृढ़ बनकर शेरकी तरह अकेला जूझता है और पहाड़की तरह अटल रहता है।

नवजीवन, २३-११-'२४

२

['असहयोग और शिक्षा' शीर्षक लेख से।]

असहयोगके अेक भी अंगके बारेमें मैं खुद जरा भी ढीला नहीं पड़ा हूं। शिक्षाके बारेमें मेरे विचार जो १९२०-२१में थे, वे ही आज भी हैं; और अगर मुझमें विद्यार्थियोंको या अुनके बड़ोंको समझानेकी ताकत हो, तो अेक भी विद्यार्थी सरकारी शालाओंमें न रहे। 'नवजीवन'में अिस मामलेकी चर्चा जो बार-बार नहीं होती, अुसका कारण यही है कि अब भाषणों या लेखों द्वारा समझाकर सरकारी स्कूल खाली करानेकी बात नहीं रह गयी। अब तो जो शालाअें असहयोग पर कायम रही हैं अुनको पालना-पोसना है। मुझे दुःखके साथ अितना कबूल करना चाहिये कि खादीकी तरह राष्ट्रीय शिक्षाका काम बढ़ नहीं रहा है। संख्याके खयालसे अुसमें कमी होती जा रही है। अुस कमीका मौकेसे जिक्र करनेमें मुझे संकोच नहीं होता, पर वह जिक्र हमेशा करना जरूरी नहीं। अुस कमीसे मुझे जरा भी डर नहीं लगता। अगर हम श्रद्धा न छोड़ें, तो जिस भाटेके बाद ज्वार आकर ही रहेगा।

मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि जो स्कूल असहयोग पर कायम हैं, वे युद्ध भावमें डटे रहें और असहयोगके अुसूलोंको जरा भी ढीला न होने दें, तो नतीजा अच्छा ही होगा। अब असहयोगका काम न देखादेखी करना है, और न किसी 'पॉलिसी' या तरकीबके वश होकर करना है। जो असहयोगी रहे हैं, वे आत्म-विश्वासपूर्वक अपने बल पर लड़ते हैं। संभव है अुन्हें अब भी मुश्किल वक्तमें से गुजरना पड़े। पर अैसा हुआ, तो जैसे कुन्दनकी कसौटी तपने पर ज्यादा होती है, वैसे ही असहयोगियोंकी भी होगी। जो आखिर तक डटे रहेंगे, वे ही सच्चे असहयोगी माने जायेंगे। वे भले ही अेक हों या अनेक, मगर स्वराज्य अुन्हींसे मिलेगा।

नवजीवन, ३०-५-'२६

३

['विद्यार्थी और असहयोग' नामक लेखसे।]

बर्लिन या और किसी यूरोपकी युनिवर्सिटीमें जानेकी अिच्छा असहयोगकी वृत्ति नहीं दिखाती। यह तो अंग्रेजी कपड़ा छोड़कर जापानी कपड़ा लेनेकी वृत्ति जैसी है।

हम अंग्रेजी कपड़ा नहीं लेते, अिसका कारण यह नहीं है कि वह अंग्रेजी है, बल्कि यह है कि वह कपड़ा हमारे गरीबोंसे अुनके बाप-दादोंका धन्धा छीन लेता है और अुन्हें ज्यादा गरीब बनाता है। जापानी कपड़ा भी अंग्रेजी कपड़ेके बराबर ही गरीबोंको लूटता है। अिसी तरह सरकारी संस्थाओंको हम छोड़ते हैं तो अिसलिअे कि वे नुकसान पहुंचानेवाली हैं। अिसलिअे अुन्हें छोड़कर दूसरे नामवाली वैसी ही संस्थाओंमें जाना और यह मानते रहना कि हम असहयोगी हैं ठीक नहीं है। असहयोगका अर्थ है आर्य संस्कृतिमें जो अच्छीसे अच्छी चीज है अुसके साथ सहयोग। यह सहयोगकी वृत्ति हम बर्लिन जाकर पैदा नहीं कर सकते। हमें अपने तमाम प्रयोग हिन्दुस्तानमें ही करने चाहिये। अिसलिअे हमारे पास ज्यादा नहीं तो काम चलाने जैसी सम्पूर्ण और कार्यसाधक संस्था हो, तब तक तो सरकारी स्कूलोंको छोड़ना ही पहली सीढ़ी है। और देशके

अिसे वैसे ही विद्यार्थियोंका त्याग समय पाकर ज्यादा फायदेमन्द साबित होगा।

लेकिन जिसे अपने त्याग पर पछतावा होता हो, या असंतोष होता हो, अुसे सरकारी संस्थाओंमें जानेमें जरा भी संकोच न करना चाहिये। क्योंकि यह तो आदर्श आदर्शके बीचका झगड़ा है। और अगर असहयोगका आदर्श अच्छा होगा और हिन्दुस्तानके वातावरणके अनुकूल होगा, तो वह सभी तरहकी रुकावटोंको पार करके सफल होगा।

नवजीवन, १८-७-'२६

१०

असहयोग असफल रहा?

बार-बार अखबारोंमें पढ़नेमें आता है कि असहयोग पूरी तरह असफल रहा। कितने ही विनयी समालोचक अक्सर मेरी मगकर बातचीतमें यह सवाल अुठाते हैं, और धीरेसे मुझे कहते हैं कि अगर मैं अपने विचारहीन असहयोगसे देशको अुलटे रास्ते न ले गया होता, तो देशने बड़ी प्रगति की होती। अैसा कहा जा सकता है कि अिस प्रश्नका मौजूदा राजनीतिके साथ कोअी सम्बन्ध नहीं, फिर भी मैंने अिसका अुल्लेख अिसीलिअे किया है कि असहयोगके रूपमें अेक जाग्रत ताकत हमें मिली है। मेरी श्रद्धा है कि वह कभी भी विराट स्वरूप धारण कर लेगा और जो लोग आलोचना और शंकाशीलताका मुकाबला करते हुअे बहादुरीके साथ असहयोग पर डटे हुअे हैं, अुन्हें मुझे हिम्मत बंधानी है। फिर भी अेक भयंकर अर्धसत्य मैं मान लेता हूं कि जिस क्षण असहयोग हिंसात्मक बना, अुसी क्षण वह पूरी तरह असफल साबित हो गया। असलमें देखें तो असहयोग और हिंसा ये दो शब्द अिस जगह अेक दूसरेके खिलाफ हैं। हिंसा आत्मघाती है और अुसके सामने प्रतिहिंसा हो तभी वह जी सकती है। अिस जीती-जागती श्रद्धासे ही तो अहिंसा-असहयोगका जन्म हुआ है। अिसलिअे जिस क्षण असहयोगमें हिंसा

इसी बुरी तरह कुचला प्राण और राष्ट्रका संगठन करनेकी अुसकी शक्ति चली गयी। पर यह सच है कि जिस हद तक वह अहिंसात्मक था और रहा, अुस हद तक वह पूरी तरह कामयाब रहा। १९२० में अेकाअेक जो आम जागृति ज्वाला प्रगट हुअी अुसमें अहिंसाकी शक्तिका सबसे अच्छा प्रदर्शन हुआ कहा जा सकता है। सरकारकी जो प्रतिष्ठा चली गयी है, वह अब वापस आनेवाली नहीं है। सरकारी शिक्षालयों, अदालतों और शिक्षण-संस्थाओंका जो असर १९२० में पड़ता था, वह अब नहीं रहा। देशके कितने ही पहले दरजेके वकीलोंने हमेशाके लिअे वकालतका पेशा छोड़ दिया है और वे गरीबी स्वीकार करके सुखी हुअे हैं। जो थोड़े-बहुत राष्ट्रीय स्कूल-कॉलेज चल रहे हैं वे अपनी सेवाका सुन्दर हिसाब दे रहे हैं। जिस गुजरातके हर-अेक कोनेको बाढ़ने मरुभूमि बना दिया था, वहीं देखिये कि संकट-निवारणके लिअे कैसा संगठन बन गया है! अगर राष्ट्रीय शिक्षण-संस्थाओंके विद्यार्थी और शिक्षक और दूसरे असहयोगी न होते, तो सल्तनतके हुकूमी विभागोंके लिअे जो मदद निहायत जरूरी थी और जो अुस वक्त पर मिल गयी, वह हरगिज नहीं मिल सकती थी। अैसे कभी दृष्टान्त देकर यह साबित किया जा सकता है कि हिन्दुस्तानमें जहां-जहां सच्चा राष्ट्रीय जीवन है, जहां-जहां सफेदपोश लोगों और आम जनतामें मेल है, वहां-वहां अुसका श्रेय असहयोगको ही देना पड़ेगा।

साथ ही अिस कार्यक्रमके तीन रचनात्मक अंगोंका विचार कीजिये। राष्ट्रको फिरसे अूंचा अुठानेमें खादीका हाथ बढ़ता जा रहा है। लगभग दो हजार सेवकोंकी सेनाके द्वारा खादी १५०० से ज्यादा गांवोंमें मदद पहुंचा रही है और ५०००० से ज्यादा कतिनोंको व कमसे कम दसेक हजार जुलाहों, रंगरेजों, छीपों, धोबियों और अैसे ही दूसरे कारीगरोंको सहारा दे रही है। अस्पृश्यता मुर्दा हालतमें पहुंच गयी है और आखिरी सांस ले रही है। हिन्दू-मुसलमानोंकी अेकतामें कितनी शक्ति भरी है, यह १९२०-२१ की अेकताने बता दिया था। आज अिन दो बड़ी कौमोंमें पड़ी हुअी फूटमें जो हिंसा, दगाबाजी और झूठ वगैरा दिखाअी देते हैं, वे जरूर बेहूदा चीजें हैं; मगर ये भी थोड़ी-बहुत अस्थायी ही निशानियां हैं। असहयोग

आन्दोलन अेक मंथन-क्रिया थी और है। अिस मंथनसे कूड़ा-कचरा अूप
गया है। और अगर अहिंसात्मक असहयोग कोओी जाग्रत और पवित्र
होगी, तो अिस वक्त अूपर तैरते दीखनेवाले और हमारी नजरको रोक र
वाले कचरेके नीचे अेकताका जो निर्मल नवनीत तैयार हो रहा है, वह
ही समयमें हमारे सामने आ जायगा। अिसलिअे मुझे तो दीयेकी त
साफ दिखाओी देता है कि सच्चा स्वराज्य जिस समय आयेगा, तब वह अंग्रे
कृपा-दृष्टिके रूपमें नहीं आ टपकेगा, बल्कि पापकी व्यवस्थित
साथ बड़ा और आरोग्यदायक असहयोग करके ही हमें अुसे लेना होग

नवजीवन, १३-११-'२७

११

आजकी शिक्षा काम देती है?

['बड़ौदामें शिक्षा' शीर्षक टिप्पणी।]

बड़ौदाके महाराजाके ज्यादातर विदेशोंमें घूमते रहनेके बारेमें और राजनीतिक सुधारोंके मामलेमें जो कंजूसीकी नीति जारी है, अुसके बारेमें हम कुछ भी कहें, पर अिस बारेमें कोओी शक नहीं कि अिस रियासतमें साक्षरता बहुत बढ़ी है। महाराजाकी सुवर्ण-जयन्तीके मौके पर शिक्षा-विभागकी तरफसे प्रकाशित अेक छोटीसी रिपोर्ट परसे यह साफ जाहिर है। पचास साल पहले सिर्फ २०० प्राथमिक शालायें थीं और अुनमें ८०० बच्चे थे। आज ७८ अंग्रेजी शिक्षण-संस्थायें हैं, जिनमें अेक कॉलेज भी है; और जिन संस्थाओंमें १६८२५ विद्यार्थी पढ़ते हैं, जिनमें से ३४५ की तादाद लड़कियोंकी है। देशी भाषाकी संस्थायें २९१६ हैं। अुनमें २१७१३८ विद्यार्थी हैं, जिनमें ६७३८८ लड़कियां हैं। अिस संस्थामें २१९ अछूत शालायें भी शामिल हैं। जिनके सिवा १२८ अुर्दू मदरसे भी हैं, जिनमें २६ लड़कियोंके मदरसे हैं। अिन मदरसोंमें ६६९३ बालक तालीम पाते हैं।

यह सब बेशक शाबाशीके लायक है। मगर सवाल यह है कि क्या अिस शिक्षासे लोगोंकी भूख सचमुच मिटती है? हिन्दुस्तानके दूसरे हिस्सों

तरह बड़ौदा राज्यकी आबादी भी ज्यादातर किसानोंकी है। क्या अिन किसानोंके बच्चे तालीम पाकर सचमुच ज्यादा अच्छे किसान बनते हैं? अिस शिक्षासे अिन लोगोंकी नीति सुधरी या सम्पत्ति बढ़ी हुअी दीखती है? परिणाम दिखानेके लिअे ५० साल खासी लम्बी मुद्दत मानी जायगी। मुझे डर है कि अूपरके प्रश्नोंका जवाब सतोषजनक नहीं मिलेगा। बड़ौदा राज्यके किसान दूसरे किसानोंसे जरा भी ज्यादा सुखी नहीं हैं। अकालके समय वे भी दूसरे किसानोंके बराबर ही निराधार हो जाते हैं। अुनके गावोंकी सफाअी हिन्दुस्तानके और भागोंकी तरह ही खराब है। अपना कपड़ा तैयार कर लेनेका महत्त्व भी वे नहीं समझते। बड़ौदा रियासतमें हिन्दुस्तानकी कुछ ज्यादासे ज्यादा अुपजाअू जमीन है, अिसलिअे वहां बाहरसे रुअी तो मंगानी ही न पड़ेगी। यह रियासत बड़ी आसानीसे अपनी जरूरतें आप ही पूरी करनेवाली बन सकती है और अुसके किसान भी खुशहाल हो सकते हैं। मगर आज तो तमाम रियासतमें विलायती कपड़ा लोगोंकी गरीबी और गिरावट दिखा रहा है। अिसी तरह अिस राज्यके लोग शराबकी बुटेवमें दूसरे लोगोंकी अपेक्षा कोअी ज्यादा मुक्त नहीं हैं। अंग्रेजी राज्यकी शिक्षा अनीतिपूर्ण करसे दी जानेके कारण जितनी दूषित है, अुतनी ही दूषित बड़ौदा रियासतकी शिक्षा है। कालीपरजके* बच्चोंको चाहे जितनी शिक्षा मिलती हो, तो भी शराबका राक्षस अुनका सारा सत्त्व चूस लेता है। सच तो यह है कि बड़ौदा राज्यमें दी जानेवाली शिक्षा ब्रिटिश नमूनेकी लगभग अन्धी नकल है। अूची शिक्षा हमें अपने देशमें ही विदेशी बना देती है और प्राथमिक शिक्षाका बादके जीवनमें कोअी अुपयोग न होनेके कारण वह बेकार हो जाती है। अिस शिक्षामें न कोअी नयापन है और न स्वाभाविकता। नवीनता न हो तो भी काम चल सकता है — लेकिन वह 'पुरानी' जनताकी भूख मिटानेवाली पुरानी शिक्षा भी तो हो!

नवजीवन, २४–१–'२६

१२

मेकॉलेका सपना

मेकॉलेकी 'जीवनचरित्र और पत्र' नामक अंग्रेजी पुस्तकमें से अेक मित्रने मेरे पास नीचे लिखा अुद्धरण भेजा है :

"'हिन्दुस्तानके देशी लोगोंमें यूरोपीय साहित्य और विज्ञानकी वृद्धि करना ब्रिटिश सरकारका महान ध्येय होना चाहिये'—यह निश्चय लॉर्ड विलियम बेण्टिकने ७ मार्च, १८३५ को किया। सार्वजनिक शिक्षाकी समितिमें से दो पूर्वज्ञ (Orientalists) अलग हो गये; कअी अंग्रेज और देशी नये सदस्य मुकर्रर किये गये। मेकॉलेको अपनी पसन्दका काम मिल गया। अुसने भरसक अुत्साह और लगनके साथ अपना अध्यक्षका काम शुरू कर दिया।"

लॉर्ड मेकॉलेने कहा कि, "हमारी अंग्रेजी शालायें आश्चर्यजनक ढंगसे बढ़ती जा रही हैं। शिक्षा पानेकी अिच्छा रखनेवाले सब लोगोंके लिअे बन्दोबस्त करना हमारे लिअे मुश्किल — कअी जगह तो सचमुच असम्भव मालूम होता है। हुगलीमें १४०० लड़के अंग्रेजी पढ़ते हैं। हिन्दुओं पर अिस शिक्षासे होनेवाले असरका पार नहीं। अंग्रेजी शिक्षा पाया हुआ अेक भी हिन्दू कभी अपने धर्ममें श्रद्धावान नहीं रहता। कुछ लोग अेक युक्तिके तौर पर अुसका नाम लेते रहते हैं; मगर ज्यादातर लोग धर्मके मामलेमें अपनेको बिलकुल स्वतंत्र बताते हैं और कुछ अीसाअी धर्म स्वीकार कर लेते हैं। मेरा यह पक्का विश्वास है कि हमारी शिक्षाकी योजनाओं पर अमल किया गया, तो आजसे ३० साल बाद बंगालके प्रतिष्ठित वर्गोंमें अेक भी मूर्तिपूजक नहीं रहेगा। यह बात धर्म बदलनेकी कोअी भी कोशिश किये बिना, धार्मिक स्वतंत्रतामें जरा भी दखल दिये बिना, सिर्फ ज्ञान और विचारशक्तिके स्वाभाविक अुपयोगसे ही हो सकेगी। भविष्यकी अिस तस्वीरसे मुझे दिली खुशी होती है।"

अंग्रेजी शिक्षा पाया हुआ हिन्दुस्तान अपने धार्मिक विचार छोड़ देगा, यह मेकॉलेका सपना सच्चा निकला है या नहीं, यह मैं नहीं जानता।

पर हम यह भी जानते हैं कि अुसका अेक और नतीजा था — अंग्रेजी शिक्षा पाये हुअे हिन्दुस्तान द्वारा अंग्रेज हाकिमोंके लिअे कानून वगैरा तैयार करना। यह नतीजा सचमुच अुसकी धारणासे भी ज्यादा सच्चा निकला है।

यंग अिण्डिया, २१-३-'२८

१३

'मैट्रिकका टिड्डीदल'

अेक सवाल पूछनेवाले लिखते हैं:

"जहां पिछले साल मैट्रिककी परीक्षामें ९,००० लड़के बैठे थे, वहां अिस साल १८००० बैठे हैं। यह तो मैं सिर्फ बम्बअी अिलाकेकी ही बात कहता हूं; वैसे सारे हिन्दुस्तानसे तो ५६००० बैठे होंगे। अब अगर यह मान लें कि अिनमें से ३००० लड़के बम्बअी अिलाकेमें और २८००० सारे हिन्दुस्तानमें पास होंगे, तो क्या अिन २८००० लड़कोंके लिअे २८००० नौकरियां खाली हैं? नहीं तो, अपने गुजारेके लिअे वे क्या धंधा करेंगे? कालेजकी पढ़ाअीके बीच अिन लड़कोंके खर्च अितने बढ़ जाते हैं कि थोड़े रुपयेमें अिनका गुजर होना मुश्किल है। अिनका कपड़े, कॉलर, टाअी, नाटक सिनेमा, कविता, अुपन्यास, दवाअें, डॉक्टरके बिल, बालोंके तेल, कंघे, ब्रश वगैरामें ही अितना सारा रुपया खर्च हो जाता है। यह सब खर्च वे अपनी बीस या तीस रुपयेकी वेतनवाली नौकरीसे कैसे बरदाश्त कर सकते हैं? अिसके लिअे कुछ विचार करना जरूरी है, नहीं तो और दस बरसमें यह प्रश्न बहुत ही गंभीर हो जायगा और अुस वक्त आप कितनी ही अच्छी दवा सुझायेंगे तो भी वह काम नहीं आयेगी। और कुदरती तौर पर वे माल-विभाग या रेलवे-विभागमें, जहां थोड़ी रिश्वत मिल सकती है, नौकरी ढूंढेंगे।"

यह सवाल पूछने लायक है। जवाब तो बहुत बार अिस पत्रमें दिया गया है। सरकारी छापका मोह हमें गुलाम बनाता है। अिसीलिअे

सरकारी स्कूल छोड़नेका धर्म मैंने बताया है। पर अिस मोहजालसे विद्यार्थियोंको कौन छुड़ावे? सरकारकी मुहरके बिना रिश्वत खाने लायक नौकरी कैसे मिले? जब तक विद्यार्थी मजदूरीका, शारीरिक मेहनतका स्वागत नहीं करेंगे, अुसे अक्षर-ज्ञानसे ज्यादा कीमती नहीं मानने लगेंगे, तब तक वे अिस मोहजालसे नहीं बच सकेंगे। चरखेको महत्त्व देनेका यह अेक कारण तो है ही। चरखा शरीर-श्रमका व्यापक चिह्न है। 'नवजीवन' के पहले अंकमें अेक चित्र दिया गया था, जिसमें हल और चरखेको स्थान दिया गया है। चरखेकी हालत सुधरते ही अपने आप मजदूरी और प्रतिष्ठित गरीबीको अुनके लायक जगह मिल जायगी। अिसका मतलब यह नहीं कि सब चरखेके द्वारा रोजी कमायें। मगर अिसका आशय यह तो जरूर है कि सब किसी न किसी पोषक मजदूरीसे आजीविका प्राप्त करें। विद्यार्थियोंमें विलायती रहन-सहनका और विलायती चीजोंका जो शौक बढ़ा है, अुसके लिअे स्कूलोंका वातावरण जिम्मेदार है। अिस शौकसे शायद ही कोअी विद्यार्थी बचता है।

नवजीवन, २६–८–'२८

१४
वर्तमान शिक्षा-पद्धति और चरित्र

१

['शास्त्रीय बनाम व्यावहारिक' नामक लेख।]

अेक विद्यार्थी लिखता है

'कअी बार आप अैसे शास्त्रीय या निरे ख्याली जवाब देते हैं कि अुनसे दिलको थोड़ी देरके लिअे तसल्ली तो हो जाती है, पर व्यवहारके वक्त वह पहेली ज्योंकी त्यों बिना सुलझी रह जाती है। आप भी कह देंगे 'सत्याग्रहके आधार पर तो इन्कार करते ... हैं।' — अैसे बातसे मनको जरा समाधान हो जाता है, मगर अमल ... न यह सब बेकार होता है।

"आप आत्मबल पर ही हजारों ग्रन्थ बाँधनेको कहें, तो क्या सचमुच यह थोथी भरोसेकी बात लगती है? जिन विद्यार्थियोंको घरमें और गाड़ीमें भी अभी श्रद्धा नहीं अन्हें आप आत्मबल पर आधार रखनेको कहें या आत्मबलका अपदेश दें, तो क्या आपको यह 'पत्थर पर पानी' डालने जैसा नहीं लगता?"

मुझे आशा है कि जब मैं आत्मबलकी बात करता हूँ, तब पत्थर पर पानी नहीं अुँडेलता। पर शायद अैसा होता हो, तो भी 'रसरी आवत-जात हैं सिल पर होत निशान'। गिरते गिरते पत्थर पर भी अेक ही जगह पानी टपकनेसे अुसमें छेद हो जाता है। जिन पत्थरों पर पानीका प्रपात गिरता है, वे अुनमें गजरण बन जाते हैं, क्योंकि अुनका असली रूप यही है। जिसे यह केवल आज शास्त्रीय या काल्पनिक समझता है, अुसीका कल वह व्यावहारिक मानेगा। दुनियामें अैसा होता ही आया है। विद्यार्थी आत्मबलकी बात न समझें, तो अिससे हमारी दीनता ही जाहिर होती है। जो चीज सच्ची है, शाश्वत है, वह समझमें न आये, और जो क्षणिक है वह व्यावहारिक मानी जाय, यह कैसा अचरज है!

यह हमारे सामने रोज साबित होता है कि सिर्फ शस्त्रबल कोअी चीज नहीं, फिर भी यह बात अव्यावहारिक कैसे मानी जाती होगी? क्या यह साफ नहीं दीखता कि हम तीस करोड़ होकर भी अेक लाखसे दबे हुअे हैं? बेशुमार भेड़ें अेक शेरको देखकर क्यों भागती हैं? भेड़ोंको अपनी परवशताका भान है, शेरको अपनी ताकतका भान है। यही अुसका आत्म-बल है। आत्मबलको आकाश-पुष्पवत् मानना ही भूल है।

मैं संख्याबलकी अवगणना नहीं करता। अुसका स्थान है, मगर तभी जब अुसके गर्भमें भी आत्मबल समाया हो। बड़ी तादादमें चींटियाँ अेक होकर हाथी पर चढ़ बैठें, तो अुसकी जान ले लें। अिन चींटियोंमें अेकताका भान है। शरीरसे अनेक होकर भी वे मनसे अेक हैं, अुनमें आत्म-बल है। हममें अेक होनेकी भावना पैदा हो जाय, तो हममें आत्मबल आ जाय और अुसी क्षण हम आजाद हो जायँ।

राष्ट्रीय विद्यालयोंके मुट्ठीभर बहादुर विद्यार्थी बलवान हैं। सरकारी विद्यालयोंमें पढ़नेवाले बेशुमार विद्यार्थी अगर देशके लिअे न जीते हों, तो

अुनकी संख्याकी क्या कीमत है? कीमत गुणमें है, विस्तारमें नहीं, यह वाक्य शास्त्रीय तो है ही। क्योंकि यह अनुभवसिद्ध है और अिसीलिये व्यावहारिक है। जो अमलमें न आ सके वह शास्त्रीय नहीं, केवल शाब्दिक प्रयोग है।

जब गैलीलियोने कहा कि जमीन गेंदकी तरह गोल है और अपनी धुरी पर घूमती है, तब अुसकी बातको मनगढ़न्त कह कर लोग हंसे थे। किसी-किसीने अुसे गालियां भी दी थीं। आज हम जानते हैं कि पृथ्वीको थालीकी तरह और स्थिर बतानेवाले खयाली पुलाव पकाते थे और गैली-लियोने व्यावहारिक बात कही थी।

वर्तमान शिक्षाका रुख आत्माको भुलानेकी तरफ होनेके कारण हमें आत्मबलकी बात नीरस लगती है और रोज चूर-चूर होनेवाले शरीरबल पर ही हमारी नजर जमी रहती है। यह मंदताकी पराकाष्ठा है।

मगर मुझमें धीरज है, क्योंकि मुझे अपनी बात पर भरोसा है। मेरा विश्वास अपने और अपने साथियोंके अनुभव पर कायम हुआ है। हरअेक विद्यार्थी — जो चाहे वह — अुसका प्रयोग तटस्थ होकर करे, तो अिन वाक्योंका सीधा अनुभव कर सकता है:

१. सिर्फ संख्याबलका कोअी महत्त्व नहीं।

२. आत्मबलके बगैर दूसरा बल क्षणिक और बेकार है। अगर ये दोनों बातें सही हों, तो हर विद्यार्थीको आत्मबल पहचाननेकी और बढ़ानेकी खूब कोशिश करनी चाहिये।

नवजीवन, ६-१०-'२९

२

['विद्यार्थी और चरित्र' नामक लेख।]

पंजाबके अेक भूतपूर्व स्कूल अिन्स्पेक्टर लिखते हैं:

"कांग्रेसके पिछले अधिवेशनके बाद हमारे प्रान्तके विद्यार्थियोंमें जागृति बढ़ी है, यह आपके ध्यानमें आअी होगी। अेक नअी तरहकी नौजवानोंके दिलोंमें सुलग रही है। अिस नवचेतनाको पैदा

करनेवाले खास तौर पर आप ही है। और अंतमें यह जो स्वरूप लेगी, अुसके लिअे जिम्मेदारी भी आपकी ही रहेगी। अिसलिअे अिस बारेमें आपकी राय जाननेके लिअे नीचेके दो सवाल आपके सामने पेश करता हूं:

"१. शान्ति और व्यवस्थाकी सुन्दर मर्यादाके भीतर रहकर मुनासिब मौको पर विद्यार्थी जन्मभूमिके प्रति रही अपनी भावना प्रगट करें या स्वराज्यके लिअे अपनी लगन जाहिर करें, तो अुस पर मुझे कोअी आपत्ति नहीं। लेकिन जब वे मौका-बेमौका द्वेषसे भरे शान्तिके नारे लगाते हैं, तब मुझे अुसमें स्पष्ट हिंसा दिखाअी देती है। क्या 'डाअुन डाअुन विथ दि यूनियन जैक' वगैरा नारे आपको अैसे नहीं लगते?

"२. हमारे स्कूलों व कॉलेजोंमें चरित्र-निर्माणके लिअे कुछ भी नहीं किया जाता। क्या आप नौजवानोंको यह सलाह देंगे कि वे अपना विद्यार्थी-धर्म बिलकुल भूल जाय, सभ्यता और अनुशासनको ताकमें रख दें और क्षणिक जोशमें बह जायं? क्या नौजवानोंका चरित्र-निर्माण अुनके सब हितचिंतकोंका मुख्य कर्तव्य नहीं?"

नारोंके बारेमें हाल ही में 'यंग अिंडिया' के अेक पिछले अंकमें स्तारसे लिख चुका हूं। मैं पूरी तरह मानता हू कि 'डाअुन डाअुन विथ यूनियन जैक' के नारेमें हिंसाकी बू भरी है। अिसी तरह और भी तने ही नारे, जो आजकल चल पड़े हैं, अहिंसाकी दृष्टिसे दोषमय लगते । अहिंसाको व्यवहार-नीतिके तौर पर माननेवाले भी अुनमें भाग नहीं सकते। अिससे कुछ भी फायदा नहीं, अुलटा नुकसान हो सकता है। मी नौजवानोंको अैसे नारे शोभा नहीं देते ; सत्याग्रहके तो वे खिलाफ ही।

अब अिन पत्र भेजनेवाले भाअीके दूसरे सवाल पर आयें। वे यह ल गये दीखते है कि हाकिमोंने जैसा बोया है, वैसा ही आज वे काट रहे । हमारे विद्यार्थियोंमें जहां-जहां चरित्रकी कमी पाअी जाती है, वहां सके लिअे जिम्मेदार वर्तमान शिक्षण-पद्धति ही है। मेरी सलाह या मदद स वक्त काम नहीं आ सकती। अब तो शिक्षक विद्यार्थियोंके साथ

पुलिस पर और अुन्हें आशीर्वाद देकर शुद्ध स्वागत हासिल करनेके लिये विजयमार्ग पर अुन्हें ले चलें, तो ही दोनों मिलकर स्वराज्यकी तरफ कूच कर सकते हैं। विद्यार्थियोंसे हमारे देशका दुःखद अितिहास छिपा नहीं। वे यह भी जानते हैं कि दूसरे मुल्कोंने किस तरह अपनी आजादी ली है। अपने देशकी स्वाधीनताकी लड़ाअीमें पड़नेसे अब अुन्हें रोका नहीं जा सकता। अगर अुनको अपने ध्येयकी प्राप्तिके लिये ठीक रास्ते पर नहीं चलाया जायगा, तो अुनकी सच्ची और अनोखी बुद्धि अुन्हें जो करनेको कहेगी, वही वे करेंगे। कुछ भी हो, मैंने तो अुन्हें अुनका रास्ता बताकर अपना फर्ज अदा किया है। अगर मेरे ही कारण अुनमें यह सब नवचेतन आया है, तो मेरे लिये यह खुशीकी बात है। मेरे मौजूदा आन्दोलनमें भी अिस अुन्मादको सच्चे रास्ते पर ले जानेका हेतु रहा है। अितने पर भी कोअी खराब नतीजा निकलेगा, तो अुसकी जिम्मेदारी मुझ पर नहीं डाली जा सकती।

अमृतसरमें हालमें हुअे हत्याकाडके लिये मुझसे ज्यादा दुःख शायद ही और किसीको हो सकता है। बिलकुल निर्दोष नौजवान सरदार प्रतापसिंहकी अचानक मौतसे ज्यादा दर्दनाक घटना और क्या हो सकती है? क्योंकि बम फेंकनेवालेका भी अुन्हें मारनेका तो अिरादा नहीं था। जिस तरहकी ज्यादतियोंको चरित्रको अुस खामीके सबूतमें जरूर पेश किया जा सकता है, जिसका जिक्र अूपर बताये हुअे शिक्षा-विभागके निरीक्षकने हमारे विद्यार्थियोंके बारेमें किया है। मगर चरित्र शब्द शायद यहां अधिक ठीक न हो। और अगर बम फेंकनेवालेका अिरादा सचमुच ही खालसा कॉलेजके आचार्यको मारनेका था, तो यह हममें रहे हुअे अेक भयंकर और गहरे रोगका सूचक है। आज हमारे शिक्षकों और विद्यार्थियोंके बीच सजीव सम्बन्ध नहीं है। सरकारी और सरकारमान्य संस्थाओंके शिक्षकोंने, अुनमें वफादारीकी भावना हो या न हो, वफादारीका दिखावा करना और दूसरोंको वफादारीकी सीख देना अपना फर्ज समझ लिया है। विद्यार्थियोंमें सरकारके लिये वफादारी जैसी कोअी भावना रही ही नहीं। वे अब अधीर हो गये हैं और अधीरताके कारण संयम खो बैठे हैं। और अिसीलिये अुनकी शक्ति कभी-कभी अुलटे रास्ते चली जाती है। मुझे अैसा नहीं लगता कि अिन सब घटनाओंके कारण मुझे अपनी लड़ाअी रोक देनी चाहिये। पर

दोनो तरफकी हिंसाकी आगके खिलाफ लड़कर अुस पर काबू पानेका या खुद ही अुसमें भस्म हो जानेका अपना धर्म मुझे दीपककी तरह साफ दिखाओ देता है।

नवजीवन, ९-३-'३०

१५
पढ़-लिखकर क्या करें ?

अेक विद्यार्थी गंभीरतासे यह सवाल पूछता है कि वह पढ़ाओ खत्म कर लेनेके बाद क्या करे ?

आज हम गुलाम हैं। जिन्होंने हमको पराधीन कर रखा है, अुन्हींके फायदेकी दृष्टिसे हमारी आजकलकी पढ़ाओका कार्यक्रम रखा गया है। बिना लालच दिखाये कोओी अपना मतलब साध ले, अैसा दुनियामें कहीं नहीं होता। अिसलिअे हमारे शासकोंने आजकलकी शिक्षाके सिलसिलेमें अनेक प्रलोभन पैदा कर रखे हैं। अिसके सिवा, अेक शासनतंत्रके सभी आदमी अेक सरीखे नहीं होते। अुनमें कुछ सद्वृत्तिवाले भी होते हैं। वे अुदार ढंगसे विचार करते हैं। अिसमें संदेह नहीं कि आजके सरकारी शिक्षणमें भी कुछ अच्छाअियाँ हैं, तो भी सब मिलाकर, हम चाहें या न चाहें, अुसका अुप-योग अनिष्टकारी हो जाता है। यानी लोग अुसे अधिक-से-अधिक धन अिकट्ठा करने और अूचे-से-अूचे पद पानेका साधन समझते हैं। धन और पदके कारण अुनमें गुलामी प्यारी लगने लगती है! अिस वातावरणमें से निकल जाय, 'सा विद्या या विमुक्तये' — विद्या वही है जो मुक्त करे, अिस प्राचीन मंत्रको सिद्ध कर लें। विद्या यानी केवल आध्यात्मिक ज्ञान और मुक्ति यानी छुटकारा, अितना ही अिसका अर्थ न करें। विद्याका अर्थ है, जीवनोपयोगी सारा ज्ञान प्राप्त करना और मुक्तिसे मतलब है अिस जीवनमें हर तरहकी गुलामीसे छुटकारा पाना। गुलामीका अर्थ है, किसी दूसरेके अधीन होना, या अपने आप पैदा की हुअी बनावटी जरूरतोंका गुलाम बनना। अिस प्रकारकी मुक्ति जिसके द्वारा मिले, वही असली शिक्षा है। अैसी शिक्षा मिले तो 'पढ़-लिख कर क्या करें ?' यह सवाल अुठे ही नहीं।

विदेशी सरकारके द्वारा शुरू की गअी शिक्षा-प्रणाली असके अपने मतलबके लिअे है, अैसा मानकर ही सन् १९२० में कांग्रेसने सरकारी मदरसोंका बहिष्कार करनेका अैलान किया था। मगर वह जमाना तो अब बीत-सा ही गया है। सरकारी मदरसों और सरकारकी योजनाके अनुसार शिक्षा देनेवाली संस्थाओंकी संख्या रोज-रोज बढ़ती ही जाती है, तो भी अुनसे विद्यार्थियों और विद्यार्थिनियोंकी माग पूरी नहीं होती। परीक्षा देनेवालोंकी संख्या भी खूब बढ़ रही है। यह सब होते हुअे भी मैं कहता हूं कि सच्ची शिक्षा तो वही है, जो मैंने बताअी। अिस मंत्रके अूपर-अूपरके अर्थसे आकर्षित होकर जो विद्यार्थी अपनी चलती हुअी पढ़ाअी छोड़ेंगे, अुन्हें बादमें कभी पछताना पड़ सकता है। अिसीलिअे मैंने विद्यार्थियोंको अेक सुगम रास्ता बताया है। वह यह कि वे अपने मदरसोंमें पढ़ते हुअे भी वहां मिलनेवाली शिक्षाको सेवाके लिअे ही प्राप्त करें, और सेवाके काममें ही अुसका अुपयोग करें; रुपया पैदा करनेके लिअे नहीं। वर्तमान शिक्षामें जो कमी है, अुसे स्कूलसे बाहरके समयमें ज्ञान प्राप्त करके दूर करें; यानी अपने विद्यार्थी-जीवनमें जितना रचनात्मक कार्य वे कर सकते हैं, करें।

हरिजनसेवक, १०–३–'४६

१६

जड़में ही कहीं दोष है

['शादी या बिक्रीका सौदा?' शीर्षक लेख।]

लगभग सारे देशमें कअी जातियोंमें दहेजका जो रिवाज है, अुसके बारेमें 'स्टेट्समैन' अखबारमें कुछ महीने पहले चर्चा अुठाअी गअी थी, और अिस अखबारके सम्पादकने खुद भी अुसमें अपनी तरफसे भाग लिया था। जब 'यंग अिंडिया' चलता था, तब अैसे घातक रिवाजोंके बारेमें मैं बहुत कुछ लिखा करता था। 'स्टेट्समैन' की अुस सम्बन्धकी खबरें देखकर अुसकी चरचाकी अुस वक्तकी सारी याद मुझे ताजा हो गअी। सिंधमें अिस रिवाजको 'देती-लेती' कहते हैं, अुस वक्त मैं अुसकी टीका किया करता था। अपनी

लड़कियोंको अच्छे घर ब्याहनेकी अिच्छा रखनेवाले माता-पिताओंसे बड़ी-बड़ी रकमें अैंठनेवाले अिन्हें ही पढ़े-लिखोंमें गिने निकलते थे। 'स्त्रीदर्पण' ने अिस भ्रष्ट रिवाजके खिलाफ मानो जिहाद ही बोल दिया है।

अिसमें शक नहीं कि यह रिवाज बेरहमी भरा है। लेकिन जहाँ तक मुझे पता है यह करोड़ोंका सवाल नहीं। यह सिर्फ मध्यम वर्गका प्रश्न है, जो हिन्दुस्तानके समुद्रमें बूँदके बराबर है। जब हम अैसे रिवाजोंकी बात करते हैं, तब आम तौर पर हमारे मनमें मध्यम वर्ग ही होता है। गाँवोंमें रहनेवाले करोड़ों आदमियोंके रिवाजों और दुःखोंके बारेमें हमें शायद ही कुछ पता होता।

मगर अिसका यह मतलब नहीं कि इतने छोटेसे समुदायमें जो कुरीति फैली है, अिसलिअे अिसकी परवाह न की जाय। यह कुरीति मिटनी चाहिये। यह बात कि शादी मा-बापका रुपयेके बदले किया हुआ सौदा है, मिटनी ही चाहिये। अिस रिवाजका जातिकी प्रथाके साथ गहरा ताल्लुक है। जब तक किसी खास जातिके कुछ सौ युवक-युवतियोंमें ही चुनाव करनेकी पाबन्दी रहेगी, तब तक आप कितना ही विरोध कीजिये, यह रुपयेके सौदेका रिवाज कायम ही रहेगा। अिसलिअे अिसे निर्मूल करना हो, तो युवकों, युवतियों और अुनके मा-बापोंको ये जातिकी चहारदीवारियाँ तोड़नी ही पड़ेंगी। अिसके लिअे विवाहकी अुम्र भी बढ़ानी ही होगी; और जरूरत पड़े यानी लायक वर न मिले, तो लड़कियोंको कुंआरी रहनेकी भी हिम्मत करनी होगी। अिन सबका अर्थ यह हुआ कि शिक्षा अिस प्रकारकी होनी चाहिये, जो राष्ट्रके नौजवानोंके विचारोंमें क्रान्ति कर दे। मगर बदकिस्मतीसे शिक्षाकी वर्तमान प्रणालीकी रचना कुछ अिस तरहकी है कि अुसका हमारी परिस्थितिके साथ कोअी सम्बन्ध ही नहीं; और अुससे जो कुछ मिलता है, वह भी राष्ट्रकी बहुत थोड़ी संख्याके लड़के-लड़कियोंको। अिसलिअे अिस शिक्षाका असर परिस्थिति पर कुछ भी पड़ता हो अैसा नहीं दीखता। अिसलिअे अिस बुराअीको और किसी तरह कम किया जा सकता हो तो जरूर कीजिये। मगर मुझे तो साफ दिखाअी देता है कि यह और दूसरी कअी बुराअियाँ अैसी हैं, जिनके बारेमें सफलतापूर्वक कुछ भी कर सकनेके लिअे हमारी शिक्षाकी पद्धति

आजकी देशकी जल्दी-जल्दी बदलती हुआी परिस्थितिका मुकाबला करनेकी ताकत रखनेवाली होनी चाहिये। यह तो साफ बात है कि दहेज लेनेका यह रिवाज बुरा है और भविष्यके जीवनके साथ अिसका सम्बन्ध शादीकी तरह ही गहरा होता है। फिर भी यह कैसी बात है कि कॉलेजोंमें से निकले हुअे युवक-युवती भी अिस खुली कुरीतिका विरोध करनेमें कमजोरी और अनिच्छा दिखाते हैं? वर न मिलनेके कारण पढ़ी-लिखी लड़कियां आत्म-हत्या करती देखी जाती हैं। यह क्यों? जिस रिवाजका किसी तरह बचाव नहीं किया जा सकता और जो हमारी नीतिकी भावनाको धिक्कारने लायक लगता है, अुसका विरोध करनेकी भी जो शिक्षा विद्यार्थियोंको हिम्मत या शक्ति न दे, *वह शिक्षा किस कामकी? अिन प्रश्नोंका अुत्तर साफ है:* जो शिक्षा-पद्धति लड़के-लड़कियोंको अैसी सामाजिक और दूसरी बुराअियोंका विरोध करनेकी शक्ति देनेमें असफल रही है, अुसकी जड़में ही कहीं न कहीं बड़ा दोष है। जो शिक्षा विद्यार्थीकी भीतरी शक्तियोंका अिस तरह विकास करे कि जीवनके हरअेक क्षेत्रमें अुठनेवाले सवालोंको हल करनेकी शक्ति अुसमें पैदा हो, वही शिक्षा कीमती है।

हरिजनबंधु, ३१-५-'३६

१७
शिक्षामंत्रियोंके प्रति

दक्षिण भारतके अेक हाअीस्कूलके अेक अध्यापकने विद्यार्थियोंके अपर सरकारकी तरफसे लगे हुअे प्रतिबंधोंका वर्णन करनेवाले निम्न-लिखित अवतरण भेजे हैं:

> "नियम ९९ सरकारके विरुद्ध किसी भी आंदोलनमें हिस्सा लेनेके जुर्ममें जिस विद्यार्थीको अदालतसे सजा हुआी है, अुसे पहलेसे सरकारकी परवानगी लिये बगैर किसी स्कूलमें दाखिल न किया जाय। स्कूलके किसी अधिकारी या नौकरको सरकारकी सत्ताके विरुद्ध किसी भी राज-नीतिक आंदोलनमें भी भाग न लेने दिया जाय, या अुसे अैसी कोअी राय जाहिर न करने दी जाय, जिससे कि सरकारके विरुद्ध राजनीतिक

बदगुमानी या बेवफाओके भावोंको अुत्तेजन मिले। विद्यार्थियोंको राजनीतिक सभाओंमें या किसी भी किस्मके आन्दोलनमें भाग न लेने दिया जाय।

"१००. अध्यापक या संचालक अगर अैसी बेजा हरकतें जारी रखें, या विद्यार्थियोंको अिस किस्मकी हरकतको अुत्तेजन दें, या अुसके लिअे अिजाजत दें, तो अुन्हें अुचित चेतावनी देनेके बाद शिक्षा-विभागका डाअिरेक्टर अुस स्कूलको अमान्य करार दे देगा, या अुसे सरकारकी तरफसे दी जानेवाली सहायता बंद कर देगा, अथवा अुस स्कूलके विद्यार्थियोंको सरकारी छात्रवृत्तियोंसे सम्बन्धित परीक्षाओंमें बैठने नहीं देगा, और सरकारी छात्रवृत्ति पानेवाले *विद्यार्थियोंको अैसे स्कूलमें दाखिल नहीं होने देगा।*

"१०१. किसी भी अध्यापकके सार्वजनिक भाषण अगर अैसे हों, जिनसे कि विद्यार्थियोंके कोमल दिमागसे सत्ता-विषयक आदर-भाव नष्ट होकर अुनका व्यवस्थित विकास रुक जाय, और जो नाग-रिकोंके रूपमें अुनकी अुपयोगिता कम कर दें, और आगेके जीवनमें अुनकी प्रगतिमें बाधा डालें, या अध्यापक खुद अपने लड़कोंको राज-नीतिक सभाओंमें ले जाय, या अिरादतन् अुन्हें अैसी किसी सभामें अुपस्थित रहनेके लिअे प्रोत्साहन देता जान पड़े, तो अैसा करनेके कारण यह समझा जायगा कि वह अपने कर्तव्यसे च्युत हो गया है, और अुसके खिलाफ अनुशासनकी कार्रवाओी की जायगी।

"७९. (सिवा धार्मिक पुस्तकोंके) अैसी किसी भी पुस्तकका अुपयोग, जिसे सरकारने स्वीकृत न किया हो, स्कूलमें कदापि न किया जाय। स्कूलोंमें भी किसी पुस्तक या पुस्तकोंका अुपयोग करने या न करने देनेका अधिकार सरकारने अपने हाथमें रखा है।

"८०. (अिस धाराके अनुसार सभी बालकोंको टीका लगा हुआ होना ही चाहिये। यद्यपि अिस पर अमल नहीं होता, फिर भी अिस धाराको निकाल ही देना चाहिये।)

"सरकार द्वारा स्वीकृत स्कूलोंके अुपर राष्ट्रीय झंडा न फह-राया जाय, वर्गोंमें राष्ट्रीय नेताओंके चित्र न लटकाये जायं, किसी

स्कूलके विद्यार्थी परीक्षामें प्रश्नोंके अुत्तरोंमें राष्ट्रीय विचार जाहिर करें तो अुन्हें सजा दी जाय, वगैरा सरकारी गश्ती आज्ञायें तो अब भी चालू हैं।

"शिक्षक-मंडलोंकी राय जाने बिना अध्ययन-क्रममें कोअी भी परिवर्तन न करनेका मार्ग सरकारको अख्तियार करना चाहिये; मद्रासमें अैसा अेक दक्षिण भारत शिक्षक-मंडल है। अुसने भूतपूर्व गवर्नमेन्टकी चौथे वर्गकी परीक्षा सरकारकी ओरसे लेनेकी तजवीजको निंदनीय बताया है।

"हिंदी जहां मातृभाषा न हो अुन प्रांतोंमें अिस विषयको अधिक प्रोत्साहन दिलानेके लिअे हिंदी अध्यापकोंको दूसरोंकी अपेक्षा अधिक आर्थिक सहायता देनी चाहिये, जिससे कि संचालकोंको अिस विषयको दाखिल करनेका प्रोत्साहन मिले। हिंदी-प्रचारक काम चलाने लायक अुर्दू भी सीख लें।

"मद्रास-सरकारके अिस नियमसे कि हेडमास्टर पांच वर्षके अंदर पाठ्यपुस्तकें न बदलें, बच्चोंके माता-पिताओंको पैसेकी कोअी बचत नहीं हो सकती; कारण कि जिन्हें अूपरके वर्गोंमें चढ़ा दिया जाता है, अुन्हें तो नअी किताबें मिल ही जाती हैं, और जो अनुत्तीर्ण कर दिये जाते हैं, वे ज्यादातर दूसरे स्कूलोंमें चले जाते हैं, और वहां और ही किताबें पढ़ाअी जाती हैं। अिन नियमोंकी ७९ वीं धाराके कारण कार्यशक्तिमें बाधा पहुंचती है, और राष्ट्रीय विचारोंकी पुस्तकें चुनी नहीं जा सकती।

"यह सूचना तुरन्त दे दी जाय कि दो सालमें हाअीस्कूलोंके सभी वर्गोंमें मातृभाषा द्वारा ही शिक्षा मिलने लग जानी चाहिये। वर्तमान चौथे वर्गमें जितनी अंग्रेजी पढ़ाअी जाती है अुतनी छठे वर्गमें सिखानी चाहिये। अंग्रेजीके घंटे कम कर देने चाहिये और अंग्रेजीके अैच्छिक वर्ग खोलने चाहिये। पांचवीं कक्षाके पहले और दूसरे वर्गमें अंग्रेजीके बजाय हिंदी दाखिल करनी चाहिये, और गणितका अध्ययन-क्रम बेहद कर देना चाहिये। अिससे हिंदीकी तरफ यथेष्ट ध्यान दिया जा सकेगा। और आज जो फिजूलकी चीजें सिखाअी जाती हैं,

अुनकी जगह हाथके अुद्योगोंका सच्चा शिक्षण दाखिल किया जा सकता है।

"९९ वीं और १०० वीं दफावाली धारायें हटा दी जाय, और हेडमास्टर अपने विद्यार्थियोंको प्रत्यक्ष सामाजिक कार्य द्वारा नागरिकताका कर्तव्य पालन करना सिखावें। शालाके वातावरणमें सफाओ, स्वास्थ्य और आहार-संबंधी ज्ञान बतावें, और वर्तमान समयके राजनीतिक और आर्थिक प्रश्नोंके विषयमें अुन्हें अच्छी तरह समझावें। ये तीन बातें नियमित कर देनी चाहिये। अगर अैसा किया गया तो अनिष्टकारी और अज्ञानपूर्ण हलचलोंका आप ही शमन हो जायगा।"

अिनमें से अधिकांश प्रतिबंधोंको हटानेमें तो अेक क्षणकी भी देरी नहीं होनी चाहिये। क्या तो विद्यार्थी और क्या अध्यापक, किसीका मन पिंजरेमें बंद नहीं करना चाहिये। अध्यापक तो खुद अथवा राज्य जिसे अच्छे-से-अच्छा रास्ता मानता है अुसीको बता सकता है। अैसा करनेके बाद अुसे अपने विद्यार्थियोंके विचारों और भावनाओंको दबा देनेका कोओ अधिकार नहीं। अिसका अर्थ यह नहीं कि विद्यार्थी किसी भी प्रकारके नियमके वशमें न रहें। बगैर नियम-पालनके कोओ स्कूल चल ही नहीं सकता। किन्तु विद्यार्थियोंके सर्वांगीण विकास पर जो कृत्रिम अंकुश रखा जाता है अुसके साथ नियम-पालन या अनुशासनका कोओ सरोकार नहीं। जहां अुनके पीछे जासूस लगाये जाते हों, वहां यह असंभव है। असल बात यह है कि आज तक वे जिस प्रकारके वातावरणमें रहे हैं, वह साफ ही अराष्ट्रीय रहा है। यह वातावरण अब दूर हो जाना चाहिये। विद्यार्थियोंको जानना चाहिये कि राष्ट्रीय भावनाको विकसित करना कोओ अपराध नहीं, किन्तु अेक सद्गुण है।

हरिजनसेवक, २५-९-'३७

१८
अुच्च शिक्षा

अुच्च शिक्षाके बारेमें कुछ समय पूर्व मैंने डरते-डरते संक्षेपमें जो विचार प्रगट किये थे, अुनकी माननीय श्री श्रीनिवास शास्त्रीने नुक्ताचीनी की है, जिसका कि अुन्हें पूरा हक है। मनुष्य, देशभक्त और विद्वानके रूपमें मेरे हृदयमें अुनके लिअे बहुत बड़ा आदर है। अिसलिअे जब मैं अपनेको अुनसे असहमत पाता हू, तो मेरे लिअे हमेशा ही वह बड़े दुःखकी बात होती है। अितने पर भी कर्तव्य मुझे अिस बातके लिअे बाध्य कर रहा है कि अुच्च शिक्षाके विषयमें मेरे जो विचार है, अुन्हें मैं पहलेसे भी अधिक पूर्णताके साथ फिरसे व्यक्त कर दू, जिससे कि पाठक खुद ही मेरे और अुनके विचारोंके भेदको समझ ले।

अपनी मर्यादाअोंको मैं स्वीकार करता हू। मैंने विश्वविद्यालयकी कोअी नाम लेने योग्य शिक्षा नही पाअी है। मेरा स्कूली जीवन भी औसत दर्जेसे अधिक अच्छा कभी नहीं रहा। मैं तो यही बहुत समझता था कि किसी तरह अिम्तिहान पास हो जाअू। स्कूलमें डिस्टिक्शन (यानी विशेष योग्यता) पाना तो अैसी बात थी, जिसकी मैंने कभी आकांक्षा भी नही की। मगर फिर भी शिक्षाके विषयमें, जिसमें कि वह शिक्षा भी शामिल है जिसे अुच्च शिक्षा कहा जाता है, आम तौर पर मैं बहुत दृढ़ विचार रखता हू। और देशके प्रति मैं अपना यह कर्तव्य समझता हूं कि मेरे विचार स्पष्ट रूपसे सबको मालूम हो जायं और अुनकी वास्तविकता सबके सामने आ जाय। अिसके लिअे मुझे अपनी अुस भीरुता या संकोचकी भावनाको छोड़ना ही पड़ेगा, जो लगभग आत्म-दमनकी हद तक पहुंच गअी है। अिसके लिअे न तो मुझे अुपहासका भय रखना चाहिये, न लोकप्रियता या प्रतिष्ठा घटनेकी ही चिन्ता करनी चाहिये। क्योंकि अगर मैं अपने विश्वासों [illegible], या निर्णयकी भूलोंको कभी दुरुस्त न कर सकूंगा। लेकिन मैं तो [illegible] दूसरे और अुससे भी अधिक अुन्हें सुधारनेके लिअे अुत्सुक हूं।

अब मैं अपने अुन निष्कर्षोंको बता दूं, जिन पर कि मैं कअी बरसोंसे पहुंचा हुआ हूं, और जिन्हें जब भी कभी मुझे मौका मिला है मैंने अमलमें लानेकी कोशिश की है।

(१) दुनियामें प्राप्त हो सकनेवाली अूची-से-अूची शिक्षाका भी म विरोधी नहीं हूं।

(२) राज्यकी जहां भी असका निश्चित अुपयोग हो वहां अिसका खर्च अुठाना चाहिये।

(३) साधारण आमदनी (जनरल रेवेन्यू) द्वारा सारी अुच्च शिक्षाका खर्च चलानेके मैं खिलाफ हूं।

(४) मेरा यह निश्चित विश्वास है कि हमारे कॉलेजोंमें साहित्यकी जो अितनी सारी तथाकथित शिक्षा दी जाती है, वह सब बिलकुल व्यर्थ है और अुसका परिणाम शिक्षित वर्गोंकी बेकारीके रूपमें हमारे सामने आया है। यही नहीं, बल्कि जिन लड़के-लड़कियोंको हमारे कॉलेजोंकी चक्कीमें पिसनेका दुर्भाग्य प्राप्त हुआ है, अुनके मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्यको भी अिसने चौपट कर दिया है।

(५) विदेशी भाषाके माध्यमने, जिसके जरिये कि भारतमें अुच्च शिक्षा दी जाती है, हमारे राष्ट्रको हदसे ज्यादा बौद्धिक और नैतिक आघात पहुंचाया है। अभी हम अपने अिस जमानेके अितने नजदीक है कि अिस नुकसानका निर्णय नहीं कर सकते। और फिर, अैसी शिक्षा पानेवाले हमीको अिसका शिकार और न्यायाधीश दोनो बनना है, जो कि लगभग असम्भव काम है।

अब मेरे लिअे यह बतलाना आवश्यक है कि मैं अिन निष्कर्षों पर क्यों पहुंचा। यह शायद अपने कुछ अनुभवोंके द्वारा ही मैं सबसे अच्छी तरह बतला सकता हूं।

१२ बरसकी अुम्र तक मैंने जो भी शिक्षा पाअी वह अपनी मातृभाषा गुजरातीमें पाअी थी। अुस वक्त गणित, अितिहास और भूगोलका मुझे थोड़ा-थोड़ा ज्ञान था। अिसके बाद मैं अेक हाअीस्कूलमें दाखिल हुआ। अिसमें भी पहले तीन साल तक तो मातृभाषा ही शिक्षाका माध्यम रही। लेकिन स्कूल-मास्टरका काम तो विद्यार्थियोंके दिमागमें जबरदस्ती अंग्रेजी

ठूंसना था। अिसलिअे हमारा आधेसे अधिक समय अंग्रेजी और अुसके मनमाने हिज्जों तथा अुच्चारण पर काबू पानेमें लगाया जाता था। अैसी भाषाका पढ़ना हमारे लिअे अेक कष्टपूर्ण अनुभव था, जिसका अुच्चारण ठीक अुसी तरह नहीं होता जैसी कि वह लिखी जाती है। हिज्जोंको कण्ठस्थ करना अेक अजीब-सा अनुभव था। लेकिन यह तो मैं प्रसंगवश कह गया, वस्तुतः मेरी दलीलसे अिसका कोअी सम्बन्ध नहीं है। मगर पहले तीन साल तो तुलनात्मक रूपमें ठीक ही निकल गये।

जिल्लत तो चौथे सालसे शुरू हुअी। अलजबरा (बीजगणित), केमिस्ट्री (रसायनशास्त्र), अेस्ट्रानॉमी (ज्योतिष), हिस्ट्री (अितिहास), ज्यॉग्राफी (भूगोल) — हरअेक विषय मातृभाषाके बजाय अंग्रेजीमें ही पढ़ना पड़ा। कक्षामें अगर कोअी विद्यार्थी गुजराती, जिसे कि वह समझता था, बोलता तो अुसे सजा दी जाती थी। हां, अंग्रेजीको, जिसे न तो वह पूरी तरह समझ सकता था और न शुद्ध बोल सकता था, अगर वह बुरी तरह बोलता तो भी शिक्षकको कोअी आपत्ति नहीं होती थी। शिक्षक भला अिस बातकी फिक्र क्यों करे? क्योंकि खुद अुसकी ही अंग्रेजी निर्दोष नहीं थी। अिसके सिवा और हो भी क्या सकता था? क्योंकि अंग्रेजी अुसके लिअे भी अुसी तरह विदेशी भाषा थी जिस तरह कि अुसके विद्यार्थियोंके लिअे थी। अिससे बड़ी गड़बड़ होती थी। हम विद्यार्थियोंको अनेक बातें कण्ठस्थ करनी पड़ती, हालांकि हम अुन्हें पूरी तरह नहीं समझ सकते थे और कभी-कभी तो बिलकुल ही नहीं समझते थे। शिक्षकके हमें ज्यॉमेट्री (रेखागणित) समझानेकी भरपूर कोशिश करने पर मेरा सिर घूमने लगता। सच तो यह है कि यूक्लिड (रेखागणित) की पहली पुस्तकके १३ वें साध्य तक जब तक हम न पहुंच गये, मेरी समझमें ज्यॉमेट्री बिलकुल नहीं आअी। और पाठकोंके सामने मुझे यह मजूर करना ही चाहिये कि मातृभाषाके अपने सारे प्रेमके बावजूद आज भी मैं यह नहीं जानता कि ज्यॉमेट्री, अलजबरा आदिकी पारिभाषिक बातोंको गुजरातीमें क्या कहते हैं। हां, यह अब मैं जरूर देखता हूं कि जितना गणित, रेखागणित, बीजगणित, रसायनशास्त्र और ज्योतिष सीखनेमें मुझे चार साल लगे, अगर अंग्रेजीके बजाय गुजरातीमें

मैंने अुन्हें पढ़ा होता, तो अुनना मैंने अेक ही सालमें आसानीसे सीख लिया होता। अुस हालतमें मैं आसानी और स्पष्टताके साथ अिन विषयोंको समझ लेता। गुजरातीका मेरा शब्दज्ञान कहीं ज्यादा समृद्ध हो गया होता, और अुस ज्ञानका मैंने अपने घरमें अुपयोग किया होता। लेकिन अिस अंग्रेजीके माध्यमने तो मेरे और मेरे कुटुम्बियोंके बीच, जो कि अंग्रेजी स्कूलोंमें नहीं पढ़े थे, अेक अगम्य खाअी खड़ी कर दी। मेरे पिताको कुछ पता न था कि मैं क्या कर रहा हूं। मैं चाहता तो भी अपने पिताकी अिस बातमें दिलचस्पी पैदा नहीं कर सकता था कि मैं क्या पढ़ रहा हूं। क्योंकि यद्यपि बुद्धिकी अुनमें कोअी कमी न थी, मगर वह अंग्रेजी नहीं जानते थे। अिस प्रकार अपने ही घरमें मैं बड़ी तेजीके साथ अजनबी बनता जा रहा था। निश्चय ही मैं औरोंसे अूंचा आदमी बन गया था। यहां तक कि मेरी पोशाक भी अपने आप बदलने लगी। लेकिन मेरा जो हाल हुआ वह कोअी असाधारण अनुभव नहीं था, बल्कि अधिकांशका यही हाल होता है।

हाअीस्कूलके प्रथम तीन वर्षोंमें मेरे सामान्य ज्ञानमें बहुत कम वृद्धि हुअी। यह समय तो लड़कोंके लिअे हरअेक चीज अंग्रेजीके जरिये सीखनेकी तैयारीका था। हाअीस्कूल तो अंग्रेजोंकी सांस्कृतिक विजयके लिअे थे। मेरे हाअीस्कूलके तीन सौ विद्यार्थियोंने जो ज्ञान प्राप्त किया वह तो हमीं तक सीमित रहा, वह सर्वसाधारण तक पहुंचानेके लिअे नहीं था।

अेक-दो शब्द साहित्यके बारेमें भी। अंग्रेजी गद्य और पद्यकी हमें कअी किताबें पढ़नी पड़ी थीं। अिसमें शक नहीं कि यह सब बढ़िया साहित्य था। लेकिन सर्वसाधारणकी सेवा या अुसके सम्पर्कमें आनेमें अुस ज्ञानका मेरे लिअे कोअी अुपयोग नहीं हुआ है। मैं यह कहनेमें असमर्थ हूं कि मैंने अंग्रेजी गद्य और पद्य न पढ़ा होता तो मैं अेक बेश-कीमती खजानेसे वंचित रह जाता। अिसके बजाय, सच तो यह है कि अगर ये सात साल मैंने गुजराती पर प्रभुत्व प्राप्त करनेमें लगाये होते और गणित, विज्ञान, तथा संस्कृत आदि विषयोंको गुजरातीमें पढ़ा होता, तो अिस तरह प्राप्त किये हुअे ज्ञानमें मैंने अपने अड़ोसी-पड़ोसियोंको आसानीसे हिस्सेदार बनाया होता। अुस हालतमें मैंने गुजराती साहित्यको समृद्ध किया होता, और कौन कह सकता है कि अमलमें अुतारनेकी अपनी

आत्म तथा देश और मातृभाषाके प्रति अपने बेहद प्रेमके कारण सर्व-साधारणकी सेवामें मैं और भी अधिक अपनी देन क्यों न दे सकता?

यह हरगिज न समझना चाहिये कि अंग्रेजी या अुसके श्रेष्ठ साहित्यका मैं विरोधी हूं। 'हरिजन' मेरे अंग्रेजी-प्रेमका पर्याप्त प्रमाण है। लेकिन अुसके साहित्यकी महत्ता भारतीय राष्ट्रके लिअे अुससे अधिक अुपयोगी नहीं, जितना कि अुसका समशीतोष्ण जलवायु या वहांके सुन्दर दृश्य हैं। भारतको तो अपने ही जलवायु, दृश्यों और साहित्यमें तरक्की करनी होगी, फिर चाहे ये अंग्रेजी जलवायु, दृश्यों और साहित्यसे घटिया दर्जेके ही क्यों न हों। हमें और हमारे बच्चोंको तो अपनी खुदकी ही विरासत बनानी चाहिये। अगर हम दूसरोंकी विरासत लेंगे, तो अपनी नष्ट हो जायगी। सच तो यह है कि विदेशी सामग्री पर हम कभी अुन्नति नहीं कर सकते। मैं तो चाहता हूं कि राष्ट्र अपनी ही भाषाका कोष भरे और अिसके लिअे संसारकी अन्य भाषाओंका कोष भी अपनी ही देशी भाषाओंमें संचित करे। रवीन्द्रनाथकी अनुपम कृतियोंका सौन्दर्य जाननेके लिअे मुझे बंगाली पढ़नेकी कोअी जरूरत नहीं, क्योंकि सुन्दर अनुवादोंके द्वारा मैं अुसे पा लेता हूं। अिसी तरह टॉल्स्टॉयकी संक्षिप्त कहानियोंकी कद्र करनेके लिअे गुजराती लड़के-लड़कियोंको रूसी भाषा पढ़नेकी कोअी जरूरत नहीं, क्योंकि अच्छे अनुवादोंके जरिये वे अुन्हें पढ़ लेते हैं। अंग्रेजोंको अिस बातका अभिमान है कि संसारकी सर्वोत्तम साहित्यिक रचनाअें प्रकाशित होनेके अेक सप्ताहके अन्दर-अन्दर सरल अंग्रेजीमें अुनके हाथोंमें आ पहुंचती हैं। अैसी हालतमें शेक्सपीयर और मिल्टनके सर्वोत्तम विचारों और रचनाओंके लिअे मुझे अंग्रेजी पढ़नेकी जरूरत क्यों हो?

यह अेक तरहकी अच्छी मितव्ययिता होगी कि अैसे विद्यार्थियोंका ही अेक वर्ग कर दिया जाय, जिनका काम यह हो कि संसारकी भाषाओंमें पढ़ने लायक जो सर्वोत्तम सामग्री हो अुसको पढ़ें और भाषाओंमें अुसका अनुवाद करें। हमारे प्रभुओंने तो हमारे लिअे ही रास्ता चुना है, और आदत पड़ जानेके कारण गलत ही ठीक मालूम पड़ने लगा है।

हमारी अिस झूठी अभारतीय शिक्षासे लाखों आदमियोंका दिन-दिन जो लगातार नुकसान हो रहा है, अुसके तो रोज ही मैं प्रमाण पा रहा हूं। जो ग्रेजुअेट मेरे आदरणीय साथी हैं, अुन्हें जब अपने आन्तरिक विचारोंको व्यक्त करना पड़ता है तो वही खुद परेशान हो जाते हैं। वे तो अपने ही घरोंमें अजनबी हैं। अपनी मातृभाषाके शब्दोंका अुनका ज्ञान जितना सीमित है कि अंग्रेजी शब्दों और वाक्यों तकका सहारा लिये बगैर वे अपने भाषणको समाप्त नहीं कर सकते। न अंग्रेजी किताबोंके बगैर वे रह सकते हैं। आपसमें भी वे अकसर अंग्रेजीमें लिखा-पढ़ी करते हैं। अपने साथियोंका अुदाहरण मैं यह बतानेके लिअे दे रहा हूं कि अिस बुराअीने कितनी गहरी जड़ जमा ली है। क्योंकि हम लोगोंने अपनेको सुधारनेका खुद जान-बूझकर प्रयत्न किया है।

हमारे कॉलेजोंमें जो यह समयकी बरबादी होती है, अुसके पक्षमें दलील यह दी जाती है कि कॉलेजोंमें पढ़नेके कारण अितने विद्यार्थियोंमें से अगर अेक जगदीश बोस भी पैदा हो सके तो हमें अिस बरबादीकी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं। अगर यह बरबादी अनिवार्य होती तो मैं भी जरूर अिस दलीलका समर्थन करता। लेकिन मैं आशा करता हूं कि मैंने यह बतला दिया है कि यह न तो अनिवार्य थी और न अभी ही अनिवार्य है। क्योंकि जगदीश बोस कोअी वर्तमान शिक्षाकी अुपज नहीं थे। वह तो भयंकर कठिनाअियों और बाधाओंके बावजूद अपने परिश्रमकी बदौलत अूंचे अुठे, और अुनका ज्ञान लगभग अैसा बन गया जो सर्वसाधारण तक नहीं पहुंच सकता। बल्कि मालूम अैसा पड़ता है कि हम यह सोचने लगे हैं कि जब तक कोअी अंग्रेजी न जाने तब तक वह बोसके सदृश महान् वैज्ञानिक होनेकी आशा नहीं कर सकता। यह अैसी मिथ्या धारणा है जिससे अधिककी मैं कल्पना ही नहीं कर सकता। जिस तरह हम अपनेको लाचार समझते मालूम पड़ते हैं, अुस तरह अेक भी जापानी अपनेको नहीं समझता।

यह बुराअी, जिसका कि मैंने वर्णन करनेकी कोशिश की है, अितनी गहरी पैठी हुअी है कि कोअी साहसपूर्ण अुपाय ग्रहण किये बिना

काम नहीं चल सकता। हां, कांग्रेसी मंत्री, चाहें तो, अिस बुराओीको दूर भले न कर सकें, तो भी अिसे कम तो कर ही सकते हैं।

विश्वविद्यालयोंको स्वावलंबी जरूर बनना चाहिये। राज्यको तो साधारणतः अुन्हींको शिक्षा देनी चाहिये, जिनकी सेवाओंकी अुसे आवश्यकता हो। अन्य सब दिशाओंके अध्ययनके लिअे अुसे खानगी प्रयत्नको प्रोत्साहन देना चाहिये। शिक्षाका माध्यम तो अेकदम और हर हालतमें बदला जाना चाहिये, और प्रान्तीय भाषाओंको अुनका वाजिब स्थान मिलना चाहिये। यह जो काबिले-सजा बर्बादी रोज-ब-रोज हो रही है, अिसके बजाय तो अस्थायी रूपसे अव्यवस्था हो जाना भी मैं पसन्द करूंगा।

प्रान्तीय भाषाओंका दरजा और व्यावहारिक मूल्य बढ़ानेके लिअे मैं चाहूंगा कि अदालतोंकी कारंवाओी अपने-अपने प्रान्तकी भाषामें हो। प्रान्तीय धारासभाओंकी कारंवाओी भी प्रान्तीय भाषा या, जहां अेकसे अधिक भाषाअें प्रचलित हों, अुनमें होनी चाहिये। धारासभाओंके सदस्योंसे मैं कहना चाहता हूं कि वे चाहें तो अेक महीनेके अन्दर-अन्दर अपने प्रान्तोंकी भाषाअें भलीभांति समझ सकते हैं। तामिलभाषीके लिअे अैसी कोओी रुकावट नहीं कि वह तेलगू, मलयालम और कन्नड़के, जो सब तामिलसे मिलती-जुलती ही हैं, मामूली व्याकरण और कुछ सौ शब्दोंको आसानीसे न सीख सके।

मेरी सम्मतिमें यह कोओी अैसा प्रश्न नहीं है जिसका निर्णय साहित्यज्ञोंके द्वारा हो। वे अिस बातका निर्णय नहीं कर सकते कि किस स्थानके लड़के-लड़कियोंकी पढ़ाओी किस भाषामें हो। क्योंकि अिस प्रश्नका निर्णय तो हरअेक स्वतन्त्र देशमें पहले ही हो चुका है। न वे यही निर्णय कर सकते हैं कि किन विषयोंकी पढ़ाओी हो, क्योंकि यह अुस देशकी आवश्यकताओं पर निर्भर करता है जिस देशके बालकोंकी पढ़ाओी होती है। अुन्हें तो बस यही सुविधा प्राप्त है कि राष्ट्रकी अिच्छाको यथा-सम्भव सर्वोत्तम रूपमें अमलमें लायें। अत जब हमारा देश वस्तुतः स्वतन्त्र [illegible], तब शिक्षाके माध्यमका प्रश्न केवल अेक ही तरहसे हल होगा। [illegible] लोग पाठ्यक्रम बनायेंगे और फिर अुसके अनुसार पाठ्यपुस्तकें

तैयार करेंगे, और स्वतंत्र भारतकी शिक्षा पानेवाले विदेशी शासकोंको करारा जवाब देंगे। जब तक हम शिक्षित वर्ग अिस प्रश्नके साथ खिलवाड़ करते रहेंगे, मुझे अिस बातका बहुत भय है कि हम जिस स्वतंत्र और स्वस्थ भारतका स्वप्न देखते हैं, अुसका निर्माण नहीं कर पायेंगे। हमें तो सतत प्रयत्नपूर्वक अपनी गुलामीसे मुक्त होना है, फिर वह चाहे शिक्षणात्मक हो या आर्थिक अथवा सामाजिक या राजनीतिक। तीन-चौथाओी लड़ाओी तो वही प्रयत्न होगा, जो कि अिसके लिअे किया जायगा।

अिस प्रकार, मैं अिस बातका दावा करता हूं कि मैं अुच्च शिक्षाका विरोधी नहीं हूं। लेकिन अुस अुच्च शिक्षाका मैं जरूर विरोधी हूं, जो कि अिस देशमें दी जा रही है। मेरी योजनाके अन्दर तो अबसे अधिक और अच्छे पुस्तकालय होंगे, अधिक सख्यामें और अच्छी रसायनशालाअें और प्रयोगशालाअें होंगी। अुसके अन्तर्गत हमारे पास अैसे रसायन-शास्त्रियों, अिंजीनियरों तथा अन्य विशेषज्ञोंकी फौज-की-फौज होनी चाहिये, जो राष्ट्रके सच्चे सेवक हों और अुस प्रजाकी बढ़ती हुअी विविध आवश्यकताओंकी पूर्ति कर सकें, जो अपने अधिकारों और अपनी आवश्य-कताओंको दिन-दिन अधिकाधिक अनुभव करती जा रही है। और ये सब विशेषज्ञ विदेशी भाषा नहीं बल्कि जनताकी ही भाषा बोलेंगे। ये लोग जो ज्ञान प्राप्त करेंगे वह सबकी संयुक्त सम्पत्ति होगी। तब खाली नकलकी जगह सच्चा असली काम होगा, और अुसका खर्च न्यायपूर्वक समान रूपसे विभाजित होगा।

हरिजनसेवक, ९–७–'३८

स्पष्टीकरण

मैंने 'अुच्च शिक्षा' पर जो लेख लिखा था, अुसके बारेमें अेक भूतपूर्व प्रोफेसरने मुझे बहुत लम्बा पत्र लिखा है। अुसके कुछ सम्बन्धित अंश नीचे अुद्धृत किये जाते हैं :

"आपने गत ९ जुलाअीके 'हरिजन' में अुच्च शिक्षा पर जो विचार प्रकट किये हैं, अुन्हें जरा और स्पष्ट करनेकी आवश्यकता है। मैं आपके बहुतसे विचारों, खासकर अिस विचारसे सहमत हूं कि शिक्षाका माध्यम विदेशी भाषा होनेके कारण विद्यार्थियोंको काफी हानि पहुंचती है। मैं यह भी महसूस करता हूं कि आजकल जिसे अुच्च शिक्षा कहकर पुकारा जाता है, अुसे यह नाम देना वैसा ही है जैसे कोअी पीतलको ही सोना समझ बैठे। मैं यह जो कुछ कह रहा हूं वह अपने अनुभवके आधार पर कह रहा हूं, क्योंकि मैं अभी हाल तक तथाकथित अुच्च शिक्षाका अेक अध्यापक था।

"साधारण आयके द्वारा अुच्च शिक्षाका खर्च चलनेके बारेमें आपका विरोध और अुससे निकलनेवाला यह नतीजा कि विश्वविद्यालय स्वावलम्बी होने चाहिये, यह आपका तीसरा विचार है जो मुझे कायल नहीं कर सका।

"मेरा विश्वास है कि हरअेक देश अुन्नतिकी ओर आ रहा है। और अुसे न केवल रसायनशास्त्र, डॉक्टरी तथा अिंजीनियरी सीखनेकी ही सुविधाअें बल्कि साहित्य, दर्शन, अितिहास और समाजशास्त्र आदि सभी प्रकारकी विद्याअें सीखनेकी काफी सुविधाअें अवश्य प्राप्त होनी चाहिये।

"तमाम अुच्च विद्याओंकी प्राप्तिके लिअे अैसी बहुतसी सुविधाओंकी दरकार है, जो राज्यकी सहायताके बगैर प्राप्त नहीं हो सकतीं। अैसी चेष्टामें जो देश स्वेच्छापूर्ण प्रयत्न पर ही निर्भर रहे, अुसका पिछड़ जाना और हानि अुठाना अनिवार्य है।

यह कभी आशा ही नहीं की जा सकती कि यह देश स्वतन्त्र हो सकता है, या अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षा करनेमें समर्थ होगा। सरकारको हर प्रकारकी शिक्षाकी निर्देश पर सतर्कतापूर्वक निगाह रखनी चाहिये। जिसके साथ-ही-साथ निजी प्रयत्न भी अवश्य होने चाहिये। सार्वजनिक संस्थाओंको मुक्तहस्त होकर दान देनेके लिये हमारे अन्दर लार्ड न्युफील्ड और मि० रॉकफेलर जैसे दानी होने ही चाहिये। राज्य अिस विशाल आयोजनको दानकी मदद नहीं दे सकता और न अुसे अैसा रहने ही देना चाहिये। अुन विद्यालयोंके साथ आगे आकर संगठन, सहायता और पथप्रदर्शन करना चाहिये। मैं चाहता हूँ कि आप अिस सवालपर अिस पहलूको और भी स्पष्ट करें।

“आपने अपने लेखके अन्तमें लिखा है मेरी योजनाके अनुसार अधिक और बेहतर पुस्तकालय होंगे।’

“मैं अिस योजनाको अैसा नहीं समझता और न मैं यही समझ सका कि अिस योजनाके अनुसार अधिक और बेहतर पुस्तकालय तथा प्रयोगशालायें कैसे स्थापित हो सकेंगी। मेरा यह मत है कि अैसे पुस्तकालय और प्रयोगशालायें अवश्य कायम रहने चाहिये और जब तक दाता तथा सार्वजनिक संस्थायें काफी तादादमें आगे न आवें, तब तक राज्य अपनी हर प्रकारकी जिम्मेदारीका परित्याग नहीं कर सकता।”

लेख तो मेरा काफी स्पष्ट है, अगर अुसमें अुल्लिखित “निश्चित प्रयोग शब्दोंके विस्तृत अर्थ दे दिया जाय। मैंने अैसे दारिद्र्य-पीड़ित भारतका चित्र नहीं खींचा था, जिसमें लाखों आदमी अनपढ़ हैं। मैंने तो अपने लिये अैसे भारतका चित्र खींचा है, जो अपनी बुद्धिके अनुसार सतत प्रगति कर रहा है। मैं अिसे पश्चिमकी मरणासन्न सभ्यताकी थर्डक्लास या फर्स्टक्लासकी भी नकल नहीं कहता। यदि मेरा स्वप्न पूरा हो जाय, तो भारतके सात लाख गांवोंमें से हरअेक गांव समृद्ध प्रजातन्त्र बन जायगा। अुस प्रजातन्त्रका कोअी व्यक्ति अनपढ़ न रहेगा, कामके अभावमें कोअी बेकार न रहेगा, बल्कि किसी-न-किसी

कमाअू धंधेमें लगा होगा। हरअेक आदमीको खानेको पौष्टिक चीजें, रहनेको अच्छे हवादार मकान, और तन ढंकनेको काफी खादी मिलेगी, और हरअेक देहातीको सफाअी और आरोग्यके नियम मालूम होंगे और वह अुनका पालन किया करेगा। अैसे राज्यकी विभिन्न प्रकारकी और अुत्तरोत्तर बढ़ती हुअी आवश्यकताअें होनी चाहिये, जिन्हें या तो वह पूरा करेगा अन्यथा अुसकी गति रुक जायगी। अिसलिअे मैं अैसे राज्यकी अच्छी तरह कल्पना कर सकता हू, जिसमें सरकार अैसी शिक्षाके लिअे आर्थिक सहायता देगी, जिसकी मेरे पत्र-प्रेषकने चर्चा की है। अिस सिलसिलेमें बस अितना ही कहना चाहता हूं। और यदि राज्यकी अैसी आवश्यकताअें होंगी तो निश्चय ही अुसे अैसे पुस्तकालय रखने होंगे।

मेरे विचारके अनुसार अैसी सरकारके पास जो चीज नहीं होगी, वह है बी० अे० और अेम० अे० डिग्रीधारियोंकी फौज, जिनकी बुद्धि दुनियाभरका किताबी ज्ञान ठूंसते-ठूंसते कमजोर हो चुकी है और जिनके दिमाग अंग्रेजोंकी तरह फर-फर अंग्रेजी बोलनेकी असंभव चेष्टामें प्रायः अशक्त हो गये हैं। अिनमें से अधिकांशको न कोअी काम मिलता है और न नौकरी। और कभी कहीं नौकरी मिलती भी है, तो वह आम तौर पर क्लर्कीकी होती है; और अुसमें अुनका वह ज्ञान किसी काम नहीं आता, जो अुन्होंने स्कूलों और कॉलिजोंमें बारह साल गंवाकर प्राप्त किया है।

विश्वविद्यालयकी शिक्षा अुसी समय स्वावलम्बी होगी जब राज्य अुसका अुपयोग करेगा। अुस शिक्षा पर खर्च करना अेक जुर्म है, जिससे न राष्ट्रका लाभ होता है और न किसी व्यक्तिका ही। मेरी रायमें अैसी कोअी बात नहीं हो सकती जिससे किसी व्यक्तिको तो लाभ पहुंचे पर वह राष्ट्रके लिअे लाभदायी सिद्ध न हो। और अब चूंकि मेरे बहुत-से आलोचक वर्तमान शिक्षा-सम्बन्धी मेरे विचारोंसे सहमत जान पड़ते हैं और चूंकि प्राअिमरी या सेकण्डरी शिक्षाका वास्तविकताओंसे कोअी सम्बन्ध नहीं है, अिसलिअे यह राज्यके किसी कामकी नहीं है। प्रत्यक्ष रूपसे अुसका आधार वास्तविकताओं पर होगा, और माध्यम होगा — तो शायद अुसके विरुद्ध कहनेकी कोअी गुंजाअिश न

रहे। शिक्षाका आधार वास्तविकता पर होनेका अर्थ ही यह है कि अुसका आधार राष्ट्रीय अर्थात् राज्यकी आवश्यकताअें हो। अुस हालतमें राज्य अुनके लिअे खर्च करेगा। जब वह शुभ दिन आयेगा तो हम देखेंगे कि बहुतसी शिक्षण-संस्थाअें स्वेच्छासे दिये हुअे दानके सहारे चल रही हैं, भले ही अुनसे राज्यको लाभ पहुंचे या न पहुंचे। आज हिन्दुस्तानमें शिक्षा पर जो खर्च किया जा रहा है — वह अिसी प्रकारसे सम्बन्ध रखता है। अिसलिअे अुसका भुगतान, यदि मेरा बस चले, साधारण आयसे नहीं होना चाहिये।

पर मेरे आलोचकोंके दो मुख्य प्रश्नों — शिक्षाके माध्यम और वास्तविकताओं — पर सहमत हो जानेसे ही मैं खामोश नहीं हो सकता। अुन्होंने जितने दिनों तक वर्तमान शिक्षा-पद्धतिकी आलोचना की और अुसे बरदाश्त किया। पर अब जब कि अुसमें सुधार करनेका समय आ गया है, कांग्रेसजनोंको अधीर हो जाना चाहिये। यदि शिक्षाका माध्यम धीरे-धीरे बदलनेके बजाय अेकदम बदल दिया जाय, तो बहुत ही शीघ्र हम यह देखेंगे कि आवश्यकताको पूरा करनेके लिअे पाठ्यपुस्तकें भी प्राप्त हो रही हैं और अध्यापक भी। और यदि हम व्यावहारिक बुद्धिसे असली काम करना चाहते हैं तो अेक ही सालमें हमें यह मालूम हो जायगा कि हमें विदेशी माध्यम द्वारा सभ्यताका पाठ पढ़नेके प्रयत्नमें राष्ट्रका समय और शक्ति नष्ट करनेकी दरकार नहीं थी। सफलताकी शर्त यही है कि सरकारी दफ्तरोंमें और अगर प्रान्तीय सरकारोंका अपनी अदालतों पर अधिकार हो तो अुन अदालतोंमें भी प्रान्तीय भाषाअें तुरन्त जारी कर दी जायं। यदि सुधारकी आवश्यकतामें हमारा विश्वास हो तो हम अुसमें तुरन्त सफल हो सकते हैं।

हरिजनसेवक, ३०–७–'३८

२०

काशी विश्वविद्यालय पदवीदान भाषण

[२१ जनवरी १९४२ के दिन गांधीजीने काशी हिन्दू विश्वविद्यालयकी रजत जयन्तीके अवसर पर नीचे लिखा भाषण दिया था।]

पूज्य मालवीयजी, सर राधाकृष्णन्, भाअियो और बहनो!

आप सब जानते हैं कि आजकल मुझमें न तो सफर करनेकी ताकत ही रही है, और न अिच्छा ही, लेकिन जब मैंने अिस विश्वविद्यालयके रजत-महोत्सवकी बात सुनी और मुझे सर राधाकृष्णन्का निमन्त्रण मिला, तो मैं अिनकार न कर सका।

आप जानते हैं कि मालवीयजी महाराजके साथ मेरा कितना गहरा सम्बन्ध है। अगर अुनका कोअी काम मुझसे हो सकता है, तो मुझे अुसका अभिमान रहता है, और अगर मैं अुसे कर सकूं, तो अपनेको कृतार्थ समझता हूं। अिसलिअे जब सर राधाकृष्णन्का पत्र मुझे मिला, तो मैंने निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। यहां आना मेरे लिअे तो अेक तीर्थमें आनेके समान है।

यह विश्वविद्यालय मालवीयजी महाराजका सबसे बड़ा और प्राण-प्रिय कार्य है। अुन्होंने हिन्दुस्तानकी बहुत-बहुत सेवायें की हैं, अिससे आज कोअी अिनकार नहीं कर सकता। लेकिन मेरा अपना खयाल यह है कि अुनके महान कार्योंमें अिस कार्यका महत्त्व सबसे ज्यादा रहेगा। २५ साल पहले जब अिस विश्वविद्यालयकी नींव डाली गअी थी, तब भी मालवीयजी महाराजके आग्रह और खिंचावसे मैं यहां आ पहुंचा था। अुस समय तो मैं यह सोच भी न सकता था कि जहां बड़े-बड़े राजा, महाराजा और खुद वाअिसरॉय आनेवाले हैं, वहां मुझ-जैसे फकीरकी क्या जरूरत हो सकती है। तब तो मैं 'महात्मा' भी नहीं बना था। अगर कोअी मुझे 'महात्मा' के नामसे पुकारते भी थे, तो मैं यही सोच लेता था कि महात्मा

मुन्शीरामजीके बदले भूलसे मुझे किसीने पुकार लिया होगा। अुनकी कीर्ति तो मैंने दक्षिण अफ्रीकामें ही सुन ली थी। हिन्दुस्तानसे धन्यवाद और सहानुभूतिका सन्देश भेजनेवालोंमें अेक वे भी थे, और मैं जानता था कि हिन्दुस्तानकी जनताने अुन्हें अुनकी देशसेवाओंके लिअे महात्माकी अुपाधि दी थी। अुस समय भी मालवीयजी महाराजकी कृपादृष्टि मुझ पर थी। कोअी सेवक कहीं भी हो, वे अुसे ढूढ निकालते हैं और किसी-न-किसी तरह अपने पास खींच ही लाते हैं। यह अुनका सदाका धन्धा है।

लोग मालवीयजी महाराजकी बडी प्रशंसा करते हैं। आज भी आपने अुनकी कुछ प्रशंसा सुनी है। वे सब तरह अुसके लायक हैं। मैं जानता हूं कि हिन्दू विश्वविद्यालयका कितना बडा विस्तार है। ससारमें मालवीयजीसे बढ़कर कोअी भिक्षुक नहीं। जो काम अुनके सामने आ जाता है, अुसके लिअे — अपने लिअे नहीं — अुनकी भिक्षाकी झोलीका मुह हमेशा खुला रहता है; वे हमेशा मागा ही करते हैं। और परमात्माकी भी अुन पर बडी दया है कि जहा जाते हैं, अुन्हें पैसे मिल ही जाते हैं। तिस पर भी अुनकी भूख कभी नहीं बुझती। अुनका भिक्षा-पात्र सदा खाली रहता है। अुन्होंने विश्वविद्यालयके लिअे अेक करोड अिकट्ठा करनेकी प्रतिज्ञा की थी। अेक करोड़की जगह डेढ करोड दस लाख रुपया अिकट्ठा हो गया; मगर अुनका पेट नहीं भरा। अभी-अभी अुन्होंने मुझसे कानमें कहा है कि आजके हमारे सभापति महाराजा साहब दरभगाने अुनको अेक खासी बडी रकम दानमें और दी है।

मैं जानता हूं कि मालवीयजी महाराज स्वय किस तरह रहते हैं। यह मेरा सौभाग्य है कि अुनके जीवनका कोअी पहलू मुझसे छिपा नहीं है। अुनकी सादगी, अुनकी सरलता, अुनकी पवित्रता और अुनकी मुहब्बतसे मैं भलीभांति परिचित हूं। अुनके अिन गुणोंमें से आप जितना कुछ ले सकें, जरूर लें। विद्यार्थियोंके लिअे तो अुनके जीवनकी बहुतेरी बातें सीखने लायक हैं। मगर मुझे डर है कि अुन्होंने जितना सीखना चाहिये, सीखा नहीं है। यह आपका और हमारा दुर्भाग्य है। अिसमें अुनका कोअी कसूर नहीं। धूपमें रहकर भी कोअी सूरजका तेज न पा सके, तो अुसमें सूरज बेचारेका क्या दोष? वह तो अपनी तरफ से सबको गर्मी पहुंचाता रहता

है; पर अगर कोओी मुझे लेना ही न चाहे, और उसमें रहकर ठिठुरता फिरे, तो गुरु भी अुसके लिअे क्या करे? गान्धीजी महाराजके जितने निकट रहकर भी अगर आप अुनके जीवनसे सादगी, त्याग, देशभक्ति, अुदारता और विश्वव्यापी प्रेम आदि सद्गुणोंको अपने जीवनमें अनुकरण न कर सकें, तो कहिये, आपसे बढ़कर अभागा और कौन होगा?

अब मैं विद्यार्थियों और अध्यापकोंसे दो शब्द कहना चाहता हूं।

मैंने तो सर राधाकृष्णन्‌से पहले ही कह दिया था कि मुझे क्यों बुलाते हैं? मैं यहां पढ़कर क्या कहूंगा? जब बड़े-बड़े विद्वान् मेरे सामने आ जाते हैं, तो मैं हार जाता हूं। जबसे हिन्दुस्तान आया हूं, मेरा सारा समय कांग्रेसमें और गरीबों, किसानों और मजदूरों वर्गैरामें बीता है। मैंने अुन्हींका काम किया है। अुनके बीच मेरी जबान अपने आप खुल जाती है। मगर विद्वानोंके सामने कुछ कहते हुअे मुझे बड़ी झिझक मालूम होती है। श्री राधाकृष्णन्‌ने मुझे लिखा कि मैं अपना लिखा हुआ भाषण अुन्हें भेज दूं। पर मेरे पास अुतना समय कहां था? मैंने अुन्हें जवाब दिया कि वक्त पर जैसी प्रेरणा मुझे मिल जायगी, अुसीके अनुसार मैं कुछ कह दूंगा। मुझे प्रेरणा मिल गयी है। मैं जो कुछ कहूंगा, मुमकिन है वह आपको अच्छा न लगे। अुसके लिअे आप मुझे माफ़ कीजियेगा। यहां आकर जो कुछ मैंने देखा, और देखकर मेरे मनमें जो चीज पैदा हुअी, वह शायद आपको चुभेगी। मेरा खयाल था कि कमसे कम यहां तो सारी कारंवाअी अंग्रेजीमें नहीं, बल्कि राष्ट्रभाषामें ही होगी। मैं यहां बैठा यही अिन्तजार कर रहा था कि कोअी न कोअी तो आखिर हिन्दी या अुर्दूमें कुछ कहेगा। हिन्दी-अुर्दू न सही, कम-से-कम मराठी या संस्कृतमें ही कोअी कुछ कहता। लेकिन मेरी सब आशायें निष्फल हुअीं।

अंग्रेजोंको हम गालियां देते हैं कि अुन्होंने हिन्दुस्तानको गुलाम बना रखा है, लेकिन अंग्रेजीके तो हम खुद ही गुलाम बन गये हैं। अंग्रेजोंने हिन्दुस्तानको काफ़ी पामाल किया है। अिसके लिअे मैंने अुनकी कड़ी-से-कड़ी टीका भी की है। परन्तु अंग्रेजीकी अपनी अिस गुलामीके लिअे मैं अुनको जिम्मेदार नहीं समझता। खुद अंग्रेजी सीखने और अपने बच्चोंको अंग्रेजी सिखानेके लिअे हम कितनी-कितनी मेहनत करते हैं?

गर कोओी हमें कह देता है कि हम अंग्रेजोकी तरह अंग्रेजी बोल लेते , तो मारे खुशीके फूले नहीं समाते। अिससे बढ़कर दयनीय गुलामी र क्या हो सकती है? अिसकी वजहसे हमारे बच्चों पर कितना जुल्म ता है? अंग्रेजीके प्रति हमारे अिस मोहके कारण देशकी कितनी शक्ति र कितना श्रम बरबाद होता है? अिसका पूरा हिसाब तो हमें तभी ल सकता है, जब गणितका कोओी विद्वान् अिसमें दिलचस्पी ले। कोओी सरी जगह होती, तो शायद यह सब बरदाश्त कर लिया जाता। मगर ह तो हिन्दू विश्वविद्यालय है। जो बातें अिसकी तारीफमें अभी कही ओी है, अुनमें सहज ही अेक आशा यह भी प्रगट की गओी है कि हाके अध्यापक और विद्यार्थी अिस देशकी प्राचीन संस्कृति और सभ्यताके ीते-जागते नमूने होंगे। मालवीयजीने मुंह-मांगी तनख्वाहें देकर अच्छे-अच्छे अध्यापक यहां आप लोगोंके लिअे जुटा रखे हैं। अब अुनका ोष तो कोओी कैसे निकाल सकता है? दोष जमानेका है। आज हवा ी कुछ अैसी बन गओी है कि हमारे लिअे अुसके असरसे बच निकलना ुश्किल हो गया है। लेकिन अब वह जमाना भी नहीं रहा, जब वद्यार्थी जो कुछ मिलता था, अुसीमें सन्तुष्ट रह लिया करते थे। अब ो वे बड़े-बड़े तूफान भी खड़े कर लिया करते हैं। छोटी-छोटी बातोंके लिअे भूख-हड़ताल तक कर देते हैं। अगर ओीश्वर अुन्हें बुद्धि दे, तो वे कह सकते हैं: "हमें अपनी मातृभाषामें पढ़ाओो!" मुझे यह जानकर ुशी हुओी कि यहां आन्ध्रके २५० विद्यार्थी हैं। क्यों न वे सर ाधाकृष्णन्के पास जायें और अुनसे कहें कि यहां हमारे लिअे अेक आन्ध्र वभाग खोल दीजिये और तेलगूमें हमारी सारी पढ़ाओीका प्रबन्ध करा ीजिये? और अगर वे मेरी अक्लसे काम करें, तब तो अुन्हें कहना ाहिये कि हम हिन्दुस्तानी हैं; हमें अैसी जबानमें पढ़ाअिये, जो सारे हिन्दुस्तानमें समझी जा सके। और, अैसी जबान तो हिन्दुस्तानी ही ो सकती है।

जापान आज अमेरिका और अिंग्लैंडसे लोहा ले रहा है। लोग अिसके लिअे अुसकी तारीफ करते हैं। मैं नहीं करता। फिर भी जापानकी ुछ बातें सचमुच हमारे लिअे अनुकरणीय हैं। जापानके लड़कों और

लड़कियोंने यूरोपवालोंसे जो कुछ पाया है, अपनी मातृभाषा जा
जरिये ही पाया है, अंग्रेजीके जरिये नहीं। जापानी लिपि बड़ी
है, फिर भी जापानियोंने रोमन लिपिको कभी नहीं अपनाया।
मारी तालीम जापानी लिपि और जापानी जबानके जरिये ही होती
जो चुने हुअे जापानी पश्चिमी देशोंमें खास किस्मकी तालीमके लिअे
जाते हैं, वे भी जब आवश्यक ज्ञान पाकर लौटते हैं, तो अपना
ज्ञान अपने देशवासियोंको जापानी भाषाके जरिये ही देते हैं। अग
अैसा न करते और देशमें आकर दूसरे देशोंके जैसे स्कूल और
अपने यहां भी बना लेते, और अपनी भाषाको तिलांजलि
अंग्रेजीमें सब कुछ पढ़ाने लगते, तो अुससे बढ़कर बेवकूफी और
होती? अिस तरीकेसे जापानवाले नभी भाषा तो सीखते, लेकिन
ज्ञान न सीख पाते। हिन्दुस्तानमें तो आज हमारी महत्त्वाकांक्षा ही
रहती है कि हमें किसी तरह कोअी सरकारी नौकरी मिल जाय, या
वकील, बैरिस्टर, जज, वगैरा बन जायें। अंग्रेजी सीखनेमें हम
बिता देते हैं, तो भी सर राधाकृष्णन् या मालवीयजी महाराजके स
अंग्रेजी जाननेवाले हमने कितने पैदा किये हैं? आखिर वह अेक प
भाषा ही है न? अितनी कोशिश करने पर भी हम अुसे अच्छी
सीख नहीं पाते। मेरे पास सैकड़ों खत आते रहते हैं। अिनमें
अेम० अे० पास लोगोंके भी होते हैं। परन्तु चूंकि वे अपनी जब
नहीं लिखते, अिसलिअे अंग्रेजीमें अपने खयाल अच्छी तरह जाहिर
कर पाते।

चुनांचे यहां बैठे-बैठे मैंने जो कुछ देखा, अुसे देखकर मैं
हैरान रह गया। जो कार्रवाअी अभी यहां हुअी, जो कुछ कहा या
गया, अुसे जनता तो कुछ समझ ही नहीं सकी। फिर भी हम
जनतामें अितनी अुदारता और धीरज है कि वह चुपचाप सभामें
रहती है और साफ समझमें न आने पर भी यह सोचकर सन्तोष
लेती है कि आखिर हमारे नेता ही हैं न? कुछ अच्छी ही बात क
होंगे। लेकिन अिससे अुसे लाभ क्या? वह तो जैसी आअी थी, वै

अिंजीनियरका काम होगा। लेकिन सवाल तो यह है कि अंग्रेजीकी ब[illegible] जरूरत ही क्या थी? क्या हिन्दी या फारसीमें कुछ नहीं लिखा जा सकता था? क्या मालवीयजी, और क्या सर राधाकृष्णन्, सभी हिन्दू-मुस्लिम अेकता चाहते हैं। फारसी मुसलमानोंकी अपनी खास लिपि मानी जाने लगी है। अुर्दूका देशमें अपना खास स्थान है। अिसलिये अगर दरवाजे पर फारसीमें, नागरीमें या हिन्दुस्तानकी दूसरी किसी लिपिमें कुछ लिखा जाता, तो मैं अुसे समझ सकता था। लेकिन अंग्रेजीमें अुसका वहां लिखा जाना भी हम पर जमे हुअे अंग्रेजी जबानके साम्राज्यका अेक सबूत है। किसी नयी लिपि या जबानको सीखनेसे हम घबराते हैं, जब कि सच तो यह है कि हिन्दुस्तानकी किसी जबान या लिपिको सीखना हमारे लिअे बायें हाथका खेल होना चाहिये। जिसे हिन्दी या हिन्दुस्तानी आती है, अुसे मराठी, गुजराती, बंगाली वगैरा सीखनेमें तकलीफ ही क्या हो सकती है? कन्नड़, तामिल, तेलगु और मलयालमका भी मेरा तो यही तजरबा है। अिनमें भी संस्कृतके और संस्कृतसे निकले हुअे काफी शब्द भरे पड़े हैं। जब हममें अपनी मादरी जबान या मातृभाषाके लिअे सच्ची मुहब्बत पैदा हो जायगी, तो हम अिन तमाम भाषाओंको बड़ी आसानीसे सीख सकेंगे। रही बात अुर्दूकी, सो वह भी आसानीके साथ सीखी जा सकती है। लेकिन बदकिस्मतीसे अुर्दूके विद्वान अिधर अुसमें अरबी और फारसीके शब्द ठूंस-ठूंसकर भरने लगे हैं, — अुसी तरह जिस तरह हिन्दीके विद्वान हिन्दीमें संस्कृत शब्द भर रहे हैं। नतीजा अिसका यह होता है कि जब मुझ जैसे आदमीके सामने कोअी लखनवी तर्जकी अुर्दू बोलने लगता है, तो सिवा बोलनेवालेका मुह ताकनेके और कोअी चारा नहीं रह जाता।

अेक बात और। पश्चिमके हरअेक विश्वविद्यालयकी अपनी अेक-न-अेक विशेषता होती है। कैम्ब्रिज और ऑक्सफर्डको ही लीजिये। अिन विश्वविद्यालयोंको अिस बातका नाज है कि अिनके हरअेक विद्यार्थी पर अिनकी अपनी विशेषताकी छाप अिस तरह लगी रहती है कि वह फौरन पहचाना जा सकता है। हमारे देशके विश्वविद्यालयोंकी अपनी अैसी कोअी विशेषता होती ही नहीं। वे तो पश्चिमी विश्वविद्यालयोंकी अेक निस्तेज और निष्प्राण नकल-भर हैं। अगर हम अुनको पश्चिमी सभ्यताका सिर्फ

ख़ाहीसोल कहूँ, तो शायद बेजा न होगा। आपके अिस विश्व-विद्यालयके बारेमें अकसर यह कहा जाता है कि यहा शिल्प-शिक्षा और यंत्र-शिक्षाका यानी अिंजीनियरिंग और टेक्नॉलॉजीका देशभरमें सबसे ज़्यादा विकास हुआ है, और अिनकी शिक्षाका अच्छा प्रबध है। लेकिन असे मैं यहांकी विशेषता माननेको तैयार नहीं। तो फिर अिसकी विशेषता क्या हो? मैं अिसकी अेक मिसाल आपके सामने रखा चाहता हू। यहा जो अितने हिन्दू विद्यार्थी हैं, अुनमें से कितनोंने मुसलमान विद्यार्थियोंको अपनाया है? अलीगढके कितने छात्रोंको आप अपनी ओर खींच सके हैं? दरअसल आपके दिलमें चाह तो यह पैदा होनी चाहिये कि आप तमाम मुसलमान विद्यार्थियोंको यहा बुलायेंगे और अुन्हें अपनायेंगे।

अिसमें शक नहीं कि आपके विश्वविद्यालयको काफी धन मिल गया है, और जब तक मालवीयजी महाराज हैं, आगे भी मिलता रहेगा। लेकिन मैंने जो कुछ कहा है, वह रुपयेका खेल नहीं। अकेला रुपया सब काम नहीं कर सकता। हिन्दू विश्वविद्यालयसे मैं विशेष आशा तो अिस बातकी रखूंगा कि यहावाले अिस देशमें बसे हुओ सभी लोगोंको हिन्दुस्तानी समझें, और अपने मुसलमान भाअियोंको अपनानेमें किसीसे पीछे न रहें। अगर वे आपके पास न आवें, तो आप अुनके पास जाकर अुन्हें अपनाअिये। अगर अिसमें हम नाकामयाब भी हुअे तो क्या हुआ? लोकमान्य तिलकके हिसाबसे हमारी सभ्यता दस हजार बरस पुरानी है। बादके कअी पुरातत्त्वशास्त्रियोंने असे अिससे भी पुरानी बताया है। अिस सभ्यतामें अहिंसाको परम धर्म माना गया है। चुनाचे अिसका कमसे कम अेक नतीजा तो यह होना चाहिये कि हम किसीको अपना दुश्मन न समझें। वेदोंके समयसे हमारी यह सभ्यता चली आ रही है। जिस तरह गगाजीमें अनेक नदिया आकर मिली है, अुसी तरह अिस देशकी संस्कृति-गगामें भी अनेक संस्कृतिरूपी सहायक नदियां आकर मिली हैं। यदि अिन सबका कोअी सन्देश या पैगाम हमारे लिअे हो सकता है, तो यही कि हम सारी दुनियाको अपनायें और किसीको अपना दुश्मन न समझें। मैं अीश्वरसे प्रार्थना करता हू कि वह हिन्दू विश्वविद्यालयको यह सब करनेकी शक्ति दे। यही अिसकी विशेषता हो सकती है। सिर्फ अंग्रेजी सीखनेसे यह काम नहीं हो पावेगा। अिसके

लिअे तो हमें अपने प्राचीन ग्रंथों और धर्मशास्त्रोंका श्रद्धापूर्वक यथार्थ अध्ययन करना होगा, और यह अध्ययन हम मूल ग्रंथोंके सहारे ही कर सकते हैं।

अन्तमें अेक बात मुझे और कहनी है। आप लोग रहते तो महलोंमें हैं, क्योंकि मालवीयजी महाराजने आपके लिअे ये महलों-जैसे छात्रालय वगैरा बनवा दिये हैं। पर अिसका यह मतलब नहीं कि आप महलोंमें रहनेके आदी बन जायें। आप मालवीयजी महाराजके घर जाअिये और देखिये, वहां आपको अिनमें से कोअी चीज न मिलेगी — न ठाटबाट होगा, न साजो-सामान और न किसी तरहका कोअी दिखावा। अुनसे आप सादगी और गरीबीका पाठ सीखिये। आप यह कभी न भूलिये कि हिन्दुस्तान अेक गरीब देश है और आप गरीब मां-बापकी सन्तान हैं। अुनकी मेहनतका पैसा यों अैशो-आराममें बरबाद करनेका आपको क्या हक है? अीश्वर आपको चिरजीवी करे और अैसी सद्‌बुद्धि दे कि जिससे आप मालवीयजी महाराजकी त्यागशीलता, आध्यात्मिकता और सादगीसे अपने जीवनको रंग सकें और आज जो कुछ मैंने आपसे कहा है, अुस पर समझदारीके साथ अमल कर सकें।

हरिजनसेवक, १–२–'४२

२१

क्या विद्यार्थियोंको विलायत भेजेंगे?

मुलाकाती भाअीने पूछा: "पुरानी पीढ़ीके तमाम लायक हिन्दुस्तानियोंने तो विलायतमें ही अूंची तालीम पाअी; जैसे, आपने। क्या हिन्दुस्तानके आजाद हो जाने पर भी आप चाहेंगे कि यह अपने नौजवानोंको तालीमके लिअे पहलेकी तरह अिंग्लैंड भेजता रहे?"

गांधीजीने जवाब दिया: "नहीं, अभी नहीं। मैं ४० साल बाद अुन्हें बाहर भेजनेकी सलाह दूंगा।"

वे भाअी कहने लगे: "अिसका मतलब यह है कि हिन्दुस्तानकी दो पीढ़ियां पश्चिमसे कोअी फायदा नहीं अुठा सकेंगी।"

जिस पर गांधीजीने फिर वही अपने १२५ साल तक जिन्दा रहनेकी बात छेड़ी।

गांधीजीने पूछा : "दो पीढ़ियां क्यों ? अेक आदमीकी जिन्दगीमें ४० साल तो ठीक, ६० साल भी बहुत ज्यादा नहीं होते। अगर हम ठीक तरहका जीवन बितायें, तो हम ६० बरसमें बूढ़े नहीं हो जायेंगे। बदकिस्मतीसे अिस मुल्कमें हम अिस अुम्रमें बूढ़े हो जाते हैं। मैं फिर कहूंगा कि अुन्हें (विद्यार्थियोंको) तभी विलायत जाना चाहिये, जब वे पक्की अुम्रको पहुंच जायं। क्योंकि जब वे अपनी सभ्यताकी अच्छाअीको समझ लेंगे, तभी वे अमेरिका और अिंग्लैंडकी अच्छाअीको ठीक तरहसे समझकर अपना सकेंगे। जरा खयाल कीजिये कि अेक १७ सालका लड़का विलायत जाता है, जैसे मैं गया था तो क्या होगा ? वह तो वहां पहुंचकर बिलकुल घबरा ही जायगा।"

हरिजनसेवक, २३-६-'४६

२२

पढ़नेके लिअे परदेश क्यों जायं ?

अेक हिन्दुस्तानी डॉक्टर 'न्यूरो सर्जरी' सीखनेके लिअे अमेरिका गये हैं। खयाल यह था कि वहांसे सीखकर लौटने पर वे अपने लोगोंकी ज्यादा खिदमत कर सकेंगे। बड़ी मुश्किलसे अुन्हें कोलम्बिया युनिवर्सिटीमें अेक जगह मिल पाअी है, और वहां वे हाअुस-सर्जनका काम कर रहे हैं।

अुन्होंने मुझे अेक खत लिखा है। वे चाहते हैं कि मैं हिन्दुस्तानी विद्यार्थियोंको परदेश न जानेके लिअे समझाअूं। अिसके लिअे अुन्होंने नीचे लिखी वजहें दी हैं :

"(क) दस विद्यार्थियोंको परदेश भेजने और वहांकी तालीम दिलानेके लिअे जितना रुपया हमारे गरीब मुल्कको खर्च करना पड़ता है, अुतने रुपयेमें हम परदेशसे अेक अव्वल दरजेके प्रोफेसरको

बुला सकते हैं, जो हमारे ४० विद्यार्थियोंको तालीम देनेके साथ-साथ देशमें अेक अुम्दा लेबोरेटरी भी खड़ी कर सकता है।

(ख) यहां आनेवाले विद्यार्थियोंको रिसर्च या खोजके कामकी बुनियादी जानकारी तो हो जाती है, लेकिन वे देशमें लौटकर अपनी लेबोरेटरी यानी प्रयोगशाला खड़ी नहीं कर सकते।

(ग) अुन्हें लगातार काम करनेका कोअी मौका नहीं मिलता।

(घ) अगर हम बाहरके विशेषज्ञोंको अपने यहां बुलायें, तो हमारी लेबोरेटरियां भी पूर्ण बन जायं।"

मैंने अपने देशके छात्रोंके परदेश जानेकी कभी हिमायत नहीं की। तजरबेसे मैं यह जान गया हूं कि परदेश जाकर लौटे हुअे विद्यार्थी देशमें कहीं अपनेको फिट नहीं कर पाते। जो तजरबा अपने देशमें मिलता है, वही बेशकीमती होता है, और अुसीकी मददसे ज्यादा-से-ज्यादा तरक्की की जा सकती है। लेकिन आज तो विद्यार्थियों पर परदेश जानेकी धुन बुरी तरह सवार है। काश, अूपरका खत अुन्हें खबरदार कर सके!

हरिजनसेवक, १५–९–'४६

शिक्षाकी समस्या

दूसरा भाग

राष्ट्रीय शिक्षाका प्रयोग

१

गुजरात महाविद्यालयकी स्थापना

['कुलपतिका भाषण' : १५–११–'२०]

अपनी जिन्दगीमें मैंने बहुतेरे काम किये है। अुनमें से बहुतसे
ामोंके लिअे मैं अपने मनमें गर्व भी करता हू, कुछके लिअे पछतावा भी
ता है। अिनमें से बहुतसे बड़ी जिम्मेदारीके भी थे। पर अभी जरा
ो अतिशयोक्ति किये बिना मैं कहना चाहता हू कि मैंने अैसा अेक
ो काम नही किया, जिसके साथ आजके कामका मुकाबला हो
के। अिस काममें मुझे बड़ी जोखिम लगती है। वह अिसलिअे नही
क अुससे जनताका नुकसान होगा। पर मुझे जिस बातका दु:ख हुआ
रता है या मैं अपने मनमें जिसका मुकाबला कर रहा हू, वह यही
कि मैं जो काम करने बैठा हूं अुसके लिअे मैं लियाकत नही रखता।
ह मैं शिष्टाचारकी दृष्टिसे नही कह रहा हूं, बल्कि जो कुछ मेरी आत्मा
ह रही है, अुसीका चित्र आपके सामने रख रहा हू। मुझे अगर पता
ोता कि अभी जो काम करना है, वह शिक्षाके सच्चे अर्थके आधार पर
रना है, तो मुझे यह प्रस्तावना न करनी पड़ती। अिस महाविद्यालयकी
थापना करनेका मकसद सिर्फ विद्या देना नही है, बल्कि गुजारेका साधन
ुटा देना भी है; और अिसलिअे जब मैं अिस विद्यालयकी तुलना गुजरात
ॉलेज आदिसे करता हूं, तब मुझे चक्कर आ जाते हैं।

अिसमें भी अतिशयोक्ति नही। कहां गुजरात कॉलेज और अैसे
ी दूसरे कॉलेज और कहां हमारा यह छोटासा महाविद्यालय! मेरे
याससे तो यह बड़ा ही है। पर मुझे डर है कि तुम्हारी नजरमें
हिन्दुस्तानके कॉलेजोंके मुकाबलेमें यह महाविद्यालय अणु-विद्यालय लगता
ोगा। अिस विद्यालयका विचार करते वक्त तुम्हारे मनमें ओट-चूनेकी
ुलना होती होगी। ओट-चूना तो मैं गुजरात कॉलेजमें ज्यादा देखता हू।
रेलमें आ रहा था तब मैं यही विचार करता आ रहा था कि तुम्हारे सामने

आज मैं क्या विचार रखूं, जिससे यह ईंट-चूनेकी तुलना तुम्हारे दिल निकाल सकूं। यह बात मुझे सूझ रही है कि वह विचार मुझे अभी तक नहीं सूझा। अैसा कठिन अवसर मैंने अपने लिअे पहले कभी पैदा नहीं किया। अिस वक्त अनायास यह मेरे माथे आ पड़ा है। मेरे दिलके अन्दर जो चीज सिद्ध है, अुसे मैं तुम्हारे सामने अुसी तरह सिद्ध नहीं कर सकता। यह मैं किस तरह बताअूं कि जिसे तुम खामी समझते हो, वह खामी नहीं? अिन खामियोंको सरल भावसे बता कर भाअी किशोरलाल (महामात्र) ने मेरा काम आसान कर दिया है। तुम यह मानना कि अिन खामियोंके होने पर भी यह काम बड़ा है। मेरे दिलमें अिसके लिअे जो श्रद्धा है, वैसी ही श्रद्धा परमात्मा तुममें पैदा करे। मैं वह श्रद्धा तुममें पैदा नहीं कर सकता, मेरी अितनी तपस्या नहीं। मुझे अपनी असमर्थता मंजूर करनी चाहिये। मैंने शिक्षाके क्षेत्रमें अैसा काम नहीं किया कि मैं तुम्हें बता सकूं कि यह काम बड़ेसे बड़ा है। हिन्दुस्तानकी आजकी परिस्थितिमें हम जो काम कर रहे हैं वही शोभा देता है। मकानोंकी क्या तुलना?

आज तो अेक अिंच जमीन भी हमारी नहीं है। सब कुछ सरकारका है। यह जमीन, ये पेड़-सब कुछ सरकारी है। शरीर भी सरकारका है और आज मुझे अिसमें भी शंका हो रही है कि हमारी आत्मा भी हमारी अपनी है या नहीं। अैसी दयाजनक हालतमें हम महाविद्यालयके लिअे अच्छे अच्छे मकान क्यों ढूंढें? विद्वानोंको ढूंढते रहें तो कैसे काम चले? कोअी अज्ञानीसे अज्ञानी और अनाड़ी आदमी भी आकर कहे और समझा सके कि हमारी आत्माअें सूख गअी हैं और यह देश निस्तेज और अज्ञान हो गया है, तो अुस मनुष्यको मैं आचार्यकी पदवी दूंगा। मुझे यकीन नहीं कि तुम किसी गड़रियेको आचार्यका ओहदा देनेको तैयार होगे। अिसलिअे हमें भाअी गिडवानीको ढूंढ़ना पड़ा है। मैं अिनकी अुपाधि पर मोहित नहीं। तुम अिन्हें अिनकी अुपाधिके सिवा और तरहसे शायद न पहचानते होगे। पर अिस विद्यालयकी जांचके लिअे दूसरा नाप रखना। मैं चाहता हूं कि अिसकी परखके लिअे तुम दूसरी कसौटी ढूंढ़ो। मामूली कसौटी पर कसोगे तो यह पीतल-सा दिखाअी देगा; पर चरित्रकी कसौटी पर कसोगे, तो यह तुम्हें पीतल नहीं, खरा सोना दिखाअी देगा।

यहां अिस विद्याके कामके लिअे जो संगम हुआ है, वह तीर्थकी तरह । यहां चरित्रवान लोग अिकट्ठे हुअे हैं। सुन्दर मिथियो, सुन्दर महा-ष्ट्रियो और सुन्दर गुजरातियोंका मिलाप हुआ है। अैसा संगम हमें कहासे ल सकता है?

यहां जो भाओी और बहन आये है, पहले अुनसे मैं प्रार्थना करूगा। स महाविद्यालयकी स्थापनाके आप गवाह है। आपमे से किसीको भी ह स्थापना करना तमाशा-सा लगता हो, तो अुनसे मैं कहना चाहता हू क आप अिस स्थापनामें न बैठिये। आप यहा अपना आशीर्वाद देनेके लिअे ो बैठना। आपका आशीर्वाद मिलनेसे महाविद्यालय महान बन जायगा। गर वह मुंहसे ही नही, दिलसे दिया जाना चाहिये। दिलसे आशीर्वाद ो आप अपने लडके-लड़कियोको महाविद्यालय भेज कर ही दे सकते है। हिन्दुस्तानमें रुपया देनेकी शक्ति तो बहुत है। रुपयेकी कमीसे कोअी तरक्की ही रुकती। काम रुकता है तो आदमियोंकी कमीसे, अध्यापको या मुखियाके भावसे और मुखिया हो तो अुसके सिप्यो यानी सिपाहियोके अभावसे। मैं मानता हूं कि जहा नेता लायक होते हैं, वहा सिपाही मिल ही जाते हैं। पने औजार कितने ही भोंथरे हो तो भी बढअी कभी अुनके साथ झगड़ा ही करता। वह भोंथरेसे भोंथरे औजारोसे भी अपना काम निकाल लेगा। अिसी तरह मुखिया भी सच्चा कारीगर होगा, तो जैसी चीज मिलेगी अुसीसे देशकी मिट्टीमें से सोना पैदा कर लेगा। आचार्यसे मेरी यही प्रार्थना है।

आचार्य और अध्यापकोकी यहा काम करनेमें अेक ही भावना है विद्याकी नही, बल्कि चरित्रका चमत्कार दिखा कर तुम आजादी दिलाने-वाले हो। सरकारकी तेज तलवारका मुकाबला तलवारसे करके नही, बल्कि सरकारकी अशान्त करनेवाली राक्षसी प्रवृत्तिका अपनी शान्तिमयी दैवी प्रवृत्तिसे — भले ही वह अपूर्ण हो तो भी — मुकाबला करके। अिस वक्त हमें आजादीका बीज बोकर व अुसे पानी पिलाकर अुससे स्वराज्यका सुदर वृक्ष पैदा करना है। वह चरित्रसे, शुद्ध दैवी बलसे ही बडा होगा। जब तक आचार्य और अध्यापक यही अेक दृष्टि रखकर काम करते रहेंगे, तब तक हमारी जरा भी बदनामी न होगी। आचार्य और अध्यापकोंके बारेमें

विद्यालयोंको सफल बनानेके लिअे हम अपना रुपया और अपना शक्ति जितना खर्च कर सकें, अुतना थोड़ा है।

यह बोलनेका वक्त नहीं, करनेका वक्त है। मेरे दिलमें जो बात आयी, वह मैंने आपसे कह डाली है। आपसे जो मांगना था मांग लिया। अब पढ़नेवाले विद्यार्थियोंसे भी मांगता हूं। अिसमें शक नहीं कि अुनके पास साहस है। जो भरती हो चुके हैं, अुन्हें मैं विद्यार्थी नहीं समझूंगा। यानी मैं अुन्हें जिम्मेदारीसे मुक्त नहीं समझूंगा। जिन विद्यार्थियोंने यहां नाम लिखाया है, वे आधे शिक्षक माने जायेंगे। अुन्होंने महाविद्यालयकी नींव डाली है। अुन्हीं पर महाविद्यालयकी अिमारत खड़ी हुअी है। वे भरती न हुअे होते, तो महाविद्यालय खड़ा ही नहीं हो सकता था। अिसलिअे अुनकी भी पूरी जिम्मेदारी है। तुम अुसके पूरे तरह साझीदार हो और तुम अपना हिस्सा पूरी तरह न दो, तो शिक्षक कितनी ही कोशिश करें, तो भी सफल नहीं होंगे — पूरी तरह सफल हो हो ही नहीं सकते। जिन विद्यार्थियोंने अपने स्कूल छोड़े हैं, अुन्हें जान लेना चाहिये कि वे क्या समझकर यहां आये हैं, अुन्हें यहां क्या मिलेगा। परमात्मा अुनमें अैसी शक्ति भर दे कि कितने ही समय तक यह भयानक लड़ाअी चले, तो भी अिस बीच वे अपना काम करते रहें। अैसा हुआ तो मुझे भरोसा है कि मुट्ठीभर विद्यार्थी होंगे, तो भी यह महाविद्यालय शोभा पायेगा और सारे हिन्दुस्तानमें आदर्श विद्यालय बनेगा।

अिसका कारण न गुजरातका धन है, न गुजरातकी विद्या; पर अिसका कारण यह है कि असहयोगकी पैदाअिशकी जगह गुजरात है। असहयोगकी जड़ गुजरातमें जमी है, अुसकी सिंचाअी गुजरातमें हुअी है, और अुसके लिअे तपस्या भी गुजरातमें हुअी है। अिस परसे यह न मान लेना कि यह आदमी झूठा घमण्ड करता है। यह न मानना कि यह सारी तपस्या मैंने ही की है, या यह जड़ मैंने ही जमाअी है। मैंने तो सिर्फ मंत्र दिया है। अेक बनियेका बेटा अगर अैसा कर सकता हो, तो मैंने यह ऋषिका काम किया है।

अिससे ज्यादा मैंने कुछ नहीं किया। अुसकी जड़ तो मेरे साथियोंने जमाअी है। अुनकी श्रद्धा तो मुझसे भी ज्यादा थी, तभी तो

काम हुआ। मेरा दावा है कि मुझे अनुभव-ज्ञान है। देवता भी आकर समझायें, तो मेरी श्रद्धा हिल नहीं सकती। जैसे अिन आंखोंसे मुझे सामनेके पेड़ साफ दिखाअी देते हैं, वैसे मुझे लगता है कि हिन्दुस्तानकी अुन्नति शान्त असहयोगसे ही होगी। पर मेरे साथियोंके बारेमें अैसा नहीं कहा जा सकता। अुन्होंने तर्कसे, दलीलसे, श्रद्धासे माना है कि अिस शाला असहयोगसे ही तरक्की हो सकेगी।

हिन्दुस्तानमें या दुनियामें कहीं भी कोअी अपने ही अनुभवसे काम नहीं करता। कुछको अनुभव होता है, जब कि और लोग वही काम श्रद्धासे करते हैं।

मेरे साथियोंने बुनियाद डाली है। अुनमें ज्यादा गुजराती हैं, महाराष्ट्री भी हैं। पर ये महाराष्ट्री गुजरातमें आकर आधे, पौने या सवाये गुजराती ही बन गये हैं। अुनके हाथों यह शास्त्र अुज्ज्वल बना है। अिसका पूरा चमत्कार अभी हमने नहीं देखा। जिस कामके लिअे लड़कियोंने अपनी चूड़ियां निकालकर मुझे दी हैं, अुसका चमत्कार आप छह महीनेके अन्दर ज्यादा देखेंगे। पर अिस सबकी जड़ — अुसकी दृश्य मूर्ति — यह महाविद्यालय है। हिन्दू मूर्तिपूजक है और अिसके *लिअे हमें अभिमान है। अिस मूर्तिके अलग-अलग अंग हैं। अुनमें से [illegible] मैं खुद हूं; अध्यापक, आचार्य और विद्यार्थी अुसके दूसरे अंग हैं। मैं खुद बूढ़ा हूं, पका पत्ता हूं, दूसरे कामोंमें लगा हुआ हूं। मेरे जैसा पका पत्ता झड़ जाय, तो पेड़को कोअी घाव न आयेगा। आचार्य और अध्यापक भी पत्ते हैं, अलबत्ता अभी कोमल पत्ते हैं। थोड़े समयमें वे भी पक कर शायद गिर जायेंगे। पर विद्यार्थी अिस सुन्दर पेड़की डालियां हैं और अिन्हीं डालियोंमें से आचार्यों और अध्यापकोंके स्थानमें पत्तियां फूटेंगी।*

विद्यार्थियोंसे मेरी प्रार्थना है कि तुम्हारी जितनी श्रद्धा मुझ पर है, अुतनी ही तुम अपने अध्यापकों पर रखना। पर तुम्हें अपने आचार्य या अध्यापक कमजोर जान पड़ें, तो अुस वक्त तुम प्रह्लादकी तरह आगमें

आगे बढ़ाना। यही मेरी अीश्वरसे प्रार्थना है और यही मेरा विद्यार्थियोंको आशीर्वाद है।

आखिरमें मैं परमेश्वरसे प्रार्थना करता हूं और अुस प्रार्थनामें आप सबकी सम्मति चाहता हूं। मेरी प्रार्थनामें आप सब साफ दिलसे शरीक होना :

हे अीश्वर, अिस महाविद्यालयको अैसा बनाअिये कि अिसके भीतर हम जिस आजादीका जप रात-दिन कर रहे हैं वह आजादी मिले और अिस आजादीसे अकेला हिन्दुस्तान ही नहीं, बल्कि सारी दुनिया, जिसमें हिन्दुस्तान अेक बूंदके बराबर है, सुखी हो।

२

शिक्षा और अस्पृश्यता

गुजरात विद्यापीठके अेक निर्णय प्रस्तावसे अहमदाबाद, बम्बअी वगैरा जगहों पर खलबली मच रही है। विद्यापीठने जो प्रस्ताव पास किया है, वह यह है कि जो कोअी शाला सिर्फ अछूतोंका बहिष्कार करेगी अुसे मान्य नहीं समझा जायगा। यह प्रस्ताव विद्यापीठके अुसूलकी वजहसे ही पास हुआ है। तो भी अिस प्रस्तावसे बहुतसे हिन्दुओंके दिल दुखे हैं और अुनमें से कुछ मुझे सलाह दे रहे हैं कि मुझे अिस बातकी चर्चा नहीं करनी चाहिये थी। कुछ लोग कहते हैं कि अस्पृश्यताके बारेमें अपने विचारोंसे मैं अपने हिन्दूपनको बट्टा लगा रहा हूं। और कुछ लोग अिन विचारोंके कारण मेरा सनातनी होनेका दावा खारिज करते हैं। मैं अपनेको पुराना सनातनी कहता हूं, जिसके कारणोंको आज मैं बादमें कहूंगा।

अभी तो मैं अितना ही बताना चाहता हूं कि विद्यापीठने अपने प्रस्तावसे कोअी नया फैसला नहीं किया। विद्यापीठ दूसरा प्रस्ताव करता, तो वह नया फैसला करता। सरकारी शालाओंमें आज अछूत दाखिल लड़के पढ़ते हैं। बम्बअीके बहुतेरे हाअीस्कूलोंमें अैसे विद्यार्थी हैं। गुजरातके हाअीस्कूलोंमें भी हैं।

अगर हम आज तक अिन स्कूलोंमें बेखटके लड़कोंको भेजते रहे हैं, तो क्या राष्ट्रीय शालाओंमें अुन्हें न आने देकर नया रिवाज चलायें? अस्पृश्यताको पुनर्जीवित करके क्या हम स्वराज्य लेनेकी आशा रखते हैं?

रेलगाड़ीमें, होटलोंमें, अदालतोंमें, मिलोंमें अस्पृश्यता आड़े नहीं आती; तो क्या स्कूलोंमें ही, जहां शिक्षकोंकी देखभालमें सुघड़ताके नियम पालन करके ही बैठा जा सकता है, अस्पृश्यता कायम रखी जाय?

मुसलमान, पारसी, अीसाअी, यहूदी वगैराको हम अछूत नहीं समझते, अछूत मानकर अुन्हें हम भाअी नहीं बना सकते। तो फिर जो हिन्दू धर्मके ही अेक अंग हैं, अुन्हें अुन राष्ट्रीय स्कूलोंमें भी, जहां दूसरी जातियां आ सकती हैं, अछूत ही माना जाय?

मुझ पर यह आरोप लगाया गया है कि विद्यापीठमें यह प्रस्ताव पास कराकर मैंने भी सरकारकी तरह ही हिन्दुओं पर जुल्म कराया है। अैसा आरोप करनेवालोंसे मैं नम्रताके साथ याद दिलाना चाहता हूं कि मैं आपको अपने तरीके पर शालाअें चलानेसे नहीं रोकना चाहता; आप मुझे न रोकिये। अिसमें जुल्म कैसा? सच तो यह है कि मुझे रोकनेका अिरादा करके आप जुल्म करते हैं। जो राष्ट्रीय भावना पैदा करनेमें अस्पृश्यताको हानिकारक मानते हैं, अुन्हें अुस तरहका आन्दोलन करनेसे आप कैसे रोक सकते हैं? आप दूसरे आदर्शवाले, अस्पृश्यताको धर्म माननेवाले विद्यापीठ बनाअिये। अुसमें आपको कोअी नहीं रोकेगा। यह दूसरी बात है कि अुसकी अशक्यता ही आपको रोके।

मुझे पक्का भरोसा है कि अस्पृश्यता अधर्म है। वह हिन्दू धर्मकी ज्यादती है। अिस ज्यादतीको पनपने देना दुराग्रह है। तपस्या करके अुसे दूर करना सत्याग्रह है। सत्यका आग्रह ही धर्म है। रूढ़िके माने हुअे हर दोषको पकड़ रखनेका आग्रह अधर्म है।

नवजीवन, २१-११-'२०

३

राष्ट्रीय शालाकी राष्ट्रीयता

[अेक प्रश्नोत्तरी]

सवाल — किसी भी राष्ट्रीय शिक्षण-संस्थामें से निकला हुआ विद्यार्थी अपने गुजरके लिअे धन्धेकी हाय-हायसे बच सकता है ?

जवाब — बचना चाहिये। अितनी आजादी भी न दे, तो वह विद्या ही नहीं। विद्या वही है जो आर्थिक, सामाजिक और आध्यात्मिक तीनों तरहकी आजादी दे। जिसे पहले प्रकारकी आजादी नहीं, अुसके लिअे दूसरी असम्भव है।

स० — क्या राष्ट्रीय संस्थाओंके नौकरोंके लिअे स्वार्थत्याग धर्म नहीं होना चाहिये ?

ज० — जरूर होना चाहिये। मेरा यह खयाल है कि जो स्वार्थ नहीं छोड़ सकता, वह राष्ट्रका नौकर नहीं बन सकता।

स० — स्नातकको अपनी जिन्दगी देशसेवामें अर्पण नहीं करनी चाहिये ?

ज० — हमेशाके लिअे यह नियम लागू नहीं होता। जब राष्ट्र धार्मिक ढंगसे बने, तब औमानदारीके साथ निडर होकर जीवन बितानेवाले सब सेवा ही करते हैं।

स० — हम यह मानते हैं कि सरकारी स्कूलोंमें ज्ञानके साथ चरित्र नहीं होता। तो क्या अिसका यह अर्थ नहीं होता कि राष्ट्रीय शालाओंमें चरित्रको प्रधानपद मिलना चाहिये ?

ज० — यही अर्थ है। ज्ञान भी चरित्रके लिअे ही दिया जाना चाहिये। ज्ञान साधन है, चरित्र साध्य है।

स० — अिसलिअे आप राष्ट्रीय शिक्षकोंमें चरित्रको जरूरी मानेंगे ?

ज० — जरूर।

स० — अिसलिअे शराब पीनेवाला, बीड़ी पीनेवाला शिक्षक त्याज्य नहीं?

ज० — हम अितने अूंचे तो अुठ ही गये हैं कि शराब पीनेवाले शिक्षकको छोड़ सकते हैं। बीड़ीके बारेमें अितना कहनेकी मेरी हिम्मत नहीं है। मेरा अनुभव है कि बीड़ी पीनेवाला और बातोंमें चरित्रवान हो सकता है। चरित्रको देखनेमें यह भी जरूरी है कि हम चरित्रशून्य चौकीदार न बन जायें।

स० — विद्यार्थी मैट्रिक होनेमें बीमार हो जाते हैं, बी० अे० होनेमें बेहाल हो जाते हैं। क्या यह अफसोसकी बात नहीं?

ज० — मेरा बस चले तो मैं रोगी विद्यार्थियोंका पढ़ना-लिखना बंद ही कर दूं।

स० — क्या राष्ट्रीय शिक्षा पानेवालोंकी सारी शक्तियोंका विकास नहीं होना चाहिये?

ज० — होना ही चाहिये। यह सीधी दलील मालूम होती है कि तन दुरुस्त तो मन दुरुस्त और मन दुरुस्त तो आत्मा दुरुस्त।

स० — २१ बरससे नीचेके ब्याहे हुअे विद्यार्थियोंके राष्ट्रीय स्कूलमें भरती होने पर पाबन्दी नहीं होनी चाहिये?

ज० — होनी ही चाहिये। शालाकी पढ़ाअी और विवाहित जीवन परस्पर विरोधी चीजें हैं।

स० — क्या यह शिक्षा नहीं दी जानी चाहिये कि अेक पत्नीके मर जानेके बाद दुबारा शादी न की जाय?

ज० — अैसी शिक्षा मुझे जरूर पसन्द होगी।

स० — राष्ट्रीय पाठशालाओंमें शारीरिक दण्ड या मार-पीटके लिअे गुंजाअिश है?

ज० — हरगिज नहीं।

स० — अगर विद्यार्थी राष्ट्रीय शिक्षासे नफरत करे, तो अिसमें कसूर किसका?

ज० — आम तौर पर शिक्षक और विद्यार्थी दोनोंका होता है। ... शिक्षकका होता है।

स० — पढ़ाओमें भाषायें क्या ज्यादा नहीं हो जातीं ?

ज० — अेक ही परिवारकी बहुत-सी भाषाओंका बहुत बोझ नहीं लगता। जैसे हिन्दुस्तानी, गुजराती, मराठी, बंगला ये चार भाषायें कोओी सीखे, तो मैं मानता हूं कि वह थोड़े बोझसे सीख लेगा। पर अंग्रेजी, ग्रीक, लैटिन और अरबीका मेल नहीं बैठता।

स० — शिक्षकका दरजा मंत्रियोंसे ज्यादा नहीं ? वाअिसरॉयके हजार हों, तो शिक्षकके दो हजार न होने चाहियें ?

ज० — वाअिसरॉयकी नौकरीकी कीमत होती है ; शिक्षककी हो ही नहीं सकती। अिसलिअे शिक्षकोंको हमेशा गरीब ही होना चाहिये। वे तो सिर्फ खाकर पढ़ायें। वाअिसरॉय अपनी कीमत मांगता है। शिक्षक कीमत मांगे तो वह निकम्मा है।

[अेक और सवाल दूसरे पूछनेवालेकी तरफसे हुआ है, जो अिसी विषयके बारेमें होनेके कारण यहीं दिया जाता है।]

स० — क्या शिक्षक अपने पास पढ़नेवाली लड़कीसे शादी कर सकता है ? विद्यार्थी अपने साथ पढ़नेवाली कन्याको वर सकता है ?

ज० — मुझे तो दोनों ही बातें निहायत नामुनासिब लगती हैं। मेरे पास पढ़नेवाली लड़कीकी रक्षा मेरी अपनी लड़कीके बराबर ही होनी चाहिये। मेरे साथ पढ़नेवाली लड़कीकी रक्षा सगी बहनकी तरह होनी चाहिये। साथ पढ़नेवालोंमें भाअी-बहनका सम्बन्ध ही शोभा देता है। अितना ही कह कर मैं अिस सवालका जवाब खतम कर देना चाहता हूं। विषय बड़ा है, अिसलिअे अिसकी लम्बी चर्चा अच्छी लगती है। पहले सवालके जवाबके बारेमें मुझे कोअी शंका नहीं है। आजके जमानेमें जब हजारों लड़के-लड़कियां अेक ही स्कूलमें पढ़ते हों, तब दूसरेका जवाब जरा मुश्किल मालूम होता है। परन्तु मैंने जितनी संस्थायें चलाओी हैं, अुनमें अूपरके नियमका पालन लाजिमी रखा गया है और अुसका नतीजा भी अच्छा ही पाया गया है।

नवजीवन (अतिरिक्त अंक), २०–१०–'२१

४

'केरियर' और विद्या

['विद्यापीठ और आनन्दशंकरभाओ' नामक लेखसे।]

विद्याके बारेमें मेरे विचार बहुत आगे जाते हैं। मेरी नम्र रायमें [illegible]रा करनेके लिअे विद्याका अुपयोग करना ही न चाहिये। रोटीका जरिया व्यापार ही होना चाहिये। आजीविकाका साधन मजदूरी यानी है, बढ़ई, दरजी वगैराका जरूरी धंधा होना चाहिये। वैद्य, वकील, क आदि जो खास तौर पर रुपया कमानेके अिरादेसे ये काम सीखते अुनमें पड़ते हैं, अुसे मैं हमारी गिरावटका अेक बड़ा कारण मानता यह तो आदर्श हुआ। वहां तक हम पहुंच नहीं सकते। तो भी अिसमें नहीं कि अुसके जितने नजदीक जायें, अुतना ही अच्छा है। विद्यापीठने आदर्श नहीं रखा; लेकिन विद्यापीठने राष्ट्रीय भावनाको मुख्य माना विद्याका अुपयोग देशकी सेवाके लिअे करना और धन कमानेको गौण देना ही जहां आदर्श है, वहां 'केरियर' के लिअे गुंजाअिश ही नहीं। रियर' का त्याग करनेवाले ही विद्यापीठका आसरा लेते हैं। गुजरातमें सारे हिन्दुस्तानमें अिस भावनाकी अभी तक गहरी जड नहीं जमी है। [illegible]लिअे अैसी भावनावाले विद्यापीठोंमें मुख्यमें विद्यार्थी थोड़े हों तो अचंभेकी नहीं। अचरज और खुशीकी बात तो यह है कि विद्यापीठकी [illegible]में हजारों विद्यार्थी पढ़ना-लिखना सीख रहे हैं और अुसके साथ-साथ [illegible]में देशसेवाकी भावना पैदा कर रहे हैं।

नवजीवन, १–६–'२४

५
प्रयोग सच्चा है*

['कुलपतिका भाषण' शीर्षक लेख।]

आज सुबह तीन पत्र मेरे पढ़नेके लिये रखे हुओ थे। अेक कहता है कि हो सके तो मुझे विद्यापीठको आग लगा देनी चाहिये। विद्यापीठने आज तक कुछ भी अच्छा काम नहीं किया। यह लिखनेवाला विद्यापीठमें पढ़ा है। दूसरा कहता है कि यहाके विद्यार्थी शौकीन है, तरह-तरहका स्वादिष्ठ खाना खाते है। मैंने यह समझकर अपने लड़केको विद्यापीठमें भेजा है कि वहां विद्यार्थी सादगीसे रहते होंगे और चरित्रबल बढ़ता होगा। अब मुझे क्या करना चाहिये? तीसरा पत्र मद्राससे आया है। अुसमें लिखा है कि मेरा आजका भाषण अैसा होना चाहिये, जिससे सारे हिन्दुस्तानके लिअे कोअी सूचक वस्तु मिले।

अब मैं क्या करूं? तीनोंमें से कौनसी बात करूं? मैं तीनोंमें से अेक भी नहीं करना चाहता। जिस विद्यापीठको कायम करनेमें मेरा कुछ भी हिस्सा है, अुसे मैं कैसे जलाअू? अेक अंग्रेज चित्रकारने अेक किस्सा बयान किया है: अेक बार विनोदके लिअे अुसने अपनी अेक तस्वीर बाजारमें लटकवा दी और लिख दिया कि अिसमें जिसे जहां दोष मालूम हो, वह वहीं निशान कर दे। दूसरे दिन चित्रमें तिलभर जगह भी खाली नहीं रही। पर अुसने कहा: "जब तक खुद मुझे अिस चित्रसे सन्तोष है, तब तक मैं अिसे नहीं जलाअूंगा।"

आज सुबह मुझे यह चित्रकार याद आया और अुसका विचार सच्चा लगा। अैब ढूंढने लगें तो अुनका कोअी पार नहीं। अीश्वरने मोह जैसी चीज मनुष्यके पीछे लगा दी है। अिस मोहके वश हो कर हम काम चलाते

* गुजरात महाविद्यालयका नया सत्र शुरू होनेके मौके पर गुजरात विद्यापीठके कुलपतिकी हैसियतसे गांधीजीका सत्याग्रह आश्रममें जमा हुअे महाविद्यालयके विद्यार्थियों, अध्यापकों और मेहमानोंके सामने दिया हुआ भाषण।

रहते हैं। आप गुरु तो अिन तीनोंमें अन्दर मार निकालें। अुन कड़ी टीका करनेवालेने कहा है कि न कुछ विद्यार्थियोंमें रखा है, और न कुछ अध्यापकोंमें धरा है। अुसकी अिच्छा है कि मैं वह पत्र 'नवजीवन' में छापूं और अुनकी आलोचना करूं। मुझे न अिस पत्रको छापना है और न अिस पर टीका-टिप्पणी ही करनी है। विद्यार्थियों पर जो यह अिलजाम है कि अुनमें सादगी नहीं है अिस बारेमें तुम्हें समझ लेना है। महादेवको मैं संभाल लूंगा। और मेरे भाषणको कोअी अुद्धृत न करे, तो वह अनायास समझ लेगा कि सचमुच कोअी बड़ा भारी भाषण हुआ होगा!

यह तो प्रस्तावना हुअी। मैंने तुमसे कहनेका सोच तो रखा ही है। यह नहीं कहूंगा कि नहीं सोचा, क्योंकि मुझे झूठी आत्मनिन्दा करनेकी आदत नहीं। दो बरस तक यरवडा आश्रमकी शान्तिमें सोचते-सोचते मेरे पहलेके विचार पक्के हुअे हैं। जो चीज मैंने हिन्दुस्तानके सामने रखी, अुसके लिअे मुझे जरा भी पछतावा नहीं। हमने गुजरातमें जो विद्यापीठ स्थापित किया, महाविद्यालय कायम किया, अुसमें सिंधियोंको भरा, दक्षिणियोंको भरा और गुजरातियोंके लिअे जगह न रखी, अिसके लिअे भी मुझे बिलकुल पश्चात्ताप नहीं। गुजरातका धर्म है कि दक्षिण और सिंधसे जो कुछ अच्छा मिल सके अुसे अिकट्ठा कर ले। कृपालानी अपनेको बिहारी मानते हैं, तो अुन्हें हम बिहारी समझकर ले लें। अुन्हें गुजरातसे भी कुछ न कुछ लेनेको मिल जायगा। बिहारमें वे जुलाहे थे, तो यहां वे कातने-बीननेवाले बनेंगे और फिर कहेंगे कि मैं जितना बिहारी हूं अुतना ही गुजराती हूं। मगर यह हालत पैदा करना आपका मेरा काम है। वे सिंधसे आये हैं, अिसलिअे हमारे मेहमान हैं। गुजरातीको तो हम गालियां भी दे सकते हैं। अिन्हें हमने अपनी गरजसे रखा है। अिसलिअे वे जो देंगे, वह तो हम लेंगे ही। अिसमें गुजरात खोयेगा नहीं, बल्कि कमायेगा। मेरा बस चले तो अेक भी गुजरातीको न रखकर महाविद्यालयको सिंधियों और दक्षिणियोंसे भर दूं और सबसे कहूं कि तुम काका और मामा बन जाओ। सभी काका और मामा बन जायं, तो फिर और क्या चाहिये?

विद्यापीठ हमने किसलिअे कायम किया? असहयोगके लिअे। यह असहयोग किसके साथ? सरकारी कॉलेजोंके विद्यार्थियों और अध्यापकोंके

साथ? नहीं। जिनके साथ हमारा असहयोग बिलकुल नहीं। हमारा असहयोग तो प्रणालीके साथ है। यह असहयोग किस किस्मका है और यह असहयोग करके हम क्या करेंगे, जिसका विचार करने पर मुझे दो किस्से याद आये। अेक शेर और बकरीका। शेर और बकरी दोनोंको अेक साथ रखा गया। शेर पिंजरेमें था और बकरी बाहर थी। बकरीको अच्छा खानेको मिलता था, घास मिलती थी, फिर भी बकरी दिन-दिन सूखती जाती थी। मेरे जैसे बुद्धिमान आदमीने देख लिया कि बकरीके पास ही शेर है, *अिसीलिअे बकरी नहीं बढ़ती। शेरको नजरसे दूर होनेके बाद जैसा-*तैसा खाकर भी बकरी नाचने कूदने लगी और मोटी-ताजी हो गयी।

दूसरा किस्सा सर नारायण चंदावरकरका लिखा हुआ, जो मैंने जेलमें पढ़ा था, याद आया। सर नारायण पूनामें घूमने जा रहे थे। वहा अेक बुढ़िया अेक मेमनेको अपने घर ले जा रही थी। मेमना साहबके घर रहता था, अिसलिअे अुसके खाने-पीनेका तो पूछना ही क्या। मगर अुसे वहा चैन नहीं पड़ा। बुढ़िया ले जा रही थी, तब वह नाचता था, कूदता था और बुढ़ियाके आगे-आगे चलता था। कारण यह था कि वह अपने घर जा रहा था। गुलामीसे छूटकर आजादीमें जा रहा था। कोअी भी जीव स्वतन्त्रतामें ही *फल-फूल सकता है, पराधीनतामें नहीं। अिसी बातको तुलसीदासने अपनी* अनुपम वाणीमें कहा है कि 'पराधीन सपनेहु सुख नाही'।

सरकारी तालीममें अच्छीसे अच्छी सहूलियत मिले, अच्छे अध्यापक मिलें, बड़े मकान मिलें, फिर भी हमारे माथे पर तो काला टीका ही रहेगा। हमारे नसीबमें तो नौकरी — गुमाश्तागिरी — के सिवा और कुछ होगा ही नहीं। ज्यादासे ज्यादा वकालतकी सूझेगी। वकालत तो जहन्नुममें गअी, हमें तो ग्रेज्युअेट होकर ३० रुपयेसे शुरू होनेवाली नौकरी ही सूझेगी। बहुतसे बहुत हुआ तो गुजरात कॉलिजमें प्रोफेसर बन गये। फिर तो हद हो गअी। अिधर महाविद्यालयमें जैसे-तैसे पढ़नेको मिलता है, अन्न-रत्नान भी जितना मिल जाय सो सही। महाविद्यालयके मकान पर छप्पर हो भी, न भी हो। मकान-मालिक जब चाहे नोटिस देकर निकाल सकता है। विद्यापीठके लिअे वल्लभभाअी भीख मांगते फिरते हैं। यह भी सवाल हो सकता है कि विद्यापीठ आज है और कल न रहे। यह हालत है।

रात कॉलेज पर सूरज कभी छिपता ही नहीं। तुम्हारे विद्यापीठ पर रोज
रज अुगता है और रोज छिपता है। दुनियाका कुदरती कानून यही है।
स कानून पर अमल करके ही हमें पार होना है।

आदर्श हमें अूंचा ही रखना है। यह सही है कि हम अूचे आदर्श तक
च नहीं पाते, भूलें करते हैं; यह भी सच है कि हम पाप करते हैं,
किन हम पापको पुण्य तो नहीं मनवाते।

'सा विद्या या विमुक्तये'— यह सूत्र हमारा आदर्श है। भाअी
शोरलालने मुझसे कहा: 'क्या अिस बड़े भारी सूत्रका संकुचित अर्थ करके
अिसका दुरुपयोग नहीं करते?' भाअी किशोरलालके कहनेसे मुझे
त विचार करना पड़ता है। अुनका कहना मुझे खूब चुभता है। मैंने
लिया कि अिस सूत्रका यह दुरुपयोग नहीं। जो यह मुक्ति ले सकता है,
ीको वह मुक्ति मिल सकती है। अितनी छोटी मुक्ति भी न ले सकें,
बड़ी कैसे मिलेगी? अिसलिअे मुक्तिके सामान्य और सच्चे, दोनों अर्थोंमें
न ही हमारा आदर्श है।

आज मुझे जरा भी अशान्ति नहीं, जरा भी पछतावा नहीं कि मैंने
विद्यापीठ खड़ा किया। महाविद्यालयके सब लड़के भाग जायं और
कारी कॉलेजोंमें भरती हो जायं, तो भी मैं हंसता रहूंगा और कहूंगा
में कैसे मूर्ख हैं और मैं कैसा सयाना हूं! हिन्दुस्तानके अुद्धारका और कोअी
य ही नहीं। हम सब बड़े भारी मोहमें फंसे हैं, अिसलिअे हमें यह
नहीं सूझती। मैं तो मरूंगा तब तक यही कहता रहूंगा कि मेरे
बहिष्कारके सिवा और कोअी रास्ता नहीं। अब मुझे जान पड़ेगा
अब पूरी तरह सहयोग कर सकनेकी हालत आ गअी है, तब मैं दूसरी
कहूंगा। तब तक तो तमाम हिन्दुस्तान मुझे छोड़ दे, तो भी मैं
कार पर डटा रहूंगा। यह मैं अिसलिअे कहता हूं कि मैं अनुभवी
मी हूं, मैंने अपने विचारोंके पीछे बरसों बिताये हैं, यहां तक कहा जा
ता है कि तपस्या की है। मैं और कोअी बात कह ही नहीं सकता।
आदमीको मालूम है कि बीस सवे सौ होते हैं, वह क्या यह कहेगा
बीस चौके या बीस छक्के सौ हो सकते हैं? सरकारा आश्रमके
मेरे विचार और भी पक्के हो गये हैं।

यह सवाल है कि पढ़नेके बाद क्या किया जाय। 'केरियर' के बारेमें कृपालानीने मेरे लिअे कुछ कहनेको बाकी नहीं रखा। खास बात यह है कि हम डरसे छूटना चाहते हैं। मैं कहता हूं कि तुम नौकरी भले ही करो, अक्षर-ज्ञानका अुपयोग पैसे कमानेमें करना हो तो भले ही करो। यहां तो मैं यही कहना चाहता हूं कि अेक अंग्रेज जवान क्या करता है। मुझे अंग्रेजोंसे तिरस्कार नहीं। बहुत लोग नहीं जानते कि मैं अंग्रेजों पर आशिक हूं। अंग्रेजोंकी नकल करना मेरे लिअे त्याज्य नहीं। मुझे तो सिर्फ अपनी पृष्ठभूमि चाहिये। अुसमें मैं कहींसे भी लाकर रंग भरूंगा। मेरे साथके मेरे अंग्रेज मित्रोंमें से अेकने भी यह नहीं कहा कि आपके साथ रहना न होगा तो हमारा क्या होगा? वे धंधा छोड़-छोड़ कर मेरे पास आये थे। अुनकी जरूरतोंका मैंने गलत हिसाब लगाया, मगर अुनमें से किसीने कड़वी बात न कही कि मैंने गलत हिसाब क्यों लगाया। वे जानते थे कि मैंने शुद्ध भावसे हिसाब लगाया था। अिसके अलावा अुनमें से हरअेकके दिलमें यह भी था कि मैं क्या गांधीके जिलानेसे ही जिअूंगा? मुझे जिलानेवाला अीश्वर है। जिस पुरुषने — जिस चैतन्यने तुम्हें जन्म दिया है, वह तुम्हें रोटी भी दे देगा। मुसलमान और हिन्दू भी यह बात जानते हैं। मगर आज मुसलमान कुरानको भूल गये हैं और हिन्दू गीताको; और अुसके बजाय निकम्मा अर्थशास्त्र ले बैठे हैं। भूखों न मरना पड़े, अिसके लिअे चिन्ता कर रहे हैं। वे नहीं जानते कि जो चिन्ता नहीं करते वे कोअी भूखों नहीं मर जाते। और चिन्ता किसलिअे की जाय? ध्येयके बारेमें निश्चित रहना ही तो शालामें सीखना है। अंग्रेजोंके स्कूलोंमें भी लड़कोंको गुजरकी फिक्र नहीं करने दी जाती। शिक्षक कहते हैं कि पढ़कर पुरुषार्थ करना और कमा लेना। अिसीलिअे तुम देखते हो कि अुस छोटेसे टापूसे लोग कहां-कहां जाते हैं। मेरे कअी अंग्रेज दोस्त आज दुनियामें घूम रहे हैं। कोअी कहेगा, 'पर अुन पर ब्रिटिश झंडेकी छाया जो है!' ब्रिटिश झंडेके सहारेसे अुनके पेट नहीं भरते, अुनकी रक्षा जरूर होती है। अुन्हें कोअी मारे तो झंडा फहराने लगेगा और तोपें चलने लगेंगी। हमें यह रक्षण या हिफाजत नहीं चाहिये। मगर आज हमारे सामने यह विषय नहीं है। मौजूदा विषय

यही है कि तुम्हें यह नहीं सोचना चाहिये कि आगे चलकर तुम्हा गुजारा कैसे होगा। तुम्हें तो अैसा लगना चाहिये कि मंगीके काम कोशिश करके गुजर चलायेंगे, जुलाहेके धंधेमें चलायेंगे, मगर शर्मना काम कभी नहीं करेंगे, किसीके दरवाजे पर भीख मागने नहीं जायेंगे फिर जिसकी चिन्ता क्यों होनी चाहिये कि मा-बाप तथा भाओी-बहनका क होगा? अंधेरेमें अुजाला करनेके लिअे जैसे अेक दीया काफी है, वैसे ह तुम्हारे घरानेमें तुम सपूत निकल आओगे तो भी बस है। मने ह तुम्हें मा-बाप, भाओी-बहनका भरण-पोषण करना पड़े। बहनसे कहो वि तुम्हें खिलाकर खाअूंगा, मगर तुम्हें रबड़ी नहीं मिलेगी, रोटी ह मिलेगी। फिर बहन तुम्हें मेहनत करते देखकर बैठी नहीं रहेगी, बल्कि मेहनत करने लगेगी और तुम्हारी रोटी खायेगी। जिस तरह तुममें हिम्मत होगी, तो सब ठीक हो जायगा।

अब रहा बीचका प्रश्न। तब हम क्या करें? हमारे लिअे क्या? हमारे लिअे कुछ नहीं। मैं तुमसे कहता हूं कि तुम्हारा अध्यापक परसे विश्वास अुठ जाय, तुमको लगे कि अध्यापक रुपया कमाने आये है, ढोंग करने आये हैं, बड़े बननेको आये है, तो तुम अुन्हें छोड़कर चले जाना। अेक आदमीने कहा, तुमको रुपयेका लोभ न होगा, पर तुम आडंबर तो करते हो, क्योंकि तुम्हें महात्मा जो बनना है! बात सच है। अिसलिअे तुम्हें अैसा लगे कि अध्यापक बड़े बनना चाहते हैं, तो तुम अुन्हें छोड़ देना। छोड़ ही न देना, बल्कि बाहर आकर अुन्हें जीभर कोसना। अध्यापकों और विद्यार्थियोंके बीच कोअी करार नहीं है। परन्तु अध्यापकोंमें चरित्र हो तो अपना सारा बोझ अुन्हीं पर न डाल देना। विद्यादान कोअी नहीं देगा। विद्यादान किसीसे दिया नहीं जा सकता। अध्यापकोंका काम तुम्हारे भीतरके जौहरको पहचान कर बाहर निकालना है। अिस जौहरको अुज्ज्वल करके बढ़ा तो तुम्हीं सकते हो। 'Education' का अर्थ भी यही है कि जो भीतर है अुसे खींचकर बाहर निकालना। अिसलिअे अिस बारेमें तुम्हें निर्भय रहना चाहिये कि सीखनेको क्या मिलेगा। अध्यापकों पर विश्वास रखो और वे जो कुछ सिखायें, अुसे श्रद्धाके साथ ग्रहण करो।

अपनी नीतिकी रक्षा करना तुम्हारे अपने हाथमें है। तुम्हारे सदाचारकी रक्षा अध्यापक नहीं कर सकते। तुम्हें हमेशा ध्यानमें रखना चाहिये कि तुम यहां मौज अुड़ाने या रागरंग मनानेके लिअे नहीं रहते। तुम्हारा मौज़शौक अपनी पढ़ाअीमें, अपने बाहुबलमें, अपने पुरुषार्थमें है। तुम हाथ-पैर हिलाना सीखो। विद्यार्थी पहले अपंग बन जाते हैं और फिर कहते हैं कि अब अखाड़ेमें जाकर मोटे-ताजे बनेंगे। अखाड़ेमें जानेसे हृष्ट-पुष्ट नहीं हुआ जाता। पहले तुम दिलको मजबूत बनाओ, फिर शरीरको ताकतवर बना सकोगे।

मेरी प्रार्थना तुमसे है। अीश्वरसे तो क्या प्रार्थना करूं? अुसके सामने तो मैं रहता ही हूं, अिसलिअे प्रार्थना तुम्हीसे है तुम अपनी और अध्यापकोंकी शोभा बढ़ाना। हमारा विद्यापीठ सारे हिन्दुस्तानके लिअे नमूना है। शिक्षाके असहयोगको गुजरातने शोभायमान किया है। शोभायमान किया है या नहीं, या कितना शोभायमान किया है, अिसका अन्दाज तो आगे चलकर ही लगेगा।

अध्यापकोंसे मैं बिनती करना नहीं चाहता, क्योंकि मैं भी अुन्हींमें से हूं। अभी तो मैं यही विचार तुम्हारे सामने रखना चाहता हूं कि शिक्षाके असहयोगकी सफलता या असफलताका आधार तुम्हीं पर है, और मैं चाहता हूं कि तुम यही विचार लेकर घर जाओ।

नवजीवन, १२-६-'२४

६

कामका हिसाब

[१ अगस्त, १९२४को हुअी राष्ट्रीय शिक्षा-परिषद्के अध्यक्षपदसे दिये हुअे भाषणसे।]

हिन्दुस्तानमें आज जो निराशाका समय आ गया है, अुसका अेक कारण मैं भी हूं। मैंने हिन्दुस्तानके सामने मीयाद रखी कि अेक सालमें स्वराज्य लेना ही चाहिये। अेक बरस तो चला गया, अुससे भी ज्यादा बरस चले गये, मगर अैसा लगता है कि स्वराज्य दूर है। सन् १९२१में वह जितना दूर था, अुससे भी कुछ लोगोंको आज शायद ज्यादा दूर दिखाअी देता हो। लेकिन मैं अैसा नहीं मानता। मुझे वह पास आया लगता है। अिसके लिअे मेरे जैसी अटल श्रद्धा चाहिये। यह श्रद्धा किसीके देनेसे नहीं मिलती, यह अनुभवसे ही आती है। अगर मैंने समयकी मीयाद मुकर्रर न की होती और अुसीके अनुसार त्रैराशिक न लगाया होता, तो जितना काम हुआ अुतना भी नहीं हो सकता था।

जो आंकड़े मैं आपके सामने रखना चाहता हूं, वे आपसे अपरिचित नहीं हैं। हमारा अुत्साह बनाये रखनेके लिअे अितने भी काफी हैं। असहयोगके किसी अेक अंगमें भी गुजरातने जो कुछ किया है, वह शरमाने लायक नहीं — गुजरातके लिअे ही नहीं, हिन्दुस्तानके लिअे भी वह शरमानेकी चीज नहीं है। यह बात सही है कि त्रैराशिकके हिसाबसे हमारे हिस्सेमें जितना आता है, अुतना हम नहीं कर सके। लेकिन हरअेकसे भरसक जितना हो सकता था अुतना वह कर चुका हो — और मैं मानता हूं कि अैसा न माननेका मेरे पास कारण नहीं है — तो हमारे लिअे शरमकी कोअी बात नहीं। यह मैं क्यों कहता हूं, अिसका कारण आपको समझाता हूं।

मैंने अपने साथियोंको अुलाहना दिया है कि अितना ही काम क्यों किया, क्योंकि अुलाहना देना मेरा धर्म है। जो सेवा करना चाहता

है और सेवाके सिलसिलेमें जिसके सिर सरदारी आ पडी है, अुसे तो ज्यादासे ज्यादा मांगना ही चाहिये। अुलाहना देना अुसका फर्ज है। लेकिन निष्पक्ष होकर सोचने बैठता हू, तो मुझे अैसा नही लगता कि किसीने बेअीमानी की है।

यह तो मैंने अुजला पहलू बतानेके खयालसे कहा। अिसके समर्थनमें जो आंकडे जुटाये है, अुन्हे आप जानते है। ये महामात्रके लिखे हुअे हैं और आप शिक्षकोंके ही जमा किये हुअे हैं। अिन आकडोंसे मै अपनेको और आपको अुत्साह दिलाना चाहता हू। हमारे पास राष्ट्रीय स्कूलोंमें तीन म्युनिसिपैलिटियोकी शालाओको छोडकर १०,००० विद्यार्थी है। *अुन पर हमारा साढे तीन लाख रुपया खर्च हुआ* है। विद्यार्थियोंमें ५०० लडकिया हैं। यह संख्या थोडी है, पर अितनी लड़कियोंको हम पढा रहे हैं। अहमदाबाद, नडियाद और सूरतकी *म्युनिसिपैलिटियोंने असहयोगका अुसूल मानकर* अपने स्कूलोंको राष्ट्रीय बनाया। अुन शालाओ सहित विद्यार्थियोंकी सख्या २०,००० होती है। अिनमें १०,००० अहमदाबादके है। हमारे पास ८०० शिक्षक हैं। *अिनका गुजर भी अिन साढे तीन लाखसे ही होता है।* महाविद्यालय हमारे पास दो है। पुरातत्त्व मन्दिर भी है। अिसके बारेमें सुना है कि अिस तरहका काम हिन्दुस्तानमें और किसी जगह नहीं होता। तीन *जीती-जागती संस्थाअें हमें ताकत पहुचा रही हैं* और हमसे पोषण पा रही है। ये संस्थायें दक्षिणामूर्ति विद्यार्थी-भवन, चरोतर शिक्षा-मण्डल और भडोच शिक्षा-मण्डल है। अिनके सस्थापक और सचालक मानेंगे कि जैसे अिन सस्थाओंने असहयोग करके असहयोग आन्दोलनकी शोभा बढाअी है, वैसे ही असहयोगसे पोषण भी लिया है।

अिसके अलावा हमने बहुतसी पाठ्यपुस्तकें तैयार की है। अिनमें से बहुतसी मैंने जेलमें देख ली हैं। दक्षिणामूर्तिकी और चरोतर मण्डलकी पुस्तकें भी मैं देख चुका हूं — जाच चुका हूं। पढ गया यह नहीं कहता, पर बहुत-सी पुस्तकें अुलट-पलट करनेसे अितना देखनेकी शक्ति आ गअी है कि अूपर-अूपरसे देखकर यह समझ लेता हूं कि अिसमें क्या लिखा है, किस ढगसे लिखा है और लिखनेवाला क्या कहना चाहता है। अिन

लेखकों और संस्थाओंको बधाओी मिलनी चाहिये। अिनके अलावा विद्या-पीठकी पुस्तकें अलग है। गुजरातके आजतकके — पिछले ५० सालके — सारे अितिहासकी जाचपड़ताल करें, तो मालूम होगा कि अैसा काम बिलकुल नहीं हुआ। आज तकका सारा काम सरकारने किया था। अिसका यश हम नहीं ले सकते। अिसमें हमारे आदमी तो थे, पर योजना सरकारकी और सरकारके मुकर्रर किये हुअे आदमियोंकी थी। यह योजना मौजूदा हुकूमतके तरीकेको ताकत पहुचानेवाली थी और अिस विचारसे बनाओी हुओी थी कि अिस हुकूमतको मजबूत करनेके लिअे कैसी शिक्षा दी जाय। जब अुन्होंने यह काम किया, तब पहले सालमें कितनी किताबें लिखी गअीं, अिसका हिसाब लगायें तो भी हम आगे बढ़ जायेंगे। लेकिन हम किसीके साथ मुकाबला करने नहीं बैठे हैं।

गुजरात निहायत पिछड़ा हुआ प्रान्त था, आज भी है। गुजराती अनपढ़ रहे, सिर्फ व्यापार करना ही जानते थे और यही समझते थे कि व्यापारसे जितना धन गुजरातमें ला सकें ले आवें। समाजके लिअे साहित्य तैयार करनेकी भावना असहयोगसे पहले बहुत फैली नहीं थी। पर अिस बारेमें सबसे पहले काम करनेवाला था 'सस्तु साहित्य वर्धक कार्यालय' — यानी स्वामी अखण्डानन्द। अिन्होंने गुजरातमें खूब सस्ती किताबोंका प्रचार किया। लेकिन असहयोग आन्दोलन तो अुससे भी आगे बढ़ गया। अिसलिअे हम स्वामी अखण्डानन्दके निहायत अच्छे कार्यको भूल सकते हैं, यद्यपि वह भूलने लायक नहीं है।

पाठ्यपुस्तकोंके बारेमें मुझे जो कहना था अुससे ज्यादा कह गया। अब चेतावनी भी देता हूं। पढ़ाओीकी अैसी किताबें गुजरातमें ढेरों निकला करें तो मैं अिससे मोहित नहीं होअूंगा। जब यरवडा जेलमें मुझ पर अुनकी वर्षा होने लगी तब मैं चौंका। छपाओी वगैरा सबकी सुन्दर थी। अेक पर तो मैं बहुत मोहित हो गया था। पर यह सब गुजरातको शोभा देने लायक नहीं। गुजरात भिखारी नहीं है। औरोंके मुकाबले गुजरातके पास रुपया काफी है। मगर मुझे लगता है कि गुजरात अितना बोझ नहीं अुठा सकता। ये ढेरों पुस्तकें वह नहीं पचा सकता, अुसके जेब भी अिसे बरदाश्त न कर सकेंगे। अगर ये पुस्तकें अहमदाबाद,

सूरत, नड़ियाद और भड़ोंच जैसे शहरोंके ही लिअे लिखी जाय, तो मुझे कुछ नहीं कहना है। गोकि अिन शहरियोंका दिमाग तो अितना भार नहीं सह सकता, अुनके जेब भले ही सह सकें। मगर गावोंके मा-बाप तो नहीं सह सकते। हम जो पुस्तकें छापें और जनताके सामने रखें, वे अैसी होनी चाहिये कि गरीबसे गरीब बालकोंको भी मिल सके। मेरा बस चले तो मैं अेक, दो और चार पैसेकी किताबें निकालूं।

* * * *

मै जनताके सामने अेक पुस्तक रखनेके पहले हजार बार विचार करूंगा। मैंने अेक तुच्छ किताब — बालपोथी — लिखी है। अिसे पढ़ने बैठूं तो पाच मिनटमें पूरी कर दूं। जरा ढंगसे पढ़ूं, तो दस मिनटमें पूरी कर दूं। *अिस पर जो आलोचनाअें आओ हैं, वे मैंने पढ़ी नहीं हैं। मैं जानता हूं* कि ज्यादातर टीकाअें मुझे खुश करनेवाली तो नहीं हैं। मेरी स्तुति-निन्दाका पार नहीं, अिसलिअे दोनोंका ही मुझ पर कुछ असर नहीं होता। फिर भी अिस पुस्तकके पीछे जो विचार है वह बड़ा भारी है। वह विचार यह है कि शिक्षक जबानी ही तालीम दें। शिक्षा पुस्तकों और पाठ्यपुस्तकों द्वारा नहीं दी जा सकती। जिस-जिस देशकी शिक्षामें पाठ्यपुस्तकोंका ढेर रखा होता है, वहाके बच्चोंके दिमागमें कौन जाने क्या भर जाता है — भूत ही घुस जाता है। बच्चोंकी सोचनेकी शक्ति ही मारी जाती है। बेशुमार बच्चोंके अनुभवसे और अनेक शिक्षकोंके साथ बातचीत करनेसे मैं अिस निश्चय पर पहुचा हूं। दक्षिण अफ्रीकामें मैं आखें खोलकर फिरता था। चारों तरफ लगी हुअी आगके बीच जब मैं घूमता था, तब भी मुझे यही तजरबा हुआ था। दो स्कूलोंका मुकाबला कीजिये — अेक वह जिसमें शिक्षकोंके पास बहुतसी पढ़ाअीकी किताबें हों, और दूसरी वह जिसमें शिक्षक *अेक भी पाठ्यपुस्तक रखे बिना काम करते हों।* दोनों ही शिक्षकोंमें जौहर है। जिनके पास पाठ्यपुस्तक नहीं है, वे बच्चोंको जितना दे सकेंगे अुतना पाठ्यपुस्तकोंवाले नहीं दे सकेंगे। मैं लड़कोंके आगे पाठ्यपुस्तकें नहीं रखना चाहता। शिक्षकोंको खुद अुन्हें पढ़ना हो, तो वे भले ही पढ़ें। शिक्षकोंके लिअे हम कितना ही लिखें, पर बच्चोंके लिअे लिखेंगे तो शिक्षक

गीन बन जायेंगे। अिससे शिक्षकोंकी मौलिक शक्ति और स्वतंत्रता मा
जायगी। लेकिन मैं शिक्षकोंकी गति नहीं रोकना चाहता। मैं तो मि
अितना ही चाहता हूं कि आप मेरा यह खयाल भी जान लें। पाठ्यपुस्त
लिखनेवाले अनुभवी हैं। जनताको जहां अुनकी किताबोंकी जरूरत हो, व
यह जरूर ले। लेकिन मेरे कहनेके पीछे जो दृष्टि है, अुसे आप जान लें।

आप पूछेंगे, 'आपने शिक्षकका काम किया है?' मेरे विचारों
पीछे गहरा अनुभव है; मैंने शिक्षणके बारेमें खूब सोचा है। मैंने जो
दृष्टि बताओ, अुस दृष्टिसे सोच लेना और अपनी चालको जरा धीमी क
लेना। मेरे कहनेका मतलब यह है कि लाखों बच्चोंके लिअे पुस्तकें तैया
करनी हों, तो अुसके लिअे गुजरातके पास रास्ता नहीं, वह थक जायगा
दूसरी बात यह है कि अिन पुस्तकोंका बोझ आप बच्चोंके दिमाग प
न डालें।

मनुष्यको कोअी नया विचार सूझे, अुस पर वह कुर्बान हो जाय और
अुसे फौरन दुनियाको दे दे, तो अिससे वह भी खोता है और दुनिया
भी खोती है। लेकिन अगर मनुष्य विचारोंका संग्रह रखे, अुन पर खुद
प्रयोग करे और बच्चों पर भी करे और आखिरमें मीजान मिलावे और
फिर भी रुक जाय, तो दुनियाका कोअी हर्ज नहीं होगा। अिसके लिअे मेरे
पास बड़े बड़ोंकी मिसालें हैं। अुन्होंने अपने विचार रोक लिये, तो अिससे
न अुन्होंने कुछ खोया, न जगतने खोया। अैसे लोगोंने बादमें अपने विचार
बदल भी लिये हैं और नये अनुभवमें पुराने विचारोंको भुला दिया है।
अिसका अेक अुदाहरण मेरे परम मित्र, मेरे साथ अुठने-बैठने और खाने-
पीनेवाले अुतावले अेण्ड्रूज हैं। दस साल पहले अुन्हें जो विचार सूझते,
अुन्हें वे तुरन्त लिख डालते थे। यह अुनमें लत थी। दस साल पहलेके
विचार आज अुनके नहीं रहे। वे धार्मिक पुरुष हैं — हम भी धार्मिक पुरुष
हैं। हम जो विचार जाहिर किये बिना मरेंगे, अुन्हें आत्मा साथ लेकर
जायगी और किसी न किसी समय वे विचार दुनियाको जरूर मिलेंगे।

अगर हम अिसका विचार कर लें कि विद्यापीठ और अुससे सम्बन्ध
रखनेवाली संस्थाअें किन परिस्थितियोंमें पैदा हुअी तो गुत्थियां सुलझ जायंगी।
आज हम शिक्षाका शिक्षाशास्त्रीकी हैसियतसे विचार कर रहे हैं। शिक्षकका

धन्धा सिर्फ शिक्षा देना है, अिस खयालसे हमें अच्छीसे अच्छी शिक्षा देनी चाहिये। मगर हमारा सवाल अितना आसान नही है। सिर्फ शिक्षाके खातिर हमने विद्यापीठ—शालाअें—कायम नही की। हमने असहयोगके सिलसिलेमें विद्यापीठ स्थापित किया है। अिसका मतलब यह है कि शिक्षक, शिष्य और मां-बाप स्वराज्यके संघमें अिकट्ठे हुअे हैं, स्वराज्यके सेवक हैं, असहयोगी है। पर अिस वक्त मैं आपको असहयोगका चमत्कार बताने नही बैठा हूं, परन्तु राष्ट्रीय शिक्षकका धर्म बताना चाहता हू। जब स्वराज्यके संघमें हम शरीक हुअे, तभी हमने यह तो मान लिया था कि असहयोगका सिद्धान्त ठीक है।

अिस सिद्धान्तमें भूल होगी तो कांग्रेस अुसे सुधार लेगी। अभी तो यही मानकर चलना है कि गाड़ी ठीक चल रही है। असहयोग ठीक है या नही, हम अिसका तात्त्विक निर्णय करने नही बैठे है। हम दोनोंके बीचमें अितनी बात अेकसी है कि हमारी, विद्यापीठकी और स्कूलोंकी हस्ती स्वराज्यके लिअे है। शिक्षाके लिअे शिक्षाका विचार स्वराज्य मिलनेके बाद ही करेंगे। आज तो अूपर बताअी हुअी संकुचित दृष्टिसे ही शिक्षाका विचार करना है।

हमारी प्राथमिक शालाओं, हाअीस्कूलों और कॉलेजों व पुरातत्व मन्दिरको चलानेमें भी यही खयाल सामने रखना चाहिये। स्वराज्य और असहयोगका अुसूल कभी नही तोड़ना चाहिये। हमें जो स्वराज्य लेना है, अुसके साधन सत्य और अहिंसा तय किये हुअे हैं। कांग्रेसके विचारमें 'शान्तिमय' और 'अुचित' शब्दोंका कुछ भी अर्थ होता हो, मेरे लिअे तो अिनका अेक ही अर्थ है—सत्य और अहिंसा। और मैं मानता हूं कि गुजरात भी यही मानी लगाता है। अिसके सिवा हमने पांच तरहका बहिष्कार मंजूर किया है। अुसे तोड़ दें तो हमारी प्रतिज्ञाका पालन नही होता। बच्चोंकी नीतिके यदि हम रक्षक हैं, तो हम बहिष्कार छोड़कर अुनको गलत पाठ पढ़ायेंगे। जिनके दिलमें अिस बारेमें श्रद्धा न हो, अुन्हें अिन संस्थाओंसे निकल जाना चाहिये। पेट तो सभीके पीछे लगा है, मगर वह हमारा मुख्य हेतु नही हो सकता। जिसे असहयोगकी बातें मंजूर न हो, अुसे अिसमें से निकल जाना चाहिये। सिर्फ पेट भरनेके लिअे राष्ट्रीय

शालामें भरती होना न शिक्षा देनेवालेको शोभा देता है और न शिक्षा लेनेवालेको।

हमारी लड़ाअीके दो हिस्से हैं। अेक ध्वंसात्मक या तोड़फोड़का। अिसे हमने पूरा कर लिया। अब भी हम यही काम करते रहें, तो हमारा यह काम अनाड़ी और जाहिल किसानकी तरह होगा। बीज बोना होता है तो किसान घास अुखाड़ देता है, पत्थर निकाल डालता है और जमीनको जोतकर अेकमी बना लेता है। अितना करनेके बाद भी वह अुथल-पुथल ही करता रहे, तो यही माना जायगा कि अुसने वक्त गंवाया; अिसी तरह नतीजा देखनेसे पहले दूसरे खेतमें अपने प्रयोग करे तो भी ठीक नहीं। अिसी तरह अेक किसान छोड़कर जाय और अुसकी जगह दूसरा आ बैठे तो भी ठीक नहीं। अुसे तो वहां स्थायी काम करना चाहिये। यह काम करते-करते वह धीरज रखे कि खेत अपने आप तैयार हो जायगा। हमारा ध्वंसात्मक काम पूरा हो गया, अब हमें रचनात्मक — स्थायी — काम करना है। यह रचनात्मक काम असहयोगको ताकत पहुंचानेवाला है। हम जो काम कर रहे हैं, दुनिया अुसकी तारीफ करने लगे, दुनिया अुसे मान ले, तो दूसरी शालायें अपने आप मिट जायगी। यह सब लोग मानते हैं कि दूसरी पाठशालाओंमें ज्ञान नहीं है और कहते हैं कि अुनकी जगह पर कोअी दूसरे ढंगकी शालायें बनाअिये। हमें अपने कामके बारेमें अटल श्रद्धा हो, तो अुसके पूरा होनेमें अेक बरस लगे या बीस बरस, हमें तो वह जारी ही रखना चाहिये।

हमारा अेक स्थायी काम यह है कि हम शालायें खड़ी करें। शिक्षकोंको चाहिये कि वे अदालतों और पंचायतोंको भूल जायं। अिन सबका हमें खयाल तक नहीं करना है। हम अपनी जिम्मेदारीका ही विचार कर लें तो हमने दुनिया जीत ली। हमारी दूसरी जिम्मेदारी अिन शालाओंको अच्छी तरह चलाकर अुनकी कीर्ति बढ़ानेकी है। हमने विस्तार खूब किया है; अब अिस विस्तारमें से भी चुनाव करना पड़ेगा। आपमें से जो किसान होंगे, वे समझ जायेंगे। किसान बीज बोता है, पर अुसमें पैदा होनेवाले पौधोंमें से जो खराब, पीले और मुर्दार होते हैं अुन्हें वह निकाल डालता है। गेहूं पैदा होनेके बाद भी अच्छेसे अच्छे

बीज जमा करके रखता है और अिस तरह हर साल अच्छीसे अच्छी फसल पैदा करता है। हमने फैलानेका काम तो कर लिया, अब शक्ति और गुण बढ़ानेका काम करना चाहिये।

दूसरा काम चरखे और अस्पृश्यताका और तीसरा हिन्दू-मुस्लिम-अकताका है। गुजरातमें हिन्दू-मुसलमानका सवाल अितना नहीं है, पर है जरूर। अगर हम बच्चोंमें यह भाव फैला दें कि हिन्दू-मुसलमानोंको सगे भाअियोंकी तरह रहना चाहिये, तो गुजरातमें भी जो जहर फैला हुआ है वह मिट जायगा। यह सच है कि गुजरातमें हमने सर नहीं फोड़े, फिर भी हममें दोस्ती नहीं है। अिसके लिअे स्कूल जिम्मेदार हैं, मगर बहुत नहीं। सब शालाओं पर अछूतोंको भरती करनेका भार तो है ही। विद्यापीठने अपनी जान जोखिममें डालकर भी अछूतोंको भरती करनेका नियम बनाया है। शिक्षकोंने क्या किया? मा-बापने क्या किया? मा-बाप डरते हैं। वे अछूतोंके बिना शालाअें चलानेको तैयार हैं। अुनकी वृत्ति यह है कि अछूतोंको दूर रखा जा सके तो अच्छा। अिसलिअे शालाओंमें बहुत अछूत बालक नहीं हैं। सौभाग्यसे हमारे पास अिन्दुलाल, मामा और दूसरे सेवकोंके प्रतापसे १५ अछूत शालाअें हैं। ये अछूत शालाअें हमारी शर्मकी निशानियां हैं, हमारी कार्यशक्ति या अुदारताकी नहीं। जहां अछूतोंके लिअे तिरस्कार हो, वहीं तो अलग शालाकी जरूरत पड़ती है; नहीं तो अछूत बच्चे मामूली स्कूलोंमें ही हों। हम प्रेमकी जबरदस्ती करके अछूत बालकोंको ले आवें। पहले अिन्हें सिखायें, बादमें दूसरोंको। अिन्हें सजायें, नहलायें, खिलायें। तुतलाते हों तो अिन्हें शुद्ध बोलना सिखायें। मगर हमने यह नहीं किया। यह हमारा छोटा गुनाह नहीं, बल्कि बड़ा गुनाह है।

अस्पृश्यता-निवारणको हम कांग्रेसके कामका अंग मानते हों — और मानना पड़ेगा — तो जब तक हम अछूतोंको दूर रखते रहेंगे, अुनसे मिलने-भेंटनेको तैयार न होंगे, तब तक हिन्दुस्तानमें स्वराज्य नहीं आ सकता। मेरे अिस कहनेका अंग्रेजी अखबार या वक्ता बेजा फायदा अुठा सकते हैं, मगर मुझे अुसकी फिक्र नहीं। हमें तो स्वराज्य आत्म-शुद्धिसे ही लेना है। अिसलिअे यह बात तो मैं कहता ही रहूंगा।

मुझसे कहा जाता है कि शिक्षक अिस्तीफा दे देंगे, लड़के च
जायंगे। पर अिससे क्या? मेरे पास अेक करोड़ रुपये हों, पर अुन्हें अेर
पर सजाकर देगूं और वे चोरी चोरेंं, तो अुनका मैं क्या करूं? अुन्हें
मैं साबरमतीके सिपुर्द ही कर दूंगा। मगर अेक करोड़में अेक भी म
हो और अुसे ढूंढ निकालनेको किसी दिन मुझसे कहा जाय, तो व
मुझे कब मिलेगा? मुझे अपने लड़केके लिअे आटा ख्वाना हो, तो मुझे व
किस तरह काम दे सकेगा? मैं तो आज ही मरेको ढूंढ लूंगा और बाकीं
फेंक दूंगा। अिसलिअे अिस्तीफेके बारेमें मैं बेफिक्र हूं। वे मोटे रु
भले ही चले जायं। हम शिक्षकोंको निडर बनना चाहिये, सत्य प
निर्भयतासे डटे रहकर कहना चाहिये कि जिस शालामें अछूत बच्चे
नहीं आ सकते, वह राष्ट्रीय शाला नहीं, स्वराज्यकी शाला नहीं
असहयोगकी शाला नहीं। मैं तो स्वराज्यका पागल हूं। जो कानर्द
शाला होगी, अुसीकी मैं कदर करूंगा। हमें जोरदार और पक्का निश्च
करके जाना चाहिये कि जिस शालामें अछूतोंके लिअे मनाही होगी
आड़े-टेढ़े तरीकेसे मां-बाप अछूतोंको दूर रखना चाहते होंगे, अु
शालाको हम छोड़ देंगे। हम अछूत मोहल्लोंमें जाकर बसेंगे और
अछूतोंके बालकोंको पढ़ायेंगे। शहरके बच्चे वहां आवें तो अच्छा, न आवें
तो अुतना बोझ कम हुआ, अुतने रुपयेकी जोखिम मिटी। हमारे पास
रुपया नहीं, हमें जनता रुपया देती नहीं। जनताको अछूतोंका काम
पसन्द नहीं। यह काम अब लोकप्रिय नहीं रहा, अिसलिअे अब जनता
रुपया नहीं देती, अैसा समझनेमें क्या बुराअी है? फिर भी हमें तो
यह काम करते ही रहना है। हमको जब दीखे कि जनता गलत रास्ते
पर है, और अुसे ठीक रास्ते पर आना ही चाहिये, तो जरूरत होते
ही हम 'सिग्नेलर' तैयार ही हैं। जिस स्कूलमें हम असहयोगके स्थायी
पोषण नहीं कर सकते, अुसे राष्ट्रीय स्कूल मानेंगे तो हम पापमें
।

क्या मैं पागल हो गया हूं? हम सूतके धागेसे स्वराज्य लेनेकी बातमें
रखते हों, तो हमें वैसा करके बताना चाहिये। मेरे पास दो
आये हैं। अुनमें लिखा है: "तू मूर्ख हो गया है। पहले चरखेकी

बातमें कुछ मर्यादा रखता था, अब तो वह भी छोड़ दी।" दुनिया मुझे बेवकूफ कहे, दीवाना कहे या गालियां दे, तो भी मैं तो यही बात कहूंगा। मुझे दूसरी बात सूझती न हो तो मैं क्या करूं? महाविद्यालयका स्नातक भी जब तक चरखेकी परीक्षा पास नहीं कर ले, तब तक मैं अुसे भी फेल करूंगा, प्रमाणपत्र नहीं दूंगा। यह अुज्र अुठाया जाता है कि अिसमें जबरदस्ती है। जबरदस्तीके मानी क्या? जहां यह नियम रखा जाता है कि अंग्रेजी, गुजराती, संस्कृत सीखनी पड़ेगी, वहां क्या जबरदस्ती नहीं होती? अिसी तरह हम यह कहते हैं कि कातना भी लाजिमी तौर पर सीखना पड़ेगा। हां, हमारा अिसमें विश्वास न हो तो दूसरी बात है। विद्यार्थियोंसे यह कहनेमें क्या बुराअी है कि कातोगे नहीं, तो स्कूलमें नहीं रह सकोगे? फोड़ेसे यों ही मनुष्य चिल्लाता हो, तो क्या अुसे छूना नहीं चाहिये? फोड़ेको फोड़ डालनेके बाद तो वह खुश ही होगा। अिसमें जबरदस्ती नहीं, अच्छी व्यवस्था है। हमने जिस चीजको जरूरी माना है, अुसे शरमाये बिना बच्चोंके सामने रख देना चाहिये। जिन बच्चोंको या मां-बापको यह मंजूर न हो वे न आयें। प्राथमिक पाठशाला, हाअीस्कूल और कॉलेज स्वराज्यकी पाठशाला हो, तो अुनमें यह नियम होना ही चाहिये। दूसरा विचार हमारे लिअे अप्रस्तुत है। जिनके विचार बदल गये हों वे अिस्तीफा दे दें। जब तक कांग्रेसका प्रस्ताव मौजूद है, तब तक अैसे आदमी रह ही नहीं सकते।

ये दो बातें हमें हरगिज नहीं छिपानी चाहिये। मां-बापका क्या डर? मां-बापको यह चीज पसन्द न हो तो भेज दें अपने बच्चोंको सरकारी स्कूलोंमें। तो फिर सरकारी स्कूलमें और राष्ट्रीय पाठशालामें फर्क क्या रहा? मैं खुद कहनेवाला था कि फर्क यह है कि हमारी पाठशालाओंमें आजादीका वातावरण है। कोअी कहेगा कि अितना काफी नहीं? बेशक है। मगर चरखेको और अछूतोंको मैं कभी भूला ही नहीं। मैंने सपनेमें भी नहीं माना कि स्वतंत्रताका मतलब स्वच्छन्दता या मनमानी है। बच्चे भले ही शिक्षकोंके सिर पर चढ़ें, गालियां दें, तू-तड़ाक करें, पर कहा तो जरूर मानें। जो बालक अछूतकी गरदन पर सवार हो, वह स्वतंत्रताको क्या जाने? अुसे आजादीका मजा भी क्या मालूम हो

सकता है? बारडोलीके सफेदपोश लोग आदिवासी दुबलोंको कुचलते हों, तो वे जुल्मको जानते हैं, स्वराज्यको क्या जानें? शिक्षकोंकी प्रतिज्ञा हर तरहके जुल्मको मिटानेकी है। यह नियम मैं जरूर रखूंगा कि हर परीक्षाके साथ विद्यार्थीको जितना सूत जरूर देना चाहिये। फिर थोड़े समयमें ही मैं यह बता सकूंगा कि हरअेक राष्ट्रीय शाला स्वावलम्बी बन सकती है। यह भी बता सकता हूं कि मैं हिन्दुस्तानके सामने जो अुसूल रख रहा हूं वह सही है।

हम स्कूलको 'राष्ट्रीय' रखना चाहते हों, तो ये दोनों बातें करनी ही चाहियें। हरअेक शिक्षक कातना, पीजना, लोढ़ना और कपास पहचानना न जानता हो तो जान ले; अपना फुरसतका सारा वक्त अिसीमें लगाये। जो खुद नहीं जानता हो, वह बच्चोंको क्या सिखायेगा? कोअी शिक्षक कहेगा कि हम तो भाषाका ज्ञान ही देंगे; कातना-बुनना सिखानेके लिअे और आदमी रखिये। जैसे हम सबमें खानेकी शक्ति है और सबको कपड़े पहनना आता है, वैसे ही कातना वगैरा भी आना ही चाहिये। अैसा हो तो ही बालकोंको पदार्थपाठ दिया जा सकता है।

आज तक जितना रुपया खर्च हुआ है, वह सब महाविद्यालय, विनय-मन्दिरों और अछूत पाठशालाओं पर खर्च हुआ है। प्राथमिक पाठशालाओं पर विद्यापीठने जोर नहीं दिया। मैंने जो सिद्धान्त बताये अुन्हें जीते-जागते बनाना हो, तो विद्यापीठको खादीकी पाठशाला बनाना चाहिये। असहयोगका आन्दोलन सार्वजनिक है, थोड़ेसे लोगोंके लिअे नहीं। हम करोड़ों नरकंकालोंको जगाना चाहते हैं, अुनकी हड्डी-पसलियोंको सामने देखना चाहते हैं। हमें खानेको मिलता है, अिसलिअे हममें चरबी है। हमें लगता है कि हम अच्छे दीखते हैं। हिन्दुस्तानके नरकंकालोंके पास चमड़ीके सिवा और कोअी आवरण नहीं। अिन नरकंकालोंको देखकर मैं रोया था। आप देखें तो आप भी रोने लगें और कह अुठें कि 'यह हालत है?'

बम्बअीके लोगोंको क्या खबर कि नरकंकाल कैसे होते हैं? हमारा काम जनतामें जागृति लाना है। अखबार बन्द हो जाय तो भी क्या?

आम लोग समाचारपत्र पढनेवाले नही है। वे तो मुझे पढते हैं, आपको पढ़ते हैं। अुनके पास दो आखें खड़ी कर दो, वे अुन्हींको देखने लगेंगे। अिसे वेदवाक्य समझना। आपकी आखोंमें कुछ होगा, तो लोग समझ जायंगे और अखबारोंको हसकर टाल देंगे।

हम आम लोगोंको शिक्षा देना चाहते हो, तो कॉलेज पर जोर भले ही दें, पर अन्तमें अुसे गगोत्री ही बना दें। आखिर अुसके विद्यार्थी तैयार होकर गावोंमें ही जाकर बैठेंगे, अिसी विचारसे अुन्हें तैयार कीजिये। भले थोड़े आयें तो थोड़े ही सही। अिसमें कोअी हर्ज नही।

मगर मैं जोर तो प्राथमिक पाठशालाओं पर ही देना चाहता हूं। मैं चाहता हूं कि विद्यापीठ प्राथमिक पाठशालाओं पर ज्यादा ध्यान दे, अुनके बारेमें ज्यादा जिम्मेदारी ले। यह सोचना चाहिये कि प्राथमिक पाठशालाअें किस तरह चलाअी जायं। मैं अपना विचार बता देता हूं। सरकारी पाठशालाओंकी नकल करना मूर्खता है। दो साल पहले मैंने 'यग अिंडिया' में कुछ आकड़े छापे थे। अुनमें बताया गया था कि पजाबमें ५० साल पहले जितनी प्राथमिक पाठशालाअें थीं अुनसे आज कम हैं। ब्रह्मदेशमें भी जगह-जगह पाठशालाअें थीं, सब बच्चोंको लिखना-पढ़ना और हिसाब करना आता था। आज वह हालत नही है, क्योंकि जंगली मानी जानेवाली देहाती पाठशालाअें तो सरकारने बन्द कर दी और अपनी कायम की हुअी जारी कीं। सात लाख गांवोंमें सरकार कैसे पहुंचे? सातमें से तीन लाखमें स्कूल नहीं हैं। अैसी बुरी हालत हो वहा सरकारी ढगकी पाठशालाअें खोलनेमें क्या सार? हम पाठशालाके मकानके बगैर काम चला लेंगे, सिर्फ चरित्रवान शिक्षक चाहिये। पुराने गुरु अैसे शिक्षक होते थे। वे लड़कोंको पढाते और भीख मागकर काम चलाते थे। आटा माग लाते और घी मिल जाता तो घी ले आते। जहा ये गुरुजी अच्छे नही होते, वहा अच्छी शिक्षा नही मिलती; जहा अच्छे होते, वहा शिक्षा भी अच्छी मिलती थी। आज वे गायब हो गये हैं। बढ़िया मकानोंसे शिक्षा नही दी जा सकती। गावोंमें जाकर सादगीसे रहकर चरखे वगैराका काम करेंगे, तभी हमारा अुद्देश्य सिद्ध होगा। विद्यापीठ द्वारा अिसका विचार करायें, पर विद्यापीठ आपसे

और मुझसे अलग कोअी चीज नहीं है। विद्यापीठके सामने पांच-सात आदमी योजना बनाकर रक्खें और त्यागी आदमी गांवोंमें बैठें और रूखा-सूखा जो मिल जाय, असीको मानेके लिअे तैयार हों तो काम बने।

मेरे पास अेक पत्र आया है, जो 'नवजीवन' में छपा है। असमें *अेक शिक्षक लिखते हैं कि अन्होंने तीन बच्चोंसे काम शुरू किया।* आज अनके पास ९६ बच्चे हैं ७३ लड़के और २३ लड़कियां हैं। अन्हें वे पेड़के नीचे पढ़ाते हैं। ये बच्चे ब्राह्मण-बनियोंके नहीं हैं। अछूतोंकी पाठशाला है। और जो काम अछूत शिक्षक कर सका, क्या वह आप और मैं नहीं कर सकते? क्या हमें अछूत बच्चे भी नहीं मिलेंगे? वे भी नहीं मिलें, तो हम दूसरी जगह प्रयोग करेंगे। मैं यह कहना चाहता हूं कि प्राथमिक शिक्षाके काम पर खूब ध्यान देना चाहिये।

मैंने सुना है कि मां-बाप हमारी पढ़ाअीसे डर गये हैं। लड़कोंको मातृभाषामें तालीम दी जाती है, यह बात अन्हें चुभती है! यह सुन कर मुझे हंसी आअी। दुःख तो पीछे हुआ। दुःखकी आग जब जोरसे जलती है, *तब आदमी रो नहीं सकता, हंसता है। मुझे लगा कि यह कितना* बड़ा पतन है! मां-बापको डर है कि लड़के अंग्रेजी अच्छी नहीं बोल सकेंगे। खराब गुजराती बोलते हैं, तो अससे अन्हें दुःख नहीं होता। अन्हें अिसका खयाल कहांसे हो कि गुजराती पढ़ेंगे, तो कुछ न कुछ शिक्षा घरमें भी लायेंगे? मुझे खुदको भूमिति, बीजगणित और गणितके पारिभाषिक शब्द *नहीं आते। 'सर्कल' के लिअे गुजराती शब्द पूछा जाय, तो मुझे सोचना* पड़ेगा। त्रिकोणोंके अलग-अलग अंग्रेजी नाम तो मैं जानता हूं, पर गुजराती नाम अेक भी नहीं जानता। यह कैसी हालत है! *मां-बापसे मैं तो कहूंगा* कि आपके लड़के आप ही को मुबारक हों। क्या मैं अंग्रेजीमें सिखाकर गुजराती शब्द दूसरेसे पूछने जाअूं? अिसके लिअे राष्ट्रीय शाला खड़ी करके रुपया जमा करूं, अिससे तो मैं खुद क्यों न बैठ जाअूं? मैं खुद ही सारे पारिभाषिक शब्द क्यों न सीख लूं, और फिर पारा चलाअूं? अेक *भी अंग्रेज विद्वानको अपनी भाषाके शब्दोंकी मुश्किल नहीं पड़ती। स्पर्जन* नामका अेक अंग्रेज बड़ा विद्वान नहीं था। मगर जब बोलने लगता, तो

धारा चलता था। जलनेवाले बारीकसे बारीक शब्दोंकी झड़ी लगाकर सबको चकित कर देता था। हमारे बड़ेसे बड़े विद्वान नरसिंहराव और आनन्दशंकरको अैसी पहेलियां पूछूं, अुनकी परीक्षा बुरी नीयतसे लेने जाअूं, तो अुन्हें पलभरमें फेल कर दूं। जहां अैसी कमाल हालत है, वहां मुझे कहा जाय कि अंग्रेजीके जरिये पढ़ाओ, तो मैं अिनकार कर दूंगा। अितना जरूर मान लेता हूं कि मातृभाषाके जरिये शिक्षा देना कोअी असहयोगका अंग नहीं है। कोअी मा-बाप कहें कि हमारे लड़कोंको अच्छी अंग्रेजी पढ़ाअिये और साथमें अपना चरखा, संगीत वगैरा भी सिखाअिये, तो यह बदला मैं जरूर कर लूंगा। चार घण्टे अंग्रेजी पढ़ाअूंगा और चार घण्टे चरखा चलवाअूंगा। अंग्रेजी पढ़ानेके साथ गुजराती भी जितना हो सके पढ़ा दूंगा। अिस हद तक तो मा-बापको धोखा भी दे दूंगा, क्योंकि मेरे मनमें चोरी तो होगी ही। अेम० अे० हो जाने पर भी लोग गलत अंग्रेजी लिखते हैं, गलत हिज्जे करते हैं।

स्त्री-शिक्षाके बारेमें मुझे बहुत कुछ कहना था। पर यह विषय गंभीर है। अेक तरहसे अिसका सत्याग्रहके साथ कोअी सम्बंध नहीं। हम स्त्रियोंको अज्ञान तो हरगिज नहीं रखना चाहते। लेकिन स्त्री-शिक्षाका तरीका क्या हो, लड़कियों और स्त्रियोंकी शिक्षाके दो विभाग कहां होते हैं, यह सब अलग विषय है, सिर्फ शिक्षाका विषय है। अभी तो हमारी दृष्टि संकुचित है; अभी तो लड़कियोंको प्राथमिक पाठशालामें खींच लाना और अुनसे चरखा ही कतवाना है। दूसरे सूक्ष्म प्रश्नोंका विचार मैंने नहीं किया, हालांकि लड़कियोंकी शिक्षाके प्रयोग मेरे जितने शायद ही और किसीने किये होंगे। जवान लड़के-लड़कियोंको मैंने साथ-साथ पढ़ाया है, अिसका मुझे पछतावा नहीं। मुझे कड़वा अनुभव जरूर हुआ, लेकिन कोअी बड़ा नुकसान नहीं हुआ; क्योंकि अुन पर मैं सिंहकी तरह गरजता रहता था। आप यह हरगिज न समझना कि चूंकि अिस बारेमें मैं ज्यादा नहीं बोलता, अिसलिअे अिसकी अुपेक्षा करता हूं।

नवजीवन, ३-८-'२४

* * *

[परिषद्में श्री चंदुलाल दवे स्त्री-शिक्षाकी कोअी निश्चित व्यवस्था करनेका विद्यापीठसे आग्रह करनेवाला प्रस्ताव लाये थे। अुस पर बोलते हुअे गांधीजीने जो कुछ कहा था, वह श्री महादेवभाअीके लेखसे यहां दिया जाता है।]

भाअी चन्दुलाल मेरे कहनेका अर्थ नहीं समझे। यह प्रश्न गंभीर है, महत्त्वका है। अितना ज्यादा गंभीर है कि यह परिषद् अुसकी चर्चा करनेके लिअे असमर्थ है। पद्माबहन बोली, अुससे तो मुझे अचरज ही हुआ। मेरे लिअे तो गणिका भी बहनकी तरह है। जहां मैं गया हूं वहां मैंने अुनके दर्शन किये हैं, अभी और अुनके दर्शन करनेवाला हूं। और अुनके सामने चरखा रखनेवाला हूं। मेरे विचार जेलमें गये बाद जरा भी नरम नहीं पड़े। स्त्री-शिक्षाके बारेमें मेरे विचार अितनी तेजीसे अुमड़ रहे हैं कि अुन्हें मैं यहां रख नहीं सकता। मेरा दावा है कि और किसीसे अिस बारेमें मैंने ज्यादा सोचा है। मैं यह भी दावा करता हूं कि अिस आन्दोलनके सिलसिलेमें स्त्रियोंकी जितनी जागृति हुअी है, अुतनी और किसीकी नहीं हुअी।

चरखा स्त्रियोंका दिल हिलाये बिना नहीं रह सकता। यही अुनकी सच्ची शिक्षा है, हृदयकी शिक्षा है। और जो चीज वे खुद कर रही हैं, अुसके बारेमें फिर प्रस्ताव क्या करना? ये प्रस्ताव तो थोथे जैसे हैं। हमारे आन्दोलनमें क्या-क्या होता है यह हम नहीं देखते। अितनी और अितनी सारी जानेवाली स्त्रियां पर्दा तोड़कर बाहर निकल आयें, अितसे ज्यादा शिक्षा क्या हम कभी बरसोंमें भी दे सकते थे? अिस आन्दोलनके साथ-साथ स्त्री-शिक्षण चल ही रहा है। बल्कि स्त्रियोंको शिक्षा न मिल रही होती, तो यह आन्दोलन ही नहीं चल सकता था।

स्त्री-शिक्षाका विषय आजके, मेरे और सबके बूतेके बाहरकी बात है। अिसका विचार करना समुद्रको अुलीचनेके बराबर है, आसमानको हाथसे पकड़नेका प्रयत्न करनेके बराबर है। स्त्री तो अर्धांगिनी है यह शिक्षा कौन दे सकता है? थोड़ीसी स्त्रियां कहीं विद्यापीठकी ग्रेजुअेट हो जायें, अिससे क्या हो सकता? अुनको सच्ची शिक्षा नहीं मिलनेवाली है। यह अनुभवमें आ जाय कि स्त्री अर्धांगिनी है, तो अिसीमें सच्ची शिक्षा है।

अिसके लिये हमें शान्तिसे बैठना चाहिये, सोचना चाहिये, अनेकको मिलकर सलाह करनी चाहिये। अगर अैसी बात हो कि विद्यापीठके कुलपतिकी हैसियतसे मुझे कुछ न कुछ करना ही चाहिये, तो मैं कहता हूं कि घंटुलाल वगैरा जो बोझा डाल रहे हैं, वह अुठाया नहीं जा सकता। न हमारे पास साधन हैं, न हमारे पास अितनी बहनें हैं। कुलपतिकी कितनी ही अिच्छा हो, पर वह बेचारा क्या करे? थोड़ेसे रुपये बिगाड़नेसे और कुछ कन्याशालाअें खोलनेसे स्त्री-शिक्षा पूरी नहीं हो सकती। अिसीलिअे मैं चुपचाप बैठा हूं। हमारी पाठशालाअें और विद्यालय लड़कियोंको लेनेके लिअे तैयार हैं। कोअी भी योजना बनाकर लाअिये, तो विद्यापीठ विचार करनेको तैयार है, मगर वह खुद नहीं बनायेगा। जो 'विशेषज्ञ' हैं वे यह भार अुठावें, अपने विचार पेश करें, खूब आन्दोलन करें और व्यवस्थापिका सभामें शरीक हों। विद्यापीठको अिस कामसे अलग नहीं होना है। कोअी स्वराज्यके सिलसिलेमें शिक्षाकी बड़ी योजना तैयार करे, तो विद्यापीठ अुस पर विचार करनेसे अिनकार ही करेगा। अिस विषयकी विद्यापीठ अुपेक्षा नहीं करना चाहता, अुसे भूलना भी नहीं चाहता। मैं तो सिर्फ अशक्तिकी ही बात करता हूं। मैं खुद अिस प्रस्ताव पर पाव घंटेमें विचार नहीं कर सकता। मैं सरदार और सिपाहीकी हैसियतसे नम्रताके साथ प्रार्थना करता हूं कि यह भ्रम दूर कर लीजिये कि मुझे स्त्री-शिक्षाकी कुछ भी लगन नहीं है और सिर्फ अिसलिअे यह प्रस्ताव आप वापस ले लीजिये कि हमारी हंसी न अुड़े।

नवजीवन, १०-८-'२४

७

शिक्षकोंसे

['शिक्षा-परिषद्*' शीर्षक लेख।]

यह परिषद् आअी और चली गअी। शिक्षकोंके खयालसे और जनताके खयालसे भी यह परिषद् महत्त्वकी मानी जानी चाहिये। लेकिन *यह अैसा समय नहीं कि दोनोंमें से कोअी भी अुसे महत्त्व दे।* शिक्षकोंकी कीमत न अुनकी अपनी नजरमें है, न जनताकी नजरमें। कीमतका अंदाज अुनके वेतनसे लगाया जाता है। शिक्षकोंका वेतन अेक मुंशीसे भी कम होता है। जिस तरह रिवाजके मुताबिक शिक्षककी कीमत मुंशीसे कम *होती है। क्या अिसीलिअे हम शिक्षकको मुंशीजी कहते होंगे?*

तो शिक्षककी कद्र कैसे बढ़े? सात लाख गांवोंके सात लाख शिक्षकोंका वेतन कोअी बढ़ा सकता है? अितने ज्यादा शिक्षकोंका वेतन न बढ़े और बढ़ाना जरूरी माना जाय, तो थोड़ेसे गावोंमें महंगे शिक्षक *रखकर बाकी गांवोंको शिक्षण-रहित रखकर काम चला लिया जाय।* अंग्रेजी राज्य कायम होनेके बाद हम अैसा ही करते आये हैं। हम देखते हैं कि यह तरीका गलत है। अिसलिअे हमें अैसी तरकीब ढूंढनी चाहिये, जिससे सब गावोंको शिक्षा दे सकें। वह युक्ति यह है कि शिक्षकोंकी *कीमत वेतनसे न आंकी जाय और शिक्षक वेतनको गौण समझकर* शिक्षाको ही मुख्य समझें। सार यह कि शिक्षा ही शिक्षकका धर्म माना जाना चाहिये। यह यज्ञ किये बिना जो शिक्षक खाये, अुसे चोर समझना चाहिये। अैसा होनेसे शिक्षकोंकी कमी नहीं रहेगी और फिर *भी अुनकी कीमत करोड़पतिसे करोड़ गुनी ज्यादा मानी जायगी।* हर-अेक शिक्षक अपनी भावनाको बदलकर आज भी यह स्थान पा सकता है।

अिस परिषद्को सफल बनाना न बनाना शिक्षकोंके हाथमें है। शिक्षकोंकी प्रतिज्ञामें सफलताकी कुंजी है। शिक्षक धर्म समझकर कताअी

* यहां परिषद् राष्ट्रीय शिक्षा-परिषद् थी, जिसके अध्यक्षपदसे *दिया हुआ गांधीजीका भाषण पिछले प्रकरणमें दिया गया है।*

सम्बन्धी सारी क्रियायें सीख लें, और हर महीने कमसे कम १००० गज सूत कांग्रेसको भेंट करे तो शिक्षा-परिषद् बहुत कुछ कामयाब मानी जायगी। अितना तो हर शिक्षक करके दिखा सकता है। राष्ट्रीय शिक्षकोंका अभीका काम स्वराज्य लेनेमें मदद देना है। सूत कातना और खादी पहनना कमसे कम और पहली मदद है। जो अितना करते हैं, वे और सब कुछ करते हैं। और सब कुछ करने पर भी जो यह नहीं करते, वे कुछ नहीं करते।

और गीताके न्यायसे जैसा बड़े लोग करते हैं वैसा ही और लोग करते हैं। अिसी तरह जैसा शिक्षक करेंगे वैसा ही शिष्य करेंगे। अिस तरह जनताको सहजमें शिक्षकों और शिष्योंकी तरफसे बड़ी भेंट मिलेगी।

दूसरी कसौटी छुआछूतकी है। शिक्षकोंमें आत्मबल होगा, तो वे अपनी पाठशालामें अछूतोंको जरूर खींच लायेंगे। अिससे पाठशाला टूट भी जाय तो क्या हुआ? धर्मके लिअे स्कूल है, स्कूलके लिअे धर्म नहीं है। बच्चोंको अगर अस्पृश्यता छोड़नेका पदार्थपाठ न दिया जाय, तो बच्चे और क्या सीखेंगे? कोअी मां-बाप यह कहें कि 'हमारे लड़कोंको बहुत सचाअी न सिखाना, नहीं तो हमारे बच्चे व्यापारके लायक नहीं रहेंगे' तो शिक्षक क्या कहेगा? क्या वह बच्चोंको छोड़ नहीं देगा? सचाअीके बिना अितिहास, भूगोल या अंकगणित क्या फायदा पहुंचायेंगे? अिसी तरह शिक्षक अपने गांवके मुसलमानों, पारसियों और दूसरी कौमोंसे भी अपने बच्चोंको राष्ट्रीय पाठशालामें भेजनेकी प्रार्थना जरूर करेगा।

शिक्षक गुमारेको भूलकर शिक्षा देनेके अपने फर्जको ही याद रखें, तो ही स्कूलोंमें सच्ची जान आयेगी और स्कूल सचमुच राष्ट्रीय बनेंगे, तो ही राष्ट्रीय हलचलमें अुनका अुपयोग होगा। जिस सिद्धान्तको हमने अंगीकार कर लिया, अुसके प्रति वफादार रहना तो बूढ़े, बच्चे, स्त्री-पुरुष सभीके लिअे पहला सबक है।

नवजीवन, १०–८–'२४

८

राष्ट्रीय शिक्षाकी मर्यादा

१

['महाविद्यालयमें गांधीजी' शीर्षक लेखसे।]

महाविद्यालयके विद्यार्थियोंको कुछ बातें समझ ही लेनी चाहिये। जिस बुनियाद पर अिस विद्यालयकी अिमारत खड़ी हुअी है, असे अिस संस्थामें आनेवाले हरअेक आदमीको जान लेना चाहिये। अिसके बिना यह राष्ट्रीय महाविद्यालय राष्ट्रीय नहीं रहता। स्वराज्यके जो-जो साधन सोचे गये हैं, अुन्हें समझ लेना चाहिये। अुन्हें समझ कर अुन पर अमल नहीं करेंगे तो दुनियाको धोखा देंगे। विद्यालयमें खूब विद्या प्राप्त की हो, अंग्रेजीका अच्छा ज्ञान हो, संस्कृतका अितना बढ़िया अुच्चारण करते हों कि काशीके पण्डित भी सिर झुकायें, तो भी अुसमें कुछ नहीं रखा है। यहां तुम्हें ये चीजें नहीं मिलेंगी। यहां कोअी न कोअी अलौकिक चीज लेनी है। दूसरी सब चीजोंसे ये अूपर हैं। ये चीजें हैं चरखा, अछूतोंसे मिलना और हिन्दू-मुसलमान और पारसी कौमोंकी अेकता कायम करना। तुम किसी अछूतके लड़केसे मिले हो? किसी मुसलमान या पारसी लड़केसे मिलते हो? और क्या अुसे समझाते हो कि महाविद्यालयमें अुनके लिअे गुंजाअिश है? अुनसे महाविद्यालयमें आनेकी प्रार्थना करते हो? अितना करने पर भी वे न आयें, तो कसूर तुम्हारा नहीं विधाताका ही है।

बाहरसे कोअी आदमी तुम्हारा अिम्तिहान लेने आये, तो वह अंग्रेजी, गुजराती या संस्कृतकी जानकारी बतानेवाले तुम्हारे जवाबोंसे मोहित नहीं होगा। वह तो दूरसे ही देख लेगा कि तुम्हारे यहां चरखा चलता है या नहीं, अस्पृश्यताको निकाल दिया गया है या नहीं। किसी भी देखनेवालेको दीखना ही चाहिये कि चरखा, अस्पृश्यता और हिन्दू-मुसलमानोंकी अेकताके बारेमें यहां अच्छा काम हो रहा है। अिसके

अलावा दूसरी बातोंमें तुम पास हो जाओ, तो अुसमें कुछ नहीं — तुमने महाविद्यालयमें बिताये हुअे वर्ष व्यर्थ ही गवाये।

नवजीवन, १०–८–'२४

२

[तिलक विद्यापीठके पदवीदान-समारंभके मौके पर दिये हुअे भाषणसे।]

तुम जो विद्या सीख रहे हो अुसका अुद्देश्य स्वराज्य है। गुजरातमें मैं जो कुलपति बनकर बैठा हूं, तो वह भी स्वराज्यके लिअे लड़नेवालेकी हैसियतसे बैठा हूं और अिस मकसदसे बैठा हूं कि विद्यार्थियोंको स्वराज्यके सिपाही बनाकर निकालूं। मैं ६ अगस्त, १९१४ के दिन विलायतमें अुतरा था। वहां मैंने क्या देखा? जैसे-जैसे लड़ाअी बढ़ती गअी, वैसे-वैसे तमाम 'क्लिास' बन्द होती गअी। ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिजमें भी पढ़ाअीका काम बहुत कुछ बन्द हो गया। विद्याको अुन्होंने लड़ाअीके मुकाबलेमें गौण स्थान दिया। और दें भी क्यों नहीं? विद्याका फल ही यह है कि विद्यार्थी बढ़िया नागरिक बनें, अुत्तम देश-सेवक बनें और देश, समाज और गृहस्थाश्रमको सुशोभित करें।

* * *

कोअी नया आया हुआ अंग्रेज यहांकी सरकारी संस्थाओंको देखकर तुम्हारी संस्था देखने आवे, तो यहां क्या देखनेकी आशा रखेगा? क्या वह तुम्हारे मकान देखेगा, विद्वान शिक्षक देखेगा, तुम्हें अंग्रेजीमें बोलते हुअे सुननेकी अुम्मीद रखेगा? नहीं, वह यहां कोअी नअी तसवीर देखनेकी आशा रखेगा। दूसरी सब संस्थाओंमें अुसे कताअी देखनेको नहीं मिली होगी; यहां वह कताअी-बुनाअी देखना चाहेगा। तुम्हारे आंगनमें कपास पैदा होती देखना चाहेगा। तुम्हारा सूत देखना चाहेगा और अच्छा सूत देखेगा, तो मनमें कहेगा कि मैंचेस्टर पर आफत आ रही है। मोटा सूत देखेगा तो कहेगा कि मैंचेस्टरको चिन्ता नहीं। वह तुमको साहब बने हुअे देखनेकी अुम्मीद नहीं रखेगा; वह तुम्हें गरीबों जैसे देखनेकी आशा रखेगा।

तुम्हें अपनी भाषामें ही कामकाज चलाते हुअे देखनेकी आशा रखेगा।... तुम्हारे लिये अच्छी अंग्रेजी बोलनेवाले शिक्षक मिलें, अिसमें कुछ नहीं। हिन्दी या मराठीके जरिये पढ़ानेवाले, भिखारी, धार्मिक, सब कुछ त्याग करनेवाले *शिक्षक तुम्हारे यहां हों, यही तुम्हारा भूषण है।* भले ही विद्वत्तामें वे औरोंसे हार जाय। मैं तुमसे यही चाहता हूं कि तुम विद्यापीठकी मर्यादा जान लो और अुसके ध्येयको अच्छी तरह समझ लो।

नवजीवन, १४-९-'२४

९

राष्ट्रीय शालाकी जिम्मेदारी

[बेलगाव कांग्रेसके सभापतिपदसे दिये हुअे भाषणसे।]

जनता शायद न जानती हो कि खादीसे दूसरे ही नम्बर पर राष्ट्रीय शिक्षण-संस्थाओंका कार्य सबसे ज्यादा सफल साबित हुआ है। ये संस्थायें *मुट्ठीभर रह जायं, तो भी बन्द नहीं की जा सकती।* अिन स्कूल-कॉलेजोंको बनाये रखनेकी हरअेक प्रान्तकी टेक होनी चाहिये। असहयोगके मुलतवी होनेका कोअी भी बुरा नतीजा अिन संस्थाओं पर न पडना चाहिये। अुलटे, *अिन संस्थाओंको कायम रखने और मजबूत बनानेकी बहुत बड़ी कोशिश* होनी चाहिये।... सारे देशमें बढ़ियासे बढ़िया और मूक कार्य असहयोगी विद्यार्थियोंने ही किया है। अुनके त्यागका अन्दाजा नहीं है। दुनियावी *खयालसे तो शायद अुन्होंने अपने अुज्ज्वल 'केरियर'को तिलांजलि दी है,* पर मैं कहता हूं कि राष्ट्रीय दृष्टिसे अुन्होंने जितना खोया अुससे ज्यादा पाया है। अुन्होंने सरकारी स्कूल-कॉलेज छोड़े, क्योंकि अिन संस्थाओंके *जरिये ही पंजाबमें देशकी नौजवान पीढ़ीका अपमान और बेअिज्जती की* गअी थी। अिन्हीं संस्थाओंमें हमारी गुलामीकी पहली जंजीरें तैयार होती हैं। अिससे अुलटे, हमारी राष्ट्रीय शालायें कितनी ही कमजोर क्यों न हों, पर वे *हमारी आजादीके पहले हथियार बनानेवाले शस्त्रागार हैं।*

असलमें तो अिन राष्ट्रीय शिक्षण-संस्थाओंमें पढ़नेवाले लड़के-लड़कियों पर ही हमारी अमुक आंखें भावी आशाअें पूरी होती देखनेको लगी हुअी हैं। अिसलिअे अिन शिक्षण-संस्थाओंको चलाना मैं हर प्रान्तके खजानेके लिअे पहला भार मानता हूं।

पर ये संस्थाअें सचमुच राष्ट्रीय तभी कहला सकती हैं जब वे हिन्दू-मुसलमानोंकी अेकदिलीको मजबूत करनेवाले सच्चे साधन बन जायं और हिन्दू लड़के-लड़कियोंको यह मानना सिखायें कि अस्पृश्यता हिन्दू धर्मके लिअे तो कलंक है ही परन्तु मानव-जातिके खिलाफ भी अेक बड़ा भारी गुनाह है। अिन्हीं संस्थाओंमें बढ़िया कातने और बुननेवाले तैयार किये जायं। अगर कांग्रेस चरखे और खादीकी शक्तिके बारेमें अपनी श्रद्धा कायम रखे, तो हम यही आशा रखते हैं कि अिन संस्थाओंमें चरखेके सम्पूर्ण शास्त्रका विकास होगा। अिसके सिवा ये शिक्षण-संस्थाअें स्वदेशी तो कारखाने ही होंगी। अिसके मानी कोअी यह न समझे कि अिन स्कूल-कॉलेजोंमें पढ़नेवाले बच्चोंको अक्षरज्ञान बिलकुल ही नहीं दिया जायगा। मैं अितना जरूर कहूंगा कि बुद्धिके विकासके साथ-साथ शरीरकी मेहनत और दिलकी तालीम भी होनी चाहिये। हरअेक राष्ट्रीय शिक्षण-संस्थाकी कीमत और अुपयोगिता अुसके विद्यार्थियोंकी बुद्धिमत्ताके तेजसे नहीं बल्कि राष्ट्रीय चरित्र, पींजन, चरखा और करघा चलानेकी होशियारीसे ही आंकी जायगी। अिसी तरह हालांकि मैं नहीं चाहता कि कोअी भी राष्ट्रीय स्कूल या कॉलेज बंद हो, फिर भी जो स्कूल या कॉलेज हिन्दुओंके अलावा दूसरी कौमोंके बच्चोंको लेनेकी परवाह नहीं करता या जिसका दरवाजा अछूतोंके लिअे बंद है या जिसमें कातने-धुननेका काम शिक्षाका अनिवार्य अंग नहीं है, अैसे स्कूल या कॉलिजको बंद करनेमें मैं अेक क्षण भी सोचनेके लिअे नहीं ठहरूंगा। शालाके मत्थे पर 'राष्ट्रीय' शब्द लिखा है, या अुसका किसी सरकारी युनिवर्सिटीसे सम्बन्ध नहीं है, या अुस पर और किसी तरहसे सरकारका काबू नहीं है, सिर्फ अितनेसे ही संतोष मान लेनेके दिन अब जाते रहे।

अेक दूसरी बात भी यहां कर लेता हूं। बहुतसी राष्ट्रीय संस्थाओंमें अब भी मातृभाषा और हिन्दी भाषाकी तरफ लापरवाही दिखाअी

जाती है। बहुतसे शिक्षकोंने अभी तक मातृभाषाके या हिन्दुस्तानीके जरिये शिक्षा देनेका महत्त्व नहीं समझा है।

नवजीवन, २६-१२-'२४

१०
शिक्षामें क्या होना चाहिये?

१

['सच्ची शिक्षा' नामक लेखसे।]

डॉक्टर सुमन्त मेहताका नीचे लिखा पत्र मेरे हाथोंमें मेरे अिस बारके दिल्लीके सफरमें पड़ा :

". . बम्बओ युनिवर्सिटीके कॉलेज जिस तरहकी तालीम देते हैं, अुस तरहकी तालीम देनेके लिअे हमारा महाविद्यालय नहीं है। फिर भी जानमें या अनजानमें हम अुसीकी नकल कर बैठे हैं।

"*महाविद्यालयमें राष्ट्रीय सैनिक या समाज-सेवक तैयार करने चाहियें।*

सैनिक — राजनीतिक कामके लिअे।

समाज-सेवक — और सब कामोंके लिअे।

(यह मान लेना चाहिये कि राजनीतिक और सामाजिक कामके बीच कोओ चीनी दीवार नहीं है।)

"मेरे खयालसे सबसे बड़ा फायदा यह हुआ है कि खादीके कामके कारण हमारे पढ़े-लिखे लोग गांवोंमें छावनी डाले पड़े हैं। अिन छावनियोंमें जो सेवक जायंगे, अुनके लिअे महाविद्यालयकी थियोरेटिकल (विचारात्मक) शिक्षा सचमुच जरूरी नहीं। अिन छावनियोंमें :

(१) खादी कातनेसे लगाकर बुनने और बेचने तक

(२) *दुनियादारीके रीति-रिवाजका खर्च*

(३) सहकारी समिति — हर तरहकी

(४) राष्ट्रीय शिक्षा — व्यायाम

(५) लोगोंकी सेवा — अछूतोद्धार, शराबबन्दी वगैरा कामोंके लिअे समाजकी सेवाकी जो तालीम दी जानी चाहिये, अुसकी कोअी योजना नहीं है। अिस तरह जो कुछ है वह जरूरी नहीं, और जो नहीं है अुसकी जरूरत है।

"अब अिस तरहकी शिक्षा पाये हुअे हर विद्यार्थीका भविष्यमें काम (केरियर) मिल सकता है। अैसे नौजवान भील, अछूतों, कालीपरज, या मामूली देहातमें काम कर सकते हैं।

"अगर अैसे मण्डलों और महाविद्यालयके साथ सबंध रहे, तो हर स्नातकको काममें लगाया जा सकता है। आज गुजरातमें क्या हालत है? जितने चाहिये अुतने सिपाही और सेवक नहीं हैं। महाविद्यालय अुन्हें तैयार करे और मण्डल अुन्हें खुशीसे काममें लगायें।

"अिस तरह हम 'मिशन' कायम कर सकते हैं। राजनीतिक कामके लिअे हम 'छावनियां' डाल सकते हैं।

"अुन्हें कथा-कीर्तन करनेका ज्ञान दिया जा सकता है। जादूकी लालटैनका काम सिखाया जा सकता है। लेकिन अिस तरहकी शिक्षा देनेके बजाय हमने व्यापार, संस्कृत, तत्त्वज्ञान, अर्थशास्त्र और साहित्यके वर्ग खोले हैं।

"मैं आपसे कहता हूं कि मैं यह मानता हूं कि महाविद्यालयका काम गुजरात कॉलेजसे अुत्तम है। वहां :

(१) शिक्षक और विद्यार्थियोंका संबंध गहरा है।

(२) शिक्षाका दृष्टिबिन्दु दूसरा है।

(३) वातावरण साफ है।

"अितने पर भी मैं मानता हूं कि हमें होडमें नहीं पड़ना है। पड़नेसे फायदा नहीं। आपको ये विचार मंजूर न हों तो मैं मजबूर हूं। अगर आप किसी हद तक अुन्हें मंजूर करेंगे, तो मैं अिस तरहका पाठ्यक्रम तैयार करनेमें मदद दूंगा, क्योंकि मुझे अनुभव है।"

अिस पत्रका मैं स्वागत करता हूं। आचार्य गिदवाणीने अिसके मूल विचार पर अमल किया था। यानी अुन्होंने स्नातकोंको अलग-अलग

जगह समाजकी सेवाके लिअे लगाया था और अुनके साथ सम्बंध कायम रखा था। यह चीज पाठ्यक्रमका अंग नहीं थी, पर व्यक्तिगत थी— प्रयोगके रूपमें थी। डॉक्टर साहब अुसे स्थायी स्वरूप देना और पढ़ाअीका हिस्सा बनाना चाहते हैं, यह ठीक है। जिस पत्रसे मैं अैसी ध्वनि निकलती देखता हूं कि अभीके पाठ्यक्रमके बजाय डॉक्टर साहबकी योजना रखी जाय।

मुझे तो यह पसन्द होगा। मगर महाविद्यालयका अभीका क्रम बिलकुल रद्द कर देना अच्छी नहीं, और जरूरी हो तो भी सम्भव नहीं है। अभीका क्रम तैयार करनेमें विद्यार्थियोंके रुख पर ध्यान दिया गया है। दूसरे प्रान्तोंके मुकाबले गुजरातमें सेवाकी वृत्ति देरसे जगी है। जिसलिअे सेवाके लिअे जरूरी पढ़ाअीकी अिच्छा हर विद्यार्थीमें जल्दी पैदा नहीं होगी। फिर, समाजकी सेवाके साथ ही आजीविकाका सवाल लगा हुआ है। यह विचार मुख्य रहता है कि पढ़ाअी आजीविकाके लिअे है। अिसके सिवा, अगर अकेला आजीविकाका हेतु ही होता तो भी वह कुछ माफीके लायक गिना जाता। लेकिन पढ़ाअीमें तो यह मकसद भी रहता है कि रुपया पैदा हो और अधिकार भी मिले। जब तक यह विचार न बदलेगा, तब तक अुसूलके खयालसे हमारे पाठ्यक्रममें दोष ही रहेगा। अुसमें अेकाअेक फेरबदल होना मैं मुश्किल समझता हूं, पर धीरे-धीरे अुस विचारको गौण बनाना जरूरी और बिलकुल संभव मानता हूं।

विद्यापीठको भी अपने विद्यार्थियोंको समाजकी सेवाका काम करनेके क्षेत्र देने पड़ेंगे और अैसे साधन तैयार करने पड़ेंगे जिनसे अुनका गुजारा हो सके। आजीविका विद्याका लक्ष्य न होना चाहिये, पर विद्याका फल तो होना ही चाहिये। विद्याका हेतु आत्म-विकास है। जहां आत्म-विकास है, वहां आजीविका तो है ही।

यह भी देखा जाता है कि विद्यार्थियोंको अंग्रेजीके ज्ञानके बिना सन्तोष नहीं होता। साहित्यकी जानकारीकी भी वे आशा रखते हैं। अिसमें कोअी नुकसान तो है ही नहीं। सिर्फ अितना देख लेना है कि वह अुनके लिअे मूर्तिपूजा न बन जाय, वही ध्येय न हो जाय, वह स्वच्छंदताका रूप न ले ले। यह अपनी जगह शोभा देनेवाली चीज जरूर है और अुसके लिअे स्थान भी है ही।

यह तो नहीं कहा जा सकता कि सरकारी युनिवर्सिटियोंका क्रम सिर्फ नुकसानदेह ही है। मुझे यह नहीं लगता कि अुसमें सभी कुछ त्याज्य है। वहाकी तोतेकी-सी रटाअी, मातृभाषाकी मनाही, अंग्रेजीका आडंबरी ज्ञान, अितिहासकी अिकतर्फा पढाअी, पुरानी सभ्यताकी लगभग अुपेक्षा, संयमकी कमी — ये सब और अैसी ही दूसरी बातें छोड़ने लायक हैं।

अिसलिअे मैं मानता हूं कि विद्यापीठके पाठ्यक्रममें सुधारके लिअे बहुत गुंजाअिश है। पर यह कहना बहुत आसान है। यह सुधार करे कौन? अनुभवी तो अेक भी नहीं है। जिनके हाथमें पाठ्यक्रमकी लगाम है, वे सब सरकारी कॉलेजोंकी मोहरवाले हैं। अुनमें से कुछको अुन महाविद्यालयोंके बारेमें विराग पैदा हुआ; लेकिन नया ज्ञान या नया अनुभव कहासे आये? अिसलिअे राष्ट्रीय पाठ्यक्रमोंमें खामियां पाअी जाती हैं। आचार्योंने हर जगह फेरबदल करनेकी भरसक कोशिश की है और थोड़ी-बहुत कामयाबी भी हासिल की है।

अब डॉ॰ सुमन्त मेहताकी योजनाके बारेमें दो बातें। मैं मानता हूं कि अुस योजनासे सम्बन्ध रखनेवाला पाठ्यक्रम जारी होना चाहिये। जिसमें कुछ विषय अैसे हैं जो महाविद्यालयकी पढाअीके शुरूके समयमें ही सीखे जा सकते हैं। कुछ अैसे हैं जो अुससे पहले भी सीखे जा सकते हैं। कुछ अैसे मालूम होते हैं जो मामूली पढ़ाअी पूरी होनेके बाद सीखे जा सकते हैं। मैं डॉक्टर सुमन्त मेहताको अपनी योजना बनानेका न्यौता देता हूं। यह मैं अुनको पत्र लिखकर भी कर सकता था। अिस बारेमें यहां चर्चा करनेका कारण यह है कि शिक्षक और शिक्षित वर्ग अुस पर विचार करें, अुस विषयकी चर्चा करें और डॉ॰ सुमन्त मेहताको मदद दें। हमारे पास विचारक थोड़े हैं। जो हैं भी वे अपने-अपने क्षेत्रमें फंसे हुअे हैं। दिन-दिन यह हालत बढती जाती है और बढनी चाहिये। हर आदमी हरअेक विषयमें हाथ डालने लगे, तो वह अुस विषयके साथ या खुद अपने साथ न्याय नहीं कर सकता। क्षेत्र पसन्द करनेके बाद अुसकी साधना किये बिना हम जैसा चाहिये वैसा फल नहीं पा सकते। अिसलिअे योजनाको पार लगानेका भार तो डॉक्टर साहबको ही अुठाना

पड़ेगा। अुनकी मदद विचारशील शिक्षक और विद्याप्रेमी समाज-सेवक लोग करेंगे। मेरा काम दोनोंको मिलानेका और कुछ अपनी राय देनेका था। डॉक्टर साहब खुद अेक सालके लिअे क्षेत्र-सन्यास लेकर पेटलादमें बैठ गये हैं। वहां अुन्हें अपनी योजनाका प्रयोग करनेकी फुरसत मिल गअी है। अिसलिअे योजनाका विकास कर सकना अुनके लिअे कुछ आसान होगा।

यह दूसरी बात है कि योजना पक्की हो जानेके बाद अुस पर अमल करनेवाले शिक्षकोंकी जरूरत होगी। मुझे भरोसा है कि मौका आने पर वे मिल जायंगे।

नवजीवन, ८-२-'२५

२

शिक्षाके अेक अनुभवी लिखते हैं

"मैं यह मानता हूं कि राष्ट्रीय शालाओंके लिअे कांग्रेसके फैसले बन्धनकारी होने चाहियें। पर कांग्रेसको भी यह आग्रह रखना चाहिये कि राष्ट्रीय शिक्षाको राजनीतिक स्पर्धाकी शर्त न बनाया जाय। राष्ट्रीय शिक्षाका मकसद सिर्फ ब्राह्मण तैयार करना ही नहीं, बल्कि सभी वर्णोंके आदमियोंको अपने-अपने वर्ण-धर्मके लिअे तैयार करना होना चाहिये। यह ठीक नहीं कि विद्यापीठके महाविद्यालयमें धन्धोंकी तालीम और विज्ञानका कुछ भी स्थान न हो। हम भाषा अितिहास, अर्थशास्त्र पढ़ाते हैं, तो रसायन, खेती, भौतिक विज्ञान क्यों न पढ़ायें? यह कहा जाता है कि हम विद्यार्थीके व्यक्तित्वका जो विकास करते हैं वह काफी है। क्योंकि अैसे विकास वाला आदमी अपना गुजर कर सकेगा। यह बात मान ली जाय तो भी धुद्योग और विज्ञानकी शिक्षा बेकार नहीं है। यह बात है है ही नहीं कि अिन विषयोंमें मनुष्यकी शक्ति खराब होती है अिनमें कुछ खास शक्तियां, जैसे अवलोकन-शक्ति, तर्कशक्ति वगैराका विकास होता है। जनताके जीवनमें विविध अुपयोगी कार्यों धन्धोंकी सारी पैदावारको ठीक रूप देनेकी विधियां या तरकीबें भी

शामिल हैं। जैसे अच्छा जुलाहा देशका सेवक बन सकता है, अच्छा आचार्य देशसेवक बन सकता है, वैसे अच्छा किसान, बढ़ओ, लुहार वगैरा भी बन सकते हैं। जैसे ये सब कारीगर राष्ट्रके अंग हैं, वैसे ही अुनके धंधे भी राष्ट्रीय शिक्षामें शामिल किये जा सकते हैं। सरकार सिर्फ शूद्र तैयार करती है, अिसलिअे अुसकी शिक्षा दोषपूर्ण है। यदि हम भी सिर्फ ब्राह्मण तैयार करेंगे, तो हमारी शिक्षामें भी दोष रहेगा। अगर यह कहा जाय कि सिर्फ अध्यात्म विद्या या महज कातनेसे ही देशका अुद्धार हो जायगा और वही सच्ची शिक्षा है तो यह अेकांगी कथन है। यह कहना सहल है कि शिक्षाका हेतु आदमीको सच्चा सेवक बनना सिखाना है, लेकिन सारे जनसमाजको किसी खास अुग्र क्रममें स्वावलम्बी बनाना कितनी मुश्किल बात है यह अनुभवसे फौरन् मालूम हो जाता है। मनुष्य-स्वभावकी तमाम कमजोरी सिर्फ अुपदेशसे या आदर्श सामने रख देनेसे ही दूर हो जाय, तो अीश्वरको शायद ही अवतार लेना पड़े!"

पढ़नेवाले देखेंगे कि ये विचार डॉ० सुमन्त मेहताके विचारोंसे अुलटे हैं। दोनोंमें सचाअी है। दोनों पर अमल हो तो अच्छा। मगर अच्छा होनेसे ही सब कुछ करनेकी हमारी शक्ति हमेशा नहीं होती। शिक्षाको स्थायी रूप तो अनुभव ही देगा। रसायन वगैराकी तालीम हम अभी नहीं दे रहे हैं, अुसका कारण अुस विषयके प्रति लापरवाही नहीं है, बल्कि हमारे पास सामानकी कमी है। अिसीलिअे निहायत जरूरी चीजोंको तुरंत जगह दी गअी है। चरखा मेहनतकी निशानी है। जब वह अपनी जगह निश्चित होकर बैठ जायगा, तब लुहार, बढ़ओ वगैराके शास्त्रोंको और अुनकी शिक्षाको अपने आप स्थान मिल जायगा। अिसमें शक नहीं कि हमारी कोशिश चारों वर्णोंको अिसमें शामिल करनेकी होनी चाहिये। और मैं तो देख रहा हूं कि हम अुस तरफ जा रहे हैं। अगर सब शिक्षाशास्त्री राष्ट्रीय शिक्षा पर भरोसा रखेंगे, और बेफिक्र होकर श्रद्धाके साथ अपनेको मिला हुआ काम करते रहेंगे, तो जो सुधार चाहिये वे अपने-आप हो जायेंगे। जहां दयानत है वहीं बरकत है। अपने

दौरोंमें मैं अेक ही चीज देखता हूं। अैसे कामोंमें लोग रुपया देनेको तैयार हैं, लगभग अधीर हैं। पर हमारे पास पक्के, काममें होशियार आदमी बहुत ही थोड़े हैं।

नवजीवन, ८-३-'२५

११

अेक शिक्षककी परेशानी

खादी-प्रचारको स्वराज्यके लिअे अनिवार्य माननेवाले स्कूलोंमें खादी लाजिमी करनेके खिलाफ अेक शिक्षक नीचे लिखी दलीलें देते हैं :

> १. "आसपासके कुटुम्बियों और पड़ोसियोंके रंग-बिरंगे विलायती कपड़ोंसे मोहित होकर नासमझ बच्चे खादीको आफत समझकर अपनाते हैं और अिस तरह बचपनमें ही ढोंगी बनना सीखते हैं। आपका यह कहना हो कि जिस स्कूलमें ज्यादातर विद्यार्थी खादी पहनते हैं, वहां अैसे बच्चे भी कुदरती तौर पर खादी ही पहनना पसन्द करेंगे, तो नासमझ अुम्रमें लाजिमी नियमसे खादीको नागवार बनानेके बजाय स्कूलमें भरती होनेके बाद कुदरती तौर पर वैसा होने देना और अैसा होनेके लिअे थोड़े दिन धीरज रखनेकी जरूरत हो तो वह भी रखना ज्यादा अच्छा है।"

'लाजिमी' शब्दका यहां अनर्थ हुआ है। अगर राष्ट्रीय स्कूलमें आना लाजिमी हो और फिर खादी पहननेका नियम भी लाजिमी हो, तो खादीका अिस्तेमाल शायद बेजा तौर पर 'लाजिमी' हुआ माना जा सकता है। मैं यहां 'शायद' शब्द काममें लेता हूं, क्योंकि अनिवार्य शिक्षा होने पर भी स्कूलमें भरती होनेकी कुछ शर्तें तो होंगी ही। यह कहना मुश्किल है कि वे शर्तें बेजा ही होंगी। वहां लड़कोंके लिअे कुछ खास विषय पढ़ना लाजिमी होगा। साथ ही यह फर्ज भी होगा कि वे साफ होकर आयें, मैले कपड़े पहनकर न आयें, नंगे न आयें, रंग-बिरंगे

ौर हंसी आने लायक कपड़े पहनकर न आयें। ये सब फर्ज होंगे, समीलिअे अुन्हें कोअी अनुचित कहनेकी हिम्मत नहीं कर सकता।

मुझे अैसा जान पड़ता है कि खादीके बारेमें जिसमें पक्का विश्वास हीं जमा है, अुसीके सामने मरजी या लाजिमीका सवाल खड़ा होता । मा-बापको अच्छा लगे या न लगे, पड़ोसियोंका बरताव अनुकूल ो या प्रतिकूल, कुछ बातें अैसी हैं जिनके बारेमें बच्चों पर पाबंदी गाये बिना काम नहीं चलेगा। जैसे, जंगलसे आया हुआ बच्चा बिलकुल ंगी हालतमें होगा तो हमें अुसे कपड़े पहनाने ही पड़ेंगे, फिर भले ही ह अपने घर जाकर नंगा हो जाय। बच्चेकी जबान गंदी होगी तो हमें ुसे रोकना ही होगा। अैसी कअी लाजिमी पाबंदियां हरअेक शिक्षक ीक समझ सकता है और अुनके विरुद्ध अूपरके शिक्षककी अेक ी दलील काम नहीं आयगी। यानी जो ढंग समाजमें घर कर चुका ै, वह ढंग अनिवार्य होने पर भी अनिवार्य नहीं माना जाता।

बात यह नहीं कि कुदरती तौर पर खादी पहनाने थक जानेके कारण अब अुसे लाजिमी करना पड़ रहा है, बल्कि मेरे जैसे कुछ लोगोंको अैसा लगता है कि लाजिमी करने लायक वातावरण अब पैदा हो गया है, अिसलिअे राष्ट्रीय पाठशालाओंमें खादी और कताअी लाजिमी की जा रही है। अकसर समाजका मन तैयार हो जाता है, पर शरीर तैयार नहीं होता, अिसलिअे भी समाज अनिवार्य बंधनोंको मान लेता है। अिस तरह हम 'लाजिमी' शब्दका अर्थ समझ लें तो बहुतेरी परेशानियां हल हो सकती हैं। लाजिमीके मानी यह हैं कि जो पाबन्दियां सत्ता या हुकूमत अपनी ताकतसे रैयत पर अुसकी मरजीके खिलाफ लगाये, अुन्हें रैयत न माने तो अुसे सजा दी जाय। अगर यह व्याख्या मान ली जाय तो लाजिमी बंधनोंके बारेमें जो चर्चा अूपरोक्त शिक्षकने की है अुसकी बुनियाद नहीं रह जाती।

२. "समझानेसे, प्रेमसे और होड़से पहनी हुअी खादी ज्यादा चिरंजीव होती है। बच्चोंमें होड़ और देखादेखी होती है। अिसलिअे अूपर बताये हुअे अुपायोंसे ज्यादातर विद्यार्थियोंके खादी पहनने लग जानेके बाद खादीका वातावरण जम जायगा। अैसी हालतमें जो

नये या खादी न पहननेवाले भरती होंगे, वे भी अपने-आप खादी पहनने लगेंगे। हां, शायद पहले ही दिन जैसा न हो। चाहे देरसे ही सही, पर अपने-आप अपनाओ हुई खादी अुनके दिल पर जो जबरदस्त असर करेगी, अुसे देखते हुअे क्या पहले ही दिन अनिवार्य रूपमें खादी पहनानेमें थोड़े दिन धीरज रखनेका तरीका मूल अुद्देश्यके लिअे कम सहायक है?"

हमारी लाजिमी खादीमें समझाना, प्रेम और होड वगैरा तो हैं ही। खादीको लाजिमी बनानेका भार शिक्षक पर है, बच्चों पर नहीं। बच्चोंका शिक्षक सिपाहियोंकी तरह हुक्म नहीं देगा, बल्कि बच्चोंका दिल जीतनेके लिअे वह अपनी कला भरसक काममें लेगा। *'पहले ही दिन'* खादी पहनानेकी यहां बात ही नहीं। पर चार बरस बाद खादी पहनानेकी बात है। 'लाजिमी' शब्दकी पाबन्दी शिक्षक पर है। वह शिक्षकका ध्यान अुसके फर्जकी तरफ खींचता है। अिस तरह 'धीरज रखनेका तरीका मूल अुद्देश्यके लिअे कम सहायक है' या ज्यादा, यह सवाल ही खड़ा नहीं होता। धीरज तो शिक्षकका गुण है ही या होना चाहिये।

३ "लाजिमी खादीका नियम मरजीसे खादीको फैलानेकी असफलताका ढिंढोरा है। क्या यह संभव है कि पाठशालाओंमें अपने आप खादी न फैलनेके कारण ढूंढकर अुन्हें सुधार लेनेके बजाय *लाजिमी खादीके नियमसे अुसमें ज्यादा कामयाबी होगी? मरजीसे* खादी पहननेका प्रयोग असफल हुआ, यह कहकर लाजिमी खादीका नियम बनाना गलत है। मरजीसे पहननेके प्रचारमें लापरवाही रखनेका अिलाज अनिवार्यताके नियमसे कैसे हो सकता है?"

अिस शंकाका जवाब अूपर आ जाता है।

४. "प्रसाद — खाने — के लिअे तिलक-छापे लगानेवाले ढोंगियोंकी कमी नहीं। क्या अनिवार्य खादीके नियमसे पाठशालामें घुसनेके लिअे ही खादी अिस्तेमाल करनेवाले ढोंगियोंकी तादाद *नहीं बढ़ेगी? खादीका सच्चा प्रचार अैसे फैले हुअे किन्तु आडम्बरी* खादी परिधानसे बढ़ेगा या थोड़ा होने पर भी दिलसे माने हुअे सच्चे खादी-प्रेमियोंसे? क्या अनिवार्य खादीके सिवा और कोअी

खादीका प्रचार कर सकनेवाला अैसा अच्छा और कारगर तरीका नहीं है, जिसमें आडम्बर न आ सके?"

अगर ढोंगका डर बच्चोंके बारेमें हो तो अुसे मैं नहीं मानता। बच्चे आडम्बरी नहीं होते। शिक्षकके बारेमें अैसा अन्देशा हो सकता है। लेकिन जहां थोड़ा या बहुत नियम-पालन होता है वहां ढोंग तो आ ही जाता है। अुसकी दवा वातावरणकी सफाअी है, नियमोंका हटाना नहीं।

५. "राष्ट्रीय स्कूलोंकी हस्ती स्वराज्य लेनेकी शर्तें जिन (या जिनके) बच्चोंने पूरी की हों अुन्हींके लिअे है या अुन लोगोंके लिअे जिन्होंने अभी ये शर्तें पूरी नहीं की हैं, लेकिन जो वहां पढ़कर ये शर्तें पूरी कर सकते — *करना सीख सकते* — हैं? *अनिवार्य खादीके खयालसे* तो जिन्होंने स्वराज्यकी शर्तें पूरी की हों अुन्हींके लिअे राष्ट्रीय पाठशाला हुअी, तो फिर जिन्हें अभी अुसके लिअे तालीम देनी है, अुनके लिअे कौनसी पाठशाला है?"

राष्ट्रीय स्कूलोंके अस्तित्वके दो कारण हैं: अेक तो जिन पर राष्ट्रीयताका रंग चढ़ा है अुनके लिअे सुभीता करना, और दूसरा, जिन पर रंग नहीं चढ़ा अुन पर शुद्ध अुदाहरण बनकर रंग चढ़ाना। जिन पर रंग नहीं चढ़ा, अुनके लिअे राष्ट्रीयताका रंग कम करके अुन्हें भुलावेमें डालनेका हेतु तो हो ही नहीं सकता। जैसे-जैसे राष्ट्रीय स्कूलोंके शिक्षकों और लड़कोंका चरित्र बनता और दीखता जायगा, वैसे-वैसे दूसरे लोग अुनमें आनेको ललचाये बिना नहीं रहेंगे।

६. "नियम जालका जड़ स्वरूप पकड़ बैठते हैं। खादी न पहननेवाले बच्चोंके लिअे स्कूल ही थोड़े खादीके कपड़े तैयार रखे और अुन्हें पहनावे। कोअी खादी मुफ्त बांटे। जब तक खादी मिले तब तक बच्चे रहें। फिर संख्या बनाये रखनेके लिअे और कअी धोखेबाजियां खड़ी हो सकती हैं। आत्मा देखनेकी कोशिशमें जैसे मुर्दा हाथमें आ जाय, वैसा ही यह अनिवार्य खादीका नियम है। अिसके *बजाय खादीके प्रचारके लिअे राष्ट्रीय पाठशालाअें कैसी कोशिशें* कर रही हैं, अुसे देखते रहकर अुन्हें ताकत पहुंचाना और

लाजिमीपनके बनावटी दबावके नीचे आनेवाले जादूसे होने पर भी क्षणिक परिणामोंसे न फूलकर धीमे किन्तु कुदरती और स्थायी नतीजोंसे, जो अपने-आप पैदा हों, सच्चा अन्दाज लगाना ज्यादा सलामत है।"

नियम जाल बने या न बने, अिसका आधार नियम बनानेवाले पर है। अुसका स्वाभाविक पालन करना भी नियामक पर आधार रखता है। प्राथमिक पाठशालायें कोमल डालियां हैं। अुन्हें जिधर मोड़िये अुधर ही मुड़ जाती हैं। हमारे हाथमें वे सीधी मुड़नी चाहिये।

नवजीवन, २२-३-'२५

१२
चेतावनी

१

['मैले कपड़े' नामक टिप्पणी।]

गुजरातके अिस बारके सफरमें मैंने राष्ट्रीय पाठशालाओंमें बहुत बच्चे देखे। अुनमें से बहुतेरे अनपढ़ और मैले थे। किसीकी टोपी पसीनेसे अितनी मैली हो गयी थी और बदबू देती थी कि अुसे छूना मुश्किल था। किन्हीं ही बच्चोंकी पोशाक अशोभन थी। कोओी अितने कपड़े अपने शरीर पर लादे हुओ थे कि अिस मौसममें सहा नहीं जा सकता। कोओी पतलून पहनकर आये थे तो अुसके बटन बन्द नहीं किये थे। किसीके कपड़े फटे हुओ थे। मुझे लगता है कि जैसे छूतके रोगवाले बच्चोंको स्कूलमें आनेकी मनाही होनी चाहिये, वैसे ही जिन बच्चोंके कपड़े या शरीर मैले हों, जिनके कपड़े फटे हों, अुन्हें भी पाठशालाओंमें आनेकी मनाही होनी चाहिये। अगर यह बात मान ली जाय कि वैसा हो तो बच्चे गुजरात या [illegible] कम और कम आयेंगे, तो अिसका विचार करना है। जो बच्चा ऐसी हालतमें आये अुसे तो स्कूलके दरवाजेसे ही वापस लौटाना चाहिये, अुसके कपड़े अुसीके सामने धुलवाने चाहिये और वे कपड़े अुसे तब तक अुसे स्कूलमें

कपड़े देने चाहिये। अनके कपडे सूख जायें तब वे स्कूलके कपडे धोकर, सुखाकर और तह करके वापस दे दें। अैसा करनेसे खर्च बढ़नेका डर हो, तो बालकको चिट्ठी देकर घर भेज देना चाहिये। और वह साफ होकर आ जाय तब अुसे फिर भरती कर लिया जाय। बाहरी सफाअी और सभ्यता तो स्कूलका पहला पाठ होना चाहिये। अगर सब बच्चोंको अेक ही तरहकी पोशाक स्कूलके लिअे पहननेको मजबूर करना मुश्किल हो, तो भी चाहे जैसे और चाहे जिस तरह कपडे पहनकर आने देना तो हरगिज सहन नहीं किया जा सकता।

जो बात साफ कपड़ोंकी है, वही कवायदकी है। बच्चोंको चलना, बैठना, अुठना, हजारोंकी तादादमें चलना-फिरना भी आना चाहिये। कोअी बच्चा कूबड़ निकालकर बैठे तो कोअी पैर पसारकर बैठे, कोअी अगडाअियां ही लिया करे तो कोअी बैठा-बैठा रोया करे। और साथ-साथ चलना तो अुसे आये ही कहांसे? अिन बातोंकी तालीम भी बच्चोंको शुरूसे ही मिलनी चाहिये। अिससे बच्चे शोभा देंगे, पाठशाला शोभा देगी और अुनमें अेक तरहका अुत्साह पैदा होगा। फिर, अिस तरहकी कवायद सीखे हुअे बच्चोंको हजारोंकी तादादमें जहां ले जाना हो, वहां किसी भी मुश्किल या खलबलीके बिना ले जाया जा सकता है। अैसी अेक-दो पाठशालाअें मुझे अभी याद आती हैं, जिनमें अेक सीटी बजते ही तीन मिनटमें नौ सौ लड़के चुपचाप हाजिर हो गये और काम पूरा होने पर अुतने ही मिनटमें वे फिर अपने-अपने वर्गमें वापस चले गये थे। मानो वे बाहर ही न निकले हों!

पोशाकमें मेरे खयालसे खादीका आधा पाजामा ('निकर्स') या धोती, कुरता और टोपी काफी हैं। और जब ये धुले हुअे होते हैं, तब हजारों बच्चोंको अुसी पोशाकमें देखना अेक सुन्दर दृश्य लगता है। बहुतसे लड़के अितने कपड़ोंके अलावा कब्जा और पूरा या आधा कोट पहनते हैं और दूसरे लड़कोंसे अलग पड जाते हैं। अैसी दयाजनक हालतसे अुन्हें बचाना चाहिये।

मैं समझता हूं कि सफाअी, सुघडपन, कवायद वगैरामें ही बच्चेकी सारी शिक्षा नहीं समा जाती। अुसे चरित्र-बल मिलना चाहिये, अुसे

अक्षर-ज्ञान होना चाहिये। परन्तु बच्चोंकी शिक्षाके अेक भी हिस्सेकी तरफ हम लापरवाही नहीं रख सकते। अुनके शरीर, मन और आत्मा ये तीनों अंग सम्भालने चाहिये। अिनमें से जो अधूरा रह जायगा, वही आगे चल-कर बच्चोंको दुखदायी होगा, और जब अुन्हें अिन कमियोंका ज्ञान होगा, तब वे परेशान होंगे। अितना ही नहीं, समाज पर अुसका बहुत बुरा असर होगा। आज भी हम अपनी शिक्षाकी खामियोंका नतीजा भोग रहे हैं। हममें गंदगी अितनी ज्यादा है कि अुसके कारण प्लेग वगैरा बीमारियोंको हम जड़से दूर नहीं कर सकते। शहरोंमें साफ जीवन बिताना लगभग नामुमकिन हो गया है। हम नागरिकताके बुनियादी अुसूल भी नहीं जानते, और जो जानते हैं वे अुन्हें पालते नहीं।

नवजीवन, २६-४-'२५

२

['बम्बअी गुजराती राष्ट्रीय पाठशाला' नामक टिप्पणीसे।]

अिस पाठशालाका सालाना जलसा ८ तारीखको मनाया गया। अुसमें विद्यार्थियोंने कुछ नाटकके खेल दिखाये। . . . नाटकके खेलोंमें पोशाक विलायती कपड़ोंकी थी, यह असंगत और दुःखदायी लगता था। अैसा करनेकी कोअी जरूरत नहीं थी। लोग नाटक देखने नहीं आये थे, लड़कोंकी होशियारीकी जांच करने आये थे। नाटकोंमें जरी वगैराके जगमगाते, पर संस्कारी आंखोंको अच्छे न लगनेवाले कपड़े पहनाये जाते हैं। जहां शिक्षा देनेकी भावना हो, वहां अिन बातोंकी नकल हरगिज नहीं होनी चाहिये। बच्चोंके सामने तो शुद्ध आदर्श ही हो सकता है। हैम्लेटको विलायती पोशाककी जरूरत नहीं होनी चाहिये। हैम्लेटके समयकी पोशाक हो या हमारी कल्पनाकी। हैम्लेटको हम अपनी देशी कल्पनाके अनुसार सजा सकते हैं। अुसके भाव सार्वभौम हैं। मुगलोंकी पोशाक जैसी थी वैसी हो या वह भी हमारी कल्पनाकी हो सकती है। हमें तो खादी प्यारी है और जो भी प्रयोग किये जायं वे सब खादीके साथ होने चाहिये। मुझे रंग-भूमिके परदे भी पसन्द नहीं आये। मेरा बस चले तो मैं रंगभूमिके परदे भी काममें न लूं, बल्कि खादीके परदेकी कुछ न कुछ कलामय व्यवस्था

करूं। पर यह तो जहां खादीमें बहुत प्रेम और अुसका विचार हो वहीं हो सकता है। ये दोनों चीजें राष्ट्रीय स्कूलके नेतामें न हों तो कहां हो? परमात्मा करे राष्ट्रीय पाठशालाअें भविष्यके आदर्श बनावें, गंगोत्री और जमनोत्री बनें और वहांसे शुद्ध विचार और शुद्ध व्यवहार प्रगट हो।

नवजीवन, १३-१२-'२५

३

[स्वामी श्रद्धानन्दजीके गुरुकुल, कांगड़ीके रजत महोत्सवके समय हुअी राष्ट्रीय शिक्षा परिषद्के अध्यक्षकी हैसियतसे दिये हुअे भाषणकी श्री महादेवभाअीकी रिपोर्टसे।]

गांधीजीने कहा कि जो संस्था दूसरी कौमोंके लिअे द्वेष पैदा करती हो अुस संस्थाका नाश हो। अुन्होंने बताया कि 'दया धर्मका मूल है, पाप मूल अभिमान' अिसी बात पर अैसी संस्थाओंका ध्यान लगा रहना चाहिये। यह भी बताया कि धर्मके सार्वत्रिक मूल सिद्धान्तों पर जोर देनेकी जरूरत है, और ये मूल सिद्धान्त भूल जाय तो मनुष्य मनुष्य न रह कर पशु बन जाता है।

अंतमें संस्कृत और फारसीकी पढ़ाअीके बारेमें अुन्होंने कहा

'संस्कृत सीखना हरअेक हिन्दुस्तानी विद्यार्थीका फर्ज है। हिन्दुओंका तो है ही, मुसलमानोंका भी है, क्योंकि आखिर तो अुनके पुरखे भी राम और कृष्ण ही थे और अुन्हें जाननेके लिअे संस्कृत जानना चाहिये। लेकिन मुसलमानोंके साथ संबंध रखनेके लिअे अुनकी भाषाको जानना हिन्दुओंका भी फर्ज है। हम आज अेक-दूसरेकी जबानसे दूर भागते हैं, क्योंकि हम पागल हो गये हैं। यह निश्चित समझना कि जो संस्था अेक-दूसरेसे द्वेष और डर रखना सिखाती है वह राष्ट्रीय नहीं।'

नवजीवन, २७-३-'२७

अमर आशा

१

[पदवीदान-समारम्भके अवसर पर पुरस्कारके नाते दिये गये भाषणसे।]

आज महासभाने निर्णय दिया, अुस वक्त हमने देखा कि अिन विद्यापीठकी चार सालकी जिन्दगीमें सफलता घटती जा रही है। मामूली तौर पर अिससे निराशा होती है। लेकिन मुझे निराशा नहीं हुअी। अितना मैं मानता हूं कि हम विद्यार्थियोंकी ज्यादा तादाद बना सके होते या दूसरी तरह जिसे दुनिया प्रगति कहती है वैसी प्रगति बता सके होते तो मैं खुश होता। यह नहीं कह सकता कि आजकी हालतमें मैं खुश हूं, पर मैं ना-अुम्मीद नहीं होता। मैंने और दूसरे बहुतसे आदमियोंने यह अुम्मीद तो जरूर रखी थी कि यह काम हमें अेक ही वर्ष चलाना पड़ेगा और अेक सालके बाद जिन संस्थाओंसे तुम लोग निकले हो अुन्हींमें शिक्षा पाने लग जाओगे। अेकके बजाय चार वर्ष हो गये और अब कितने वर्ष और यह देशनिकाला भोगना पड़ेगा, यह कुछ कहा नहीं जा सकता। मैं तो अब यह राय रखने लगा हूं कि यह देशनिकाला ही नहीं है। शायद स्वराज्य मिल जायगा, तब भी अैसी कितनी ही संस्थाअें सरकारसे स्वतन्त्र चलेंगी। अुस वक्त फर्क अितना ही होगा कि अिन संस्थाओंको सरकारी संस्थाओंके साथ होड़ नहीं करनी पड़ेगी, सरकारी संस्थाअें विरोधी नहीं मानी जायंगी, त्याज्य नहीं मानी जायगी। पर अुस समय भी बहुतसे प्रयोग तो होते ही रहेंगे, जिनमें अिन विद्यापीठों और महाविद्यालयोंका भी स्थान रहेगा। अिसलिअे मुझे अुम्मीद है कि जो विद्यार्थी महाविद्यालयमें और विद्यापीठके आश्रयमें पढ़ते हैं, वे किसी तरह निराश न होंगे और यह न मानेंगे कि यहां पढ़कर हमने अितने साल बेकार गंवाये।

* * *

राष्ट्रीय विद्या-मंदिरकी गिनतीमें वही शाला आ सकती है, जिसमें चरखेका काम चलता हो, जिसमें शिक्षक और विद्यार्थी आध घंटे

खा चलाते हैं और दोनों हाथकी कती और बुनी हुअी खादी ही नते हैं, जिसमें मातृभाषा या हिन्दुस्तानीके जरिये शिक्षा दी जाती है, समें व्यायामको पूरा स्थान है, जिसमें खुदके बचावकी कला भी सिखाअी ती है, जिसमें हिन्दू-मुसलमानोंके दिल अेक करनेकी कोशिश की जाती और जिसमें अछूतोंका किसी प्रकार त्याग नहीं किया जाता। राष्ट्रीय द्या-मन्दिरकी यह व्याख्या कांग्रेसने की है। असलिअे अगर अिस वक्त यह कहूं कि जिसे चरखे पर श्रद्धा न हो, वह विद्यापीठके मातहत लनेवाली तमाम संस्थाअें छोड़ दे, तो तुम यह न मानना कि मैंने कोअी ादती की है। अिसीमें प्रगति है। अैसा करनेसे हमें मालूम हो जायगा : हम किधर जा रहे हैं और हमारे साथ कितने स्त्री-पुरुष, विद्यार्थी र विद्यार्थिनियां हैं।

* * *

महामात्रने सुझाया है कि अिस बारेमें सूचनाअें की जाय कि विद्या-ठका और महाविद्यालयका भविष्य क्या हो और अुन्हें किस रास्ते ले ाया जाय। अिस बारेमें कोअी भी सुझाव पेश करना मेरे बूतेके बाहर । मैं नहीं जानता अिस वर्षमें हिन्दुस्तानके वातावरणका क्या रूप ोगा। मेरी आशाअें तो बहुत हैं। मैं आज जैसा आशावादी हूं वैसा ही रते दम तक रहूंगा। मगर यह ठीक नहीं कि अिस वक्त वे आशाअें म्हारे सामने रखूं। तुम्हें तो अितना ही कहूंगा कि तुम विद्यार्थी अिस गड़ेमें न पड़ो कि विद्यापीठका भविष्य क्या होगा। तुम समझ लो कि म्हारा विद्यापीठमें होना ही ठीक है, सरकारी स्कूलमें जाना ठीक नहीं ौर सचमुच जो शिक्षा मिलनी चाहिये वह अिस स्थितिमें वहां नहीं मिलेगी। ब तक तुम्हारे मनमें यह भाव है कि हिन्दुस्तानको सरकारी स्कूलोंमें जो छ मिलना चाहिये था वह नहीं मिला और न मिलेगा, तब तक तुम विद्या-ठमें रहो। लेकिन अगर तुमको लगता हो कि सरकारी संस्थाओंमें वह ब कुछ मिल जाता है, तो तुम्हारे लिअे सरकारी संस्थाओंमें चले जाना ी अच्छा है। तब तुम अिस झंझटमें न पड़ो कि विद्यापीठका आगे क्या ोगा। सरकारी पाठशालाओंसे तुम्हारा दिल सचमुच फिर जाना चाहिये। दिल फिरा कि अुन पाठशालाओंके बारेमें तुममें त्यागवृत्ति पैदा हो जायगी,

मोह नहीं रहेगा। जब तक मोह रहेगा तब तक तुम सरकारी पाठशालाओं
विद्यापीठका मुकाबला करते रहोगे। हर वक्त मन कहेगा वहां जित
सुविधायें हैं, यहां कुछ नहीं। विद्यापीठमें सुविधायें नहीं हैं, यही तो अुस
विशेषता है। यहां सुविधायें कर दी जायं तो हम मुसीबतें पार करना न
सीखेंगे। या यहां दूसरी तरहकी सुविधायें हैं। यहां कुछ न कुछ विशेष
तो होनी ही चाहिये। सरकारी पाठशालाओंके साथ अिस विद्यापीठ
स्कूलोंका मुकाबला हो ही नहीं सकता। अितनी ही बात तुम्हारे दिलमें ज
जाय, फिर तुम्हें अिसकी क्या चिन्ता कि विद्यापीठका भविष्य कैसा होगा
अितना काफी है कि तुम यह कह सको कि हमारे कर्तव्य-पालनसे हम
स्वराज्यकी लड़ाअीमें पूरी मदद दी। अिससे ज्यादा जाननेका तुम्हें और मुझ
अधिकार नहीं। मैं तो यही जानता हूं कि जब तक विद्यापीठ स्वराज्य
लड़ाअीमें मददगार है तब तक वह टिकेगा; जब वह स्वराज्यकी लड़ाअीमें
मददगार नहीं रहेगा, तब अुसका नाश हो जायगा। और नाश हो भी
अिसमें बुराअी क्या है? अुसका नाश हो जाना अच्छा ही है। हिन्दुस्तान
स्वराज्यका भविष्य ही विद्यापीठका भविष्य है।

नवजीवन, १८-१-'२५

२

[पदवीदान-समारम्भका भाषण — 'प्रभात नजदीक है' शीर्ष
टिप्पणीसे।]

जिन जिन विद्यार्थियोंको पदवियां और अिनाम मिले हैं अुन्हें मैं
बधाअी देता हूं। अुनकी दीर्घायु चाहता हूं और चाहता हूं कि अुन्हें जो
दान मिला है, अुससे वे अपनी और देशकी शोभा बढ़ायें।

चारों तरफ छाअी हुअी निराशाकी रातमें हम रास्ता न भूल जायं।
आशाकी किरणोंके लिअे हम बाहरी आकाशकी तरफ नजर न डालें, बल्कि
भीतरी आकाशको खोजें। जिस विद्यार्थीको अपने पर भरोसा है, जिसने
डर छोड़ दिया है, जो अपना फर्ज अदा करनेमें लगा रहता है, जो कर्तव्य-
परायणतामें ही अपने हक छिपे हुअे देखता है, वह विद्यार्थी बाहर फैले

हुओे अंधेरेसे भयभीत नहीं होगा, बल्कि यह समझेगा कि अंधेरा थोड़ी देरका है, प्रकाश नजदीक है।

असहयोग मिटा नहीं है। सहयोग और असहयोग अनादि कालसे चले आ रहे हैं। सच-झूठ, शान्ति-अशान्ति वगैराकी जोडीको कौन झुठला सकता है? अगर सचाओके साथ सहयोग करना ठीक है, तो झूठके साथ असहयोग ठीक है ही। अगर देशप्रेम तारीफके लायक है, तो देशद्रोह बुराओकी चीज है ही। अगर स्वाधीनताके साथ सहयोग करना ठीक है, तो पराधीनताके साथ असहयोग ही हो सकता है। असलिओ राष्ट्रीय पाठशाला ओक हो या अनेक, अुसमें विद्यार्थी ओक हो या अनेक, हिन्दुस्तानके भावी अितिहासमें राष्ट्रीय स्कूलोंको आजादी लेनेके साधनोंमें अूंचा स्थान मिले बिना नहीं रहेगा।

हमारे ये साहस नये हैं। टीकाकारोंको अुनमें कओी खराबियां दिखाओी देंगी। कुछ दोष हम खुद भी देख सकते हैं। अुन सबको दूर करनेकी कोशिश होती ही रहती है। मैं जानता हूं कि हमारे अिन्तजाममें खामियां हैं, हम संचालकों और अध्यापकोंमें कमियां भरी हैं। अुनके बारेमें हम सावधान हैं और अुन कमियोंको दूर करनेके लिओ जो-जो अुपाय किये जा सकते हैं किये जायेंगे।

विद्यार्थियो, तुम धीरज रखना। तुम अपनेको स्वराज्यके सच्चे सेवक समझना। ओसा ओक भी काम न करना, ओक भी शब्द न कहना, ओक भी विचार न करना, जो ओसे सेवकके योग्य न हो। ओीश्वर तुम्हारा भला करे।

नवजीवन, १३-१२-'२५

३

[महाविद्यालयके समारंभके मौके पर पढकर सुनाया हुआ मंगल-प्रवचन — 'विद्यार्थियोंको सन्देश' — शीर्षक लेखसे ।]

कहां १९२१ और कहां १९२६!

'अिसे निराशाका अुद्गार न समझना। हम पीछे नहीं हट रहे हैं, हमारा देश पीछे नहीं हट रहा है। अिससे कोओी अिनकार नहीं कर सकता

कि स्वराज्य पास भाल नजदीक आया है। अगर कोओी कहे कि १९२१ में तो अैसा लगता था कि आ गया, पर आज तो न जाने कितना दूर चला गया है, तो अुसकी अिस निराशाको गलत समझता। शुभ प्रयत्न कभी बेकार नहीं जाता और अिन्सानकी सफलता अुसकी कोशिशमें रहती है। परिणामका स्वामी सिर्फ अीश्वर ही है। सत्याग्रह पर डरपोक नाचता है। आत्मबलवाले अकेले लड़ते हैं। अिस विद्यापीठमें हम आत्मबल पैदा करनेको अिकट्ठे हुअे हैं — अिसमें साथी भले हों अेक हो या बहुतसे। आत्मबल ही सच्ची ताकत है। यह पक्की बात समझना कि यह ताकत तप, त्याग, दृढ़ता, श्रद्धा और नम्रताके बिना नहीं आती।

अिस विद्यालयका ढांचा आत्मशुद्धि पर खड़ा हुआ है। अहिंसात्मक असहयोग अुसका स्वरूप है। अिस असहयोगके 'अ' का अर्थ सरकारी स्कूलों वगैराको छोड़ना है। लेकिन जब तक अछूतोंके साथ हम सहयोग नहीं करते, हर धर्मवाला अेक-दूसरेके साथ सहयोग नहीं करता, खादी और चरखेको पवित्र स्थान देकर हम हिन्दुस्तानके करोड़ों आदमियोंका सहयोग नहीं साधते, तब तक वह 'अ' निरर्थक है। अुसमें अहिंसा नहीं, हिंसा यानी द्वेष है। विधिके बिना निषेध प्राणके बिना शरीर जैसा है। अुसे तो जला देना ही अच्छा है।

सात लाख गांवोंके लिअे सात हजार रेलवे स्टेशन हैं। हम अिन सात हजार गांवोंके आदमियोंको नहीं जानते। रेलसे दूरके गांवोंकी हालतका खयाल तो हमें सिर्फ अितिहास पढ़कर हो सकता है। जो अभी तक यह न समझ पाये हों कि अिन गांवोंके साथ शुद्ध सेवाके भावसे संबंध जोड़नेका अेकमात्र साधन चरखा ही है, अुनका अिस राष्ट्रीय महाविद्यालयमें रहना मैं बेकार समझता हूं। जिस राष्ट्रीयतामें हिन्दुस्तानके गरीबोंका कोअी खयाल नहीं, जिसमें अुनकी गरीबी दूर करनेके अुपाय नहीं सोचे जाते, वह राष्ट्रीयता नहीं। सरकारका हर गांवके साथका नाता महसूल वसूल करनेमें ही खतम हो जाता है। हमारा संबंध चरखेके जरिये अुनकी सेवा करनेके साथ शुरू होता है। लेकिन खादी पहननेमें और चरखा चलानेमें ही वह सेवा पूरी नहीं हो जाती। चरखा अुस सेवाका केन्द्र है। अबकी बारकी छुट्टियां कोअी दूरका गांव ढूंढ़कर अुसमें बिताओगे, तो तुम्हें

खुदको मेरी बातकी सचाओी मालूम हो जायगी। वहांके लोगोंको तुम मुरदार और डरे हुअे पाओगे। वहां तुम्हें खंडहर दिखाओी देंगे। वहां तुम्हें तन्दुरुस्तीके नियम टूटते हुअे जान पड़ेंगे। वहां तुम जानवरोंकी हालत दयाजनक पाओगे। अितने पर भी वहां तुम आलस्य देखोगे। चरखेकी याद लोगोंको होगी, पर चरखेकी या और किसी अुद्यमकी बात लोगोंको अच्छी नहीं लगेगी। अुन्होंने आशा छोड़ दी है। वे मरते नहीं अिसलिअे जीते हैं। तुम खुद चरखा चलाओगे, तो ही वे चलायेंगे। तीन सौकी आबादीमें से सौ आदमी भी चरखा चलायें, तो गांवकी आमदनी कमसे कम १८०० रुपये सालाना बढ़ जाय। अितनी आमदनीके सहारे तुम हर गांवमें म्युनिसिपैलिटीकी बुनियाद डाल सकते हो। यह काम कहनेमें सरल है, मगर करनेमें मुश्किल है। श्रद्धाके सामने वह आसान हो जायगा। 'मैं अेक और ये गांव सात लाख। अुन तक कैसे पहुंच सकूंगा?' अिस तरहका निराशापूर्ण त्रैराशिकका गलत हिसाब न लगाना। तुम अेक-अेक गांवमें ही आसन लगाकर बैठ जाओगे, तो और सबका भी अैसा ही हो जायगा। अैसा विश्वास रखकर काम करोगे तो ही देशकी अुन्नति होगी।

अिस विद्यालयका काम तुम्हें अिस तरहके सेवक बनाना है। अुसमें रस न आता हो तो यह विद्यालय नीरस है और छोड़ देने लायक है।

* * *

परमात्मा विद्यार्थियोंका भला करे, अुनकी बड़ी अुम्र करे और अुन्हें देशकी शुद्ध सेवामें प्रेरित करे।

नवजीवन, २०-६-'२६

४

[१९२८ के पदवीदान-समारंभके समय दिये हुअे कुलपतिके भाषणसे।]

हमारे दिल निराशाके खड्डेमें पड़े हैं और हमें यह डर होता है कि मकान तो हमारे पास हैं, पर दो साल बाद अुनमें कबूतर अुड़ने होंगे तो! निराशाकी अिस बातको ये* जानते हैं। मैंने अिनसे बात नहीं की, पर

* श्री अेण्ड्रूज पदवीदानके मौके पर भाषण देनेवाले थे। अिस भाषणमें सब जगह अुन्हींका अुल्लेख है।

ये तो वातावरणसे ही देख लेते हैं। अिसलिअे अुन्होंने तुमसे कहा कि तुम्हारे पास मकान है, रुपया है, जमीन है, गुजरात जैसे प्रान्तमें रुपया मिलता भी रहेगा, मगर मैं जिस कॉलिजमें पढ़ा हूं अुसकी अुत्पत्तिका हाल अगर सुनाअूं तो तुम्हे अचरज होगा और तुम्हे आशाकी किरणें दिखाअी देंगी। क्योंकि अुसकी अुत्पत्ति झोपडोंमें हुअी थी। और वह भी अेक बहादुर विधवाकी तरफसे — वह जिस दिन शादी हुअी अुसी दिन विधवा हो गअी। वह चाहती तो दुबारा विवाह कर सकती थी। लेकिन अुसने सेवाधर्मके साथ विवाह कर लिया। अुसने साधु-संन्यासियोंको ढूंढ़ा, अुन्हें विद्यार्थियोंको शिक्षा देनेको कहा और अुनके रहनेके लिअे झोंपड़े बनवा दिये। अिन्हीं झोंपडोंमें आजका बड़ा पेम्ब्रोक कॉलिज बना, जिसमें से स्पेन्सर और ग्रे जैसे कवि पैदा हुअे, पिट जैसे धुरंधर राजनीतिज्ञ निकले, वाअुन जैसे पण्डित तैयार हुअे। यह बात कहकर अुन्होंने तुमको भरोसा दिलाया है कि जो कहानी मेरे कॉलिजकी है वही तुम्हारी भी है। तुम्हारे यहां भी धीरजसे काम होता रहेगा तो वीर पैदा होंगे। और *जिसके लिअे अुपाय बताया — आत्म-श्रद्धा।* अीश्वरमें विश्वास हो और *धीरज हो, तो अुसीमें यह पैदा होती है।* बढ़िया चीज अेकाअेक तैयार नहीं होती। बड़े मजबूत पेड़का बीज कुछ दिन जमीनके अन्दर ही रहता है। मगर माली जानता है कि समय पाकर अुसका पेड़ बन जायगा। कुछ समय तक जमीन पर घास अुगेगा तो अुसे अुगने दिया जायगा। माली निराश नहीं होता, क्योंकि वह ज्ञानी है। हममें अेण्ड्रूज अिस ज्ञानकी *अुम्मीद नहीं रखते, पर श्रद्धाकी आशा रखते हैं। श्रद्धाकी बाअिबलकी* व्याख्या अुन्होंने हमारे सामने रखी है — जो चीज दिखाअी न दे मगर अुसका सबूत श्रद्धा ही है। यह श्रद्धा तुममें होगी तो विद्यापीठ नहीं टूटेगा। जितने साल पेम्ब्रोकको बढ़नेमें लगे, अुतने अिस विद्यापीठको नहीं लगे। तुम कहोगे कि तरक्की तो यही हुअी कि १५ कुमार-मंदिर बंद हो गये! और भी बंद हो जायंगे। पर तुममें श्रद्धा होगी तो तुम *निराश न होंगे। कुमार-मन्दिर अिसलिअे टूटे कि हम अटल रहे, 'हमने* अपनी शर्तें कायम रखकर कहा, "पढ़ना हो तो रहो, नहीं तो जाओ।" अेक दिन अैसा आ सकता है कि यहां कोअी न रहे, कुलपति ही बैठा हो;

शिक्षक भी वही हो और शिष्य भी वही हो। अुसके सामने अुसका चरखा पड़ा हो। कोअी तो देखने आयेगा। कोअी न आये तो बन्दर ही आयेंगे और अुसमें श्रद्धा होगी तो वह वैदर्भीकी तरह अुनसे बातें करेगा और अुसे अुसीसे आश्वासन मिलेगा। मेरी श्रद्धाका सबूत क्या? सबूत यही कि वह है। तुमसे कोअी पूछे तो कहना कि वह चरखा चरखा करता है अुसीके पास जाओ। अितनी श्रद्धा तुममें हो तो अेण्ड्रूज कहते हैं कि तुम अेक नहीं पर अेक हजार पेम्थोक पैदा करोगे। कहां अिंग्लैंड और कहां हिन्दुस्तान जिसमें कितने ही अिंग्लैण्ड समा जाय! पर हममें अितनी बहादुरी है? धीरज है? सीखना और धीरजके बिना श्रद्धाकी फसल तैयार नहीं होती। हम अपने अुसूलों पर कायम रहें और विश्वास रखें। हमें अुस दगाबाज व्यापारीका व्यापार नहीं करना है, जो ग्राहक देखकर पुड़िया बांधता है और चीजोंके दाम बदलता रहता है। ढिलाअी करनेसे विद्यार्थी ज्यादा आयेंगे अिसलिअे ढिलाअी की जाय — अिस तरहके व्यापारसे न जनताको कुछ मिलेगा और न कुछ विद्यापीठको मिलेगा। अध्यापकोंमें श्रद्धा होगी तो वे अेक ही आवाज निकालेंगे। विद्यार्थियोंकी भी अेक ही आवाज निकलेगी। वे कहेंगे कि मैं अकेला हुआ तो भी क्या? अध्यापक मुझ पर अपना सब कुछ निछावर करेंगे। अीश्वर भी अेक ही है, पर अुसकी कृतियां बहुत हैं। अुसी तरह जो विद्यार्थी अेक होने पर भी निडर होकर बैठ जायगा, अुसमें से सौ पैदा हो जायंगे। यह अेण्ड्रूजके भाषणका सार है, अुनकी सीखका सुर है।

अैसा समझना कि मेरा भी यही व्याख्यान है। तुम अपने दिलमें विद्यालयके लिअे अभिमान रखना विद्यापीठको सम्भालना और अपने जीवनको अुज्ज्वल बनाना। जहां बैठो वहां विद्यापीठको याद करना। आगे चलकर अिसकी क्या कीमत होगी, यह तुम्हें थोड़े दिनमें मालूम हो जायगा। मगर धीरज रखना। तुमको मैं अितना जरूर कह देना चाहता हूं कि हममें से थोड़ेसे भी जीते रहेंगे, तब तक विद्यापीठको मिटने न देंगे। अिस विद्यापीठके खातिर मुझे मिटना पड़े, दफन होना पड़े तो अुसके लिअे मैं तैयार हूं। यह समझना कि अगर तुम विद्यापीठका नाश सह सको तो तुम्हारे लिअे वह सदा सहारेको जगह है। न सह सको तो मुझे दोष न देना, अध्यापकोंको दोष न देना, विधाताको दोष देना। लेकिन अगर हम अपना

वचन पूरा न कर सकें, तो मैं कहता हूं कि हमारे अहिंसक होने पर हमें कत्ल करनेका तुम्हें अधिकार है।

नवजीवन, २२-१-'२८

१४

राष्ट्रीय शिक्षा-संस्थाअें

१

['राष्ट्रीय शिक्षा' शीर्षक लेखसे।]

अिसमें शक नहीं कि आजकल राष्ट्रीय शिक्षाकी संस्थाअें बहुत लोकप्रिय नहीं हैं। वे शानदार और खर्चीले मकान और साज-सामान नहीं दिखा सकतीं। अुनके पास भारी तनखाहोंके शिक्षक और अध्यापक नहीं हैं। अेक ही चली आनेवाली परम्परा या पद्धतिका भी वे दावा नहीं कर सकतीं। आगेके लिअे वे विद्यार्थियोंको मोहक 'केरियर' की आशा भी नहीं दिला सकतीं।

जिन चीजोंके लिअे विद्यापीठकी संस्थाअें चलती हैं, वे बहुतोंको लुभा नहीं सकतीं। बहुतसे बेगरज, देशाभिमानी अध्यापक देशके लड़के-लड़कियोंको अपनी शिक्षाका फायदा पहुंचानेके हेतुसे निहायत गरीबीकी जिन्दगी बिताते हुअे अिन संस्थाओंमें जमे हुअे हैं। अिन संस्थाओंमें हाथ-कताअी और अुससे सम्बन्ध रखनेवाली क्रियाअें सिखाअी जाती हैं। वे बच्चोंमें सेवाकी वृत्ति पैदा करनेकी कोशिश करती हैं। वे राष्ट्रीय भाषाके जरिये शिक्षा देती हैं। राष्ट्रीय खेलों और राष्ट्रीय संगीतमें दिलचस्पी पैदा करनेकी कोशिश करती हैं। वे विद्यार्थियोंमें हिन्दुस्तानके गरीबोंके साथ बराबरीकी भावना पैदा करके भविष्यमें अुन्हें गांवोंकी सेवा करनेके लिअे तैयार करनेकी सच्चमें तालीम देनेकी कोशिश करती हैं। पर अिसमें जितना चाहिये अुतना प्रोत्साहन नहीं मिलता! तब अिनमें विद्यार्थियोंकी तादाद घटे तो समझमें आ सकता है।

अितना होने पर भी यह कही जानेवाली नीरसता ही अिन संस्थाओंके लोकप्रिय न होनेका अकेला कारण नहीं।

१९२१ के जोशकी हालतमें जब बहुतसे अच्छे नतीजोंकी आशाअें रखी जाती थीं, तब बहुतसा काम किया गया। जोश अुतर जानेके बाद जो ढिलाओी आनी ही चाहिये वह हममें आ गओी है। विद्यार्थी नफे-नुकसानका हिसाब लगाने लगे और यह न जाननेके कारण कि देशाभिमान और देशसेवाका हिसाब अंकगणितसे नहीं लगाया जा सकता वे गलत फैसलों पर पहुंचे और अुन्होंने सरकारी स्कूल-कॉलेजोंको ज्यादा पसन्द किया। अिसमें अुन बेचारोंका क्या कसूर? हर चीजका विचार बनिया-वृत्ति और सौदेके खयालसे ही होता है। अैसे वातावरणमें अगर हम अपने लड़के-लड़कियोंसे यह आशा रखें कि वे अुससे साफ अछूते रहेंगे तो यह ज्यादा होगा।

और अितनी ही बात नहीं। राष्ट्रीय शिक्षक संपूर्णताके आदर्श नहीं हैं। अुनमें से सभीने स्वार्थोको बिलकुल छोड़ नहीं दिया है। सभी थोड़ी-बहुत निन्दा-स्तुति या प्रपंचसे भी परे नहीं हैं। सबके दिलोंमें अितना देशप्रेम भी नहीं। अिसमें भी अिनका कसूर नहीं निकाला जा सकता। हम सब परिस्थितियोंके दास हैं। हमेशा दबे रहने, गुलाम रहने और अैसी हालतमें रहकर, जिसमें आदमीका भीतरी जौहर मिट जाता है, काम करनेके कारण हम अैसे बन गये हैं कि व्यक्तिगत या कुटुम्बके स्वार्थोको लात मारकर, देशप्रेमका काम करनेमें ख्यातिकी आशा न रखकर, सेवा करनेके लिअे अपनी कुरबानी करनेकी पुकारका योग्य अुत्तर नहीं दे सकते।

यह बात समझ लें तो आज जहां तहां फैली हुअी निराशाका भेद समझ लेनेमें कोअी मुश्किल नहीं रह जाती। लेकिन असहयोगके मूल कार्यक्रमके दूसरे अंगोंकी तरह राष्ट्रीय पाठशालाओंके बारेमें भी मेरी श्रद्धा अमर है। राष्ट्रीय वातावरणके अुतरे हुअे पारेको मैं समझ सकता हूं और अिसीलिअे परिस्थिति देखकर कांग्रेससे नये-नये प्रस्ताव भी पास करवाता हूं। पर अिन सबसे मेरे विश्वासमें कमी नहीं होती और दूसरोंमें भी कमी न होने देनेके लिअे मैं *कहता हूं। अभीकी सारी त्रुटियोंके होते हुअे भी अिन* राष्ट्रीय शिक्षण-संस्थाओंको मैं अपनी आशाओं और आकांक्षाओंको मरुभूमिमें

आराम लेनेकी जगह समझता हूं और अिस हरियालीकी तरह देखकर आगे तरक्की करता हूं। जैसे आज यही संस्थाओं अवैतनिक और थोड़ी तनख्वाहवाले खास सेवक बड़ी तादादमें देखनेको दे रही हैं, वैसे ही अिन्हींसे भविष्यकी संतानें अूंची अुठेंगी। जहां भी हम जाते हैं वहां किसी भी तरहके बदलेकी आशा रखे बिना मातृभूमिकी अनन्य भावसे सेवा करनेवाले स्त्री-पुरुष, युवक-युवतियां आज भी जगह-जगह नजर आते हैं। श्रद्धावानकी श्रद्धाको बनाये रखनेके लिअे अितना काफी है।

अिन कारणोंसे संख्या घट जानेके कारण महाविद्यालयके दरवाजे बन्द कर देनेके लिअे कहनेवाले अेक टीकाकारकी सलाह मेरे गले नहीं अुतरती। अगर लोग अिसकी मदद करते रहेंगे और लोगोंकी मदद पर आशाअें बांधे बिना अुसे कायम रखनेका पुरुषार्थ शिक्षकोंमें होगा, तो जब तक महाविद्यालयका शिक्षाक्रम पूरा करनेवाला और अुसके आदर्शोंको कायम रखनेवाला अेक भी विद्यार्थी या विद्यार्थिनी रहेगी, तब तक महाविद्यालय भी जारी रहेगा। अच्छे दिनोंमें ही संस्थाको बनाये रखनेकी कोअी शर्त नहीं की गअी थी। जो बात राष्ट्रीय सेवकोंकी है, वही राष्ट्रीय संस्थाओंकी भी है। अच्छे और बुरे दिनोंमें से होकर सभीको गुजरना पड़ता है।

नवजीवन, १३-१२-'२५

२

अेक अनुभवी सेवक लिखते हैं :

"जहां आदर्श और भावना बिलकुल मिट गअी हों, राष्ट्रीय पाठशालाका सिर्फ नाम रह गया हो, राष्ट्रीय शिक्षाकी कांग्रेसकी अेक भी शर्त पूरी न होती हो, वहां हम यही चाहेंगे कि पाठशाला अपना रूप बदल ले या बन्द हो जाय। मगर जहां शिक्षक प्रयत्नवान हों और विद्यार्थी भी कुछ-कुछ अनुकूल हों, मगर मां-बापका ही विरोध हो — किसीका अछूतोंके बारेमें, किसीका खादीके बारेमें, किसीका संगीतके बारेमें और किसीका व्यायामके बारेमें — और अिसीलिअे पाठशालामें अेक भी राष्ट्रीय तत्त्व जारी न किया जा सकता हो, वहां भावनाके खातिर और आगे जब ज्वार आयेगा तब

राष्ट्रीय पाठशालाकी माग होगी यह सोचकर अैसी पाठशालाओंको *कायम रखना क्या अच्छा नहीं? हमारी तरफ अैसा खयाल है कि* किसीको सापने काट लिया हो और अुसके कारण अुसका जीव अिस शरीरसे निकल गया लगता हो, तो भी तीन दिन तक अुस शरीरको जलाते नही। शायद कोअी अुस्ताद मिल जाय और जहर अुतार दे, तो शरीरमें फिर जीव आ जाय। लेकिन शरीर जला दिया जाय तो कौन किसका जहर अुतारे?"

अूपरकी दलीलकी जाच करनेसे पहले साप काटनेकी मिसालको देख लें। तुलना करनेमें हमेशा जोखिम रहती है। क्योंकि दो चीजें सब हालतमें अेकसी मुश्किलसे ही होती हैं। और तुलनाके जरूरी अंगोंमें कहीं भी कमी रह जाती है, तो तुलना कायम नहीं रहती और तुलनासे धोखा खाये हुअे आदमी गलत रास्ते पर चले जाते हैं। सांप काटने पर जान वापस आनेकी अुम्मीद रहती है, किसी वैद्यने आकर यह विश्वास नहीं दिलाया होता कि जीव चला ही गया है, और शरीरको जला डालनेके बाद जहर अुतारनेका सवाल ही नहीं रहता। अिसलिअे कभी कभी शरीरको दो-चार दिन रखना सुरक्षित माना जाता है। क्योंकि जलाये हुअे शरीरको फिर पैदा करनेकी हममें शक्ति नहीं होती। मगर जिस तथाकथित राष्ट्रीय पाठशालाके बारेमें मैंने यह चाहा है कि वह सुधरे या बन्द हो जाय, अुसके बारेमें सभव है तीनोंमें से अेक भी हालत मौजूद न हो; *यानी जिसमें राष्ट्रीयताका आना सभव ही* नहीं हो, जिस पाठशालाकी वैद्यने ही जाच करके मौतका प्रमाणपत्र दे दिया हो और जो मनुष्यकी बनाअी हुअी चीज होनेके कारण फिर पैदा की जा सकती हो, अुस पाठशालाका मिट जाना ही अच्छा है। अैसी पाठशालाको कायम रखनेसे हममें झूठ बढ़ता है, राष्ट्रीय पाठशालाके लिअे जमा किये हुअे रुपयेको नाममात्रकी राष्ट्रीय पाठशाला पर खर्च करनेसे दान देनेवालोंके साथ धोखा होता है और कथित राष्ट्रीय पाठशालाकी गलत कीमत आकी जानेसे सही कीमत शुद्ध राष्ट्रीय पाठशालाकी भी आंकी जाती है। रुपया जमा करने-वालोंकी साख जाती रहती है और राष्ट्रीय पाठशालाके नाम पर रुपया मिलना बन्द हो जाता है। अैसे बुरे नतीजे पैदा करनेके बजाय शुद्ध राष्ट्रीय पाठशाला कितनी ही छोटी क्यों न हो, अुसीको चलाया जाय, अुन पर

खूब ध्यान दिया जाय और अुसे अच्छी तरह सजाकर दिखाया जाय। जिसमें सभाओं, दान और व्यवहारकी रक्षा है। सिर्फ रेतको जैसे-तैसे चिपकाकर बनाओ हुओ ओटोंसे कोओ अिमारत खड़ी नहीं की जा सकती; और ज्यों-ज्यों अुसमें वृद्धि होती है, त्यों-त्यों नुकसान और बोझा बढ़ता है। अिसी तरह नाममात्रकी राष्ट्रीय पाठशालाओंकी संख्यासे भी हानि और बोझा ही बढ़ता है। ज्वार आने पर अेक भी सच्ची राष्ट्रीय पाठशाला हो तो अुसमें से बहुतसी पैदा कर लेना आसान और संभव होता है। लेकिन नाममात्रकी बहुतसी राष्ट्रीय पाठशालाओंसे कोओ भी अच्छी चीज पैदा कर लेना हवाको बिले बांधने जैसा है। अितना ही नहीं, अैसे शुभ समयमें अैसी पाठशालाओंका पहले नाश करनेकी ही कोशिश करनी पड़ेगी।

अिसलिअे जहां मां-बाप खिलाफ हों या शिक्षक खिलाफ हों, वहां तो राष्ट्रीय स्कूल बन्द ही हो जाने चाहियें। जहां मां-बाप राष्ट्रीय भावनावाले हों और स्कूलको चलानेके लिअे भरसक रुपया देकर अपनी भावनाको साबित करते हों, जहां शिक्षक लोग राष्ट्रीय भावनासे भरपूर और खूब कोशिश करनेवाले हों, वहां विद्यार्थियोंके ढीले होनेके कारण कुछ नरम रवैया रखनेकी बात मैं समझ सकता हूं। वहां हमें पाठशाला चलानी चाहिये। किसी न किसी दिन विद्यार्थियों पर असर डालनेकी आशा भी रखी जा सकती है। पर अैसी कोओ पाठशाला यह लेख लिखते वक्त तो मेरे ध्यानमें नहीं है।

मेरा तजरबा तो यह है कि जहां राष्ट्रीय तत्त्वकी कमी पाओ जाती है, वहां कसूर शिक्षकोंका होता है। जिस नमूने परसे अुपरोक्त पत्र लिखा गया है, वह नमूना अुत्साही शिक्षकों, अुदासीन विद्यार्थियों और प्रतिकूल अभिभावकोंका है। जहां मां-बाप अपने बच्चोंको चरखेकी तालीम न दिलवाना चाहें, खादी पहननेका विरोध करें और अछूतोंके भरती होने पर अपने बच्चोंको हटा लेनेकी धमकी दें, वहां शिक्षक अपना काम जारी रखें तो अिसमें मुझे स्वाभिमानकी और जनताके समयकी हानिके सिवा और कुछ नहीं दिखाओ देता। और अगर मां-बापकी मरजीके खिलाफ हम पाठशाला चलायें, तो जो दोष हम पादरियोंको देते हैं अुसी दोषमें हम फंस जाते हैं। मां-बापकी अिच्छाके विरुद्ध बच्चोंको शिक्षा देने और घरोंमें कलह पैदा

करनेका हमें अधिकार नहीं। जो विद्यार्थी सोलह सालकी अुम्र पार कर गये हैं, जो अपनी भलाअी समझ सकते हैं, जिनमें दुःख सहनेकी शक्ति है, अुन विद्यार्थियोंको बचावकी जरूरत नहीं। वे अपने पैरों पर खड़े हो सकते हैं। अैसे विद्यार्थियोंके लिअे जहां जरूरी हो हम जरूर पाठशाला खोलें और जहां हो वहां अुसे चलायें। पर अैसे विद्यार्थी सारे हिन्दुस्तानमें कहां हैं? कितने हैं? और अैसी पाठशालाअें *कहां हैं जहां विद्यार्थियोंकी तुलना विवेकपूर्ण,* मर्यादाशील किन्तु सहनशील, निडर और भक्त प्रह्लादके साथ की जा सके? अैसे विद्यार्थी जब बेशुमार पैदा होंगे, तब हिन्दुस्तानमें नअी जिन्दगी अुमड़ आयेगी और किसीको यह सवाल भी पूछना न पड़ेगा कि स्वराज्य कहां है।

और अैसे विद्यार्थियोंकी फसल तैयार होनेके लिअे भी हमें थोड़ेसे विद्यार्थियोंवाली मगर शुद्ध राष्ट्रीय पाठशालाका ही सेवन करना चाहिये। जहां मां-बाप अपने बच्चोंको भेजनेमें मेहरबानी करते जान पड़ें, विद्यार्थी सरदारी करते हों और अिस तरहकी खुली या आड़ी-टेढ़ी धमकियां दी जाती हों कि 'आप मदद न करेंगे तो हम सरकारके साथ सम्बन्ध जोड़ लेंगे,' वहां हमें *यही समझ लेना चाहिये कि राष्ट्रीय पाठशाला नहीं है,* और नामको पाठशाला चलती हो तो अुसे बन्द ही कर देना चाहिये। असहयोगका धर्म अब समझा जा चुका है। अुसकी कीमत लग चुकी है। अुसमें भरी हुअी जोखिमोंसे जनता अनभिज्ञ नहीं है। अिस तरह असहयोगकी पाठशालाओंका रास्ता सीधा हो गया है। हमें अपने दिलको बिलकुल धोखा न देना चाहिये। अगर हम ज्वार और भाटेको बराबर समझकर, श्रद्धामें अटल रहकर अपना काम करते जायें तो अन्तमें भला ही होगा।

नवजीवन, ८-८-'२६

३

['राष्ट्रीय शिक्षा' नामक लेख।]

ठेठ नैरोबीसे अेक भाअी लिखते हैं जिसका मतलब यह है — राष्ट्रीय शिक्षा आगे नहीं बढ़ सकती, अिसका कारण यह है कि 'विद्यार्थियोंको अैसी शिक्षा नहीं दी जाती, जिससे आगे चलकर वे अपने पैरों पर खड़े रह सकें। अगर अैसी शिक्षा दी जाये तो यह मुश्किल दूर

खूब ध्यान दिया जाय और अुसे अच्छी तरह चलाकर दिखाया जाय। अिसमें सचाअी, ज्ञान और व्यवहारकी रक्षा है। सिर्फ रेतको जैसे-तैसे चिपकाकर बनाओ हुअी अीटोंसे कोअी अिमारत खड़ी नहीं की जा सकती; और ज्यों-ज्यों अुसमें वृद्धि होती है, त्यों-त्यों नुकसान और बोझा बढ़ता है। अिसी तरह नाममात्रकी राष्ट्रीय पाठशालाओंकी संख्यासे भी हानि और बोझा ही बढ़ता है। ज्वार आने पर अेक भी सच्ची राष्ट्रीय पाठशाला हो तो अुसमें से बहुतसी पैदा कर लेना आसान और संभव होता है। लेकिन नाममात्रकी बहुतसी राष्ट्रीय पाठशालाओंमें कोअी भी अच्छी चीज पैदा कर लेना हवाअी किले बांधने जैसा है। अितना ही नहीं, अैसे शुभ समयमें अैसी पाठशालाओंका पहले नाश करनेकी ही कोशिश करनी पड़ेगी।

अिसलिअे जहां मां-बाप खिलाफ हों या शिक्षक खिलाफ हों, वहां तो राष्ट्रीय स्कूल बन्द ही हो जाने चाहिये। जहां मां-बाप राष्ट्रीय भावनावाले हों और स्कूलको चलानेके लिअे भरसक रुपया देकर अपनी भावनाको साबित करते हों, जहां शिक्षक लोग राष्ट्रीय भावनासे भरपूर और शुद्ध कोशिश करनेवाले हों, वहां विद्यार्थियोंके ढीले होनेके कारण कुछ नरम रवैया रखनेकी बात मैं समझ सकता हूं। वहां हमें पाठशाला चलानी चाहिये। किसी न किसी दिन विद्यार्थियों पर असर डालनेकी आशा भी रखी जा सकती है। पर अैसी कोअी पाठशाला यह लेख लिखते वक्त तो मेरे ध्यानमें नहीं है।

मेरा तजरबा तो यह है कि जहां राष्ट्रीय तत्त्वकी कमी पाअी जाती है, वहां कसूर शिक्षकोंका होता है। जिस नमूने परसे अुपरोक्त पत्र लिखा गया है, वह नमूना अनुत्साही शिक्षकों, अुदासीन विद्यार्थियों और प्रतिकूल अभिभावकोंका है। जहां मां-बाप अपने बच्चोंको धर्मकी तालीम न दिलवाना चाहें, खादी पहननेका विरोध करें और अछूतोंके भरती होने पर अपने बच्चोंको हटा लेनेकी धमकी दें, वहां शिक्षक अपना काम जारी रखें तो अिसमें मुझे स्वाभिमानकी और जनताके समयकी हानिके सिवा और कुछ नहीं दिखाअी देता। और अगर मां-बापकी मरजीके खिलाफ हम पाठशालायें चलायें, तो जो दोष हम सरकारियोंको देते हैं अुसी दोषमें हम फंस जाते हैं। मां-बापकी अिच्छाके विरुद्ध बच्चोंको शिक्षा देने और घरोंमें कलह पैदा

कहनेका हमें अधिकार नहीं। जो विद्यार्थी मोहके मारे अुस पार चले गये हैं, वे अपनी भूल भी समझ सकते हैं, जिनमें दृढ़ सहनेकी शक्ति है, अुन विद्यार्थियोंको बचानेकी जरूरत नहीं। वे अपने पैरों पर खड़े हो सकते हैं। अैसे विद्यार्थियोंके लिअे यहां जरूरी हो हम जरूर पाठशालायें खोलें और वहां हो सके अुसे चलावें। पर अैसे विद्यार्थी सारे हिन्दुस्तानमें कहां हैं? कितने हैं? और अैसी पाठशालायें कहां हैं जहां विद्यार्थियोंकी मुख्यता विवेकपूर्ण, मर्यादाशील किन्तु सहनशील, निडर और सबसे बढ़कर सादे भी बन सकें? अैसे विद्यार्थी जब हजारोंकी तादादमें तैयार होंगे, तब हिन्दुस्तानमें सच्ची जिन्दगी अुमड़ पड़ेगी और विरोधियों पर अिसका भी पुरुषा न रहेगा कि स्वराज्य कहां है।

और अैसे विद्यार्थियोंको सबल तैयार होनेके लिअे भी हमें थोड़ेसे विद्यार्थियोंवाली मगर शुद्ध राष्ट्रीय पाठशालाका ही सेवन करना चाहिये। जहां मां-बाप अपने बच्चोंको भेजनेमें मेहरबानी करते जान पड़ें, विद्यार्थी मरजी करते हों और अिस तरहकी सूची या आड़ी-टेढ़ी धमकियां दी जाती हों कि 'आप मदद न करेंगे तो हम सरकारके साथ सम्बन्ध जोड़ लेंगे,' वहां हमें यही समझ लेना चाहिये कि राष्ट्रीय पाठशाला नहीं है, और असी पाठशाला चलती हो तो अुसे बन्द ही कर देना चाहिये। असहयोगका धर्म अब समझा जा चुका है। अुसकी कीमत लग चुकी है। अुसमें भरी हुअी शक्तिसे जनता अनभिज्ञ नहीं है। अिस तरह असहयोगकी पाठशालाओंका रास्ता सीधा हो गया है। हमें अपने दिलको बिलकुल धोखा न देना चाहिये। अगर हम विचार और आदेशको बराबर समझकर, श्रद्धामें अटल रहकर अपना काम करते जायें तो अन्तमें भला ही होगा।

नवजीवन, ८-८-'२१

३

['राष्ट्रीय शिक्षा' नामक लेख ।]

ठेठ नैरोबीसे अेक भाअी लिखते हैं जिसका मतलब यह है — राष्ट्रीय शिक्षा आगे नहीं बढ़ सकती, अिसका कारण यह है कि 'विद्यार्थियोंको अैसी शिक्षा नहीं दी जाती, जिससे आगे चलकर वे अपने पैरों पर खड़े रह सकें। अगर अैसी सिखाअी जाये तो यह मुश्किल दूर

हो जाय। चरखा तो होना ही चाहिये। राष्ट्की नज़र पाठ्यक्रममें मैं सेनीको पहला स्थान और चरखेको दूसरा स्थान होना चाहिये।'

अिस आलोचनाका विचार 'नवजीवन' में पहले हो चुका है। पर अखबारोंमें हुआी चर्चा याद रखनेका रिवाज नहीं, अिसलिये जब-जब अिस तरहके सवाल अुठते हैं तब-तब अुन पर दुबारा गौर करना पड़ता है। यह माननेका कोअी कारण नहीं कि खेतीकी शिक्षा न दी जानेसे राष्ट्रीय शिक्षा मंद पड़ गयी है। राष्ट्रीय शिक्षा जिस हद तक मन्द पड़ी है, अुस हद तक जिम्मेदारी खास तौर पर शिक्षकोंकी ही है। यह मैं बहुत बार कह चुका हूं, लिख चुका हूं और यह बात अैसी है जो साबित की जा सकती है। जहां शिक्षक चरित्रवान, लगनवाले, श्रद्धालु, और समझदार पाये गये हैं वहां राष्ट्रीय स्कूल आज भी चल रहे हैं। अिसका जिक्र 'नवजीवन' में कअी बार हो चुका है।

हालांकि अिस मन्दताके लिअे शिक्षक जिम्मेदार हैं, मगर अिसमें अुन्हें दोष नहीं दिया जा सकता। शिक्षक खुद प्रतिकूल राज्यव्यवस्था और गुलामीकी शिक्षाके शिकार हो चुके थे और बड़ी कोशिशके बाद अुनसे छूटे थे। अुनसे जितनी मदद दी जा सकती थी, अुतनी वे दे चुके और शान्त हो गये। राष्ट्रीय शिक्षा आगे बढ़े, अिससे पहले चलती हुअी पाठशालाओंको अपना तेज प्रकट करना पड़ेगा, और अगर वे कायम रहनेवाली होंगी तो जरूर तेज प्रकट करेंगी। सरकारी पाठशालाओंमें अपने पैरों पर खड़े रहनेकी शिक्षा नहीं दी जाती। फिर भी अुनका सिलसिला जारी है, क्योंकि हम अुनके तेजमें चौंधिया गये हैं। अिसके सिवा अुस तालीमके अखीरमें किसी किसीको ४००–५०० या अिससे भी ज्यादा वेतनकी नौकरी मिल सकनेका लालच रहता है। और जुअे या लॉटरीकी तरह अिसमें भी यह बात है — 'अेक आदमीको तो हजार दो हजारका अिनाम मिलेगा ही, तब फिर वह अेक मैं ही क्यों न होअूं।' जैसे हजारों आदमी अिस तरहके लालचमें फंसकर तकदीर आजमानेको तैयार हो जाते हैं, वैसी ही बात सरकारी तालीमकी है। अिस तरहका लालच राष्ट्रीय शिक्षामें नहीं है।

अब अूपर बताअी हुअी सूचनाके गुण-दोषकी जांच कर लें। खेती हमारे देशमें जरूर मुख्य चीज है, पर वह चीज मिट नहीं गयी है। अिस-

लिअे अुसका पुनरुद्धार नहीं करना है। अुसमें सुधार बहुत करने हैं। मगर खेतीका सुधार राष्ट्रीय शिक्षा देनेवालोंके बूतेसे बाहर है, क्योंकि वह काम राज्यकी मददके बिना न आगे जा सकता है और न अुसको शोभायमान किया जा सकता है। अुसमें लाखों रुपयेकी जरूरत है लाखों रुपये सिर्फ प्रयोगोंमें खर्च हो जाते हैं। मेरा पक्का विश्वास है कि यह काम स्वराज्य मिले बिना हो ही नहीं सकता। खेतीसे सम्बन्ध रखनेवाले कानून देशकी आर्थिक हालतके अनुकूल होने चाहिये जो आज नहीं हैं, जगह-जगह खेतीके आदर्श स्थान होने चाहिये, वे भी नहीं हैं, किसानोंको खास तरहकी सुविधाअें होनी चाहिये, वे आज नहीं हैं; किसानोंके खेतोंमें जाकर शिक्षा देनी पड़े तो अुसके लिअे भी आज सहूलियत नहीं हो सकती। ये सब बातें लोकप्रिय और लोगोंकी भलाअीके लिअे ही चलनेवाली हुकूमतोंमें आज भी हैं, जैसे दक्षिण अफ्रीका, आस्ट्रेलिया वगैरा देशोंमें। अिस तरह राष्ट्रीय शिक्षाशास्त्रियोंके पास दूसरी बड़ी चीज बची रह गअी जो नैरोबीके भाअी मानते हैं और अुसके सिलसिलेमें चलनेवाली संस्थाअें राष्ट्रीय शिक्षा लेनेवाले तमाम युवकोंको ले सकती है और स्वावलम्बी बना सकती है। मगर चरखेके शास्त्रका शास्त्रीय ज्ञान अुतना ही जरूरी है, जितना अच्छे हजामके लिअे हजामतका या अमीनके लिअे पैमाअिशका होता है। अैसे नौजवान धीरे-धीरे निकलते जा रहे हैं और ज्यों-ज्यों खादीका आन्दोलन आगे बढ़ेगा, त्यों-त्यों राष्ट्रीय शिक्षाका क्षेत्र भी अपने-आप आगे बढ़ता जायगा।

नवजीवन, ५-६-'२७

४

['राष्ट्रीय पाठशाला' नामक टिप्पणीसे।]

कहां यह बकरी और कहां सरकारी स्कूलोंका शेर? अेक शेर कअी छोटी-मोटी बकरियोंको खा जाता है। अिस हिसाबसे राष्ट्रीय पाठशालाका मोह रखनेवालेकी बेवकूफीकी भी कोअी हद है? बेसमझ और छिछले विचार करनेवाले लोग शायद अिस तरहकी बात कहें। लेकिन अिसमें राष्ट्रीय शिक्षाके पुजारीको हार मान लेने या डर जानेका कोअी कारण नहीं।

१५
हृदयकी ज्वाला

[बिहार विद्यापीठके पदवीदानके मौके पर गांधीजीका भाषण।]

आज सभापतिकी जगह लेने पर मेरे मनमें जो भाव पैदा हो रहे हैं, अुन्हें मैं बयान नहीं कर सकता। हृदयकी भाषा बोली नहीं जा सकती। और मुझे भरोसा है कि तुम्हारा दिल मेरे हृदयकी बात समझ लेगा।

स्नातकोंको मैं बधाअी देता हूं, यह कहना तो दुनियादारीकी बात होगी। अुन्होंने जो प्रतिज्ञा ली है — देशसेवा और धर्मसेवाकी — अुसका रहस्य वे अपने दिलमें अुतार लें और मेरे मुंहसे जो वेदवाणीका बोध सुना, अुसे भी वे अपने हृदयमें रख लें और अुस पर ठीक-ठीक अमल करें, तो मुझे अितने से ही संतोष हो जायगा और मैं यह विश्वास रखकर बैठ जाअूंगा कि विद्यापीठकी हस्ती कल्याणकारी है।

थोड़े समय पहले मैंने गुजरात विद्यापीठमें जो बातें कही थीं, वे ही आज मेरी जबान पर आ रही हैं। हमारे यहां अेक भी अध्यापक आदर्श अध्यापक रह जाय, अेक भी विद्यार्थी आदर्श विद्यार्थी रह जाय, तो मैं यह समझूंगा कि हमें सफलता मिली है। दुनियामें हीरेकी खानें खोदने पर भी पत्थरके पहाड़ निकलते हैं और अथक परिश्रम करनेके बाद *अेकाध हीरा निकलता है।* दक्षिण *अफ्रीकामें रहा तब तक मैंने* हीरेकी खान अेक बार भी नहीं देखी, अिस डरसे कि अछूत गिने जानेके कारण कहीं मेरा अपमान न हो जाय! लेकिन गोखलेजीको मुझे अफ्रीकाका यह अुद्योग दिखाना था। अुनका अपमान तो होनेवाला था नहीं। अुनके साथ जो दृश्य देखा, अुसका तुमसे क्या बयान करूं? मिट्टी और पत्थरोंके बड़े बड़े ढेर पड़े थे। करोड़ों रुपये अिस पर खर्च हो चुके थे और अुसके बाद लाखों मन मिट्टी निकलने पर दो-चार सेर हीरे निकल आयें, तो तकदीरकी बात! पर अिन खानवालोंकी दिली ख्वाहिश तो अनोखा हीरा निकालनेकी थी। कलीनन हीरा कोहनूरसे भी बढ़िया

होता है। खानका मालिक अिस तरहका हीरा निकाल कर ही अपनेको कृतार्थ करना चाहता था। मनुष्यकी खान पर लाखों और करोड़ों रुपये खर्च करके हम भी थोड़ेसे मुट्ठीभर हीरे और जवाहर निकाल सकें तो कैसा अच्छा हो? अैसे हीरे और जवाहर पैदा करनेकी भावनासे ही यह विद्यापीठ चलना चाहिये।

यह दुःखकी बात नहीं है कि आज अिस विद्यापीठमें अितने कम स्नातक पदवी ले रहे हैं। परन्तु दुःखकी बात तो तब होगी, जब वे अपनी प्रतिज्ञाको न पालें और यह प्रतिज्ञा लेते वक्त वे अपने मनको अिस तरह समझा लें कि अितने शब्द होठोंसे भले ही बोल दें, पर बाहर निकल कर सब भूल जायंगे। अुस वक्त मुझे लगेगा कि अिस कामने देशको धोखा दिया है। तब तो आज जो कुछ किया गया है, वह सब नाटक हो जायगा; और अगर अैसे ही नाटक करते रहना हो, तो विद्यापीठकी हस्ती जितनी जल्दी मिट जाय अुतना अच्छा है।

आज हमारे पास पांच विद्यापीठ हैं — बिहार, काशी, जामिया-मिलिया दिल्ली, महाराष्ट्र और गुजरात। ये सब अपने-अपने ध्येय पर अच्छी तरह कायम हैं और मुझे विश्वास है कि अिससे देशका बुरा नहीं हुआ, भला ही हुआ है।

अिन सबकी प्रवृत्तिमें दो पक्ष रहे हैं — अेक नैतिक पक्ष और दूसरा आर्थिक पक्ष। नैतिक पक्षका ध्येय सब विद्यापीठोंका है — सरकारके सहारे न रहना। मुझे बहुत विचार और देखभालके बाद मालूम होता है कि अिनसे यह अनाश्रय या असहयोग कराकर मैंने कुछ भी बुरा नहीं किया। मुझे अिस बातका जरा भी पछतावा नहीं होता कि मैंने हजारों विद्यार्थियोंको सरकारी संस्थाओंसे निकाल लिया और सैकड़ों शिक्षकों तथा अध्यापकोंसे अिस्तीफे दिलवाये। मुझे मालूम है कि अुनमें से बहुतसे वापस चले गये, बहुतेरे दुःखी होकर गये और बहुतोंको सन्तोष नहीं है। मगर अिससे मुझे दुःख नहीं — दुःख नहीं यानी पछतावेका दुःख नहीं, समझदारका दुःख तो है ही। मगर यह तकलीफ तो हम पर आनी ही चाहिये। अैसा कष्ट अभी और ज्यादा पड़ेगा। सत्याग्रही पर चलनेमें तकलीफ न आती हो, सदा ही सुखकी सेज पर सोनेका मिलता हो, तो

सभी सत्याचरण करने लगें। मेहनत न पडती हो तो सचाअीकी खूबी ही क्या? हमारा सब-कुछ चला जाय, हिन्दुस्तान भी हाथसे चला जाय, तो भी हम सचाअी न छोड़ें और विश्वास रखें कि अीश्वरकी गति न्यारी है। अीश्वरका राज्य सत्य पर दारमदार रखता है; वह रहेगा तो हिन्दुस्तानका राज्य तो वापस आ ही जायगा। अिसीमें हमारी सत्य-निष्ठा है। बहुतसे अध्यापक अिस वक्त बेचैन हैं, कितने ही भूखों मरते हैं। भले ही वे अशान्त हों, भले ही भूखों मरें। यही हमारी तपस्या है और अिसी तपस्यासे हम राष्ट्रीय वातावरणको साफ करेंगे।

मगर अिस द्वन्द्वमय जगतमें अिति पक्ष भी तो है। सब धर्म अीश्वरका नेति-नेति कहकर वर्णन करते हैं। फिर भी व्यवहारमें तो वे अितिसे ही काम लेते हैं। यह अिति पक्ष कठिन है — रचनात्मक है। अिसकी कठिनता मैं देख रहा हूं। अिस अिति पक्षके विचारमें मैं दिन-दिन प्रगति कर रहा हूं। जब मैं यूरोपका खयाल करता हूं, तब देखता हूं कि वहांके देशोंमें बच्चोंको वहांके वातावरणके अनुकूल शिक्षा दी जाती है। अेक ही लड़ाअीका वर्णन तीन मुल्कोंके अितिहासकार तीन अलग-अलग दृष्टियोंसे करेंगे। मगर अिन तीन अलग-अलग दृष्टियोंसे ही अुन-अुन देशोंका भला होना है। अिंग्लैंडकी दृष्टिसे फ्रान्स नहीं देखेगा, जर्मनी नहीं देखेगा। और हमारे यहां? हमारे यहां तो अिंग्लैंडके वातावरण अनुकूल शिक्षा दी जाती है। अंग्रेजी सभ्यताकी नकल हम किस तरह करें, अिस अुद्देश्यको सामने रखकर ही हमारी सारी आधुनिक शिक्षा दी जाती है। अिसमें कोअी साजिश नहीं, पर आजकी हालतमें यही कुदरती है। मेकॉले बेचारा जब हमारे पुराणोंको समझता ही नहीं तब करता क्या? वह तो अुन्हें बकवास बनाकर पश्चिमी पुराण जारी करनेका ही आग्रह कर सकता था। अुसकी अीमानदारीमें मुझे शक नहीं। पर अुसने अिस तालीम पर जो जोर दिया, अुससे देशका नुकसान हुआ है। विदेशी भाषाके जरिये शिक्षा पानेके कारण हम सभी चीज पैदा करनेकी शक्ति खो बैठे हैं, हम बिना पंखके पखेरू हो गये हैं। हम मुन्शी और अखबार-नवीस बननेका ही खयाल रखते हैं। ज्यादासे ज्यादा लाटसाहब बनने तक हमारी नजर पहुंचती है। अेक बच्चा मुझे कहने लगा, 'मुझे

लाटसाहब बनना है।' मैं हार गया। मैंने कहा, अिसके लिअे सरकारको सलामी देनी पड़ती है, सरकारकी खुशामद करनी पड़ती है। हमारे देशमें लॉर्ड सिंहा बनानेकी ताकत नहीं है। आज तो हमारे यहां अिनीका खयाल रहता है कि अींटके बजाय संगमरमरका फर्श कैसे लगे। अिलाहाबादकी अिकॉनॉमिक अिन्स्टिट्यूट देखकर और अुन पर लाखों रुपया खर्च हुआ जानकर मुझे दुःख हुआ था। अुसमें हम कितनोंको पढ़ा सकते हैं? करोड़ों भूखों मरते हों, तब हम अैसे महल कैसे बना सकते हैं? नअी दिल्लीको देखो। अुसे देखकर तो आंखोंमें आंसू आते हैं। रेलगाड़ीके पहले और दूसरे दर्जेके डिब्बोंमें पिछले २० सालमें कितने फेरबदल हुअे हैं? पर देहातियोंके लिअे डिब्बोंमें कोअी सुधार हुअे हैं? क्या गांववालोंको पहले दर्जेके डिब्बेके सुधारसे कोअी फायदा हुआ है? जिसे प्रगति कहा जाता है, वह सब सात लाख गांवोंकी आबादीकी अुपेक्षा करके ही हो रही है। अिसे मैं शैतानियत न कहूं, तो मेरी सत्य-निष्ठा झूठी ठहरेगी। यह कल्पना अिस राज्यकी है। अिसमें कोअी शक नहीं कि वह यही कल्पना कर सकता है। हाथी चीटीके लिअे अिन्तजाम करने लगे, तो बेचारा हाथीका प्रबन्ध करेगा और चींटी अुस ढेरके नीचे कुचल जायगी। सर लेपल ग्रीफिनने कहा था कि हमको हिन्दुस्तानके लोगोंकी हालतका अन्दाज नहीं आ सकता, जिसकी जान निकल रही हो वही छुरीके घावको जान सकता है। लेकिन हमने तो परायोंमें ही अपना बन्दोबस्त करानेमें अितिथी मान ली है। हमारी व्यवस्था पराये कैसे कर सकते हैं? कितने ही भले हों, तो भी वे बेचारे क्या करें? बेशक कितने ही अंग्रेज जान-बूझकर नाश करनेवाले भी मौजूद हैं, मगर अिसमें मुझे शक नहीं कि ज्यादातर अंग्रेज शुद्ध बुद्धिवाले हैं। लेकिन जब तक वे हमारे बननेको तैयार न हों जायं, तब तक वे हमारे दुःख, हमारी भूखको क्या समझें? अुनका तो अुलटा न्याय चलता है। हमारा न्याय तो पहले गरीबका खयाल रखता है। और मेरा यह यकीन है कि चरखेके बगैर अिन गरीबोंके साथ आध्यात्मिक सम्बन्ध हो ही नहीं सकता। हमारे स्नातक भी दूसरी सरकारी युनिवर्सिटियोंके ग्रेज्युअेटोंकी तरह पंडिताअी करना चाहेंगे, तो वे भी अुलटे न्याय पर ही चलेंगे।

अुन्हें जो कुछ शृंगार या सजावट करनी हो, चरखेको केन्द्र मानकर ही करे। मैं यह पुकार-पुकार कर कहता हूं कि नेति पक्षको मानकर राष्ट्रीय विद्यालय कहलवानेका सबको हक है। मगर साथ ही अगर अिति पक्षको न माना जायगा, तो वह सच्चा राष्ट्रीय विद्यालय नहीं होगा। देवप्रसाद सर्वाधिकारीने अपना अनाथालय मुझे दिखाकर कहा, देखिये, चरखा भी रखा है। मैंने कहा, अिसमें कुछ नहीं। बहुतेरी चीजोंमें अेक चरखा भी रहा, तो वह कुचल जायगा। जो चरखेका अर्थशास्त्र समझता है, वह अैसी भूलमें नहीं पड सकता कि बहुतसी फायदेमन्द चीजोंमें से अेक चरखा भी है। तारे बहुत हैं, पर सूरज अेक ही है। बहुतसी राष्ट्रीय प्रवृत्तियों-रूपी तारोंके बीच सूर्य केवल अेक चरखा ही है। अिसके बगैर विद्यालय निकम्मे हैं। पाठशालायें बेकार हैं।

लॉर्ड अिरविनने सच ही कहा है कि आप पार्लमेंटके जरिये जितना लेना हो ले लीजिये। यह बात अैसी है कि जिस पर अुनसे नाराज न होना चाहिये। अुन्होंने यह बात सद्भावसे कही है। अुनसे और कोअी आशा रखना सपनेकी-सी बात है। वे बहादुर आदमी हैं, और अपने देशके खयालसे ही बात करते हैं। तो क्या हम अपनी वीरता गवा बैठे हैं? हम अपने देशकी दृष्टिसे नहीं देख सकते? अुनके ज्योतिमंडलमें सूर्य लदन है, मेरेमें चरखा है। अिसमें मेरी भूल हो सकती है। लेकिन जब तक यह भूल मेरी समझमें नहीं आ जाती, तब तक यह मेरी जानसे प्यारी भावना है। अिस चरखेमें देशका बुरा करनेकी ताकत नहीं है, पर अिसे छोड देनेमें देशका नाश है, दुनियाका भी नाश है। क्योंकि यह सर्वोदय या सबके भलेका साधन है, और सर्वोदय ही सच्ची चीज है। मेरी आंख सर्वोदयकी नजरसे ही देखती है। भूल करनेवालेको देखता हूं तो मुझे लगता है कि मैं भी भूल करनेवाला हूं, अिसलिअे सबको अपनी दृष्टिमें रखता हू। सबका हित देखे बिना मैं विचार नहीं कर सकता। अधिकसे अधिक लोगोंका हित — यह चरखाशास्त्र नहीं है। चरखेका शास्त्र तो सर्वोदय — सब प्राणियोंका भला समझाता है। तुम पढो तो भी यही खयाल रखकर पढ़ो, तुम सीखो, खोज करो, तो भी यही दृष्टि रखकर करो कि अन्तमें तुम्हें चरखा ही

दिखाअी दे। जैसे प्रह्लादने सब चीजोंमें से रामको ही निहार लिया, जैसे तुलसीदासको कृष्णकी मूर्तिमें भी रामजी ही दिखाअी दिये, वैसे ही मुझे चरखेके सिवा और कुछ नहीं सूझता। तुम्हारे विचारोंकी समाप्ति अिसीमें होनी चाहिये कि अिस चरखेकी प्रगति कैसे हो। तुम्हें अिसी ढंगसे सोचना है कि तुम्हारा रसायनका ज्ञान किस तरह चरखेके काम आ सकता है, तुम्हारा अर्थशास्त्र अिसे किस तरह मदद दे सकता है और तुम्हारी भूगोलकी जानकारी अिसमें किस तरह अुपयोगी हो सकती है। मैं जानता हूं कि हमारे विद्यापीठमें अभी यह बात पैदा नहीं हुअी, गुजरातमें भी नहीं हुअी। मगर अिसमें मैं किसीकी टीका या बुराअी नहीं करना चाहता, सिर्फ अपने दुःखकी आग तुम्हारे सामने अुंडेलने बैठा हूं। यह दुःख बयान नहीं किया जा सकता। यह दुःख आज तुम जान सकोगे, अिस आशासे अितना बोला हूं। अगर अितना समझाने पर भी तुम्हें यह लगता हो कि चरखेका केन्द्र विद्यापीठके बाहर है, तो विद्यापीठको भूल जाओ। मेरा काम अिस सारे चरखेकी प्रवृत्तिके सिवा और कुछ नहीं है। विद्यापीठकी हस्ती अिसीके लिअे है और अिसके लिअे मैं तुमसे कुछ मांगता हूं। राजेन्द्रबाबूको विद्यापीठके लिअे भीख मांगनी पड़े, तो यह अुनकी शक्तिका बेजा खर्च है। तुम अिस विद्यापीठको संभालो और राजेन्द्रबाबूसे दूसरे काम लो। मेरी यही प्रार्थना है कि ये स्नातक अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहकर जिन्दगीभर अुसका पालन करें।

नवजीवन, ६–२–'२७

१६

गुजरात विद्यापीठकी पुनर्रचना

मुझे विश्वास है कि जो गुजरात विद्यापीठ टूटता-सा दीखता है, जिसमें रोज-रोज तादाद घटती जा रही है और जिसकी कुछ लोग अुपेक्षा करते हैं, अुस गुजरात विद्यापीठका हिस्सा हिन्दुस्तानके स्वराज्यके आन्दोलनके अितिहासमें अच्छा माना जायगा। यह शककी बात है कि अिस विद्यापीठके न होने पर बंगाल, अलीगढ़, काशी, बिहार और पंजाबके विद्यापीठ स्थापित होते या नहीं। जब गुजरात विद्यापीठ स्थापित हुआ था, तब सबकी नजर अिसकी तरफ लगी हुअी थी। गुजरातके साहसकी होड़ करनेकी सबके जीमें आती थी।

अिसमें तैयार हुअे स्नातक और अिसकी सेवा करनेवाले अध्यापकोंमें से कुछ आज अुसमें नहीं हैं, फिर भी वे असहयोगके झंडेका गौरव बढ़ा रहे हैं। अगर यह विद्यापीठ टूट जाय, तो देशको नुकसान पहुंचेगा और हम पर जो आरंभशूर होनेका दोष लगाया जाता है, अुसकी अेक और दु:खद मिसाल बढ़ जायगी। गिरी हुअी जातियोंके जीवनको अुज्ज्वल करनेवाली संस्थाओं पर तमाम दुनियामें हमले होते आये हैं। अिन हमलोंको पार करनेवाली संस्थाओंने हमेशा जगतकी अुन्नतिमें बड़ा हिस्सा लिया है। क्योंकि आफतोंके सामने झुक जानेके बजाय जो व्यक्ति या संस्था सीधी खड़ी रह सकती है, वह दुनियाको आत्म-विश्वास, स्वावलंबन, बहादुरी, दृढ़ता वगैराका पदार्थपाठ सिखाती है।

अिसलिअे गुजराती लोग विद्यापीठको झटसे मरने नहीं देंगे। आचार्य आनन्दशंकरभाअीकी मददसे अेक समिति मुकर्रर करके विद्यापीठने जो जांच कराअी थी, सो पाठकोंको मालूम ही है। अुसी वक्तसे विद्यापीठको अच्छी बुनियाद पर खड़ा करनेके अिरादेसे कितने ही फेरबदल किये गये थे और कितनी ही दूसरी तबदीलियोंका विचार किया गया था।

तूफानी समुद्रमें पड़ा हुआ जहाज मताधिकार पर रचे हुअे मण्डलके हाथमें नही सौंपा जाता; मगर वह मण्डल अपने बचावके लिअे खुद ही राजीखुशीसे नौविद्याके जाननेवालोंको अुसका कब्जा दे देता है; और वे शास्त्रज्ञ जरूरत मालूम हो तो अेक कर्णधारके हाथमें अुसका कब्जा पूरी तरह सौंप देते हैं।

विद्यापीठकी व्यवस्थापक-समितिने कुछ अिसी तरहसे अपना अधिकार स्वेच्छासे अेक अैसे छोटेसे मण्डलके हाथमें सौंप देनेका सङ्कल्प किया है, जिसे मतदारोंका नही बल्कि सिर्फ विद्यापीठका ही विचार करना है। यह अिसने समझदारीका काम किया है। व्यवस्थापक-समितिका पिछले महीनेकी २८ ता० को पास किया हुआ प्रस्ताव महत्वका होनेसे अुसे नीचे पूराका पूरा देता हूं:

"अिस समितिकी यह राय है कि:

१. गुजरातने असहयोगके राष्ट्रीय आन्दोलनके सिलसिलेमें गुजरात विद्यापीठको कायम करके असहयोग आन्दोलनमें ज्वारभाटा आने पर भी अुसे बनाये रखा, जिससे राष्ट्रकी अुपयोगी सेवा हुआी है,

२. मगर संख्याके खयालसे देखें तो विद्यापीठमें लगातार कमी ही होती रही है,

३. गुणकी दृष्टिसे भी अगर भीतरी हालत अच्छी होती, तो जितना काम हुआ अुससे कहीं ज्यादा हो सकता था;

४. विद्यापीठके जीवनमें अब यह मौका आ गया है कि अब विद्यापीठके अिन्तजामको ज्यादा कारगर बनानेके लिअे और अुसके साथ जुड़े हुअे ध्येयोंका ज्यादा अेकाग्रतासे पालन करनेके लिअे विद्यापीठका तन्त्र अेक स्थायी मण्डलको सौंप देनेकी जरूरत है अिसलिअे;

५. और अिस समितिने विद्यापीठकी पुनर्रचनाके बारेमें ता० ८-१२-'२७को जो प्रस्ताव पास किया था अुसके अनुसार;

यह समिति नीचे लिखे* सदस्योंमें से अुनका, जो अिसके साथ जुड़े हुअे ध्येयोंको मंजूर करने और अुन पर अमल करनेकी प्रतिज्ञा करेंगे, गुजरात विद्यापीठ मण्डल मुकर्रर करती है, और अुसे विद्यापीठकी तमाम संस्थायें और अुसकी तमाम जायदाद, जिम्मेदारियां और हक सौंपती है; और अिस मण्डलको अपनी संख्यामें २५ सदस्य और बढ़ानेकी, मौत होने पर, अिस्तीफा मिलने पर, मण्डलकी प्रतिज्ञा तोड़ने या और किसी प्रबल कारणसे किसी भी सदस्यको मण्डलके ⅘ बहुमतसे अलग करने पर या और किसी कारणसे जगह खाली होने पर दूसरे सदस्योंको मुकर्रर करने वगैराकी सत्ता और वे सब दूसरे अधिकार, जो अिस समितिको हो सकते हैं, देती है।

* * *

ध्येय

१. विद्यापीठका मुख्य काम स्वराज्य-प्राप्तिके हेतुसे चलनेवाली प्रवृत्तियोंके लिअे चरित्रवान, शक्तिशाली, संस्कारी और कर्तव्य-परायण कार्यकर्ता तैयार करना है।

२. विद्यापीठकी तरफसे चलनेवाली और अुसकी मान्य की हुअी हर संस्थाको पूरी तरह असहयोगी होना चाहिये और अिसलिअे वह सरकारका किसी भी तरहका सहारा नहीं ले सकती।

३ विद्यापीठ स्वराज्य और स्वराज्य-प्राप्तिके साधन अहिंसात्मक असहयोगके सिलसिलेमें कायम हुआ है। अिसलिअे शिक्षकों और संचालकोंको स्वराज्य लेनेके लिअे अहिंसा और सत्यके अविरोधी साधन ही अपनाने और काममें लेनेकी कोशिश करनी चाहिये।

४. विद्यापीठके संचालक और शिक्षक और विद्यापीठकी मान्य की हुअी संस्थायें अस्पृश्यताको कलंकरूप माननेवाली और

* नामावली अिस संग्रहके लिअे आवश्यक नहीं है, अिसलिअे यहां नहीं दी गअी है।

अुसे मिटानेकी कोशिश करनेवाली होनी चाहिये; किसी भी लड़के या लड़कीको अुसके अछूत होनेके कारण बाहर न रखा जाय और भरती होनेके बाद अुसके साथ दूसरी तरहका बर्ताव न किया जाय।

५. विद्यापीठकी संस्थाओंमें और अुसकी मान्य की हुअी संस्थाओंमें काम करनेवाले शिक्षक, संचालक वगैरा चरखेकी प्रवृत्तिमें विश्वास रखनेवाले और अनिवार्य कारणोंके सिवा नियमसे कातनेवाले और बराबर खादी पहननेवाले होने चाहियें।

६. विद्यापीठमें स्वभाषाको प्रधान पद दिया जायगा और तमाम शिक्षा स्वभाषामें दी जायगी।

स्पष्टीकरण : दूसरी भाषाअें सिखाते समय अुन्हीं भाषाओंको काममें लेनेमें कोअी हर्ज नहीं माना जायगा।

७. विद्यापीठमें राष्ट्रभाषा हिन्दी-हिन्दुस्तानीका आवश्यक स्थान रहेगा।

नोट : हिन्दी-हिन्दुस्तानी वह भाषा है जिसे अुत्तरके साधारण हिन्दू-मुसलमान बोलते हैं और जो नागरी या फारसी लिपिमें लिखी जाती है।

८. विद्यापीठमें औद्योगिक शिक्षाको बौद्धिक शिक्षाके बराबर ही महत्त्व दिया जायगा और जो-जो अुद्योग राष्ट्रके लिअे पोषक हैं, अुन्हींको स्थान दिया जायगा, औरोंको नहीं।

९. भारतवर्षका अुत्कर्ष शहरों पर नहीं बल्कि गांवों पर निर्भर है, असिलिअे विद्यापीठके ज्यादातर रुपयों और शिक्षकोंका अुपयोग खास तौर पर गांवोंमें राष्ट्रपोषक शिक्षाका प्रचार करनेमें ही किया जायगा।

१०. शिक्षाका क्रम तैयार करते समय देहातियोंकी जरूरतोंको प्रधानता दी जायगी।

११. विद्यापीठके मातहत चलनेवाली संस्थाओंमें सभी मौजूदा धर्मोंके प्रति पूरा आदर होना चाहिये और विद्यार्थियोंके आत्म-विकासके लिअे धर्मका ज्ञान अहिंसा और सत्यको ध्यानमें रखकर दिया जाना चाहिये।

१२. प्रजाके शारीरिक विकासके लिअे व्यायाम और शारीरिक मेहनतकी तालीम विद्यापीठमें जरूरी समझी जायगी।"

यह प्रस्ताव पास करके व्यवस्थापक लोग अपनी जिम्मेदारीसे मुक्त नहीं हो जाते। मगर जैसे अपने हाथसे अधिकार छोड देनेमें अुन्होंने जिम्मेदारी समझी है, वैसे ही यह अुम्मीद रखी जा सकती है कि वे बाहर रहते हुअे अपनी जिम्मेदारी ज्यादा समझेंगे। डूबते हुअे जहाजका अधिकार भगोंके खलासियोंको सौंपते वक्त मालिक सच्ची जिम्मेदारीसे हाथ नहीं धोते, मगर जो खलासी अुनके नौकर होते हैं अुनके मातहत काम करनेमें वे अपनेको धन्य समझते हैं और अपनी मिल्कियतको बचानेकी बुद्धिमानी करते हैं। यही हालत व्यवस्थापक-समितिके सदस्योंकी होनी चाहिये।

और स्थूल जिम्मेदारी छोड़नेमें व्यवस्थापकोंकी नैतिक जिम्मेदारी जितनी बड़ी है, अुतनी ही जिम्मेदारी मंडलकी भी बड़ी है। संस्थाके अिस संक्रांतिकालमें अैसे ही मण्डलको अिस संस्थाका अधिकार लेना चाहिये, जिसे विद्यापीठकी मौजूदा हालतको सुधारनेकी आशा हो। मण्डलमें अेक भी सदस्य या सदस्याको नामके लिअे नहीं रखा गया, बल्कि सिर्फ काम और कामकी ही आशासे रखा गया है। अुन्हें सतत जाग्रति दिखाना है।

ध्येयोंकी देह और आत्माको मरते दम तक बनाये रखनेमें अिस मण्डलकी सेवा और कीमत है। जो ध्येयोंके बारेमें प्रतिज्ञा लें, वे ही मण्डलमें रहें, अैसा नियम होनेके कारण सदस्य ध्येयोंको माननेवाले तो होने ही चाहिये। अुनके ध्येयोंको बारीकीके साथ पालनेमें ही विद्यापीठकी वृद्धि निहित है। अुन्हें अपने पर भरोसा होगा तो अुसकी छूत विद्यार्थियोंमें भी फैलेगी और विद्यार्थियोंमें फैली हुअी छूत जनतामें फैले बिना रह ही नहीं सकती।

ध्येयोंको ध्यानसे पढ़नेवाले देखेंगे कि सरकारी और असहयोगी विद्यालयोंके बीच कहीं भी मुकाबला नहीं हो सकता। अुन्हीं पुस्तकोंका सरकारी छायामें रहनेवाली पाठशाला अेक अुपयोग करेगी, असहयोगी पाठशाला दूसरा करेगी। यह लिखते वक्त भी महाविद्यालयके विद्यार्थी मेरे अिस कथनका पदार्थपाठ दे रहे हैं।

मगर असहयोग — अहिंसा और सत्यमें से जो ध्येय निकलते हैं अुन पर जरा विचार कर लें। अस्पृश्यताका निरपवाद बहिष्कार, चरखा-यज्ञ, स्वभाषाके जरिये ही शिक्षा और हिन्दी-हिन्दुस्तानीकी और अुद्योगकी शिक्षाका लाजिमी स्थान — ये सब विशेषतायें हैं। राष्ट्रीय विद्यापीठके लिअे ये चीजें नअी नहीं हैं, पर अिन्हें अिस प्रस्तावमें रखनेके दो अर्थ हैं। अेक तो यह कि अुनके पालनमें जो कुछ ढिलाअी रहा करती थी, वह अब बर्दाश्त नहीं की जायगी, अुसके बारेमें समझौता नहीं होगा। दूसरा अर्थ यह है कि प्रस्तावमें अुसे साफ तौर पर रखकर व्यवस्थापकोंने अुन ध्येयों पर अपना विश्वास स्पष्ट रीतिसे प्रगट कर दिया है। अुनमें ही महत्त्वका ध्येय ग्रामशिक्षाका है। दूसरी शिक्षासे अुस पर ज्यादा खर्च करना है, अुसे प्रधानता देनी है। अिस चीज पर आज तक नहींके बराबर अमल हुआ है। अब मण्डलकी यह हालत जल्दी बदलनी है।

मैं यह मान लेता हू कि अिस प्रस्तावसे शहरोंके राष्ट्रीय विद्यालयोंमें पढ़नेवाले विद्यार्थी भी अपना धर्म समझ जायगे। जो आशायें सरकारी स्कूलोंमें जानेवाले विद्यार्थी रख सकते है, वे आशायें राष्ट्रीय विद्यालयोंमें पढनेवालोंके लिअे त्याज्य हैं। सरकारी पाठशालाओंमें बढ़ियासे बढ़िया तालीम पानेवाले सरकारी नौकरी करनेमें अभिमान समझते हैं, सरकारके दीवानी या फौजी महकमेमें बडा ओहदा पानेकी अुम्मीद रखते हैं। सरकारी स्कूलोंके मारफत सरकार हर साल अपनी जरूरतसे बहुत ज्यादा नौकर तैयार कर लेती है। राष्ट्रीय विद्यापीठमें पढनेवाले विद्यार्थियोंको यदि अुसके प्रति गर्व हो, तो अुनका पहला लक्ष्य राष्ट्रीय कामोंमें पड़कर गुजर करना होगा। अिन कामोंकी अनिश्चिततामें ही वे निश्चितता देखेंगे। वे यह मानेंगे कि अुनके अिन प्रवृत्तियोंमें पडनेसे वे जरूर निश्चित हो जायंगी। अुन्हें लालच वेतनका न होकर सेवाका होगा। राष्ट्रीय प्रवृत्तिमें अुन्हें गुजारे भरको मिल जायगा, तो अुसीमें वे संतोष कर लेंगे और दूसरी किसी भी जगह ज्यादा तनख्वाहका प्रलोभन होगा तो अुसे छोड़ देंगे। आज यह हालत नहीं है; अिसे सुधारना नये मण्डलके और विद्यार्थियोंके हाथमें है। अछूतोंकी सेवा, मजदूरोंकी सेवा, खादी-सेवा वगैरा व्यापक और रचनात्मक कामोंमें राष्ट्रीय

विद्यापीठोंके ही विद्यार्थी होने चाहिये। अुनमें कितने ही लगे हुअे भी हैं, पर और बहुतोंकी जरूरत है। अिस कमीको पूरा करनेमें मण्डलकी कार्य-दक्षता और कर्तव्य-परायणता निहित है।

नवजीवन, ५-२-'२८

२

[महाविद्यालयका सत्र आरम्भ होते समय विद्यार्थियोंको दिये हुअे गांधीजीके भाषण से।]

. . . मैंने तो महाविद्यालयमें बहुत बार कहा है कि तुम्हें संख्याके बल पर बिलकुल जोर नहीं देना है। मैं यह नहीं कहना चाहता कि तादादकी ताकत हो तो वह हमें प्यारी नहीं लगती। मगर वह न हो तो निराश न होना चाहिये; यह न मानना चाहिये कि सब कुछ चला गया, हाथमें से बाजी जाती रही। हम थोड़े हों या ज्यादा हमारा सच्चा बल सिद्धान्तोंके अपनाने और अुन पर अिन्सानकी शक्तिके अनुसार अमल करनेमें है। अैसे विद्यार्थी थोड़ेसे थोड़े भी हों, तो जो काम विद्यापीठके जरिये पूरा करना है, वह यानी मुक्ति — आखिरी मुक्ति नहीं, बल्कि स्वराज्यरूपी मुक्ति — जरूर मिल सकती है। जिस स्वराज्यके खातिर विद्यापीठकी स्थापना हुअी है, वह स्वराज्य जरूर मिल सकता है। हम अगर झूठे होंगे तो स्वराज्य नहीं मिलेगा।

अभी जो फेरबदल हुअे हैं* और आगे जो होंगे, तुम देखोगे कि वे डरते-डरते करने पड़े हैं, ताकि तुम पर कहीं भार न पड़े। यह कैसी दयाजनक हालत है! अिसमें न तुम्हारी शोभा है, न हमारी। होना तो यह चाहिये कि तुम्हारी तरफसे अध्यापकों और सचालकोंको यह अभयदान मिले कि जिन सिद्धान्तों पर अमल करनेमें तुम जरा भी कमी नहीं रखोगे, जरा भी नहीं चूकोगे। यह अभयदान नहीं है, जिसकी याचना करनेको मैं आया हुआ हूं। सत्रके शुरूसे ही तुम अध्यापकोंको बेफिक्र कर दो, तो काम जरूर शोभायमान होगा। तुम्हारे काममें झूठका जरा भी स्पर्श न होना

* पिछले प्रकरणमें दी गयी पुनर्रचनाके।

चाहिये। तुम अपने मनको, अध्यापकोंको, बड़ोंको और हिन्दुस्तानको धोखा न दो, तभी विद्यापीठकी शान बढ़ाओगे। अध्यापकोंसे दूर बानका जवाब माग सकते हो। अनका धर्म है कि वे तुम्हारी गुत्थियोंको सुलझायें। अैसा न करके तुम जैसे-तैसे बैठे रहोगे, तो विद्यापीठका तंत्र बेसुरा बनेगा।

* * *

सरकारी स्कूल और हमारी स्कूलके बीचका फर्क समझने लायक है। हमारे कितने ही विद्यार्थी जेल गये और दूसरे भी जायंगे। अिसमें विद्यापीठकी शोभा है। सरकारी पाठशालाके विद्यार्थियोंमें यह ताकत है कि वे वल्लभभाओीको मदद दे सकें? या मदद देनेके बाद शिक्षकोंको धोखा दिये बिना कॉलेजमें रह सकें? फिर अुन्हें कैसा भी ज्ञान मिले तो किस कामका? सत्त्व निकालनेके बाद दिया हुआ ज्ञान किस कामका? खोटे रुपयेकी क्या कीमत? अुसे अिस्तेमाल करके धोखा देनेवाला आदमी तो सजावार होता है। सरकारी स्कूलोंके लड़कोंकी हालत अुस खोटे रुपयेकी-सी है। हमारी पाठशालामें सत्त्व तो है ही; अितना ही नहीं, वह बढ़ेगा भी।

अेक और भेद ध्यानमें रखना चाहिये। मैं कअी बार बता चुका हूं कि *सरकारी कॉलेजकी शिक्षाके साथ तुम्हारी शिक्षाका मुकाबला नहीं हो* सकता। अिस जंजालमें पड़ोगे तो मारे जाओगे। अुसकी हम बराबरी नहीं कर सकेंगे। अंग्रेजी जिस ढंगसे वहां सिखाअी जाती है, अुस ढंगसे हमें नहीं सिखानी है। पर साहित्यका जो सूक्ष्म ज्ञान है, वह हमें गुजराती जबानके जरिये देना है। जिससे गुजराती भाषाका विस्तार हो, अुसकी शोभा बढ़े, अुसमें गहरेसे गहरे विचार प्रगट हो सकें, वह काम करना है। गुजराती बोलते वक्त बीच-बीचमें अंग्रेजीके शब्द या वाक्य काममें लेना पड़ें, यह खराब और निहायत शरमकी बात है। दुनियाके और किसी मुल्ककी अैसी हालत नहीं है। अंग्रेजी साहित्यकी जितनी जानकारी जरूरी होगी, वह आगे चलकर अूपरके दर्जेमें दी जायगी। अभी तो जो ज्ञान लेंगे वह गुजरातीके जरिये ही लेंगे। विज्ञान भी अपनी भाषामें ही सीखेंगे। पारिभाषिक शब्द नये नहीं बना सकेंगे तो अंग्रेजी शब्द लेंगे, पर अुनकी व्याख्या तो गुजरातीमें ही देंगे। अिससे हमारी भाषा जोरदार बनेगी। जो

अलंकार हमें अिस्तेमाल करने होंगे, वे हमारी जबान और कलम पर चढ़ जायगे। अभीकी बेहूदा हालतसे जितनी जल्दी निकला जा सके, अुतनी जल्दी निकल जाना चाहिये। अिस बारेमें मैंने 'नवजीवन' में जो कुछ लिखा है, अुसे वेदवाक्य समझना। अंग्रेजीके जरिये ज्ञान दिया जाता है, अिससे *जनताका कितना नुकसान होता है! हमने धर्म छोड़ दिया, कर्म छोड़ दिया,* अिसका यह अेक अुदाहरण है।

दूसरा अुदाहरण अर्थशास्त्रका है। वहां जो अर्थशास्त्र पढ़ाया जाता है, वह गलत है। तुम जिज्ञासु होगे तो देखोगे कि जर्मन, अमरीकन या फ्रेंच भाषामें जो अर्थशास्त्र पढ़ाया जाता है, वह हरअेक अलग-अलग होता है। मेरे पास हंगरीका अेक आदमी आया था। वह जो बात कहता था अुससे मुझे लगा कि वहांका अर्थशास्त्र दूसरा ही होना चाहिये। हर देशकी स्थितिके आधार पर वहांका अर्थशास्त्र तैयार किया जाता है। यह मानना ठीक नहीं कि अेक देशका अर्थशास्त्र सारी दुनियाके लिअे सच्चा है। आज जो अर्थशास्त्र पढ़ाया जाता है, वह हिन्दुस्तानको पामाल कर रहा है। हमें हिन्दुस्तानके अर्थशास्त्रका पता ही नहीं, हमें अुसकी खोज करनी है।

यही बात अितिहासकी है। अध्यापकोंको सोचना चाहिये कि हिन्दुस्तानका अितिहास क्या हो सकता है। कोअी फ्रान्सका आदमी हिन्दुस्तानका अितिहास लिखेगा तो दूसरा लिखेगा, अंग्रेज दूसरा लिखेगा। हिन्दुस्तानका आदमी मूल लेखोंको ढूंढ़ कर, हिन्दुस्तानके वातावरणको देखकर लिखेगा तो जरूर दूसरा ही अितिहास लिखेगा। फ्रांसीसियों और अंग्रेजोंकी लड़ाअीके अंग्रेजोंके लिखे हुअे हालको क्या तुम वेदवाक्य मानते हो? जिसने लिखा होगा अुसने ठीक लिखा होगा, फिर भी अुसने अपने दृष्टिकोणसे लिखा है। वह अुसी किस्मकी घटनायें बयान करेगा जिनमें अंग्रेजोंकी जीत हुअी हो। हम भी अैसा ही करेंगे। फ्रांसीसी भी अैसा ही करेंगे। हम हिन्दुस्तानका अलग ही अितिहास लिखेंगे। महाभारतका अर्थ भी अंग्रेज विद्वान अेक तरह करेगा, हिन्दुस्तानी विद्वान दूसरी तरह करेगा। और अगर वह दिलमें गहराअीसे सोचकर करे, तो अुससे भी दूसरे ही ढंगसे करेगा। विन्सेंट स्मिथकी शैली बढ़िया और विद्वत्तापूर्ण है, अिसलिअे अुसका लिखा अच्छा लगता है। पर यह ठीक नहीं। अंग्रेज विद्वान ही बताते हैं कि अुसमें बहुत

कुछ गलत है, बहुत कुछ रह गया है। विलियम विल्सन हंटरकी भी यही बात है। यहां पुस्तकोंसे अितिहास नहीं पढ़ाया जायगा। अध्यापकने हिंदुस्तानका खूब अध्ययन किया होगा, निरीक्षण किया होगा और वह हिन्दुस्तानका भक्त होगा, तो अितिहास अेक ढंगसे पढ़ायेगा। और अगर अुसने अंग्रेजी अितिहासोंसे ही अपना दिमाग भर रखा होगा, तो न तुम्हें लाभ होगा और न शिक्षकको; अैसे तो शनिकी दशा लगी ही है।

हमारे यहां हर चीज सरकारी स्कूलसे अुलटी ही तरह सिखायी जायगी। गणितशास्त्रके अुदाहरण भी हमारा शिक्षक दूसरी ही तरह बनावेगा। ग्रेग जिन हिन्दुस्तानी बच्चोंको पढ़ाते हैं, अुनके लिअे वे नया गणितशास्त्र बना रहे हैं। हमारा शिक्षक मैंचेस्टरसे लिवरपूलकी दूरी नहीं पढ़ायेगा। वह यहांके हालात परसे अुदाहरण तैयार करेगा, ताकि गणितशास्त्रमें ही अितिहास और भूगोलकी भी शिक्षा मिल जाय। गणित, अितिहास, अर्थशास्त्र और भूगोल सब हमें नये तैयार करने हैं। अिसमें तुम विद्यार्थी मदद न दो तो अध्यापक क्या करें? और अध्यापक ही अगर बच्चे होंगे, तो यह साफ है कि सिद्धान्त टूट जायंगे।

तुम्हें अपना विश्वास, धीरज और अुद्यम न खोना चाहिये। अध्यापकों और अुसूलों पर भरोसा होगा तो तुम नहीं डरोगे। ताकत थोड़ी होगी, तो भी नहीं डरोगे और विद्यापीठकी शोभा बढ़ाओगे। अध्यापकोंको पूरा-पूरा देनेके लिअे मजबूर करोगे। तुम पढ़नेवाले होंगे तो मैंने जो कुछ कहा है, अुसमें से भी सवाल पूछ-पूछ कर अध्यापकोंको तंग कर सकोगे। पूरी दिलचस्पीके साथ काम करोगे, तो रगके घूंट तो पी सकोगे। तुम्हारे शरीर तेजस्वी होंगे, मन तेजस्वी होगा और आत्मा भी तेजस्वी होगी।

यहां जो तुम आते हो सो आत्माको तेजस्वी बनानेके लिअे ही। अिसलिअे जिस अुद्योगकी शिक्षा रखी गअी है अुसमें दिलचस्पी लेकर काम करोगे, तो अुद्योगकी बुद्धि न होगी तो भी वह जाग अुठेगी। लेकिन अगर अुड़ती तरह रहा लगाओगे, तो वैसा नहीं हो सकेगा। दिलचस्पी होगी तो तुम देखोगे कि अिसका भी शास्त्र है। ज्ञान पूर्वक अुद्योग करोगे तो देखोगे कि अिसमें बहुत रस है, और यह साबित कर

सकोगे कि अिसका भी शास्त्र है। यह निश्चय करता कि मुझे जुलाहा बनना है, बढ़अी बनना है और हिन्दुस्तानको स्वराज्य दिलाना है; नौकरी नहीं करनी है, मुंशी नहीं बनना है। यह निश्चय रखना कि मजदूरी करके, खादी बुनकर, खादी-सेवक बनकर गुजारा करना है।

नवजीवन, १७–६–'२८

३

['बम्बअीकी राष्ट्रीय शाला' शीर्षक लेखसे।]

अिस देशमें अुद्योगके वातावरणकी जरूरत है। अिस देशकी शिक्षामें अुद्योग अुसका खास अंग होना चाहिये। जब अुद्योग प्रधान अंग बन जायगा, तब विद्यार्थी जो काम सीखते जायंगे, अुसमें से पाठशालाके खर्चके लायक कमाअी हो जायगी। अिस तरहकी कल्पना श्री मधुसूदन दासने अपने कटकके चर्मालयके सिलसिलेमें की थी। योजना अच्छी थी। लेकिन देशमें अुद्योगको और चर्मालयको अुत्तेजन देनेवाला वातावरण न होनेसे वह भंग हो गअी। बढ़अीका काम हमारी अूंची तालीमका अभिन्न अंग क्यों न हो? बुनाअी-कामके बिना शिक्षा अैसी ही मानी जायगी, जैसे सूर्यके बिना सौरमण्डल। जहां *अिस तरहके धंधे सही तरीके पर सिखाये जाते हों, वहां विद्यार्थियोंको अपनी* पाठशालाका खर्च निकाल सकना चाहिये। यह योजना सफल होनेके लिअे विद्यार्थियोंमें शरीर-शक्ति, अिच्छाशक्ति और शिक्षकों द्वारा पैदा किया हुआ अनुकूल वातावरण होना चाहिये। अगर अेक जुलाहा कबीर बन गया, तो दूसरे जुलाहे कबीर न सही, गिदवानी, कृपालानी या कालेलकर क्यों नहीं हो सकते? यदि अेक मोची शेक्सपीयर बन गया, तो अनेक मोची महाकवि भले न हो सकें, पर अनेक मोची रसायनके, अर्थशास्त्र वगैराके विशारद क्यों नहीं हो सकते? यह समझ लेनेकी जरूरत है कि अुद्योग और बौद्धिक ज्ञानके बीच विरोध माननेमें हम बड़े भ्रममें फंसकर जनताकी प्रगतिको रोक रहे हैं। यह समझानेका काम विद्यापीठने हाथमें लिया है।

नवजीवन, २३–९–'२८

१७

प्रायमिक शिक्षा

१

गुजरात विद्यापीठका अेक अुद्देश्य यह है कि अुसका मुख्य ध्यान देहातकी शिक्षाके बारेमें होना चाहिये। और आजकल ज्यादातर देहातों शिक्षाका मतलब प्राथमिक शिक्षा ही होता है। अिस विद्यापीठका काम क्लार्क तैयार करना नहीं, बल्कि ग्रामसेवक तैयार करना है। विद्यापीठको अगर शहरके पास रहना है और शहरका रवैया बदला जा सकता हो, तो अुसे बदलनेमें हाथ बटाना अुसका काम है। यानी आज शहर जो गांवोंकी बरबादी पर आबाद होते जा रहे हैं, अुसके बजाय गांवोंकी सेवाके लिये रहने चाहिये।

अैसा होना संभव हो या न हो, पर विद्यापीठको शहरोंमें जितने युवक-युवती अिस खयालके बनाये जा सकते हैं अुतने बनाने चाहिये।

अिसलिअे प्राथमिक शिक्षाका विचार अलग-अलग तरहसे किया जाना जरूरी है।

अिस लेखमें तो मैं अेक ही विचारकी छानबीन कर लेना चाहता हूं।

बहुत बरसोंके मनन और कुछ प्रयोगोंके बाद मैं अिस नतीजे पर पहुंचा हूं कि प्राथमिक शिक्षा कमसे कम अेक साल बगैर किताबोंके ही दी जानी चाहिये, और अुसके बाद भी विद्यार्थियोंमें कमसे कम पुस्तकोंका अुपयोग होना चाहिये।

बारहखड़ीको सीखते-सीखते और ककहरा रटते-रटते बच्चोंकी दूसरी अिन्द्रियोंका विकास रुक जाता है और अुनकी बुद्धि खिलनेके बजाय कुंठित हो जाती है। बच्चा पैदा होते ही ज्ञान लेने लगता है, पर ज्यादातर आंखों और कानोंसे। बोलने लगते ही अुसे भाषाकी जानकारी होने लगती है। अिसीलिअे जैसे मा-बाप होते हैं, वैसा ही बच्चा हो जाता है। अगर मां-बाप संस्कारी होते हैं, तो बच्चा शुद्ध अुच्चारण करता है, और घरमें होनेवाले शुद्ध आचरणकी नकल करता है। यही अुसकी सच्ची शिक्षा है। और

अगर हमारी सभ्यता छिन्न-भिन्न न हो गअी होती, तो बच्चे अच्छीसे अच्छी तालीम अपने घरोंमें ही पाते होते।

अिस वक्त हमारे लिअे वह शुभ अवसर नहीं है। बच्चोको पाठशाला भेजे सिवा कोअी चारा नही।

परन्तु बच्चा पाठशाला जाय, तो अुसे पाठशाला घर जैसी लगनी चाहिये, और शिक्षक मा-बापकी तरह मालूम होने चाहिये। शिक्षा भी वैसी होनी चाहिये, जैसी अेक सभ्य घरमें दी जानी चाहिये। यानी बच्चोको शुरूका ज्ञान शिक्षकोकी जबानी मिलना चाहिये। और अिस तरह शिक्षा पानेवाला बच्चा कानों और आखोके जरिये जितना ज्ञान अेक सालमें पाता है, वह अुतने ही अरसेमें ककहरेसे मिले हुअे ज्ञानसे दस गुना ज्यादा होगा।

मामूली अितिहास-भूगोलकी जानकारी बालक हसी-हंसीमें और कहानीके रूपमें पहले सालमें पा लेगा। कितनी ही कविताअें वह शुद्ध अुच्चारणके साथ जबानी याद कर लेगा। अंक अुसने अपने आप ही कण्ठस्थ कर लिये होगे। और बालक पर अक्षर पहचाननेका बोझा न पडनेके कारण अुसका मन मुरझाना बन्द हो जायगा और अुसकी आखका दुरुपयोग रुक जायगा।

बच्चेके हाथका अुपयोग स्लेट पर आड़े-टेढ़े अक्षर लिखने और अक्षरोंके मुश्किल नाम समझनेके बजाय भूमितिकी रेखायें खीचनेमें और चित्र पहचाननेमें होगा। यह हाथकी सच्ची प्राथमिक शिक्षा है।

और अगर हम गुजरातके और हिन्दुस्तानके करोडो बच्चोको शिक्षा देना चाहते हों, तो प्राथमिक शिक्षा और किसी तरह दी ही नही जा सकती।

करोडों बच्चोको किताबें दे सकना अिस देशके लिअे आजकी हालतमें लगभग नामुमकिन चीज है। मै स्वीकार करना चाहता हूं कि प्राथमिक शिक्षाके लिअे अगर बच्चोको पुस्तकें देना जरूरी ही हो, तो कितना भी खर्च क्यों न हो, पुस्तकें देनेकी कोशिश जरूर होनी चाहिये। लेकिन जब मै किताबें गैर-जरूरी और नुकसान पहुंचानेवाली समझी जायं, तब अिस व्यावहारिक दलीलको काममें लिया जा सकता है। जो चीज नैतिक दृष्टिसे

गैर-जरूरी और नुकसानदेह है, वह व्यावहारिक दृष्टिसे भी न करने लायक पाओी जाती है। शुद्ध सभ्यतामें नीति और व्यवहार विरोधी चीजें नहीं हैं, न होनी चाहिये।

यह साफ है कि मौजूदा पाठशालाओंके शिक्षकोंके द्वारा अैसी शिक्षा नहीं दी जा सकती। ये मास्टर लोग मारपीट कर बारहखड़ी भले सिखा दें, शायद कुछ अंक भी सिखा दें। पर साधारण ज्ञान, जिसकी मैंने बच्चोंको पहले वर्षमें मिलनेकी कल्पना की है, तो बेचारे मास्टरजीको ही नहीं होता। वे खुद ही शुद्ध भाषा बोलना नहीं जानते, तो बच्चे क्या सीखें?

अिसका विचार हम दूसरे भागमें करेंगे।

नवजीवन, १३-५-'२८

२

यह अेक बड़ा सवाल है कि जिस शिक्षाका हम पिछले अंकमें विचार कर चुके हैं, वह किस तरह दी जा सकती है या अुसे देनेके लिअे शिक्षक कहांसे निकाले जायं? शिक्षाके बारेमें यही असली प्रश्न है। सरकारी ट्रेनिंग कॉलेजोंने अिस सवालको हल नहीं किया। जिसे वे 'तीन आर' यानी लिखना, पढ़ना और गणित कहते हैं, अुसको भी हल नहीं किया। ये तीनों चीजें अितनी थोड़ी मिलती हैं कि अुनका अुपयोग सीखनेवालेको या जनताको थोड़ा ही होता है।

अिसलिअे यह काम राष्ट्रीय विद्यापीठको करना है। राष्ट्रीय विद्यापीठका धर्म और अधिकार ही शिक्षाके क्षेत्रमें राष्ट्रकी पोषक नवीन युक्तियां ढूंढ निकालना है। और मेरी अल्पबुद्धिके अनुसार ये युक्तियां पुरानेमें बहुत कम मात्रामें मिलेंगी; हिन्दुस्तानके मौजूदा हालातमें अुससे भी कम मिलेंगी। हर देशकी शिक्षा अुसके स्वराज्यकी रक्षाके लिअे होती है।

अिसलिअे हमें अपनी शिक्षाके नये प्रयोग ही करने होंगे। अुन्हें करनेमें भले ही हमें पुरानेके अनुभवकी जानकारी भी हो जाय; मगर यह मानकर नहीं कि वहांका सभी कुछ ठीक है, और न यह मानकर ही कि यहांके हालातमें यहांके लिअे जो कुछ ठीक है, वही यहां भी ठीक है। अिससे अेक चीज तो यह निकली कि सरकारी स्कूलोंने जो कुछ

होता है, अुसे हमें शककी नजरसे देखना है। सरकारी शिक्षा स्वराज्यके और हमारी सम्यताके लिअे घातक होनेके कारण बहुतसे मामलोंमें हम सरकारी तरीकेसे अुलटे चलेंगे तो हमें सीधा रास्ता मिलना संभव है। अिसकी मिसाल लें :

वहां शिक्षाका माध्यम अंग्रेजी है, तो हमें समझना चाहिये कि राष्ट्रीय शिक्षामें अंग्रेजी माध्यम हरगिज नहीं होगा।

वहां बड़े खर्चीले मकान बनाकर शिक्षा दी जाती है। हम समझ लें कि यह अयोग्य है। हमारी पाठशालाओंके मकान सादे और गरीब होंगे।

वहां अक्षर-ज्ञान और साहित्य पर ही जोर दिया जाता है और हिन्दुस्तानके अुद्योगोंके प्रति लापरवाही चलती है। हम देखते हैं कि यह अयोग्य है।

वहां धर्मकी — यानी साम्प्रदायिक नहीं, बल्कि साधारण धर्मकी — शिक्षाका त्याग किया जाता है। हम जानते हैं कि अिस त्यागसे शिक्षा ही गायब हो जाती है।

सरकारी स्कूलोंमें जो अितिहास पढ़ाया जाता है, वह झूठा नहीं तो केवल अंग्रेजोंकी दृष्टिसे ही लिखा होता है। अुन्हीं चीजोंका निरूपण *जर्मन, फ्रेंच और अमरीकन अितिहासकार दूसरी तरह करते हैं।* हालकी घटनाओंको सरकारी लेखक अेक तरहसे पेश करते हैं और जनताके आदमी दूसरी तरह करते हैं, जैसे पंजाबका हत्याकाण्ड।

सरकारी स्कूलका अर्थशास्त्र अंग्रेजी पद्धतिका समर्थन करता है, जब कि हम अुसे दूसरी ही दृष्टिसे देखते हैं।

सरकारी स्कूल शहरी सभ्यताकी हिमायत करते हैं। राष्ट्रीय सभ्यताके प्राण गांव हैं।

सरकारी प्राथमिक स्कूलोंमें शिक्षक लोगोंको, चरित्रकी परवाह किये बगैर, कमसे कम ज्ञान और थोड़ेसे थोड़ा वेतन दिया जाता है; जब कि राष्ट्रीय प्राथमिक पाठशालाओंके शिक्षक चारित्र्यवान, ज्ञानी और त्यागी होनेके कारण (लाचार होनेके कारण नहीं) कमसे कम तनख्वाहवाले होने चाहिये।

अब हमें कुछ पता चलेगा कि हमारे शहरी विद्यालयोंमें कैसी शिक्षा होनी चाहिये।

हमारे विद्यार्थी गांवोंमें जाकर गांवोंकी सभ्यताको स्थिर बनानेवाले, अुनकी जरूरतें जाननेवाले, अुनमें जहां दोष हों अुन्हें दूर करनेवाले, अुनके बच्चोंको शहरी न बनकर देहाती रहनेकी या किसान रहनेकी शिक्षा देनेवाले होने चाहिये। अिस तरह जब तक शहरोंमें दी जानेवाली हमारी शिक्षाका ढांचा साहसके साथ जड़से नहीं सुधारा जाता, तब तक हम विद्यापीठके अेक बड़े ध्येय तक नहीं पहुंच सकते, अुस पर अमल नहीं कर सकते।

अेक ही अुदाहरण लें: हम अहमदाबादमें ही महाविद्यालय, नअी गुजराती पाठशाला और विनय-मन्दिर चलाते हैं। अिन्हें चलानेका अधिकार हमें तभी हो सकता है, जब हम अिन विद्यालयोंमें पढ़नेवाले बालकोंको देहाती बनानेकी कोशिश करें। अुन्हें हम ग्रामजीवनमें रस लेनेवाले — अुसे जाननेवाले बनायें, और आखिरमें अुनमें से जो विनय-मन्दिर या महाविद्यालय छोड़कर निकलें, वे गांवोंमें फैल जायें और देहातियोंकी सेवामें लग जायें।

यह कैसे हो, अिसका विचार बादमें करेंगे।

नवजीवन, २०–५–'२८

३

विनय-मन्दिर और महाविद्यालयमें शिक्षाका क्रम हम अच्छी तरह बदल दें और शिक्षक मेरे पेश किये हुअे दृष्टिकोणको हजम किये हुअे हों, तो ही प्राथमिक शिक्षा यानी देहाती शिक्षाका सवाल हल होगा।

आज हम संख्या, लोकलाज या झूठी प्रतिष्ठाके लोभसे कुछ तबदीलियां करते हिचकिचाते हैं। अगर न हिचकिचायें तो अिन विनय-मन्दिरोंमें से गांवोंकी सेवा करनेवाला सुन्दर वर्ग पैदा हो और शहरोंके पापका कुछ प्रायश्चित्त हो।

अिन मन्दिरोंमें विद्यार्थी अव्वल दर्जेके पिंजारे, कतवैये और जुलाहे बनें; पहले दर्जेकी कपासकी खेती जाननेवाले हों; अुन्हें देहातके काम

आनेवाला - बढ़ओका काम आता हो, यानी अुन्हें बढ़िया चरखा बनाना आता हो; गाड़ी, हल वगैरा बनाना न आता हो तो भी अुनकी मरम्मत करना आता हो; वे गावोंके लायक सीना-पिरोना जानते हों; अुनके मोतीके दानों जैसे अक्षर हों; वे साधारण लिखनेकी कला जानते हों; अुन्हें देशी अंक जबानी याद हों; वे रामायण, महाभारत वगैरा पुराने साहित्य और अुसके आध्यात्मिक और आधुनिक अर्थोंके जानकार हों, देहाती खेल जानते हों; तन्दुरुस्तीके कानून जानते हों; अुन्हें घरेलू चिकित्सा अच्छी तरह आती हो, यानी वे मामूली बीमारियोंकी जाच करनेवाले और अुनके अिलाज जाननेवाले हों; वे गावके घूरे, तालाब और कुअें वगैरा साफ करनेकी कला जाननेवाले हों; वगैरा वगैरा। गरज यह कि अिन विनय-मंदिरोंमें अिस तरहकी शिक्षा दी जाय कि जिससे अुनमें अितनी योग्यता आ जाय कि वे गावोंकी हर तरहसे सेवा करनेके लिअे तैयार हो सकें। और अिस तरहकी शिक्षा पर जो कुछ खर्च हो, वह प्राथमिक शिक्षाके लिअे ही किया गया है अैसा समझा जाय। अगर अैसा करें या कर सकें, तो ही हम गावोंमें सचमुच घुस सकेंगे।

यह सवाल अुठ सकता है कि जहा हमने अैसे फेरबदल किये और अैसा आदर्श साफ तौर पर जाहिर किया कि हमारे विनय-मन्दिर खाली हुअे। अैसा ही हो तो मैं सत्यके खातिर अिस आफतका स्वागत करनेको तैयार हो जाअूगा। लेकिन जब तक विद्यापीठका देहाती शिक्षाका ध्येय कायम है, तब तक अैसा न करना असत्य और द्रोह समझा जायगा।

मगर मेरा विश्वास और अनुभव यह है कि अगर हम अपने अुद्देश्यों पर अेकनिष्ठ होकर कायम रहे, तो जनता अंतमें अुन्हे पहचान लेती है और अुत्तेजन देती ही है। कही या मानी जानेवाली असफलताके कारण ढूढने पर हमें मालूम होगा कि ध्येयको माननेवाले बेवफा, कच्चे या ढीले थे। सत्याग्रहका तो सदा नाश ही होता है, और अुसके नाशको न देखकर लोग अुसके आदर्शकी कमी या निष्फलताको देखते हैं।

अगर हमारे विद्यामन्दिरोंमें श्रद्धावान और त्यागी शिक्षक हों, तो मेरी पक्की राय है कि वे विद्यार्थियोंसे भर जाय। लोग सच्ची चीजको पहचान सकते हैं। बहुत बार अैसा होनेमें देर होती देखी जाती है। पर

यह निरा भ्रम होता है। यह निरपवाद नियम है कि सही रास्तेसे चलनेमें कम देर लगती है।

लोगोंकी कमजोरियोंको, अुनकी भोगवृत्तिको अुत्तेजन देनेवाली सभ्यता घड़ीभरमें भर जाय तो अिससे क्या? अिससे कोअी अुसकी सच्चाई साबित नहीं होती।

मेरी दृष्टिको अपनानेका अेक नतीजा आ सकता है। जो विद्यार्थी सरकारी पाठशालाओंकी-सी शिक्षा पानेकी आशासे आये होंगे, जो सिर्फ शहरी जीवन बितानेकी योग्यता प्राप्त करनेकी अुम्मीद रखकर आये होंगे, वे निराश होकर हमारे मन्दिर छोड़ दें। मगर अैसा हो तो अच्छा ही है। हम और वे दोनों अेक खराब हालतसे बच जायंगे और अेक-दूसरेकी शुद्ध सेवा करेंगे।

जिस विचारसे मैंने अिस लेखमालाको शुरू किया था, अुस विचारको जरा और आगे ले जाकर मैं अिस मालाको बन्द करनेकी सोचता हूँ। और फिर अिस बारेमें मेरे पास जो थोड़ेसे सवाल हैं, अुनकी चर्चा करनेकी आशा रखता हूँ।

प्राथमिक शिक्षाके पहले सालमें अक्षर-ज्ञान बिलकुल न सिखानेका विचार सही हो, तो अुसका कुछ न कुछ अच्छा परिणाम विनय-मन्दिरों और महाविद्यालयमें भी आना चाहिये।

आजकल किताबी ज्ञानका प्रचार बहुत बढ़ गया है। जितनी पुस्तकें निकला ही करती हैं। जिसकी भाषा जरा भी मंजी हुअी है, जिसने थोड़ा-बहुत भी विचार किया है, वह अपने विचार प्रगट करनेको अधीर बन जाता है और यह समझता है कि अुन विचारोंको प्रगट करनेमें देशकी सेवा होती है। नतीजा यह होता है कि विद्यार्थियोंके दिमाग पर और अुनके मा-बापकी जेबों पर अगाध बोझ पड़ता है। विद्यार्थियोंकी बुद्धि मारी जाती है। अुनके दिमाग तरह तरहकी पुस्तकोंके संग्रहालय बन जाते हैं और अिससे अुनमें मौलिक विचारोंके लिअे जगह नहीं रह जाती। और पुस्तकें भी अपनी-अपनी जगह पर ठीक ठीक बैठ जानेके बजाय, जैसे अेक आलसीके घरमें सामान अिधर अुधर बिखरा पड़ा रहता है, वैसे ही बेचारे अिन विद्यार्थियोंके दिमागमें भी बिखरी

पड़ी रहती हैं। जिनका अुपयोग न वे कर सकते हैं, न जनताको अुनसे लाभ होता है।

अिसलिअे मेरी रायमें तो आज जो बहुतेरी किताबें छपती हैं, अुन्हें मैं विद्यार्थियोंके आगे हरगिज नहीं रखूंगा। लिखना-पढ़ना जाननेवाले विद्यार्थी भी बहुतसी शिक्षा तो शिक्षकके मुंहसे ही पाते हैं। वे कमसे कम पुस्तकें पढ़ें, मगर जो पढ़ें अुस पर विचार करें और विचार करनेसे जो चीज अपनाने लायक लगे अुस पर अमल करने लगें। अैसा करनेसे विद्यार्थीका जीवन रसमय, विचारमय, विवेकमय, निश्चल, पवित्र और तेजस्वी होगा। अैसी पढ़ाअी गरीब जनताको शोभा देगी। अैसी पढ़ाअी विद्यार्थी और जनता दोनोंको फायदा पहुंचायेगी।

अिसलिअे विद्यापीठके सामने जो गूढ़ प्रश्न है, अुसके हल होनेका दारमदार मौजूदा शिक्षकोंकी विद्यापीठके ध्येयोंको पचानेकी और अुनके अनुसार चलनेकी खूब कोशिश करनेकी शक्ति पर है।

नवजीवन, २७-५-'२८

१८

शिक्षाके बारेमें सवाल

प्राथमिक शिक्षाके तीन लेख लिखनेके बाद नीचेके सवालोंका जवाब देना आसान हो गया है।

१. आपने अेक बार लिखा था कि अंग्रेजीका बोझ हलका कर दिया जाय, तो विद्यार्थियोंके जीवनके कुछ साल बच जाते हैं। राष्ट्रीय शिक्षणका मतलब राष्ट्रव्यापी शिक्षण लगायें, तो आपकी रायमें अिसका बोझ समाज पर कितना पड़ेगा? कितना यानी कितने बरसका?

पहले तो 'अंग्रेजीका बोझ हलका कर दिया जाय' अिस वाक्यका अर्थ समझाअूं। मेरी मन्शा यह नहीं है कि विद्यार्थी अंग्रेजीका ज्ञान बिलकुल न लें। लेकिन जैसे अेक फ्रांसीसी अंग्रेजी जानता है, वैसे ही हम भी

अेक पराअी भाषाके तौर पर भले ही अंग्रेजीसे काम लें। पर जिस हद तक हम अंग्रेजी जानें, तो हमें अंग्रेजीमें सोचनेका, शुद्ध अुच्चारणके साथ शुद्ध अंग्रेजी बोलनेका और शुद्ध अंग्रेजी लिखनेका भार न अुठाना पड़े। मेरा यह खयाल है कि अिस बोझसे हरअेक विद्यार्थीके कमसे कम पांच वर्ष बेकार जाते हैं। अितना ही नहीं, अुन पांच सालकी शिक्षाअें अुसकी सोचनेकी शक्ति मारी जाती है, अुसका शरीर कमजोर हो जाता है और वह स्याहीसोख कागजकी तरह अूपर-अूपरसे नकल करने लग जाता है। अगर कोअी पांच साल अपनी भाषाके जरिये जरूरी ज्ञान हासिल करनेके लिअे दे, तो वह कितना हासिल कर सकता है? कितनी बचत कर सकता है? वह अच्छेसे अच्छे विचार अपनी भाषाके जरिये झट जान लेगा और पराअी जबानके कठिन अुच्चारण सीखनेके भारी बोझसे बच जायगा।

२ अेक तरफ बालशिक्षा और दूसरी तरफ महाविद्यालयकी शिक्षा दोनों खूब खर्चीली हैं। क्या राष्ट्रीय शिक्षामें ये दोनों शामिल की जा सकती हैं? या अितनी ही ठोस शिक्षा कम खर्चमें देनेकी कोअी योजना आपके पास है?

मैंने अुन तीन लेखोंमें यह बतानेकी कोशिश की है कि बच्चोंकी शिक्षा कैसे सस्ती, करीब-करीब स्वावलम्बी बन सकती है। अगर हम महाविद्यालयकी शिक्षाको प्राथमिक शिक्षाकी मददगार बनायें, तो वह शिक्षा भी सस्ती हो जाय और राष्ट्रको ताकत देनेवाला ज्ञान विद्यार्थी अच्छी तरह पा सकें। 'अितनी ही ठोस शिक्षा' का मतलब अगर सरकारी शिक्षा जैसा हो, तो वह सवाल यहां नहीं अुठता, क्योंकि सरकारी शिक्षाको मैं ठोस मानता ही नहीं। राष्ट्रीय महाविद्यालयकी या प्राथमिक पाठशालाओंकी शिक्षा सरकारी स्कूलोंकी शिक्षासे अलग तरहकी और अक्सर नअी तथा मौलिक होती है। अिसलिअे वह स्वतंत्र रूपमें ठोस है।

३. पुरानी परम्पराके हिमायती लोग विद्यार्थियोंमें गुरुभक्ति पैदा करनेकी कोशिश करते हैं और यह समझानेका प्रयत्न करते हैं कि गुरुकी प्रसन्नता या खुशीसे ही विद्या मिल सकती है, वरना

नहीं मिल सकती। गुरुकी भक्ति, सेवा, शुश्रूषा न की जाय, तो गुरु वित्तशाठ्य करके विद्या चुरा लेता है। वह अिस तरहकी दुष्टता न करे, अिसके लिअे अुसकी खुशामद करनी चाहिये — क्या गुरुभक्तिकी मीमांसा यही है?

मैं गुरुभक्तिको माननेवाला हूं। मगर हरअेक शिक्षक गुरु नही हो सकता। गुरु-चेलेका नाता आध्यात्मिक और अपने आप पैदा होता है। वह बनावटी नही होता; वह बाहरके दबावसे पैदा नहीं होता। अैसे गुरु *आज भी हिन्दुस्तानमें मौजूद हैं।* (*यह चेतावनी देनेकी जरूरत नहीं होनी चाहिये कि यहां मैं मोक्ष दिलानेवाले गुरुका जिक्र नही करता।*) अैसे गुरुकी खुशामद हो ही नहीं सकती। अैसे गुरुके लिअे आदर स्वाभाविक ही होता है; गुरुका प्रेम भी वैसा ही होता है। अिसलिअे अेक देनेको और दूसरा लेनेको हमेशा तैयार ही रहता है। वैसे मामूली ज्ञान तो हम सभीसे लेते हैं। अेक बढ़अीसे, जिसके साथ मेरा कोअी भी सम्बन्ध न हो, अुसके गुण या बुराअियां जानते हुअे भी मैं बहुत कुछ ले सकता हूं। अुससे मैं जैसे दुकानदारके यहांसे सौदा खरीदता हूं, वैसे ही *बढ़अीगिरीका ज्ञान खरीद* लेता हूं। हां, यहा भी अेक खास तरहकी श्रद्धा जरूरी है। जिस बढ़अीसे मैं बढ़अीगिरीका ज्ञान लेना चाहता हूं, अुसके बढ़अीगिरीके ज्ञानके बारेमें मुझे श्रद्धा न हो तो वह ज्ञान मुझे नही मिल सकता। गुरुभक्ति दूसरी ही चीज है। जहां चरित्र बनाना शिक्षाका विषय है, वहां गुरु-शिष्यका सम्बन्ध निहायत जरूरी है। और अगर वहां शुद्ध गुरुभक्ति न हो, तो चरित्र बन नही सकता।

४. सच पूछें तो आजकलके जमानेमें शिक्षकका काम डाकिये और मुकादमका-सा है। अिनका अितना ही काम है कि शिक्षा-शास्त्रियोंकी लिखी हुअी किताबें विद्यार्थियोंके हाथोंमें पहुंचा दें और यह देखभाल रखें कि विद्यार्थी अुन्हें काममें लेते हैं या नहीं। अिसके सिवा आप शिक्षकसे और किस कुशलताकी अपेक्षा रखते हैं?

शिक्षणशास्त्रका विकास यहां व्याख्या करने तक हुआ है कि जो कठिन वाक्योंका मतलब साफ बता सके और लम्बे प्रकरणोंका

सार दे गये वह शिक्षक है। अिन आदर्शोंको अब हम क्यों न मान लें?

पाठ्यपुस्तकें कितनी ही अुम्दा क्यों न तैयार की गयी हों, तो भी सच्चे शिक्षककी जरूरत तो मुझे महसूस होती ही रहती है। सच्चा शिक्षक सार देकर या कठिन वाक्योंका अर्थ स्पष्ट करके कभी सन्तोष नहीं मान सकता। वह तो समय-समय पर पाठ्यपुस्तकें छोड़कर अपने पढ़ानेका विषय विद्यार्थीके सामने अेक चित्रकारकी तरह जीते-जागते रूपमें खड़ा कर सकता है। अच्छीसे अच्छी पाठ्यपुस्तकका मुकाबला अच्छेसे अच्छे फोटोग्राफके साथ किया जा सकता है। मगर जैसे घटिया होने पर भी चित्रकारकी खिंची हुआी सच्ची तसवीर फोटोग्राफसे हमेशा बढ़कर होगी और हमेशा विशेषता रखेगी, वैसे ही सच्चे शिक्षकका समझना चाहिये। सच्चा शिक्षक विद्यार्थीको अपने विषयके भीतर ले जाता है, अुसमें रस पैदा करता है, और अुसे अुस विषयको अपने आप समझनेके लायक बनाता है। मेरे खयालसे तो कठिन वाक्योंको समझानेवाले और सार निकालनेवालेको शिक्षक माननेका रिवाज आदर्श हो ही नहीं सकता। हमारी कोशिश तो परोपकारी दृष्टि रखकर तैयार होनेवाले सच्चे शिक्षक पैदा करनेकी होनी चाहिये। आज भी अैसे इक्के-दुक्के शिक्षक नहीं पाये जाते हों सो बात नहीं है।

५. भड़ौंचकी शिक्षा-परिषद्के समय आपने कहा था कि प्राथमिक शिक्षा मुफ्त भले ही हो, पर लाजिमी नहीं हो सकती; अच्छी चीज भी दबी हुआी जनता पर लादी न जानी चाहिये। अगर आज देशकी शिक्षाका अितजाम हमारे हाथमें आ जाय, तो आप अपनी शिक्षा, जिसमें खादी और दूसरे राष्ट्रीय धन्धे अनिवार्य होंगे, लाजिमी बनायेंगे या नहीं?

अैसी शिक्षाको भी, जो मैंने सोची है, लाजिमी बनानेकी हिम्मत अभी तक मैं अपनेमें नहीं पाता। मैं मानता हूं कि हमारे देशमें कितने ही बरसों तक अिसकी बिलकुल जरूरत नहीं। क्योंकि प्राथमिक शिक्षा [illegible] बनना ठीक हो तो भी वैसा करनेसे पहले और बहुतसे कदम अुठाने

अभी बाकी है। मेरा खयाल तो यह है कि अिस देशको पसन्द आनेवाली और जनताको बल पहुंचानेवाली शिक्षा पानेका साधन जनताके आगे रख देने पर वह बिना किसी कोशिशके अुसका स्वागत करेगी।

६. क्या आप मानते हैं कि शिक्षकोंको धार्मिक शिक्षा अपने खयालके मुताबिक चाहे जिस तरहसे देनेका हक है?

अेक तंत्रके भीतर रहनेवाले शिक्षकोंको अपने खयालके अनुसार धार्मिक शिक्षा देनेका अधिकार हो ही नहीं सकता। और विषयोंकी तरह धार्मिक शिक्षा भी अुस ढाचेके अनुसार ही दी जायगी, जो तंत्रके संचालकोंने तैयार किया होगा। अिस ढाचेके अनुसार शिक्षा देनेका ढंग हरअेक शिक्षकका अपना ही होगा, पर धर्मके बारेमें तत्रने जो आदर्श बनाये होंगे, अुन्हींके अनुसार शिक्षा दी जायगी। यह सही है कि जिस तरह और विषयोंकी शिक्षा कुछ खास पुस्तकें पढ़कर दी जा सकती है, वैसा धार्मिक शिक्षामें नहीं हो सकता। धार्मिक शिक्षा पुस्तकोंके जरिये दी ही नहीं जा सकती। यह शिक्षा देनेका तरीका दूसरी शिक्षाओंसे अलग ही है। जब कि दूसरी शिक्षा बुद्धिसे दी जाती है, तब धर्मकी शिक्षा दिलसे ही दी जा सकती है। अिसलिअे शिक्षक जब तक धर्ममय न हो, तब तक वह धर्मकी शिक्षा न दे। यद्यपि अिस तरह धर्मकी शिक्षा देनेका जरिया दूसरा है, फिर भी वह शिक्षा देनेके बारेमें अेक खास तरहकी समझ होनी बहुत जरूरी है। यानी जहा अहिंसाको परम धर्म माना गया हो, वहा हिंसाको अुत्तेजन देनेवाली शिक्षा नहीं दी जा सकती। या जहा सब धर्मोके लिअे प्रेम, अुदारता और सहिष्णुता रखनेका आदर्श अपनाया गया हो, वहा धर्मोके विरोधकी शिक्षा नहीं दी जा सकती। थोड़ेमें कहे तो जहा धार्मिक शिक्षा देनेकी जरूरत मान ली गअी हो, वहां अुस बारेमें अराजकताकी गुजाअिश नहीं हो सकती।

७. जैसे हर विद्यार्थीके लिअे तीन-चार भाषायें जानना जरूरी समझा जाता है, वैसे ही आपको क्या यह नहीं लगता कि सभी मौजूदा धर्मोके सिद्धान्तों, विधियों, आग्रहों और वहमोंकी जानकारी देना भी जरूरी है?

अगर हरअेक धर्म, जो धर्म है और अधर्म नहीं, के प्रति हम विद्यार्थियोंमें अिज्जत, अुदारता और प्रेम पैदा करना चाहते हैं, तो अुसके सिद्धान्तोंकी जानकारी जरूर देनी चाहिये। वहमों और विधियोंको जाननेकी जरूरत मुझे बहुत नहीं मालूम होती। हिन्दुस्तान जैसे मुल्कमें अपने आंख-कान खुले रखकर चलनेवाला वहमों और विधियोंको तो देख ही सकता है। अगर हम गुणग्राही बनना चाहते हों, तो हमें हरअेक धर्मकी विधियों और वहमोंको जानने पर जोर ही नहीं देना चाहिये। अपने खुदके धर्मकी विधिया और वहम बारीकीसे जानकर अुनमें जो सुधार जरूरी हों, अुन्हें करानेका विद्यार्थियोंसे आग्रह रखेंगे तो अिसीमें अुनका काफी वक्त लग जायगा।

८. आप वर्ण-व्यवस्थाको मानते हैं, तो आप यह मंजूर करते हैं या नहीं कि हर वर्णके लिअे अलग शिक्षा होनी चाहिये?

मुझे अैसा नहीं लगता कि हर वर्णके लिअे अलग शिक्षा होनी चाहिये। हर वर्णमें बहुत कुछ समानता है और हमारी शिक्षा अेकसी होनी चाहिये, और अभी है भी। शिक्षाका अेक अुद्देश्य विद्यार्थीको अिन्सान बनाना है। और जो अिन्सान बनेगा वह अिन्सानसे सम्बंध रखनेवाले और अुसे शोभा देनेवाले कानून आसानीसे जान लेगा। वर्णकी मेरी कल्पना तो यह रही है कि चूंकि अुसकी बुनियाद धंधे पर खड़ी है और चारों वर्णोंको अपने अपने धंधेके जरिये गुजारा करना है, अिसलिअे हर वर्णकी विशेषता बड़ी परम्परा या बापदादोंसे आअी हुअी होनी चाहिये। अिसके सिवा वर्णधर्मका मैं यह अर्थ नहीं करता कि अेकमें दूसरे तीनके गुण कभी होते ही नहीं। ब्राह्मण शूद्रकी तरह नौकरी करके पेट न भरे, मगर अुसे परिचर्या या सेवा करना न आता हो या करनेमें शरम आती हो, तो वह ब्राह्मण ही नहीं है। निःस्वार्थ सेवाके बिना शुद्ध ज्ञान हो ही नहीं सकता और शूद्र भले ही वेद वगैरा पढ़ाकर भीखमें मिले हुअे अन्न पर गुजारा न करे, फिर भी सुव्यवस्थित समाजमें अुसे भी वेद वगैराका ज्ञान तो मिलता ही होगा।

९. क्या यह बात सच है कि अुद्योगकी शिक्षामें ही सब शिक्षा समा जाती है और बुद्धिकी तालीम तो सिर्फ शिक्षाकी सजावट ही है? अैसा हो तो फिर महाविद्यालयकी शिक्षाका आप स्वागत किसलिअे करते हैं?

यह बात जितनी सच है अुतनी ही झूठ है। जहां बौद्धिक शिक्षाकी मूर्तिपूजा की जाती हो, वहां मैं जरूर कहता हूं कि अुद्योगकी शिक्षामें सबकुछ आ जाता है। शिक्षाकी मेरी व्याख्यामें बुद्धि और अुद्योगके बीच सीमेंटमें चुनी हुअी अीटोंकी दीवार नहीं है, दो अलग बाड़े नहीं हैं, बल्कि अुद्योगकी शिक्षामें बुद्धिकी शिक्षा यानी बुद्धिका विकास पूरी तरह होता है। मैं यह कहनेकी धृष्टता भी करता हूं कि अुद्योगकी शिक्षाके बिना बुद्धिका सच्चा विकास मुमकिन ही नहीं। रोजको गुजरके लायक जो जानकारी होती है, वह मेरी नजरमें शिक्षा नहीं है। शिक्षामें तो ये सब विषय शामिल हैं कि अिस अुद्योगका समाजमें क्या स्थान है, औद क्या है, घरकी क्या जरूरत है, घर कैसे होने चाहियें, घरका सभ्यताके साथ कैसा नजदीकका सम्बंध है। बुद्धिकी शिक्षा हकीकतोंका सामान्य ज्ञान है, यह गलत अर्थ हम अकसर मान लेते हैं। अिस तरहकी सामान्य जानकारी न होने पर भी बुद्धिका पूरी तरह विकास हो सकता है। जो शिक्षा देनेवाला विद्यार्थियोंके दिमागको बेशुमार हकीकतें भरकर रखनेकी आलमारी बना देता है, वह खुद शिक्षाका पहला पाठ भी नहीं सीखा है। अब समझमें आ गया होगा कि सवालमें पूछी हुअी बात कैसे सच और अुतनी ही झूठ भी है। अुद्योग और बुद्धिकी तालीमके बारेमें मेरी राय मानो तो बात झूठ है। अुन दोनों शिक्षाओंको भिन्न समझकर अुनके बारेमें जो भ्रम हो रहा है, अुस भ्रमवाली शिक्षाको ध्यानमें रखकर सवाल बनाया गया हो तो बात सच्ची है। और अब समझमें आ जाना चाहिये कि महाविद्यालयकी शिक्षाका मैं क्यों और किस शर्त पर स्वागत करता हूं। मेरी कल्पनाके महाविद्यालयमें राज, बढअी और जुलाहे सच्चे बुद्धिशाली समाजसेवक होंगे, सिर्फ रोजी कमाने लायक ज्ञान पाये हुअे राज, बढअी और जुलाहे न होंगे। मैं महाविद्यालयके जुलाहोंमें से कबीरके, मोचियोंमें से भोजा भगतके, सुनारोंमें से अखाके और किसानोंमें से गुरु गोविन्दके

निकलनेकी आशा रखता हूं। अिन चारोंको मैं बुद्धिकी तालीम पाये हुअे मानता हूं।

१०. औद्योगिक शिक्षा ही अगर शिक्षाका सर्वस्व हो तो सुनारों, लुहारों, जुलाहोंकी समितिको विद्यापीठ क्यों नहीं सौंप देते? फिर वे भले ही बौद्धिक शिक्षाके अध्यापकोंको नौकरके तौर पर रखें।

अिस प्रश्नका अुत्तर नवें प्रश्नके जवाबमें आ गया है। फिर भी अपने अर्थको स्पष्ट करनेके लिअे अिसे दिया है। अगर मेरे पास कबीर जैसे जुलाहे वगैरा हों, तो मैं अवश्य अुनके हाथमें विद्यापीठकी लगाम सौंप दूं और अुनके हाथके नीचे 'बौद्धिक शिक्षाके अध्यापक' नौकर बनकर काम करनेमें शरम न समझकर अिज्जत समझें। हमने अुद्योगोंको शिक्षाका विषय नहीं माना, अिसीलिअे आज अुद्योग करनेवालोंका दर्जा हल्का माना जाता है और अुद्योग करनेवालोंको मदद समाजसेवामें जरूरी या किसी भी मात्रामें मिल नहीं सकती।

११. विद्यापीठके ध्येयोंमें लिखा है कि हिन्दुस्तानकी तरक्की गांवों पर निर्भर है, शहरों पर नहीं। अैसा ही हो तो हमारे शहरी लड़कोंको क्यों बिगाड़ते हैं? गांवोंके विद्यार्थियोंको भले ही देहाती शिक्षा दीजिये। शहरके लड़के शहरी जिन्दगी बिताना चाहते हैं। अुन्हें अुन्हींके लायक शिक्षा क्यों नहीं देते? और विद्यापीठके लिअे रुपया तो शहरोंसे ही मिलता है न? विद्यापीठका कोअी आदमी गांवमें ले जाय और गांवोंसे ही रुपया या अनाज और कपास अिकट्ठा करें तो हमें कुछ नहीं कहना है।

सौभाग्यसे अैसा सवाल बहुतेरे शहरियोंके या शहरमें रहनेवाले बहुतेरे विद्यार्थियोंके दिलमें पैदा नहीं होता। देहातके विद्यार्थियोंको अलग खर्चसे देहाती शिक्षा दो, अैसी बात शहरी मण्डल, जो प्रायश्चित्त करनेको तैयार हुआ है, कैसे कर सकता है? विद्यापीठका जन्म शहरियोंका ध्यान देहातकी तरफ जानेके कारण हुआ। शहरी ही अपनी आंखें खुलनेके बाद विद्यापीठ चलाने लगे। अगर वह खास तौर पर ग्रामसेवाके लिअे चले, तो अुसे चलानेके लिअे रुपया देहाती लोग क्यों दें? देहातमें

जानेवाली शिक्षाका बन्दोबस्त भी अभी तो शहरियोंको ही करना है। जो अिल्जाम शहरी लोग सरकार पर लगाते हैं, वही देहाती लोग हमारे खिलाफ लगा सकते हैं: "तुम शहरियोंने हमें लूटा है, अब भी लूट रहे हो। हमें लूटना छोड़ दो तो मेहरबानी होगी। बीती बातोंको हम भूल जायंगे।" हममें से कुछ शहरी अिस असली हालतको समझ गये, अिसीलिअे हम चेते। हमने देहातियोंके साथ किया हुआ अपना भारी अन्याय समझा और प्रायश्चित्त करनेका निश्चय किया। अुसका पहला हिस्सा यह है कि जिसके बल और मददसे गांवोंका सत्व निकाल लेनेका काम संभव हुआ और अब भी संभव है, अुस सरकारके साथ असहयोग किया जाय। और दूसरा यह कि जैसे-जैसे हम असहयोगका गहरा अर्थ समझने गये, वैसे-वैसे सहयोगके परिणामोंसे बचना सीखते गये। अगर हम असहयोग करनेके बाद हाथ बांध कर बैठे रहे होते, तो यह कहा जाता कि हमने असहयोगका अर्थ ही नहीं समझा। कोअी हमारे घरको लूटकर ले जाता हो, तो अितना ही काफी नहीं होता कि हम अुसकी मदद न करें, बल्कि अुसकी लूटका विरोध करना पड़ता है और लूटके परिणामका त्याग भी करना पड़ता है। तभी लूटनेवालेके साथ सच्चा असहयोग हुआ माना जाता है। यह असहयोग या तो हिंसक या अहिंसक, अशान्त या शान्त, पशुबलवाला या आत्मबलवाला हो सकता है। हमने अहिंसक, शान्त और आत्मबलवाला पसन्द किया है, और अिससे हम देख सके हैं कि हममें से कितने ही शहरी लोग देहातसे जो धन चूस कर लाते हैं और मजेमें रहते हैं, अुसके लिअे प्रायश्चित्तके तौर पर देहातियोंकी कुछ न कुछ सेवा करनी चाहिये अुन्हें कुछ न कुछ बदला देना चाहिये। अिन विचारश्रेणीके कारण ही विद्यापीठका जन्म हुआ। और हममें से कुछ लोग जाग्रत हैं, सत्यके पुजारी हैं, अिससे दिन-दिन हम असहयोगका भेद समझते जा रहे हैं और अुस हद तक विद्यापीठका स्वरूप शुद्ध करते जा रहे हैं। अब समझमें आ सकेगा कि शहरियोंके लिये हुअे रुपयेका बड़ा हिस्सा देहातियोंको तालीम देनेमें ही खर्च होना चाहिये। और वह तालीम अभी तो विद्यापीठके तैयार किये हुअे शहरी स्नातकोंके जरिये ही दी जा सकती है।

मेरा खयाल तो यहां तक है कि विद्यापीठको मिले हुअे रुपयेका और कोओी अुपयोग किया जायगा, तो लोगोंको दिलाये हुअे विश्वासका घात होगा। रुपया देनेवालोंने रुपया अिस खयालसे दिया है कि वह वर्तमान पद्धतिसे भिन्न प्रकारकी और मेरी बयान की हुअी शिक्षा देनेके ही काममें लिया जायगा।

१२. विद्यापीठने आठ बरससे अस्पृश्यता मिटानेका आग्रह रखा है। अिससे कितने अछूत विनीत या स्नातक बने हैं?

मुझे यह सवाल अजीब और अज्ञानसे भरा लगता है, क्योंकि अस्पृश्यता मिटानेका यह मतलब कभी नहीं है और न कभी होना चाहिये कि हम अछूत माने जानेवाले युवकोंको विनीत या स्नातक बनायें। हो सकता है कि अुनमें से कुछ समय पाकर विनीत और स्नातक हो जायं। यह ठीक ही है। यह भी ठीक है कि अैसोंको मदद देनेके लिअे विद्यापीठ सदा तैयार रहे। मगर अछूत स्नातक तैयार करना अस्पृश्यता मिटानेका किसी भी तरह हिस्सा नहीं है। विद्यापीठने लाखों नहीं तो हजारों रुपये छोड़कर, अपनी हस्तीको जोखिममें डालकर और दूसरी तरह कितने ही लायक सज्जनोंकी विद्यापीठका कारबार चलानेकी मददको छोड़कर अस्पृश्यता मिटानेका अपना आग्रह और पक्षपात साबित किया है।

१३. हम यह साफ तौर पर देख रहे हैं कि ब्रह्मचर्यके न होनेसे राष्ट्रमें शारीरिक और मानसिक दोनों तरहकी कमजोरी आ गयी है और अुद्योग और पराक्रम लगातार ढीले पड़ते गये हैं। अितने पर भी आपने विद्यापीठके ध्येयोंवाली आखिरी कलममें 'ब्रह्मचर्य' शब्द क्यों नहीं आने दिया?

यह सवाल अच्छा पूछा गया है। यह साबित नहीं हो सकता कि ब्रह्मचर्यके न होनेसे ही राष्ट्रमें शरीर और मनकी कमजोरी आ गयी है और अुद्योग और पराक्रम लगातार ढीले पड़ते गये हैं। यह भी साबित नहीं हो सकता कि ब्रह्मचर्यसे शरीरकी कमजोरी मिट ही जाती है। अिस लिये व्यायामके साथ ब्रह्मचर्यको जोड़कर अिस अलौकिक चीजको किसी ही अच्छी होने पर भी अुसके मुकाबलेमें अेक क्षणिक वस्तुके साथ मिलाया

कैसे हलकी करें, कैसे अुसका महत्त्व घटायें? पश्चिमके लोग ब्रह्मचारी नहीं हैं, तो भी वे शरीर या मनमें कमजोर नहीं हैं। अुनका सतत अुद्योग और पराक्रम नकल करने लायक है। यह कहा जा सकता है कि गुरखा, पठान, सिक्ख, डोगरा और अंग्रेज सिपाही ब्रह्मचारी नहीं होते, पर अुनके शरीरकी गठन खूब मजबूत होती है। वे व्यायाममें हमारी व्यायाम-शालाके विद्यार्थियोंको हरा देंगे। अैसी कअी मिसालें देकर हम साबित कर सकते हैं कि यह बात सही है कि शरीर-बल, अेक तरहका मानसिक बल, सतत अुद्योग और पराक्रम, ये चारों चीजें ब्रह्मचर्यके बिना प्राप्त हो ही नहीं सकतीं। मेरे खयालका ब्रह्मचर्य, ब्रह्मको प्राप्त करा देनेवाला ब्रह्मचर्य, अूपर लिखी चीजोंसे परे है। वह खुद ही साधन और खुद ही साध्य है। अिसलिअे अुसका पालन करनेके लिअे मैं शरीरको स्वाहा कर देनेको तैयार हो जाअूंगा। जिसे शरीरका मोह है, वह अटूट ब्रह्मचर्य मुश्किलसे ही रख सकता है। यहां भीष्म वगैराके ब्रह्मचर्यके अुदाहरण देना भुलावेमें पड़ना होगा। महाभारत-रामायणमें बयान की हुअी बातोंको अक्षरशः माननेसे हम झूठे रास्ते चले जायंगे और औंधे मुह खाअीमें गिरेंगे। अुनके मर्मको समझकर अुन पर अमल करनेसे और अुसका तजरबा करनेसे हम जरूर अूपर चढ़ेंगे।

शरीर फेंक देनेकी चीज नहीं है, यह सग्रह करने लायक है। अगर यह रावणके रहनेकी जगह है, तो रामकी अयोध्या भी है। यह कुरुक्षेत्र है, तो धर्मक्षेत्र भी है ही। अिसलिअे अिसकी अुपेक्षा नहीं कर सकते। अुसे तंदुरस्त और ताकतवर रखनेकी जरूरत है। अिसलिअे यह कहनेमें कि अुसे कसरतकी पूरी जरूरत है व्यायामकी कम तारीफ नहीं है, और अैसा कहनेमें सत्यकी रक्षा होती है तथा अितना प्रलोभन व्यायामको विद्यार्थियोंके लिअे प्रिय बनानेको काफी है और काफी रहा है। अिससे अुलटे, व्यायाम और ब्रह्मचर्यमें अनिवार्य सम्बन्ध बांधने चलें, तो हम केवल अतिशयताके दोषमें ही नहीं फसते, बल्कि जब ब्रह्मचर्य पालनेवाला विद्यार्थी व्यायाममें पिछड़ जाता है, तब वह भूलमें पड़कर अपने विचारकी गलती सुधारनेके बजाय ब्रह्मचर्यकी बुराअी करके अुसे छोड़ दे, अिसका पूरा-पूरा भय रहता है।

ब्रह्मचर्यको शरीर-बलके सहारेकी जरूरत नहीं है। ब्रह्मचर्यकी जरूरत दूसरी और ज्यादा अच्छी तरह साबित की जा सकती है। पश्चिमके पास शरीर-बल, मानसिक बल वगैराकी सम्पत्ति भले ही हो, पर अुसके पास आत्मबल कहां है? जिसे, हम पल-पलमें विकारके वश होता देखते हैं, जो अपना विरोध जरा भी नहीं सह सकता, जिसका मनोबल, अुद्योग और पराक्रम दूसरी जातियोंको लूटनेमें और अुनका नाश करनेमें खर्च होता है, अुसकी अुस सम्पत्तिसे ईर्ष्या कैसी? अुसका अनुकरण क्या किया जाय? अुसकी सारी ताकत अब्रह्मचर्यसे सम्बन्ध रखनेवाली है, अिसीलिअे वह दुनियाकी शुद्ध अुन्नतिके लिअे घातक सिद्ध हुअी है और अिसीलिअे मैंने अुसे राक्षसी बताया है। यहां मैं पश्चिमकी अुपेक्षा करना नहीं चाहता। पश्चिममें बहुत लोग नीतिके, सत्यके पूजने वाले मौजूद हैं। बहुतसे ब्रह्मचारी भी मौजूद हैं। मैं पश्चिमके जिस दुःखद प्रवाहका बयान कर रहा हूं, अुसे वे समझते हैं। अिसलिअे पश्चिमके लोगोंके प्रति प्रेम और अिज्जत रखकर भी हम पश्चिमकी सारी प्रवृत्तिका आज तकका नतीजा जानकर अुसे बयान कर सकते हैं। अगर पश्चिमकी सभ्यता ब्रह्मचर्यके आदर्श पर खड़ी हुअी होती, तो आज दुनियाकी हालत दूसरी ही तरहकी और दयाजनक होनेके बजाय सुन्दर होती। जिस तरह दुनियाके अब्रह्मचर्यके दुःसह परिणामोंको जानकर हमें जनताके आगे स्वतंत्र रूपमें ब्रह्मचर्यका आदर्श रखना चाहिये। ब्रह्मचर्यके बिना आत्माका पूरा विकास असंभव है। ब्रह्मचर्यके बिना अिन्सान बिना लगामके मोटे-ताजे जंगली घोडेकी तरह भले ही रहे, मगर सभ्य नहीं बन सकता। ब्रह्मचर्यके बिना लगातार सात्त्विक अुद्योग और सात्त्विक पराक्रम असंभव है। ब्रह्मचर्यके बिना मन भले ही ताकतवर जैसा लगता हो, मगर वह हजारों तरहके विकारों और लालचोंका गुलाम होकर रहेगा। और ब्रह्मचर्यके बिना गठा हुआ शरीर भले ही पुष्ट हो सकता हो, मगर वह वैद्यक दृष्टिसे पूरी तरह तंदुरुस्त कभी नहीं बन सकता। शरीरमें चर्बी बढ़ाना, स्नायुओंको मजबूत बनाना जरूरी नहीं। जो शरीर लकड़ीकी तरह सूखा होने पर भी ठंड, धूप, बरसात वगैरा सह सकता है और पूरी तरह नीरोग होकर रह सकता है, वह तंदुरुस्त शरीर

ब्रह्मचर्यके बिना असंभव है। यह मेरा कुछ समयका नही, बहुत समयका अनुभव है। मैं अपने जीवनसे और साथियोंके जीवनसे अिसकी बेशुमार मिसालें दे सकता हूं कि मनका अेक अेक विकार मनुष्यकी शक्तिको और अुसकी आत्माको किस तरह मार डालता है। अिसलिअे मैं यह कहूंगा कि शरीर जाता रहे, क्षीण हो जाय, तो भी आत्मार्थीको ब्रह्मचर्यकी रक्षा करनी चाहिये।

हमारे विद्यार्थियोंके शरीर और मनकी कमजोरीके कारण दूसरे ही हैं। हममें बाल-विवाह होना, हमारा खुदका बाल-विवाहका शिकार होना, कुटुम्ब-जालका बोझ, गरीबीके कारण सात्त्विक भोजनकी कमी वगैरा अिसके कारण हैं। पाठक बाल-विवाहको अब्रह्मचर्य मान लेनेकी भूल न करें। विद्यार्थियोंमें जो कुटेवें बचपनसे ही घर कर जाती हैं, अुन्हें दूर करनेके लिअे बड़ी भारी कोशिशकी जरूरत है। समाजके घातक रिवाज सुधारने चाहिये, शिक्षाका कृत्रिम बोझ हलका होना चाहिये। लेकिन यह विषय दूसरा ही है, अिसलिअे अिसकी चर्चा यहां नहीं करूंगा। अितना ही कह देता हूं कि सिर्फ व्यायामसे हमारे विद्यार्थियोंके शरीर नहीं बनेंगे। सभी तरफसे अिकट्ठी कोशिश होगी, तभी हम मनचाहे नतीजे ला सकेंगे।

१४. जबसे आप हिन्दुस्तानके सार्वजनिक जीवनमें शरीक हुअे हैं, तबसे शास्त्रार्थके फैसले आपसे मागनेका रिवाज चल पड़ा है। लोग आपसे यह जाननेको अुत्सुक रहते हैं कि फलां मौके पर फलां बात ठीक है या नहीं। यह वस्तुस्थिति है। अिससे जान पड़ता है कि आपका आन्दोलन धार्मिक स्वरूपका है। क्या यह ठीक होगा कि आपके न होने पर ये फैसले मण्डल बहुमतसे दें? और ठीक न हो तो क्या धर्मके जाननेवालोंकी परम्परा खड़ी नहीं करनी पड़ेगी?

मुझसे शास्त्रार्थके फैसले मागे जाते हैं, अिसे मैं सन्तोषजनक हालत नहीं मानता। मेरी कोअी हलचल, भले ही अुसकी शकल कैसी भी दिखाअी दे, अैसी नहीं है जो धार्मिक न हो। मगर मुझसे हर बातमें

जो फैसले मांगे जाते हैं, अुससे मैं यह समझता हूं कि मैं जिन अुसूलों पर चलनेकी कोशिश कर रहा हूं, अुन अुसूलोंको या तो लोग समझते नहीं, या अुन अुसूलोंके ठीक होनेमें अुन्हें शक होता है। और चूंकि मैं महात्मा कहलाता हूं या अच्छा आदमी माना जाता हूं, अिसलिअे और हमारे लोग ठहरे श्रद्धालु और विचार करनेमें कंजूस, अिसलिअे मुझे प्रश्न पूछते रहते हैं। अिससे मेरा अभिमान भले ही सन्तोष पा ले, मेरा काम भी भले ही कुछ निकल जाता हो, लेकिन मुझे अैसा नहीं दीखता कि जनताको या पूछनेवालोंको बहुत लाभ होता होगा। बहुत बार मेरे जीमें आता है कि मैं फतवे देना बन्द कर दूं और गूंगा बनकर मुझे जो मूझे और आये, वह काम करता रहूं तो कैसा अच्छा हो! पर अैसा करूं तो मैं जो अखबार निकाल रहा हूं, अुन्हें बन्द करना देना चाहिये। बहुतसा पत्र-व्यवहार समेट लेना चाहिये। मगर अितनी हिम्मत अभी मुझमें आअी नहीं है। वह आ जाय तो दूसरी बात है। और हिम्मत आये ही नहीं, तो सबका परम मित्र यमराज मौतका पैगाम भेजकर मेरे न चाहने पर भी फतवे बन्द करा देगा। मेरे न रहने पर और रहते पर भी मेरे सिद्धान्तोंको माननेवाले मण्डल बहुमतसे फैसले दें, तो अिसमें मुझे कुछ भी अयोग्य नहीं दीखता। मगर व्यक्तिकी तरह समूहोंमें भी धर्मकी भावना होनी चाहिये।

१५ विद्यापीठमें प्राथमिक, माध्यमिक और अुच्च अैसी शिक्षाकी तीन कक्षाअें हैं। अिन्हींको क्रमसे देहाती शिक्षा, शहरी शिक्षा और समाज-सेवकोंकी शिक्षाके नाम दें, तो क्या वह ठीक होगा?

मुझे तो प्राथमिक माध्यमिक और अुच्च शिक्षाका अिस मतलबमें इस्तेमाल हुआ अर्थ बिलकुल पसन्द नहीं है। क्या हम कैसे चाहेंगे कि देहातके लोग प्राथमिक शिक्षा लेकर ही चुप हो जायें? अुनमें से जो भी माध्यमिक या अुच्च शिक्षा लेना चाहें, अुन्हें वह लेनेका अधिकार है। शहरके आगार बच्चोंका काम प्राथमिक शिक्षाके बगैर नहीं चल सकता। दोनोंका ध्येय गांवकी अुन्नति होना चाहिये।

सकता है। चित्रकलाके सिलसिलेमें सीधी लकीरें वगैरा खींचने और चल और अचल चीजोंके नमूने बनानेकी कला सबको सिखाओ जा सकती है। असकी जरूरत है, और मुझे असे हर बच्चेको अक्षर लिखनेकी कला सिखानेसे पहले सिखानेका लोभ है।

> १८. व्याकरण, चक्रवृद्धि ब्याज, अुच्च भूमिति वगैरा जो विषय आगे चलकर भुला दिये जानेवाले हैं, अुन्हें राष्ट्रीय शिक्षामें बिलकुल न रखनेकी सिफारिश कुछ लोग करते हैं। आप अिससे सहमत होंगे? अैसा हो तो अुर्दूको भी अिनी कोटिमें क्यों न डाला जाय? हिन्दू-मुसलमान जब अेक-दूसरेके परिचयमें आनेको अुत्सुक होंगे और अेक-दूसरेकी संस्कृतिको समझनेकी अिच्छा रखेंगे, तभी संस्कृतका या अुर्दूका ज्ञान काम आयेगा और टिकेगा। आजका अनुभव भी यही है कि विद्यार्थी अुर्दू थोड़ीसी सीखते हैं और फिर भूल जाते हैं। अुर्दूसे व्यक्त होनेवाली संस्कृतिके प्रति आदर और शिष्यभाव पैदा होगा, तभी अुर्दूका ज्ञान व्यवहारमें आयेगा और बढ़ेगा। तब तक तो वह महज गणेश-पूजाकी तरह अेक धार्मिक विधि ही रहेगी।

मैं यह नहीं समझा कि व्याकरण, चक्रवृद्धि ब्याज और अुच्च भूमिति, ये तीनों अेक साथ कैसे रखे गये हैं। मैं यह मानता आया हूं कि भाषाके ज्ञानके लिअे व्याकरण निहायत जरूरी है, और व्याकरण और अुच्च भूमिति बड़े दिलचस्प विषय हैं। दोनों बुद्धिके निर्दोष विनोद हैं। अिसलिअे अूंची शिक्षा पानेवालेके लिअे, भाषाशास्त्र जाननेवालेके लिअे मैं अिन दोनों चीजोंको राष्ट्रीय शिक्षामें जगह दूंगा। जिसे हिसाब वगैरा जानने हों, अुसका काम चक्रवृद्धि ब्याजके बिना चल ही नहीं सकता। अिसलिअे प्रश्नमें बताअी हुअी तीनों बातोंका राष्ट्रीय शिक्षामें अपनी-अपनी जगह पर स्थान तो होगा ही। अिससे यह निचोड़ निकल सकता है कि कुछ बातें तो सारी दुनियामें शिक्षाके लिअे अेकसी होनी चाहिये और अैसा ही है भी। अिस वक्त सरकारी और राष्ट्रीय, दो भेद करने पड़ते हैं, क्योंकि सरकारी तालीमका रवैया राष्ट्रके विकासके

असली चीजकी रक्षा होती हो, तो भले ही विद्यार्थियोंकी आजादी सोलहों आने बनी रहे और शिक्षक जितने निष्पक्ष रहें कि वर्गमें आकर सो जायं। विद्यार्थियोंकी आजादीकी रक्षा करनेवाले स्वतन्त्र शिक्षक विद्यार्थियोंमें घुल-मिल जानेकी शर्त पर जैसा चाहें कर सकते हैं। शिक्षकको मैं अखाकी भाषामें कहूंगा :

'गुनर आवे त्यम तु रहे, ज्यम त्यम करीने हरिने लहे' — दुनियामें तू चाहे जैसा भी रह, किन्तु किसी भी कीमत पर औीश्वरको प्राप्त करनेका ध्येय अपने सामने रख।

आदर्श शिक्षकके सामने अिसके सिवा कभी कोअी दूसरा आदर्श न रहा न रहना चाहिये।

नवजीवन, ३–६–'२८ से १–७–'२८

१९

जोडणीकोश*

गुजरात विद्यापीठकी तरफसे अिस हफ्ते जोडणीकोश प्रकाशित हुआ है। अैसा कोश यह पहला ही है। हमारी भाषामें शब्दकोश तो दो-चार हैं, पर अुनमें हिज्जेका कोअी माप या प्रमाण नहीं। जैसे बिना नाकका आदमी अच्छा नहीं लगता, वैसे ही बिना हिज्जेकी जबानको समझना चाहिये। अिसीलिये प्रामाणिक जोडणीकोशकी कमी मुझे हमेशा मालूम होती रही है। 'नवजीवन' पढ़नेवालोंकी संख्या अैसी वैसी नहीं है। गुजरात विद्यापीठका अध्यापक मण्डल भी छोटा नहीं है। अिन सबका काम जोडणी-कोशके बिना कैसे चले? अिस प्रश्नका विचार करनेसे यह कोश तैयार हुआ है।

[illegible] कहा जा सकता है कि अिस बारेमें हिज्जे ही नहीं हैं, और [illegible] है? कोअी अैसा सवाल करे तो अुसका जवाब यह है कि यहां [illegible] 'जोडणी' शब्द हिज्जेके अर्थमें [illegible] है। [illegible] [illegible] जिसमें [illegible] नहीं हिज्जे दिये गये हैं।

सही-गलतका निर्णय करनेका प्रश्न नहीं है। ठीक-ठीक गुजराती जाननेवालों और व्याकरणशुद्ध गुजराती लिखनेकी कोशिश करनेवालोंकी कलमसे जो हिज्जे निकले हैं वे सही माने जाने जायगे। अिस बड़े नियमके अनुसार यह कोश तैयार हुआ है।

जिस गुजरातीको भाषासे प्रेम है, जो शुद्ध भाषा लिखना चाहता है या जो अन हिज्जोंको अपनाना चाहता है, जिसे राष्ट्रीय आन्दोलनमें पड़े हुअे बेशुमार गुजराती लिखना चाहते हैं, अन सबको यह जोडणीकोश ले लेना चाहिये।

अंग्रेजी भाषाके शब्दोंके हिज्जे गलत करनेमें हमें जितनी शर्म आती है, अससे मातृभाषाके हिज्जोंकी हत्या करनेमें हमें ज्यादा शर्म आनी चाहिये। अब आगे किसीको अपनी मरजीसे हिज्जे करनेका अधिकार नहीं है। मैं मरे जैसे अधूरी गुजराती जाननेवालोंको अिस कोशकी मदद लेकर ही अपनी चिट्ठी-पत्री लिखनेकी सिफारिश करता हूं।

अिस कोशमें ४३,७६३ शब्द हैं। अुसकी रचना, हिज्जोंके नियमों वगैराके बारेमें मैं लिखना नहीं चाहता। सब लोग यह कोश लेकर यह सब खोज जान लें। जिन अमीरोंको भाषाका शौक हो, अुन्हें अपने हरअेक मुलाजिमको यह कोश देकर अुसके अनुसार अपनी सारी गुजराती लिखनेकी सिफारिश करनी चाहिये।

संचालक कम श्रद्धावाले होनेके कारण अुन्होंने पहला संस्करण सिर्फ ५०० प्रतियोंका निकाला है। मुझे अुम्मीद है कि 'नवजीवन' के ग्राहकोंको ही यह संख्या पूरी नहीं पड़ेगी। कोशकी लागत कीमत पौने चार रुपया है। बेचनेकी कीमत तीन रुपया रखी है। जिल्द पक्की बंधी है; कोशमें ३७३ पन्ने हैं। मुझे आशा है कि भाषाप्रेमी गुजराती तुरन्त कोशको खरीद कर संचालकोंकी श्रद्धाकी कमी दूर कर देंगे और जोडणीकोशके लिअे अपनी सहानुभूति साबित करेंगे।

नवजीवन, ७-४-'२९

२०

आश्चर्यजनक परिणाम

१

गुजरात विद्यापीठके स्नातक राष्ट्रीय शिक्षाके बारेमें क्या विचार रखते हैं, अुनकी मानसिक और आर्थिक हालत कैसी है, वगैरा बातें जाननेके लिअे गुजरात विद्यापीठके स्नातक-मंडलने जांच की और अुसका नतीजा पत्रिकाके रूपमें प्रकाशित किया है। अिस परिणामको जाहिर हुअे अेक सालसे ज्यादा हो गया है। मेरे साथ-साथ अिस पत्रिकाने भी लम्बा सफर किया है। चूंकि यह कामकी है, अिसलिअे बहुत वक्त हो जाने पर भी अुसका जिक्र आज बेमौके न होगा।

१९२१ से १९२६ तकमें २५१ स्नातक पास हुअे थे। अुनमें ४ बहनें थी। अिनमें से सिंध और मद्रासके स्नातकोंको निकाल दें, तो २०० से ज्यादा स्नातकोंको अेक प्रश्नपत्र भेजा गया था। अुनमें से ८२ के जवाब मिले। जवाब देनेवालोमें २ बहनें थीं। अिन जवाबोंका बढ़िया सार अुस पत्रिकामें दिया गया है। राष्ट्रीय शिक्षाका गहरा अध्ययन करनेवालोंको पत्रिका मंगानी चाहिये। यहां तो मैं अुस सारमें से थोड़ी-सी ही बातें दे सकता हूं।

सरकारी पाठशाला क्यों छोड़ी, अिसके जवाबोंका सार अिस तरह है:

राजनैतिक जोशमें	३३
असहयोगमें श्रद्धा जम जानेसे	१०
राष्ट्रीय शिक्षा जरूरी लगनेसे	१०
देशके हुक्मका आदर करके	११
सम्बन्धियोंके प्रोत्साहनसे	६
प्रवाहकी बाढ़में	१२
कुल	८२

'अैसी प्रवृत्ति जिससे देशके काममें कुछ भी हाथ बंटा सकूं।'

'शिक्षा और खादी।'

'अछूतोंका काम या गांवोंकी प्राथमिक या माध्यमिक पाठशालाका काम।'

'जनताके काममें सौभाग्यसे भाग लिया जा सके, तो अिससे जीवन-कार्य करनेका पूरा सन्तोष हो जाय।'

स्नातकोंने राष्ट्रीय शिक्षाके फायदों और असहयोगकी अुत्तमताको माना है; फिर भी अुन्होंने अपने अिस खयालको कि राष्ट्रीय शिक्षा अभी अपूर्ण है और अिस अपूर्णताके अपने असन्तोषको जाहिर करनेमें संकोच या झूठी शरम नहीं रखी है। अिस विचार-स्वातंत्र्यने पत्रिकाकी कीमत बढ़ा दी है।

नीचेके आंकड़े बताते हैं कि १९२६ तक कातनेके महत्वकी कदर थोड़े ही लोग करते थे :

(रोज) अेक घंटे या अिससे ज्यादा कातनेवाले	५
आधा घंटा कातनेवाले	१०
अेक हजार गज मासिक कातनेवाले	१
अनियमित कातनेवाले	१
बिलकुल न कातनेवाले	४१
	८१

जिसे मेरे जैसे लोग महायज्ञ मानते हैं और जिसके महत्वको कांग्रेसने अपने प्रस्तावमें स्वीकार किया है, अुसके बारेमें यह लापरवाही निराशाजनक जरूर है। मगर मैं जानता हूं कि सन् १९२६ के बाद अिसमें प्रगति हुअी है और अिससे मुझे सन्तोष है।

शुद्ध खादी पर डटे रहनेवालोंकी सख्या ५६ थी। यह 'अन्धोंमें काना राजा' के हिसाबसे ठीक है। दूसरे लोग भी थोड़ी-बहुत खादी तो काममें लेनेवाले थे ही। न पहननेवाले अपनी मुश्किलें यों बताते हैं :

'हमें अैसे लोगोंमें काम करना पड़ता है, जो खादीकी सादगीसे हमारी कीमत कम आंकते हैं। अिससे काम कम मिलता है और नुकसान होता है।'

'खादीकी महंगाअी और मिलनेकी मुश्किल तथा मिलके अच्छे कपड़े पहननेकी तीव्र अिच्छा अिसमें रुकावट डालती है।'

'मिलके सस्ते और तैयार बनाये हुअे कपड़े दुकानों पर बहुत सस्ते मिलते हैं। खादीकी यह हालत नहीं है।'

मुश्किलोंका यह प्रदर्शन बताता है कि अभी अिस बातका पता बहुत लोगोंको नहीं है कि भूखके दुनियोंके लिअे खादी कितना बड़ा सहारा है और स्वराज्य दिलानेमें अुसका कितना बड़ा हाथ है। अड़चनें सहे बिना किसीने अिस दुनियामें स्वराज्य नहीं लिया है।

* * *

मेरा खयाल है कि अिस पत्रिकाके पढ़नेवालोंको यह लगे बिना नहीं रह सकता कि राष्ट्रीय विद्यापीठोंसे देशको बड़ा लाभ हुआ है और आज विद्यार्थी-समाजमें जो ताकत आअी है अुसकी जड़ राष्ट्रीय विद्यापीठ हैं। जो तजरबा मैंने गुजरात विद्यापीठका यहां दर्ज किया है, लगभग वैसा ही मुझे काशी विद्यापीठका भी हुआ है; और जांच करने पर मालूम होगा कि वैसा ही अनुभव जामिया मिलियाका और बिहार विद्यापीठका भी है।

नवजीवन, २७-१०-'२९

२

['राष्ट्रीय शिक्षाकी कीमत' शीर्षक लेख।]

स्नातक-संघके मंत्री श्री जेठालाल जीवणलाल गांधी लिखते हैं:

"आजके 'नवजीवन' में 'आश्चर्यजनक परिणाम' शीर्षकसे आपने जिस पत्रिकाके आधार पर लेख लिखा है, अुस पत्रिकाके निकलनेके बाद कुछ और जानकारी मिली है। अिसी कारण यह पत्र लिख रहा हूं।

"आपने लिखा है कि अुस पत्रिकाको निकले अेक बरस हो गया, मगर अुसे तो दो बरस हो गये। जब आप बंगलोरमें थे, तब वह पत्रिका आपको भेजी गअी थी।

"पत्रिका निकलनेके बादकी जानकारी नीचे लिखे अनुसार है:

"पिछली (चैत्र १९८५ की) सालाना परीक्षा तक पास हुअे स्नातक भाअी-बहनोंकी कुल संख्या २९७ होती है। अुनमें से लगभग २०० स्नातकोंकी जानकारी किसी न किसी रूपमें संघके पास है। अुस जानकारीके आधार पर कहा जा सकता है कि आज शुद्ध खादी पहननेवाले स्नातकोंकी तादाद कमसे कम १२० है। सिर्फ धोती ही मिलकी पहननेवालोंकी संख्या अिसमें शामिल नहीं है।

"कातनेके बारेमें भी यह कहा जा सकता है कि आज कमसे कम ५० स्नातक नियमसे कातते होंगे, भले ही सबके सब चरखा संघके सदस्य न भी हों। अिस संख्याके अलावा हजार गज माहवारी या छुटपुट कातनेवाले अलग हैं।

"स्नातकोंके कार्यक्षेत्रको देखनेसे पता चलता है कि लगभग १०० स्नातक शिक्षा और समाजसेवाकी संस्थाओंमें काम करते हैं। अुनका वर्गीकरण अिस तरह किया जा सकता है:

"राष्ट्रीय काममें लगे हुअे:

गुजरात विद्यापीठ	१४
राष्ट्रीय पाठशालायें	११
बारडोली तालुकाके आश्रम	५
मजदूर संस्थायें	५
अन्त्यज-सेवा-मण्डल	४
अुद्योग-मन्दिर	३
भील-सेवा-मण्डल	२
चरखा संघ	२
फुटकर	६
	५२
अखबार	११
दूसरी संस्थायें	२२
सरकारी शिक्षण-संस्थायें	८

“ आपके प्रस्ताव पास होने पर भी संघने कुछ भेजा नहीं। इस साल (सं० १९८५ में) संघके सदस्योंके कामें ७६ सद-स्योंका चन्दा मिला है। उनमें से आपके प्रस्तावसे पहले के हुये सदस्योंमें से प्रस्तावके कारण १० सदस्य निकल गये हैं। इस तरह प्रस्तावके अनुसार सदस्योंकी तादाद ६६ रह गयी है। पर आंकड़ा पिछले वर्षोंके आंकड़ोंसे मिलाकर देखने पर संतो-षप्रद है, यह नीचेके आंकड़ोंसे मालूम हो जायगा:

	सदस्योंकी कुल संख्या	खादी पहननेवाले
पहला साल	२३	२१
दूसरा साल	७३	५१
तीसरा साल	६०	५३
चौथा साल (१९८५)	७६	६६”

सब कोओी यह देख सकेंगे कि इस मतसे मेरे पहले लेखकी अच्छी ताओीद होती है। हमारा वातावरण कमजोर न हो, या युवक तो वातावरणसे अूपर अुठ सकें तो राष्ट्रीय स्कूल मर जाय। अुनमें ं स्वाभाविक प्राण होता है, वह विद्यार्थियोंमें सेवाभाव और थोड़ा-बहु आत्म-विश्वास पैदा करता ही है।

खादी और बताओीके बारेमें हुओी तरक्की अुम्दा मानी जायगी फिर भी मेरे खयालसे अुसमें सुधारकी गुंजाअिश है। राष्ट्रीय शिक्षाल रहे हुओे किसीको भी खादीके मामलेमें अधकचरा होना ही न चाहिये यह समझा जाता है कि 'युनिफॉर्म' पहननेवालेने अुसका अेक भी हिस्सा छोड़ दिया हो तो वह 'युनिफॉर्म' नहीं। यह नहीं भूलना चाहिये कि खा राष्ट्रीय पाठशालाका 'युनिफॉर्म' है। हर समकोणका माप जैसे ९० मा होता है, वैसे ही स्नातकोंके 'युनिफॉर्म' के बारेमें समझना चाहिये। ह 'युनिफॉर्म' का अर्थ कपड़ेकी किस्म तक ही मर्यादित रखते हैं। पोशाक आकारके बारेमें कोओी मर्यादा नहीं होती। मैं मानता हूं कि वह हो चाहिये। पुराने जमानेके गुरुकुलोंमें अैसा रिवाज था; आजकलकी पश्चिम मशहूर पाठशालाओंमें भी है। मेरी रायमें अिन मर्यादाओंमें रहस्य है

स्नातक कातनेमें अभी पूरी दिलचस्पी नहीं लेते, अुसका मूल्य वे पूरी तरह नहीं समझते हैं। अगर समझ लें तो वे सुन्दर, बटदार, बारीक सूतका हर महीने ढेर लगा सकते हैं और अुसमें बहुत वक्त भी नहीं लगेगा। जब तक अुन्हें यह यकीन नहीं हो जाता कि 'सूतके धागेमें स्वराज्य है', तब तक अिस तरहकी दिलचस्पीकी हमें बाट ही देखनी पड़ेगी।

नवजीवन, १७-११-'२९

२१

राष्ट्रीय विद्यापीठोंका काम

१

['बहिष्कार यानी लोकशिक्षा' शीर्षक लेखसे।]

विदेशी कपड़ेके बहिष्कारको सफल बनानेमें कितनी लोकशिक्षा समाओ हुआी है, अिसका अन्दाज मामूली आदमीको शायद ही हो सकता है। विजोलियामें कामका अनुभव लिया गया है, अिसलिअे भाअी जेठालाल गोविन्दजी अपने विचार मुझे समय-समय पर भेजा करते हैं। अुनमें से कुछ मैं अपनी भाषामें साररूपसे यहां देता हूं। अिससे अूपरकी बातका अर्थ थोड़ा समझमें आयेगा।

"विदेशी कपड़ेका बहिष्कार तभी सफल होगा, जब बाअीस करोड़ किसान खादी पहनने लग जायंगे। अुन्हें खादी पहनानेका मतलब है खादीका शास्त्र समझाना, स्वावलम्बी पद्धतिके फायदे बताना और खादीकी सारी क्रियायें सिखाना। अैसा करनेके लिअे स्वयंसेवक चाहिये, चलते-फिरते विद्यालय चाहिये, कातने-बीजनेकी क्रियायें सिखानेवाली पत्रिकायें तैयार करना और बंटवाना चाहिये, वगैरा।"

यह तो मैंने सिर्फ सार दिया है। पढ़नेवाला खुद जो बातें छिपी रह गअी हैं अुनकी तफसील पूरी करके बहिष्कारसे मिलनेवाली लोकशिक्षाका अन्दाज अपने-आप कर सकता है।

दिलानी हैं। तुमने अभी तीन तरहका कर्ज चुकानेकी प्रतिज्ञायें ली हैं। . . . वे तुम्हें सिर्फ देशसेवा करनेका ही अधिकार देती हैं। अिसलिअे जब तक तुम आजादीकी लडाअीमें पूरा हिस्सा नहीं लेते रहोगे, तब तक तुमसे शांति या आरामसे नहीं बैठा जायगा। अगर तुम सरकारी और राष्ट्रीय संस्थाओंका यह फर्क समझ लो, तो तुम्हें फिर कभी नाअुम्मीद होनेका कारण नहीं रहेगा।

नवजीवन, १३-१०-'२९

२२
कड़ी कसौटी

१

[१९३० के गुजरात विद्यापीठके पदवीदान-समारम्भके मौके पर कुलपतिपदसे दिये गये व्याख्यानसे।]

अब जो काम आनेवाला है, वह सख्त होगा। यह काम जेल जानेका नहीं है। जेल जाना तो बहुत सहल है; और हमसे भी ज्यादा सहल खूनी, चोर और डाकूके लिअे है। क्योंकि अुन्हें जेलमें रहना आता है। लेकिन वे लोग वहां पन्द्रह-पन्द्रह वर्ष तक रहकर घर-सा बना लेते हैं, तो अिससे वे कोअी देशकी सेवा नहीं करते। अिस तरह सिर्फ जेल जानेमें देशकी सेवा नहीं है। मगर तुमसे तो मैं जेल जानेकी, फांसी पर चढ़ने तककी योग्यता चाहता हूं। यह योग्यता अत्यंत शुद्धिसे मिल सकती है। १९२१ में हमने आत्मशुद्धिकी प्रतिज्ञा की थी। आज तुमसे ज्यादा आत्म-शुद्धिकी आशा रखता हूं। आज देशमें — वातावरणमें — जहां तहां हिंसा है, मगर अिस हिंसामें जल मरनेकी तुम्हारी ताकत होनी चाहिये। तुम अगर अपनेमें सत्य और अहिंसाको मूर्तिमान होने देना चाहते हो, और मेरे पकड़े जानेके बाद कभी देशमें मारकाट हो, तो मैं यह सुनना चाहूंगा कि तुम घरमें घुसे रहे या तुमने आग लगानेवालोंको बनी सुलगाकर दे दी या तुम लूट और मारकाटमें शरीक हो गये। अैसी बात मैं

स्वराज्य लेना है, असलिअे राष्ट्रीय शिक्षा पानेवाले विद्यार्थियोंको और अैसी संस्थाओंके शिक्षकोंको वही करना चाहिये जो स्वराज्य लेनेके लिअे देशको करना है और वही शक्ति पैदा करनी चाहिये जो पैदा करनी है; ताकि स्वराज्यका यज्ञ शुरू हो तब वे असमें अपनेको होमकर भस्म हो जायें।

स्वराज्यकी लड़ाअी आत्मशुद्धिकी लड़ाअी है, और असे लेनेके लिअे सबको आत्मशुद्ध होना चाहिये। कुछ लोगोंका यह खयाल है कि राजनीतिका नीतिसे कोअी नाता नहीं। असको कौन सोचता है कि हमारे नेताओंकी नीति (नैतिकता) कैसी है? यूरोप, अमेरिकामें जो प्रजातंत्र चलता है, वह अिसी खयाल पर चलता है। अुनका काम अिसी खयाल पर चलता है कि गंदा जीवन बितानेवाले भी निहायत अकलमन्द होते हैं। ब्रिटिश लोकसभाका अितिहास देखेंगे, तो पता चलेगा कि अुसके नेताओंके व्यवहारमें बड़ी गंदगी भरी है। असहयोगके पहले हमारी राजनीतिका भी यही हाल था। कांग्रेसके प्रतिनिधियों और नेताओंकी नीतिकी हम कोअी खबर न रखते थे। मगर १९२० में हमने तय किया कि कांग्रेसके नुमाअिन्दोंमें नीतिकी अेक खास योग्यता होनी चाहिये। अिस चीजका अब कोअी खुला विरोध नहीं करता, हां, दिलमें बहुत लोग अैसा समझते हैं कि राजनीतिसे नीतिका कोअी वास्ता नहीं है। अिसी वजहसे हमारी चाल धीमी रही है, रुक जाती है। हमने १९२० की प्रतिज्ञाका पालन किया होता, तो स्वराज्य मिलनेमें नौ बरस न लगे होते। अगर स्वराज्य हमारी सभ्यताको शुद्ध और स्थायी बनानेके लिअे न हो तो वह निकम्मा है। हमारी सभ्यताका अर्थ यह है कि नीतिको सब तरहके व्यवहारमें — धर्म, राज्य, समाज, सब व्यवहारमें — सबसे अूंची जगह दी जाय।

और विद्यापीठोंमें हमने सभ्यता सिखानेका काम हाथमें लिया है। अिसलिअे स्वराज्यके यज्ञमें सबसे बड़ा बलिदान विद्यापीठोंका होगा, महासभा कानून-भंगमें राष्ट्रीय विद्यालयोंका सबसे बड़ा हिस्सा होगा। तुम्हारे लिअे अिससे बढ़कर और कोअी चीज नहीं हो सकती।

कांग्रेसने तय किया है कि सत्य और अहिंसाके बिना स्वराज्य नहीं मिल [illegible]। मैं चाहता हूं कि विद्यापीठके विद्यार्थी और शिक्षक अिस खास तौर पर समझें और मानें। अगर वे भी अिन दोनों चीजोंको

देखकर ही अस्पृश्य लोग समझ जायं कि यह तो हमारा ही आदमी है। फिर तो तुम अुनमें भी रचनात्मक काममें पूरा हिस्सा लिया सकोगे।

शराबबन्दीके मामलेमें भी यही अुसूल लागू किया जा सकता है। रही अेक खादीकी बात। पर अुसकी बात यहां करनेकी कोओी जरूरत नहीं है? कातनेका और खादीका काम अैसा है कि आदमी अपने किये हुअे कामका रोजनामचा रखे, तो सीधा हिसाब लगा सकता है कि देशके घरमें अुसने कितनी वृद्धि की है। अगर यह वृत्ति हममें काम करती होती, तो आज तक हमने कितनी ही प्रगति कर ली होती।

विदेशी वस्त्र-बहिष्कार समितिने बताया है कि पिछले साल थोड़े बहुत कामसे भी हम कितना असर डाल सके हैं। मेरे हिसाबसे तो यह असर बहुत ही थोड़ा है। लेकिन जिस चीजमें हम सबका अटूट विश्वास होता, तो जितना हुआ अुससे कितना ज्यादा असर हुआ होता? आज सच्चे और होशियार कार्यकर्ताओंकी जरूरत है। मगर मौजूदा राष्ट्रीय विद्यार्थियों और शिक्षकोंमें भी मैंने काम करनेकी शक्ति और अिच्छा न रखनेवाले बहुत देखे हैं। हममें से अुद्यम ही गायब हो गया है। अिसके कारणोंकी चर्चा यहां बेमौका होगी, लेकिन अितना समझ लेना काफी है कि अिस अविश्वासको हमें निकाल डालना है।

मैंने बता दिया कि हमें कितना काम करना है। अब यह बात की जाय कि हमें क्या नहीं करना है। अक्षर-ज्ञान, साहित्यके चोचले, अंग्रेजी जानना वगैरा चीजें छोड़ना जरूरी मालूम हो, तो स्वराज्यके लिअे अिन्हें छोड़ना चाहिये। सब राष्ट्रीय विद्यालय कांग्रेसके कार्यक्रमके कारखाने बन जाने चाहिये। हिन्दुस्तानमें अैसे करोड़ों बालक मौजूद हैं, जिन्हें नामको भी शिक्षा नहीं मिलती। अंग्रेजी शिक्षाकी तो बात ही कहां? तो जब तक स्वराज्य न मिले, तब तक हम क्यों न अिस चीजका त्याग करें?

कार्यसमितिका प्रस्ताव है कि कांग्रेसके सदस्य बनाने चाहिये, स्वयंसेवक ब[illegible] चाहिये। अिस कामके लिअे दूसरी अलग संस्थाअें क्यों चाहिये? हम [illegible] सदस्य और स्वयंसेवक बनकर औरोंको बनाने लग जायं? [illegible]के विद्यार्थियोंने कितना स्वार्थत्याग किया था? हम

आखिरमें अेक सवालका जवाब देते हुअे गांधीजीने कहा:

"तुम यह पूछते हो कि जब मैं विद्यार्थियोंसे यह सब मांगता हूं, तो कांग्रेसमें सरकारी पाठशालाओं और विद्यालयोंके बहिष्कारका प्रस्ताव क्यों नहीं लाया? जवाब यह है कि वातावरण नहीं था। लेकिन यह न पूछना कि वातावरण न हो तो ये विद्यार्थी क्या करें। ये विद्यार्थी सैकड़ों विरोधी शक्तियोंके सामने डटे हुअे हैं। ये लोग अपना कर्तव्य शुद्ध ढंगसे करते हों, अिन लोगोंको अपने कर्तव्यके सिवा और कहींसे शान्ति न मिलती हो, तो अिन लोगोंके कामका अितना जबरदस्त असर होगा कि दूसरे लोग भी तमाम सरकारी स्कूल-कॉलेज छोड़नेको मजबूर हो जायंगे।"

नवजीवन, १९-१-'३०

३

['विद्यार्थी क्या करें?' शीर्षक लेखसे।]

बहुत दफा कहा गया है कि आम तौर पर राष्ट्रीय शिक्षा पर और खास कर गुजरात विद्यापीठ पर जो रुपया खर्च किया गया है, वह सब बरबाद हुआ है। मेरी रायमें गुजरात विद्यापीठने अपनी भारी कुरबानियोंसे अपनी हस्तीको, अपने संस्थापकोंकी आशाओंको और दाताओंके दिये हुअे दानको ठीक साबित किया है। अितना ही नहीं, अुसकी शोभा बढ़ाअी है। कारण यह है कि अुसने अब तक अपने पास आये हुअे १६ वर्षसे नीचेके विद्यार्थियोंकी पढ़ाओके सिवा अपनी और सब प्रवृत्तियां मुलतवी कर दी हैं। १५ सालसे ज्यादा अुम्रके विद्यार्थियोंने और शिक्षकोंने स्वयंसेवकके रूपमें अपनी सेवाअें सौंप दी हैं और लगभग ४० विद्यार्थी अपने अध्यापकोंके साथ कभीसे लड़ाअीके मैदानमें कूद चुके हैं। सत्याग्रहके बारेमें जिन सिपाहियोंको तालीमकी जरूरत हो, अुनके लिअे विद्यापीठने १५ दिनकी शिक्षाका अेक वर्ग भी खोला है। जिस तत्परतासे अिन विद्यार्थियों ... ने काम किया है, अुस पर मैं अुन्हें बधाअी देता हूं। मैं कह ... अिनमें बीस तो मेरे साथ कूचमें हैं। अिनके दो दल कर दिये

१९२० की और अिस वक्तकी पुकारमें जो फर्क है, वह मैं बताना चाहता हूं। १९२० की पुकार सरकारी संस्थायें खाली करने और राष्ट्रीय संस्थायें कायम करनेकी थी। यानी तैयारी करनेकी थी। आजकी पुकार आखिरी लड़ाअीमें यानी सामूहिक सविनय कानून-भंगमें जूझनेकी है। वह आये भी और न भी आये। जो अब तक आजादीके नारे लगानेमें सबसे ज्यादा जोर दिखाते थे, अनुमें अगर अमल करनेकी बिलकुल ताकत न हुअी, तो वह लड़ाअी नहीं आयेगी। नमक ही यदि खारापन छोड़ दे, तो यह कमी कौन पूरी करेगा? यह आशा रखी जाती है कि विद्यार्थी कोरे और बेमतलब नारोंसे नहीं, बल्कि अपनी शानके लायक मूक, गौरवशाली और निर्दोष कामसे नाजुक हालत पैदा करेंगे। यह हो सकता है कि विद्यार्थियोंको आत्मत्याग और खास तौर पर अहिंसामें श्रद्धा न हो। अैसा हो तो वे कुदरती तौर पर ही बाहर नहीं आयेंगे — अुन्हें बाहर आनेकी जरूरत ही नहीं। अुस हालतमें अिस अंकमें जिन क्रान्तिकारियोंका पत्र* दूसरे कॉलममें दिया गया है, अुनकी तरह विद्यार्थी भी ठहर जायं और देखें कि अहिंसक लड़ाअीसे क्या हो सकता है। अुनकी शराफत अिसीमें है कि वे अिस अहिंसक बलवेमें दिलोजानसे कूद पड़ें या तटस्थ और (पसन्द हो तो) होनेवाली घटनाओंके विवेकी निरीक्षक बने रहें। अहिंसक बलवा खड़ा करनेवालोंकी योजनाके साथ ये लोग अपना मेल न बिठा सकें और अुसके खिलाफ या मनमाना बरताव करें, तो आन्दोलनमें बाधा पड़ेगी या अुसे नुकसान पहुंचेगा। मैं जानता हूं कि अिस मौके पर सविनय कानून-भंगका पूरा विकास नहीं हो सका, तो फिर अेक और पीढ़ी तक अुसका विकास नहीं हो सकेगा। विद्यार्थियोंके सामने जो दो रास्ते खुले हैं वे साफ हैं। वे अपना चुनाव कर लें। पिछले दस सालमें जो जागृति हुअी है, अुससे वे अछूते नहीं रहे हैं। मैं चाहता हूं कि आखिरी फैसला करके तुम लड़ाअीमें कूद पड़ो।

यंग अिंडिया, २०–३–'३०

---

* अिस पत्रमें गांधीजीको हिंसामें विश्वास रखनेवाले क्रान्तिकारियोंने धाक्रमआदिके लिअे तीन सालकी अवधि दी थी।

अुसके बारेमें अितना ज्यादा सुना है कि मेरा दिल खुशीसे अुमड़ रहा है। गुजरात विद्यापीठ और अुसी तरह बिहार और काशी विद्यापीठके बारेमें मैं ज्यादा जान सका हूं। अुन तीनोंमें से अध्यापक और विद्यार्थी निकल पड़े, यह कोअी मामूली बात नहीं है। जब अिस लड़ाअीका अितिहास लिखा जायगा, तब यह देखकर दुनिया भी मुग्ध होगी कि लड़ाअीमें विद्यार्थियोंने कितना ज्यादा भाग लिया था और विद्यार्थियोंने लड़ाअीकी कितनी शोभा बढ़ाअी थी। जेलमें बैठे हुअे जब मैं विद्यापीठोंके विद्यार्थियों और अध्यापकोंके बारेमें कोअी भी बात अखबारोंमें देखता था, तब फौरन सरकारी पाठशालाओंके साथ अुनकी तुलना कर लेता था। अिस तुलनाके बाद मेरे लिअे यह दीयेकी तरह साफ़ हो गया कि १९२० में स्कूलोंके बहिष्कारका जो कार्यक्रम हमने रखा था, वह कितना ठीक था। यह सच है कि सरकारी मदरसे और स्कूल-कॉलेज अभी तक भरे हुअे ही रहते हैं। अिससे भी ज्यादा सच और दुःखकी बात यह है कि वहां जानेके लिअे विद्यार्थी अितने ज्यादा आतुर होते हैं कि वे माफ़ी मांगते हैं, जुर्माना देते हैं और किसी न किसी तरह वहां चले जाते हैं। अिसलिअे अुन कॉलेजोंके अफ़सर या शिक्षा-विभागके अधिकारी गश्ती चिट्ठियां जारी करते हैं कि जिन लड़कोंने अिस लड़ाअीमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष भाग लिया हो या जो जेल गये हों, अुन्हें भरती करनेसे पहले शिक्षा-विभागके मुखियाको खबर दी जाय। वह विद्यार्थियोंकी जांच करेगा और फिर अुन्हें भरती करेगा। जो विद्यार्थी अिस ढंगसे दाखिल होते हैं, अुनके लिअे क्या कहा जाय? शिक्षा-विभागका जो अधिकारी अिस तरहकी शर्तें चाहे, अुसके लिअे भी क्या कहा जाय?

हिन्दू युनिवर्सिटीके बारेमें सरकारने जो नीति अख्तियार की थी वह तुमने देखी होगी। पूज्य पंडित मालवीयजी अैसे वैसे लड़नेवाले नहीं हैं। मैं भीतरका अितिहास जानता हूं, अिसीलिअे कहता हूं कि मालवीयजीकी निडरतासे, हिम्मतसे और त्याग करनेकी तैयारीसे हिन्दू युनिवर्सिटी अिस वक्त बच गअी है; यानी अुसे जो रुपयेकी बड़ी मदद सरकारसे मिलती थी वह बन्द नहीं हुअी है। हो जाती तो मालवीयजीकी आंखोंमें से अेक भी आंसू न गिरता। अुन्होंने तय किया था कि अेक भी

२४

अेक कदम आगे

१

[गुजरात विद्यापीठके भविष्यकी चर्चाके दरमियान की हुआी बातचीत।]

मैं शुरूसे ही यह मानता और कहता आया हूं कि विद्यापीठका असली काम देहातमें है। लेकिन अब तक हम यह खयाल रखकर चले हैं कि यह काम केन्द्रीय संस्थाके जरिये ही हो सकता है। अब मैं अेक कदम आगे बढ़नेके लिअे कहता हूं। और वह यह है कि हमारा विद्यापीठ अब गांवोंमें जा बसे। गांवोंमें विद्यापीठके जानेका क्या मतलब है, अुसका विचार करें।

सत्याग्रह आश्रमको मकानके रूपमें तोड़ डालनेका यह अर्थ नहीं था कि आश्रम ही तोड़ डाला। जहां आश्रमके रहनेवाले आश्रमके आदर्शों पर चलें वहीं आश्रम है। अिस तरह आश्रमका रूप व्यापक हो गया माना जायगा। जीती-जागती संस्थाका अुद्देश्य अैसा होना चाहिये कि अुसमें जो लोग तैयार हों, वे सब अुसे अपने जीवनमें मूर्तिमंत करें। जब अैसे बहुत लोग होंगे तब संस्था मूल रूपमें न हो तो कोअी हानि नहीं हो सकती।

अिस तरह विद्यापीठका हरअेक सेवक, जिसने विद्यापीठके आदर्शोंको स्वीकार किया है, अुसकी सेवा करनेकी प्रतिज्ञा की है और 'सा विद्या या विमुक्तये' का भेद अुसके कमसे कम अर्थसे लगाकर गहरेसे गहरे अर्थ तक अच्छी तरह समझ लिया है, खुद ही चलता-फिरता विद्यालय बनकर देहातमें चला जायगा। वह विद्यापीठके आदर्शोंका अमल करेगा और लोगोंको समझानेके अुपाय करेगा।

अिस तरह बहुतसे सेवक गांवोंमें फैल जायं और
जरूर संभव है कि देहातमें ही अेक मार्गदर्शक केन्द्रीय
हमारा विद्यापीठ अैसी संस्था नहीं है। अुसके पास
बरावर है।

अिसके सिवा, अुसे हरिजनोंकी सेवा करनी है। अुसे गांवमें रहनेको हरिजनोंको न्योता देना चाहिये। अिससे अुसे अगर गांवमें रहनेको जगह न मिले और वहां रहकर हरिजनोंका काम वह न कर सके, तो अुसे हरिजनोंके मुहल्लेमें जाकर रहना चाहिये।

अब शिक्षाका प्रश्न लें। १९२२ में मैंने जो बालपोथी* लिखी थी वह मेरे दिलसे नहीं निकली है। अुसमें जो बात थी वह मैं तुमसे स्वीकार न करा सका। मगर वह चीज अभी तक मेरे पास ज्योंकी त्यों है। यह बालपोथी बहुतसी पाठ्यपुस्तकोंमें अेककी वृद्धि नहीं है, बल्कि वह सबके अेवजमें है। मैं यह भी नहीं जानता कि वह पोथी अब है या नहीं। लेकिन न हो तो मैं अुसे फिरसे लिखकर दे सकता हूं। बात सिर्फ यह है कि पहले बच्चोंकी आखें चलेंगी, कान चलेंगे और जीभ चलेगी। अुन्हें शिक्षक अितिहास, भूगोल वगैरा जो कुछ सिखाना है जबानी सिखायेगा। अुसके बाद वे वर्णमाला पढेंगे। अुसके बाद जब चित्र खींचने पर हाथ जम जायगा, तब अक्षरोंके चित्र खींचेंगे, मक्खीकी टांगें नहीं बनायेंगे। तुम यह प्रयोग करो तो पूरी तरह करना चाहिये। लोगोंकी बुद्धि तक पहुंचना हो और अुसे जगाना हो, तो मेरा खयाल है कि मेरा रास्ता सबसे आसान है। मेरे बचपनके अनुभवकी याद मुझे अभी तक ताजी है। जब मैंने कथासे महाभारतकी बातें सुनी, तब मैं ककहरा सीखता होअूंगा। जब रामायणकी बातें सुनी तब मैंने अेक-दो किताबें पढ़ी होंगी। मगर अिससे मुझे ये बातें समझनेमें मुश्किल नहीं होती थी।

हमें लोगोंको भ्रमजालमें नहीं डालना चाहिये। अगर हम यह कहें कि अक्षर-ज्ञानके बिना शिक्षा नहीं मिलती, तो वे अुलटे रास्ते जायंगे। बड़ों और बच्चोंको अिस ढंगसे जबानी ज्ञान देना मेरी अिस ग्राम-संगठनकी कल्पनामें शामिल है। मगर अिसका कोअी यह अर्थ न करे कि मुझे [illegible] विरोध है। मैं तो अुसे अुसकी जगह पर रखना चाहता हूं [illegible] चाहता हूं।

* यह पुस्तिका नवजीवन प्रकाशन मंदिर द्वारा हिन्दीमें प्रकाशित [illegible] है। कीमत ०–३–०, डा० खर्च ०–२–०।

लायक नहीं है, तो अिसका मतलब यह हुआ कि मैं तुम्हें अपना कहना अच्छी तरह नहीं समझा सका। मैं कहता हूं कि अगर यह बात निःसंशय रूपसे तुम्हारे दिलमें जम गयी हो, तो तुम सभी लायक हो। यानी जो बात समझ गये हो अुस पर तुम अमल न कर सके, यह हकीकत तुम्हारे जानेमें रुकावट न होनी चाहिये। क्योंकि अमल गांवोंमें बैठकर करना है, और अमल करते करते अनुभव मिल ही जायगा।

हरिजनबंधु, ७-९-'३४

२

['मनका भूत' शीर्षक लेखसे।]

बहुतसे कार्यकर्ता गांवोंके जीवनसे डरते हैं, अुन्हें यह डर रहता है कि अगर कोअी संस्था अुन्हें वेतन नहीं देगी तो — खास तौर पर अुनकी शादी हो चुकी हो और अुन्हें कुटुम्बका पालन करना पड़ता हो तो — वे गांवोंमें मजदूरी करके अपनी रोजी नहीं कमा सकेंगे। मैं मानता हूं कि यह खयाल अवनति लानेवाला है। हां, कोअी आदमी शहरी मानस लेकर देहातमें जाय और गांवोंमें शहरी रहन-सहन रखना चाहे, तो वह शहरी लोगोंकी तरह गांवोंके लोगोंको चूसे बिना काफी कमाअी नहीं कर सकता। लेकिन कोअी आदमी गांवमें जाकर बसे और देहातियोंके ढंगसे ही रहनेकी कोशिश करे, तो अुसे पसीना बहाकर रोजी कमानेमें कुछ भी मुश्किल नहीं होनी चाहिये। अुसके मनमें अितना विश्वास होना चाहिये कि अगर गांवोंके लोग, जो सालभर बुद्धिको काममें लिये बिना पुराने जमानेसे चले आ रहे तरीकेसे कड़ी मेहनत करनेको तैयार हैं, अपना गुजर कर सकते हैं, तो वह खुद भी कमसे कम मामूली देहातीके बराबर कमाअी तो कर ही सकेगा। अितना वह अेक भी देहातीकी रोटी छीने बिना करेगा, क्योंकि वह गांवमें मुफ्तका खानेवाला बनकर नहीं, बल्कि कुछ न कुछ पैदा करनेवाला बनकर

जरूरत है कि चरखा संघ और ग्रामोद्योग संघकी बनाओी हुओी योजनाके अनुसार सब तरहकी मजदूरीकी कमसे कम अेक खास समान कीमत मानती है। यानी अेक घण्टा पीजन चलाकर औसतन् अेक खास मात्रामें पींजनेवाले पिंजारेको अुतनी ही मजदूरी मिलेगी, जितनी जुलाहे, कतवैये और कागजीको अुसके हर घण्टेके हिसाबसे तय की हुओी मिकदारमें किये हुओे कामकी मिलेगी। अिस तरह ग्रामसेवकको यह छूट है कि जो काम वह आसानीसे कर सकता है, अुसीको पसन्द करके सीख ले। अलबत्ता, अुसे हमेशा अैसा काम चुननेका खयाल रखना चाहिये, जिससे पैदा होनेवाला माल अुसके गांवमें या आसपासके अिलाकेमें खप सके या जिसकी अिन मंडीयोंको जरूरत हो।

हर गांवमें अेक बड़ी जरूरत अीमानदारीसे चलनेवाली अेक अैसी दुकानकी है, जहां असली कीमत पर वाजिब कमीशन चढ़ाकर बिना मिलावटकी खाने-पीनेकी और दूसरी चीजें मिल सकें। यह बात सच है कि किसी भी दुकानके लिअे, भले वह कितनी ही छोटी क्यों न हो, कुछ न कुछ पूंजीकी जरूरत तो होती ही है। मगर जो ग्रामसेवक अपने कार्य-क्षेत्रमें जरा भी परिचित होगा, अुसने अपनी अीमानदारीके बारेमें लोगोंका अितना विश्वास तो हासिल कर ही लिया होगा कि थोड़ा-थोड़ा थोक माल अुसे अुधार मिल सके।

अिस कामके सम्बन्धकी सूचनाओंको मैं बहुत ज्यादा नहीं लंबाअूंगा। ध्यानसे देखनेकी आदतवाला सेवक हमेशा जरूरी खोज करता रहेगा। और थोड़े ही समयमें यह जान लेगा कि गुजारेके लिअे अुसमें हो सकने-वाली अैसी कौनसी मजदूरी है, जिसके साथ-साथ वह अुन देहातियोंके लिअे, जिनकी सेवा अुसे करनी है, पदार्थपाठ भी बन सके। अिसलिअे अुसे अिस किस्मकी मजदूरी पसंद करनी पड़ेगी, जिससे गांवके लोग घूमें न जायं, अुनकी तन्दुरुस्ती और सदाचार न बिगड़े और जिससे देहातियोंको अैसे धंधे करनेकी शिक्षा मिले, जिनसे अुनके फुरसतके समयका सदुपयोग हो जाय और अुनकी थोड़ीसी आमदनीमें वृद्धि हो। देखते-देखते अुसका ध्यान गांवकी ...र पड़ी हुई चीजों — घासपात और गांवमें जमीन पर पड़ी रहनेवाली

३

[ढीथलमें २२ मअी, १९३७ को गुजरातके राष्ट्रीय अध्यापकोंकी अेक छोटीसी परिषद् हुअी थी। अुसमें पेश किये गये मुद्दों* पर गांधीजीने जो विवेचन किया था, अुसका आवश्यक अंश श्री महादेव देसाअीके पत्रसे यहां दिया जाता है।]

अगर हम अैसी शिक्षा देना चाहते हैं, जो गांवोंकी आवश्यकताओंके लिअे सबसे अधिक अुपयुक्त हो, तो विद्यापीठको हमें गांवोंमें ले जाना चाहिये। विद्यापीठको हमें अेक प्रशिक्षण-शालामें परिणत कर देना चाहिये, जिससे कि हम ग्रामवासियोंकी आवश्यकताओंके अनुसार अध्यापकोंको शिक्षा दे सकें। शहरमें प्रशिक्षण-शाला रखकर अुसके द्वारा ग्रामवासियोंकी आवश्यकताओंके अनुसार आप अध्यापकोंको तालीम नहीं दे सकते; न

---

* ये मुद्दे प्रश्नोंके रूपमें अिस प्रकार थे :

१. हमारे गांवोंकी आवश्यकताओंके लिअे सबसे अुपयुक्त और लाभदायक शिक्षा कौनसी है? अैसी शिक्षाको हरअेक गांवमें किस तरह फैलाया जाय?

२. जनताकी निरक्षरता और अुसके अज्ञानको किस तरह दूर किया जाय?

३. क्या पूर्ण बौद्धिक विकासके लिअे अक्षर-ज्ञान अनिवार्य रूपमें जरूरी है? क्या अक्षर-ज्ञान द्वारा शिक्षा शुरू करनेकी पद्धति बौद्धिक विकासको रोकती है?

४. औद्योगिक शिक्षणको समस्त शिक्षाका मध्यबिन्दु बनानेकी आवश्यकता।

५. वर्तमान राष्ट्रीय स्कूलोंका भविष्य।

६. बालकोंको अुनकी मातृभाषा द्वारा समस्त शिक्षा देनेकी शक्यता और साधनोंका विचार।

७. मौजूदा स्कूलोंमें राष्ट्रीय शिक्षाके किन मूल तत्त्वोंकी कमी है?

८. प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाके अंतिम और प्रारम्भिक हिन्दी-हिन्दुस्तानीको लाजिमी बनानेकी आवश्यकता।

मेरी बुद्धि पर किस तरह जंग लग रहा है। लेखन-कलाको मैं अेक ललित कला मानता हूं। छोटे-छोटे बच्चोंकी बुद्धि पर वर्णमालाको लादकर और असे शिक्षाका श्रीगणेश मानकर हम अिस कलाका गला घोंट देते हैं। जिस तरह जब हम *बालकको योग्य समयके पहले ही वर्णमाला सिखानेका प्रयत्न करते* हैं, तब हम लेखन-कलाके साथ हिंसा करते हैं और बालककी बाढ़को मार देते हैं।

मैं तो निश्चित रूपसे मानता हूं कि हमारे अफसोस करने और लज्जित होनेका कारण हमारी प्रजाकी निरक्षरता नहीं है, बल्कि अज्ञान है। अिसलिअे प्रौढ़-शिक्षाके लिअे भी मुझे अुनका अज्ञान दूर करनेका अेक जबरदस्त कार्यक्रम बनाना चाहिये, और अिसके लिअे अैसे शिक्षकोंको सावधानीसे चुनना चाहिये, जो ध्यानपूर्वक बनाये हुअे पाठ्यक्रमके अनुसार गांवोंके बालिग लोगोंको तालीम दे सकें। मेरे कहनेका मतलब यह नहीं है कि मैं अुन्हें वर्णमालाका ज्ञान नहीं कराअूंगा। नहीं, अिसकी तो मैं अितनी अधिक कीमत आंकता हूं कि शिक्षाके अेक साधनके रूपमें मैं असे हलकी नजरसे नहीं देखता, अुसके गुणोंकी कम कदर भी नहीं करता। वर्णमालाको सरल बनानेमें प्रो० लोबाकने जो भारी परिश्रम किया है, अुसकी मैं कदर करता हूं। और अुसी तरह पूनावाले प्रो० भागवतने भी अिसी दिशामें किये हुअे महान और व्यावहारिक प्रयत्नका मैं कायल हूं। *मैंने तो प्रो० भागवतको जब वे पसन्द करें तब सेगांव आने और वहांके* पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों पर भी अपनी कलाको आजमानेका निमंत्रण दे रखा है।

गांवकी दस्तकारियोंकी तालीमको शिक्षाका मध्यबिन्दु बनानेकी आवश्यकता और महत्त्वके विषयमें मुझे जरा भी शंका नहीं है। हिन्दुस्तानकी शिक्षा-संस्थाओंमें जो प्रणाली अख्तियार की गअी है, अुसे मैं शिक्षा नहीं कहता; वह मनुष्यकी बुद्धिके सर्वोत्तम अंशको विकसित करनेवाली शिक्षा नहीं है, बल्कि बुद्धिका विनाश है। बालकोंके दिमागोंमें बेढंगे हूंसे हुअे तथ्योंको ठूंस दी जाती हैं। बुद्धिका सच्चा व्यवस्थित विकास तो ...शुरूसे ही गांवकी दस्तकारियों द्वारा बुद्धिको शिक्षा देनेकी प्रणालीसे ..., और फलतः बौद्धिक शक्ति और अनन्त रीतिसे आध्यात्मिक

मेरी बुद्धि पर जिस तरह जंग लग रहा है। लेखन-कलाको मैं अेक ललित कला मानता हूं। छोटे-छोटे बच्चोंकी बुद्धि पर वर्णमालाको लादकर और अुसे शिक्षाका श्रीगणेश मानकर हम अिस कलाका गला घोंट देते हैं। जिस तरह जब हम बालकको योग्य समयसे पहले ही वर्णमाला सिखानेका प्रयत्न करते हैं, तब हम लेखन-कलाके साथ हिंसा करते हैं और बालककी बाढ़को मार देते हैं।

मैं तो निश्चित रूपसे मानता हूं कि हमारे अपमानित करने और लज्जित होनेका कारण हमारी प्रजाकी निरक्षरता नहीं है, बल्कि अज्ञान है। अिसलिअे प्रौढ़-शिक्षाके लिअे भी मुझे अुनका अज्ञान दूर करनेका अेक जबरदस्त कार्यक्रम बनाना चाहिये, और अिसके लिअे अैसे शिक्षकोंको सावधानीसे चुनना चाहिये, जो ध्यानपूर्वक बनाये हुअे पाठ्यक्रमके अनुसार गांवोंके बालिग लोगोंको तालीम दे सकें। मेरे कहनेका मतलब यह नहीं है कि मैं अुन्हें वर्णमालाका ज्ञान नहीं कराअूंगा। नहीं, अिसकी तो मैं अितनी अधिक कीमत आंकता हूं कि शिक्षाके अेक साधनके रूपमें मैं अुसे हलकी नजरसे नहीं देखता, अुसके गुणोंकी कम कदर भी नहीं करता। वर्णमालाको सरल बनानेमें प्रो० लोबाकने जो भारी परिश्रम किया है, अुसकी मैं कदर करता हूं। और अुसी तरह पूनावाले प्रो० भागवतके भी अिसी दिशामें किये हुअे महान और व्यावहारिक प्रयत्नका मैं कायल हूं। मैंने तो प्रो० भागवतको जब वे पसन्द करें तब सेगांव आने और वहांके पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों पर भी अपनी कलाको आजमानेका निमंत्रण दे रखा है।

गांवकी दस्तकारियोंकी तालीमको शिक्षाका मध्यबिन्दु समझनेकी आवश्यकता और महत्त्वके विषयमें मुझे जरा भी शंका नहीं है। हिन्दुस्तानकी शिक्षा-संस्थाओंमें जो प्रणाली अख्तियार की गअी है, अुसे मैं शिक्षा नहीं कहता; वह मनुष्यकी बुद्धिके सर्वोत्तम अंशको विकसित करनेवाली शिक्षा नहीं है, बल्कि बुद्धिका विलास है। बालकोंके दिमागोंमें चाहे जैसे हकीकतें ठूस दी जाती हैं। बुद्धिका सच्चा व्यवस्थित विकास तो शुरूसे ही गांवकी दस्तकारियों द्वारा बुद्धिको शिक्षा देनेकी प्रणालीसे होगा, और फलतः बौद्धिक शक्ति और अप्रत्यक्ष रीतिसे आध्यात्मिक

शक्तिकी भी अुससे रक्षा होगी। यहां भी अिससे यह न समझ लिया जाय कि मैं ललित कलाओंका अनादर करता हूं। पर मैं अुन्हें गलत जगह पर नहीं रखूंगा। अनुचित जगह पर रखे हुअे कंचनको जो कचरा कहा गया है, सो ठीक है। मैं जो कह रहा हूं, अुसके प्रमाणमें बहुत बड़ी मात्रामें निकम्मा और अश्लील साहित्य पेश कर सकता हूं, जिसकी हमारे अूपर बाढ़-सी आ रही है; और अुसका परिणाम तो अेक राह चलता आदमी भी देख सकता है।

हरिजनबन्धु, ६-६-'३७

२५

आदर्श ग्रामसेवक

[वर्धामें ग्रामोद्योग संघ द्वारा खोले हुअे ग्रामसेवक विद्यालयके विद्यार्थियोंको दिया हुआ व्याख्यान।]

मैं मानता हूं कि विद्यालय खोलनेके मामलेमें मेरे मनमें शक था। मुझे अैसा लगता था कि क्या हम कोअी भी अैसी चीज दे सकेंगे, जिससे कोअी बडी मदद मिले? क्या अिसके लिअे हमारे पास साधन या गांवकी सेवाका अितना अनुभव भी है? मुझे यह भी शंका थी कि जिस किस्मके ग्रामसेवक चाहिये, वैसे और अुतनी बड़ी संख्यामें विद्यार्थी आयेंगे? मगर मुझे खुशी है कि मेरी ये सब शंकाअें सही नहीं निकलीं और तीन महीनेके अरसेमें जितना सोचा था, अुससे ज्यादा फल निकला है।

मगर आज मुझे तुम्हें कहना है तुम्हारे आगेके काम और जीवनके आदर्शोंके बारेमें। जिस अर्थमें आज 'केरियर' शब्द समझा जाता है, वैसा केरियर बनानेके लिअे तुम यहां नहीं आये हो। साधारण आदमीकी
रखने होती है और अुसकी शिक्षा बाजारमें बिकनेवाली
है। मगर तुम यह गज अपने मनमें लेकर

तुम्हारे नसीबमें निराशा ही लिखी हुअी है। यहांसे पढ़कर निकलोगे, तब तुम्हारे लिअे १० रु० से शुरुआत होगी और अन्त तक वही बनी रहेगी। तुम अिसका मुकाबला बड़ी कम्पनीके मैनेजर या बड़े अफसरके वेतनसे न करना।

हमें तो मौजूदा ढंग ही बदलना है। हम अिस तरहके किसी 'कैरियर' का वादा नहीं करते। अुलटे सच बात तो यह है कि अिस किस्मकी तुम्हारी महत्त्वाकांक्षा हो, तो हम तुम्हें अुससे बचा देना चाहते हैं। यह आशा रखी गअी है कि ६ रुपये महीनेमें तुम्हारा खानेका खर्च चल जायगा। अेक आअी० सी० अेस० का खानेका मासिक खर्च शायद ६० रुपये होता होगा। मगर अिससे यह बिलकुल न मानना चाहिये कि वह तुमसे किसी भी तरह शरीरकी शक्ति, बुद्धि या नीतिमत्तामें बढ़कर होगा। यह बादशाही भोगने पर भी शायद वह अिन सब बातोंमें तुमसे घटिया ही हो। मैं मानता हूं कि तुम अिसलिअे अिस विद्यालयमें आये हो कि तुम अपनी शक्तिको रुपयोंमें नहीं नापते; तुम नाममात्रका पुरस्कार लेकर देशको अपनी सेवा अर्पण करनेमें खुश हो। अेक आदमी शेयर-बाजारमें हजारों रुपये कमाता हो, पर हमारे अिस कामके लिअे बिलकुल निकम्मा हो सकता है। वह आदमी हमारी सीधी-सादी परिस्थितिमें आये तो दुःखी हो जाय, जैसे हम अुसकी स्थितिमें जायं तो दुःखी हो जायं।

देशके लिअे हमें आदर्श मजदूर चाहिये। वे अिस झगड़ेमें नहीं पड़ेंगे कि क्या खानेको मिलेगा या गांवके लोग हमारे लिअे क्या सहूलियतें करेंगे। वे अपनी जरूरतोंके बारेमें अीश्वर पर श्रद्धा रखेंगे और अिनमें जो मुश्किलें और मुसीबतें अुठानी पड़ेंगी अुनीमें खुशी मानेंगे। जिस देशको ७ लाख [illegible] विचार करना है, वहां यह अनिवार्य ही है। निरक्षर वेतन [illegible] प्रोविडेंट फण्ड या पेन्शनका बन्दोबस्त हो जाय, यह [illegible] नौकर रखनेसे हमारा काम नहीं चलेगा। [illegible] हमारे [illegible] निष्कामय सेवा ही सच्ची चीज है। जैसे [illegible] पूछनेकी जीमें आती होगी कि क्या वाजिब दुख [illegible] मान होगा? हरगिज नहीं। यह तो केवल मालिक कहानी बनानेके लिअे नहीं है। हम

(३) घानीमें तेल पेरना।

(४) खाड़के रसका गुड़ बनाना।

(५) शहदकी मक्खियां पालना।

अूपरके अुद्योगोंमें से कोअी भी अेक अुद्योग विद्यार्थीको चुन लेना होगा और अुसमें रोज छह घंटे देने होंगे।

३. सालके अंतमें विद्यार्थियोंकी परीक्षा ली जायगी, और अगर जरूरी समझा गया तो अध्ययन-क्रम लम्बा कर दिया जायगा।

४. आवेदन-पत्र भेजनेवालोंकी अुम्र १८ सालसे कम न हो, और शरीर अच्छा तन्दुरुस्त होना चाहिये। प्रवेशार्थियोंके यहां आने पर जिनके लिअे विद्यालय-कमेटी जरूरी समझेगी, अुन्हें प्रारंभिक परीक्षा देनी होगी, और अुस परीक्षामें वर्नाक्युलर मिडिलके कोर्स जितनी योग्यताकी अुनसे अपेक्षा की जायगी। अगर पर्याप्त योग्यता अुनमें न हुअी, तो अुन्हें दाखिल करनेसे अिनकार किया जा सकता है। अुनमें कामकाज चलाने लायक हिन्दीका ज्ञान होना चाहिये, खादी वे आदतन् पहनते हो और हाथ-पैरकी मेहनतका काम — जैसे सफाअीका काम, रसोड़ेका काम, सूत-कताअी और विद्यालयके अनुशासनके नीचे और भी जो काम जरूरी समझा जाय वह सब काम करनेके लिअे अुन्हें तैयार रहना चाहिये।

५. दाखिलेके आवेदन-पत्र हिन्दीमें या अपनी प्रांतीय भाषामें अपने हाथसे लिखकर तुरंत मंत्री, ग्रामोद्योग-विद्यालय, मगनवाड़ी, वर्धा (सी० पी०) के पते पर भेज देने चाहियें। आवेदन-पत्रके साथ दो सज्जनोंकी सिफारिशें आनी चाहिये। वर्धासे वापसीका जो किराया हो, अुतना रुपया बतौर डिपॉजिटके पेशगी भेज देना चाहिये। जिसका वापसीका किराया १० रु० से कम हो, अुसे १० रु० की रकम बतौर डिपॉजिटके जमा करनी होगी।

ग्रामोद्योग-विद्यालयके मंत्रीकी ओरसे मंजूरीका पत्र पहुंचनेसे पहले किसी विद्यार्थीको *नहीं आना चाहिये।*

शिक्षा और रहने वगैराकी कोअी फीस नहीं ली जायगी। भोजन-खर्च करीब ७ रु० मासिक पड़ेगा। विद्यार्थियोंको खुद अपने

बाकीके अुद्योगोंमें से हरअेकके सीखनेमें अेक महीनेका समय लगता है।

"अुक्त अुद्योगोंके अलावा, ग्रामीण अर्थशास्त्र, बहीखाता और स्वास्थ्य व सफाअी, अिन विषयोंकी भी शिक्षा दी जाती है।

"विद्यार्थियोंको दाखिल करनेमें हमारा मुख्य अुद्देश्य यह रहता है कि विद्यालयमें अभ्यास-क्रम समाप्त करनेके बाद घर जाकर किसी-न-किसी प्रकारकी ग्रामसेवामें अुन्हें अपनेको जरूर लगा देना चाहिये। अिसलिअे जहां तक सम्भव होता है हम केवल अुन्हींको दाखिल करते हैं, जो पहलेसे ही किसी-न-किसी किस्मकी राष्ट्रीय सेवामें लगे हुअे होते हैं, या जिन्हें और ज्यादा शिक्षणकी जरूरत होती है, या जिनको कोअी संस्था भेजती है। अिस मकसदको सामने रखकर प्रवेशके लिअे हमने २२ सालकी अुम्रकी मर्यादा बना ली है, ताकि जो विद्यार्थी यहां आयें वे बालिग अुम्रके हों।

"तालीम राष्ट्रभाषा हिन्दी-हिन्दुस्तानीके जरिये दी जाती है। अिस तरह विद्यार्थियोंको थोड़ी-सी शिक्षा राष्ट्रभाषाकी भी मिल जाती है। हमारे रसोड़ेमें अेक मुसलमान और अेक हरिजन भाअी — हालांकि अिसे संयोग ही समझना चाहिये — काम कर रहे हैं। अिस प्रकार थोड़ी-सी शिक्षा अुन्हें अस्पृश्यता-निवारण और खान-पानके अभेदकी भी मिल जाती है। विद्यार्थी खुद अपना आटा पीसते हैं, बर्तन मांजते हैं, खाना पकाते हैं और सफाअीका काम करते हैं। थोड़ेमें वे यहां औद्योगिक जीवन बिताते हैं, और शरीर-श्रमके गौरवकी तरफ अुनका हमेशा झुकाव रहता है। जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव यह पड़ता है कि यहां अुनका स्वास्थ्य काफी अच्छा रहता है।

"अगर विद्यालय अिस प्रकार हर साल पचास ग्रामोद्योग तैयार कर सके और वे गांवोंमें जाकर बस जायें, तो हमें अुम्मीद है कि कुछ ही सालोंमें हिन्दुस्तानमें जगह-जगह ग्रामसेवकोंका सेवाकार्य फैल जायगा।"

व्यवस्थापकोंको मेरी सलाह है कि पास होकर जानेवाले विद्यार्थियोंकी अेक सूची रखी जाय, अुनके साथ सम्बन्ध कायम रखा जाय और पत्र-व्यवहार द्वारा अुनके साथ अेक प्रकारका तालीम-वर्ग चालू रखा जाय। जहां तक सम्भव हो, अिस बातकी सावधानी रखी जाय कि अेक भी विद्यार्थी पुराने ढर्रेका शिकार न हो या जीवनमें किसी तरहकी प्रगति न कर सकनेके कारण निराश न हो।

हरिजनसेवक, १०-१२-'३८

२७

विद्यापीठ है

[बारहवीं गुजराती साहित्य परिषद् संमेलनके अध्यक्षपदसे दिये गये भाषणसे।]

मैं न पण्डित हूं और न साहित्यकार। मगर मैं विद्यापीठका कुलपति हूं, जोडणीकोशका तैयार करानेवाला हूं। अिस विद्यापीठके बारेमें सर चीनुभाअीने भूतकालका अुपयोग किया है। मैं सर चीनुभाअीसे कहनेकी अिजाजत चाहता हूं कि यह विद्यापीठ है और रहेगा। यह दो दिनके लिअे नहीं है। जब तक हम स्वराज्यका मंत्र जानते होंगे, तब तक विद्यापीठ रहेगा। जैसे जंगम आश्रम है, वैसे ही जगम विद्यापीठ भी बन सकता है। किसीने अढ़ाअी लाख रुपये दिये, अिसलिअे मकान बन गया। पर अैसा न होता तो क्या विद्यापीठ न चलता? जब रुपया नहीं था, तब भी विद्यापीठ तो था ही। वह पहले बना, अब चल रहा है और आगे भी चलेगा। विद्यापीठकी शकल बदलती रही है और बदलती रहेगी। विद्यापीठमें गिदवानी नहीं, कृपालानी नहीं और काका नहीं हैं। अिसमें देहाती लोग हैं। मगर क्या विद्वान लोग ही विद्यापीठ चलावें? आदमी भले ही देहाती हों। ये देहाती दिलवाले होने चाहिये, नाटकी न होने चाहिये। काठियावाड़में अैसे लोग मौजूद हैं, जिन्हें बहुरूपिया कहते हैं।

वे जैसा चाहें वैसा भेस बना लेते हैं। हमें असे आदमी नहीं चाहिये, बल्कि अैसे चाहिये जिनके दिल सचमुच देहाती हों। अैसे लोग विद्यापीठ चला सकेंगे। अहमदाबादके गुड्डे-गुड़ियों (सजेधजे लड़के-लड़कियों) के लिअे विद्यापीठ थोड़े ही है? भले ही भाअी अंबालालकी लड़की वहां आ गअी हो। मगर विद्यापीठ अैसा डिपो नहीं, जहां गुड्डे-गुड्डी आयें, अुसे सुशोभित करें और फिर जैसेके तैसे मां-बापको सौंप दिये जायें। विद्यापीठ तो देहाती स्त्री-पुरुष तैयार करनेके लिअे बनाया गया है। अुन्हें तैयार करना नहीं आता, मगर वे कोशिश तो करते ही हैं। अैसे लोगोंके लिअे गीताजीके छठे अध्यायमें कहा गया है कि अुनका अकल्याण नहीं होता। भगवानकी यह प्रतिज्ञा है और सच्ची भावनावालेके लिअे वह सफल होगी। विद्यापीठने पिछले समयमें जो काम किया है, अुससे अुसे रुपया देनेवालोंको पूरा बदला मिल गया है। परन्तु सर चीनुभाअी, मैं कहना चाहता हूं कि जैसे विद्यापीठने रुपया देनेवालोंको पूरी कीमत चुका दी है, वैसे ही वह आअिंदा भी चुकायेगा और यह आप देख लेंगे।

हरिजनबन्धु, २२-११-'३६

शिक्षाकी समस्या

तीसरा भाग

हरिजनोंकी शिक्षा

१

हरिजनोंकी शिक्षा

माध्यमिक और कॉलिजकी शिक्षासे प्राथमिक शिक्षाका सवाल कअी तरहसे ज्यादा मुश्किल है। और हरिजनोंकी शिक्षा तो सबसे कठिन है। हरिजन बालकोंके सिवा दूसरे बालकोंको किसी भी तरह अपने-आप घरके कुछ न कुछ संस्कार मिल जाते हैं। हरिजन बालकोंको समाजने अलग रख छोड़ा है, अिसलिअे अुन्हें अैसे संस्कार बिलकुल नहीं मिलते। अिसलिअे जब तमाम प्राथमिक पाठशालाअें हरिजन बालकोंके लिअे खुली हो जायंगी — जल्दी या देरसे खुलनी ही चाहियें, और मेरी रायमें देरसे खुलनेके बजाय जल्दी खुलनी चाहियें — तब भी अगर हरिजन बालकोंको हमेशाके लिअे पिछड़े हुअे न रखना हो, तो अुनके लिअे प्राथमिक पाठशालाओंकी जरूरत पड़ेगी ही। यह खोज की जा सकती है कि यह शुरूकी शिक्षा कैसी हो और हिन्दुस्तानभरमें फैले हुअे हरिजन-सेवक-संघोंकी तरफसे चलनेवाले हरिजन स्कूलोंमें आजमाअी जा सकती है। अिस प्राथमिक शिक्षामें अच्छी रीति-नीति, अच्छी वाणी और अच्छे बरतावकी शिक्षा शामिल होनी चाहिये। हरिजन बालक किसी भी तरह बैठ जाते हैं, किसी भी तरह कपड़े पहनते हैं। अुनके आंख, कान, दांत, बाल, नाखून और नाकमें अक्सर मैल भरा रहता है। बहुतोंको कभी यह पता ही नहीं होता कि नहाना क्या चीज है। १९१५ में ट्रांकीबार (तामिलनाड) से मैं अेक हरिजन लड़केको कोचरबके आश्रममें ले आया था। मुझे याद है कि मैंने अुसका क्या किया था। मैंने अुसके बाल मुड़वाये। फिर अुसे अच्छी तरह नहला दिया, पहननेको सादी धोती, कुर्ता और टोपी दे दिये। घड़ी-भरमें वह दीखनेमें अैसा बन गया कि संस्कारी घरके किसी बालकसे जरा भी अलग नहीं किया जा सकता था। अुसका सिर, आंख, कान और नाक पूरी तरह साफ हो गये थे। अुसके नाखून, जो मैलका घर बन गये थे, काट दिये गये और पैरों पर जो धूल जम गअी थी अुसे घिसकर धो डाला

गया। जरूरत हो तो स्कूलमें आनेवाले हरिजन बालकों पर रोज यह क्रिया करनी चाहिये। पहले तीन महीनोंमें अुनकी शिक्षा सफाअीकी शिक्षासे शुरू होनी चाहिये। अुन्हें यह भी सिखाना चाहिये कि अच्छी तरह कैसे खाया जाता है। यह वाक्य लिखते वक्त मुझे अुत्कलके पैदल सफरमें देखे हुअे दृश्य याद आते हैं। *अुस यात्रामें कितनी ही जगहों पर हरिजन* बालकों और बड़ोंको भोजन कराया जाता था। वे और लोगोंसे कहीं ज्यादा सफाअीके साथ खाते थे। दूसरे लोग अुंगलियां खराब कर लेते, बचा हुआ खाना अिधर अुधर बिखेर देते और खानेकी जगहोंको गंदी करके अुठते थे। हरिजन जूठन नहीं छोड़ते थे और अुनकी थाली साफ हो जाती थी। खाते वक्त हरअेक कौर पर वे अपनी अुंगलियां चाटकर साफ कर लेते थे। मैं जानता हूं कि मैंने जिन हरिजन बालकोंका बयान किया है, अुनके *जैसी सफाअीसे सभी हरिजन बालक नहीं खाते।*

अगर यह प्राथमिक शिक्षा सभी हरिजन पाठशालाओंमें देना हो, तो शिक्षकोंको अुनकी भाषामें ब्योरेवार सूचनायें देनेवाली पत्रिकायें तैयार करके बांटनी चाहिये और पाठशालाओंके अिन्स्पेक्टरोंको हिदायत देनी चाहिये कि वे पाठशालाओंका मुआयना करते वक्त अिस बारेमें शिक्षकों और विद्यार्थियोंकी जांच करें और अिस दिशामें हुअी प्रगतिका पूरा हाल लिखकर भेजें।

अिस कार्यक्रमके सिलसिलेमें नये शिक्षकोंको शिक्षाके बारेमें देखभाल रखनी पड़ेगी। मगर संघकी देखरेखमें जो हजारों बालक हैं, अुनके प्रति संघको अपना फर्ज अदा करना हो, तो अिन सब बातोंकी तरफ अुसे ध्यान देना ही चाहिये।

हरिजनबंधु, १९–५–'३५

२

आदर्श हरिजन-शिक्षक

समय-समय पर मुझे पूछा जाता है कि हरिजन शिक्षकोंसे मैं कैसी आशा रखता हूं। पहलेसे ही मुझे कह देना चाहिये कि मेरी आशा बड़ी है और अिसलिअे अिन शिक्षकोंकी कसौटी भी कड़ी है। मगर यह भी तुरन्त समझमें आ सकता है कि सच्चे और कर्तव्यनिष्ठ कार्यकर्ताके लिअे मेरी कसौटी बहुत ज्यादा कड़ी नहीं है। अिसके सिवा, अगर यह मान लिया जाय कि अस्पृश्यता-निवारणके आन्दोलनका मकसद शुद्ध धार्मिक ही है, तो मेरी कसौटी ही सच्ची कसौटी है। चम्पारनमें कुछ साल पहले मैंने अिस किस्मका प्रयोग आजमाकर देखा था, और जितने समय तक चम्पारनमें काम हुआ अुसमें यह प्रयोग पूरी तरह सफल हुआ था। अिस किस्मका सेवाका काम चम्पारनमें और ज्यादा न चला, क्योंकि मेरा खुदका वहां ज्यादा रहना न हुआ और मेरे साथके स्वयंसेवक कामकी शुरुआत तक ही बंधे हुअे थे। असली मतलब तो अुसी अिलाकेमें सोचे हुअे ढंगसे तैयार हुअे भावनावाले स्थानीय शिक्षक पैदा करना था।

चम्पारनके शिक्षकोंकी और अुनके कामकी यहां थोड़ीसी जानकारी दे देता हूं।

अवंतिकाबाअी गोखले, आनंदीबाअी वैशंपायन, कस्तूरबाअी गांधी, मणिबहन परीख, धरणीधरबाबू, नरहरि परीख, बाबासाहब सोमण, पुंडरीक, छोटेलाल जैन और देवदास गांधी, ये सब शिक्षक और शिक्षिकाअें थीं। ये सब प्रतिष्ठित और जिम्मेदार व्यक्ति थे। अिनमें से कुछ वकील और ग्रेज्युअेट भी थे। मगर अिनमें से अेकने भी शिक्षकके कामकी बाकायदा तालीम नहीं पाअी थी। अिनमें से ज्यादातरको हिन्दी नहीं आती थी, फिर भी बड़ी मुश्किलसे ज्यों त्यों करके ये अपनी बात टूटीफूटी बोलीमें अुन लोगोंको समझा सकते थे। कस्तूरबाअी अपढ़ होने पर भी दूसरे शिक्षकोंकी कतारमें खासी अच्छी तरह खड़ी हो सकी

थी। यह मण्डली चार या पांच गांवोंमें बंट गअी थी। अिस वक्त मैं गावोंकी निश्चित संख्या भूल गया हूं। बच्चोंकी शिक्षासे काम शुरू करना था, पर अन्तमें अुन्हें घरके बड़ों तक पहुंचना था। लिखना, पढ़ना और हिसाब सिखानेमें ही शिक्षाकी समाप्ति नहीं मानी जाती थी। यह तो कअी कामोंमें से अेक काम समझा जाता था। अुन्हें बच्चोंके शरीर और मन तैयार करने थे। अिसलिअे अुनकी तन्दुरुस्ती और चरित्रकी तरफ खास ध्यान देना पड़ता था। किसी भी हालतमें किसी भी कारणसे शारीरिक सजा तो देनी ही नहीं थी। कोअी भी काम अिस ढंगसे लेना ही नहीं था कि बच्चे अूब जायं। अिसलिअे काम भी खेलकी तरह अुन्हें अच्छा लगता था। लड़के या लड़कीके पाठशालामें आते ही शिक्षकका पहला काम यह देखना हो गया था कि अुनके हाथ, पैर, मुंह, दांत, नाक, कान, आंखें, बाल, नाखून वगैरा साफ हैं या नहीं। जरूरत होती तो साफ करना या कराना भी अुनका काम था। विद्यार्थी अेक-दूसरेके साथ ठीक त[illegible] बरताव करें और आपसकी बातचीतमें अपशब्द बोलना छोड़ दें, [illegible] लिअे शिक्षककी तेज नजर मांकी तरह चारों तरफ घूमती ही रहती थ[illegible]

यहां मुझे अेक बात कह देनी चाहिये। जिन शिक्षकोंको जन्मस[illegible] हिन्दी नहीं थी, अुन्होंने हिन्दी अपने विद्यार्थियोंसे सीख ली थी। अिस शिक्षक-मण्डलीमें कुछ तो अितने अनघड और कच्चे थे कि [illegible] बच्चोंसे कक्हरा रटाने और पहाड़े याद करानेके सिवा कुछ कर ही [illegible] सकते थे। अितने पर भी वे स्कूलके आसपास अेक तरहका संस्कारी वा[illegible] वरण पैदा कर सके थे।

घरकाम करनेके लिअे किसी भी शिक्षक या शिक्षिकाको नौ[illegible] रखनेकी मनाही थी। घरकी सफाअी, रसोअी, कपड़े धोना वगैरा घर[illegible] तमाम काम अपने हाथों करना होता था। जहां घर या स्कूलके लिअे मक[illegible] नहीं थे, वहां अुन्हींको हाथोंहाथ अेक-दूसरेकी मददसे बांसके झों[illegible] खड़े करने थे। मकान बनाते वक्त साफ, खुली और लम्बी-चौड़ी जमीन पस[illegible] की जाती थी और मेरे खयालके अनुसार झोंपड़ोंकी बनावटमें भी देहा[illegible] कलाकी पूरी रक्षा करने पर जोर दिया जाता था। टीनके टूटे हुअे डिब्बों[illegible] पतरोंसे और घूरेके पड़ोससे जान-बूझकर परहेज किया गया था। अेक जग[illegible]

तो हमको स्कूलके लिअे मन्दिर मिल गया था। सार यह कि हर
स्कूल अुस गावका भूषण और संस्कृतिका केन्द्र बन गया था।

पाठशालाका दायरा शुरूसे ही तंग नहीं रखा गया था। बडी
स्त्री-पुरुषों तक असर पहुंचानेकी शिक्षक लोग खूद कोशिश करते थे
शालाके जरिये मामूली दवाअिया पहुंचानेका काम भी हाथमें लिय
था। और अुनके सहारे सफाअी व तन्दुरुस्तीके बारेमें कअी पदार्थपाठ
जा सकते थे। शिक्षकोंके घर पाठशालाओंके साथ ही लगे होते थे या
घरोंमें पाठशाला होती थी, और अुस घर या पाठशालामें दवाखा
रहता था। अिस दवाखानेमें कुनैन, जुलाबके लिअे अरण्डीका तै
विलायती नमक, फोड़े-फुंसियोंके लिअे मरहम और थोडी पट्टियां —
हमेशाके कामकी और जरूरतके मुताबिक ही दवाअियां रखी जातं
शिक्षक खास तौर पर कब्ज, जूड़ी बुखार, दाद, खुजली और मामूल
वगैरा साधारण रोगोंके सिवा और बीमारियोंकी झंझटमें नहीं पड
पाठशालाओंका स्वास्थ्य-विभाग भारत सेवक समितिके स्वर्गवासी डॉ०
सीधी देखरेखमें था। जहा-जहासे गंभीर बीमारीकी खबर आती थी
वहां डॉ० देव खुद पहुंच जाते, रोगीको दवा देते और अुसकी मु
सेवाकी व्यवस्था भी करते थे। डॉक्टरने चम्पारनके किसानोंके दि
लिये थे और अिसीलिअे जिस भीतीहरवामें पहले जहा तहा घूरेके
बड़े ढेर और टूटेफूटे मिट्टीके जर्जर झोपड़े नजर आते थे, वही
हरवा कुछ ही सप्ताहमें किसानोंकी मददसे साफ, सुन्दर, छोटं
झोपडियोंवाले आदर्श गावके तौर पर चम्पारन भरमें मशहूर हो गया
मडी बात तो यह है कि भीतीहरवाको अितना खूबसूरत और
बनानेमें गांवको अेक पाअीका भी खर्च नहीं हुआ। क्योंकि जब
फिरसे बन रहा था, तब डॉ० देव जेबमें हाथ डाले शाबाश शाबाश
कामको खड़े-खड़े देखा ही नहीं करते थे; बल्कि वे खुद भी हाथमें
और कुदाली लेकर दूसरे किसानोंके कन्धेसे कन्धा मिलाकर काम
जाते थे।

थी। यह मण्डली चार या पांच गांवोंमें बंट गयी थी। अिस वक्त मैं गांवोंकी निश्चित संख्या भूल गया हूं। बच्चोंकी शिक्षाने काम शुरू करना था, पर अन्तमें अुन्हें घरके बड़ों तक पहुंचना था। लिखना, पढ़ना और हिसाब सिखानेमें ही शिक्षाकी समाप्ति नहीं मानी जाती थी। यह तो सभी कामोंमें से अेक काम समझा जाता था। अुन्हें बच्चोंके शरीर और मन तैयार करने थे। अिसलिअे अुनकी तन्दुरुस्ती और चरित्रकी तरफ खास ध्यान देना पड़ता था। किसी भी हालतमें किसी भी कारणसे शारीरिक सजा तो देनी ही नहीं थी। कोअी भी काम जिस ढंगसे लेना ही नहीं था कि बच्चे अूब जायं। अिसलिअे काम भी खेलकी तरह अुन्हें अच्छा लगता था। लड़के या लड़कीके पाठशालामें आते ही शिक्षकका पहला काम यह देखना हो गया था कि अुनके हाथ, पैर, मुह, दांत, नाक, कान, आंखें, बाल, नाखून वगैरा साफ हैं या नहीं। जरूरत होती तो साफ करना या कराना भी अुनका काम था। विद्यार्थी अेक-दूसरेके साथ ठीक तरहसे बरताव करें और आपसकी बातचीतमें अपशब्द बोलना छोड़ दें, अिसके लिअे शिक्षककी तेज नजर मांकी तरह चारों तरफ घूमती ही रहती थी।

यहां मुझे अेक बात कह देनी चाहिये। जिन शिक्षकोंकी जन्मभाषा हिन्दी नहीं थी, अुन्होंने हिन्दी अपने विद्यार्थियोंसे सीख ली थी। वैसे जिस शिक्षक-मण्डलीमें कुछ तो अितने अनपढ़ और कच्चे थे कि वे बच्चोंसे ककहरा रटाने और पहाड़े याद करानेके सिवा कुछ कर ही नहीं सकते थे। अितने पर भी वे स्कूलके आसपास अेक तरहका संस्कारी वातावरण पैदा कर सके थे।

घरकाम करनेके लिअे किसी भी शिक्षक या शिक्षिकाको नौकर रखनेकी मनाही थी। घरकी सफाअी, रसोअी, कपड़े धोना वगैरा घरका तमाम काम अपने हाथों करना होता था। जहां घर या स्कूलके लिअे मकान नहीं थे, वहां अुन्हींको हाथोंहाथ अेक-दूसरेकी मददसे बांसके झोंपड़े खड़े करने थे। मकान बनाते वक्त साफ, खुली और लम्बी-चौड़ी जमीन पसन्द की जाती थी और मेरे खयालके अनुसार झोंपड़ोंकी बनावटमें भी देहाती कलाकी पूरी रक्षा करने पर जोर दिया जाता था। टीनके टूटे हुअे डिब्बोंके पतरोंसे और घूरेके पड़ोससे जान-बूझकर परहेज किया गया था। अेक जगह

तो हमको स्कूलके लिअे मन्दिर मिल गया था। सार यह कि हर
स्कूल अुस गांवका भूषण और संस्कृतिका केन्द्र बन गया था।

पाठशालाका दायरा शुरुसे ही तंग नहीं रखा गया था। बड़ी
स्त्री-पुरुषों तक असर पहुंचानेकी शिक्षक लोग खूब कोशिश करते थे।
शालाके जरिये मामूली दवाअियां पहुंचानेका काम भी हाथमें लिया
था। और अुनके सहारे सफाअी व तन्दुरस्तीके बारेमें कभी पदार्थपाठ
जा सकते थे। शिक्षकोंके घर पाठशालाओंके साथ ही लगे होते थे या अ
घरोंमें पाठशाला होती थी, और अुस घर या पाठशालामें दवाखान
रहता था। जिस दवाखानेमें कुनैन, जुलाबके लिअे अरण्डीका ते
विलायती नमक, फोड़े-फुंसियोंके लिअे मरहम और थोड़ी पट्टियां —
हमेशाके कामकी और जरूरतके मुताबिक ही दवाअियां रखी जाती
शिक्षक खास तौर पर कब्ज, जूड़ी बुखार, दाद, खुजली और मामूली
वगैरा साधारण रोगोंके सिवा और बीमारियोंकी झंझटमें नहीं पड़ते
पाठशालाओंका स्वास्थ्य-विभाग भारत सेवक समितिके स्वर्गवासी डॉ॰
सीधी देखरेखमें था। जहां-जहांसे गंभीर बीमारीकी खबर आती थी,
वहां डॉ॰ देव खुद पहुंच जाते, रोगीको दवा देते और अुसकी मु
सेवाकी व्यवस्था भी करते थे। डॉक्टरने चम्पारनके किसानोंके दिल
लिये थे और अिसीलिअे जिस भीतीहरवामें पहले जहां तहां घूरे
बड़े ढेर और टूटेफूटे मिट्टीके जर्जर झोंपड़े नजर आते थे, वही
हरवा कुछ ही सप्ताहमें किसानोंकी मददसे साफ, सुन्दर, छोटी
झोंपड़ियोंवाले आदर्श गांवके तौर पर चम्पारन भरमें मशहूर हो गया
बड़ी बात तो यह है कि भीतीहरवाको अितना खूबसूरत और
बनानेमें गांवको अेक पाअीका भी खर्च नहीं हुआ। क्योंकि जब
फिरसे बन रहा था, तब डॉ॰ देव जेबमें हाथ डाले शाबाश शाबाश
कामको खड़े-खड़े देखा ही नहीं करते थे; बल्कि वे खुद भी हाथमें
और कुदाली लेकर दूसरे किसानोंके कन्धेसे कन्धा मिलाकर काम
जाते थे।

जो काम डॉ॰ देव भीतीहरवामें पूरी तरह कर सके, वह थोड़
हद तक दूसरे गावोंमें भी शिक्षक कर सके थे। गांवोंमें रास्ते सुधा

कुअें बनवाये गये, और घरोंमें मुद्दतोंसे जो कूड़ा-करकट कोने-कोनेमें भरा था अुस सबको घरके मालिककी मंजूरीसे बुहार-झाड़कर साफ कर दिया गया। घरोंके वाड़े जो झाडे बिना पड़े रहनेसे मैले-कुचैले रहते थे, वे भी साफ हो गये। अिस अनजान चम्पारनमें, जो किसी समय विदेह जनकराज और जानकी माताके धामके तौर पर मशहूर था और जो अिस वक्त मलेरियासे पीड़ित, वहमोंमें डूबा हुआ, डर और लालचमें फंसा हुआ ठेठ कोनेमें पड़ा था, शिक्षकोंको देहातियोंके सुख-दुःखमें शरीक होकर, अुनके साथ अेक होकर, अुन्हें स्वास्थ्य और सुख बढ़ानेके अुपाय सुझाने थे। अिस भीती-हरवामें कस्तूरबाअीने पहली बार देखा कि कितनी ही बहनोंके पास पहननेके लिअे अेक फटे हुअे चिथड़े जैसी साड़ीके सिवा और कोअी कपड़ा न था। जब कस्तूरबाअीने अेक गरीब परन्तु खानदानी स्त्रीको रोज नहानेकी बड़ी नम्र सलाह दी, तो वह चिढ़कर बोल अुठी, "मेरे झोंपड़ेमें आअिये और सब-कुछ देख लीजिये। मेरे पास बदलनेके लिअे दूसरा अेक भी चिथड़ेका टुकड़ा है? अिसके बाद आप मुझे सीख दें तो ठीक हो। यह तो आप न चाहेंगी कि स्त्रियां नंगी नहायें?" यह देखकर कस्तूरबाअी तो हक्कीबक्की रह गअी। जब मैंने यह दर्दनाक कहानी सुनी, तब मैं शरम और दुःखमें डूब गया और मेरा हृदय रो अुठा।

मगर अब अिस वर्णनको लम्बानेकी जरूरत नहीं देखता।* अब जो हरिजनोंके शिक्षक बनेंगे, वे बाकीकी तफसील अपने-आप पूरी कर लेंगे।

हिन्दुस्तानके देहातका पहला जीता-जागता अनुभव मुझे चम्पारनमें हुआ, और अिसलिअे अिन देहाती पाठशालाओंका प्रयोग भी मेरा पहला प्रयोग ही था। अुसे अब पन्द्रह साल बीत गये हैं। मेरा तजरबा अब बहुत बढ़ गया है। अिन बरसोंमें मैं सैकड़ों गांवोंमें घूम आया हूं। मुझे लगता है कि १९१७ में आज गांवोंकी भूख और जरूरतोंको मैं ज्यादा अच्छी तरह समझ सकता हूं। अिसलिअे मैं अपनी हरिजनोंकी आदर्श पाठशालामें

* अिस प्रयोगका जिक्र 'आत्मकथा'—भाग ५, प्रकरण १७ में 'सफाी' शीर्षकसे किया गया है। वह भाग अिस लेखके दूसरे हिस्सेके रूपमें दिया गया है।

कला-कौशलको पहला स्थान दूंगा। शुरुआत तो कातने और असके सम्बन्धकी रुओकी सारी क्रियाओंसे ही करूंगा। बड़ी अुम्रके और दूसरे बालकोंके लिअे रातकी पाठशालाअें भी खुलवाअूंगा। मैं यह आशा नहीं रखूंगा कि अिन सब कामोंमें अेकदम सफलता मिल जायगी। सब-कुछ अेक ही समय अेक ही सपाटेमें कर डालनेका साहस न करूंगा। बल्कि अिससे अुलटे, अपने ध्येयमें अनन्त श्रद्धा रखकर कामको निहायत नम्रताके साथ हाथमें लूंगा। अिससे पहले कि मैं बच्चों और अुनके मा-बाप पर हुकूमत करनेके सपने देखूं, मैं अपने बाल-विद्यार्थियों और अुनके बड़ोंको मुझ पर हुकूमत करने दूंगा। मैं प्रेमसे अुनकी सेवा करनेमें अपने-आपको मिटा देनेकी कोशिश करूंगा और अैसा अटूट विश्वास रखूंगा कि आखिरमें मैं अुन पर कभी साहिबी तो नहीं करूंगा, मगर अुनके दिल जीते बिना हरगिज न रहूंगा। अिस योजनाकी रूपरेखा मैंने दो साथियोंको — अेक वकीलको और अेक सुशिक्षित बहनको — विस्तारपूर्वक समझायी है। दोनों यह समझना चाहते थे कि तुरन्त ही कौनसा सेवाका काम वे कर सकते हैं। मैंने दोनोंको आदर्श हरिजन-शिक्षकका काम हाथमें लेनेके लिअे न्यौता दिया है। अब जिन हरिजन-सेवकोंको कामकी जरूरत हो, अुन सबको अिस क्षेत्रमें आ जानेका निमंत्रण मैं देता हूं। अिस कामके लिअे मैं तनखाह नहीं दे सकता। लेकिन जो अिस कामके लिअे क्षेत्र नहीं ढूंढ सकते, अुनके लिअे देहात खोज देनेकी जिम्मेदारी मैं लेता हूं। हरअेक सेवक या सेविकाको अपना खर्च आप अुठाना है। लेकिन अगर वे सचमुच गरीब हों, तो अुन्हें अपने गुजरके लायक रुपया अपने मित्रोंसे मांग लेना चाहिये। चूंकि शिक्षकोंको हरिजनमय हो जाना है, अिसलिअे अुन्हें बहुत खर्च करनेकी जरूरत नहीं रहनी चाहिये। हरिजन जो चबूतरा या खुली जगह दें, वहीं पाठशाला चलानी चाहिये। सार यह कि सच्चे कर्तव्य-परायण सेवकको अगर सेवाकी सच्ची लगन लगी होगी, तो वह सैकड़ों मुश्किलोंको पार करके भी अपना रास्ता निकाल लेगा और कामको पूरा करेगा। सेवाकी अुत्कट अिच्छा होने पर काम पूरा होनेके रास्ते अपने-आप सूझने लगते हैं।

हरिजनबंधु, २६–३–'३३

२

जैसे-जैसे मुझे अनुभव होता गया, वैसे-वैसे मुझे लगने लगा कि चम्पारनमें अच्छी तरह काम करना हो, तो गांवोंमें शिक्षा जारी होनी चाहिये। लोगोंका अज्ञान दयाजनक था। देहातके बच्चे आवारा फिरते थे। या दिनभरमें दो-तीन पैसे कमानेके लिअे मा-बाप अुनसे तमाम दिन नीलके खेतोंमें मजदूरी कराते थे। अुस वक्त पुरुषकी मजदूरी दस पैसेसे ज्यादा नहीं थी। स्त्रियोंकी छह पैसे और बच्चोंकी तीन पैसे थी। जिस किसानको चार आने मजदूरी मिल जाती थी, वह भाग्यवान समझा जाता था।

साथियोंके साथ विचार करके पहले तो छह गांवोंमें बच्चोंके लिअे स्कूल खोलना तय हुआ। शर्त यह थी कि मकान और शिक्षकके खानेका खर्च गांवके अगुआ दें और बाकी खर्च हम पूरा करें। यहांके देहातमें रुपयेकी बहुतायत नहीं थी, मगर अनाज वगैरा दे सकनेकी लोगोंकी शक्ति थी। अिसलिअे लोग कच्चा अनाज देनेको तैयार हो गये थे।

यह अेक बड़ा सवाल था कि शिक्षक कहांसे लायें। बिहारमें कम वेतन लेनेवाले या कुछ भी न लेनेवाले शिक्षक मिलना मुश्किल था। मेरा यह खयाल था कि मामूली शिक्षकके हाथमें बच्चे नहीं सौंपे जा सकते। शिक्षकको अक्षर-ज्ञान भले ही थोड़ा हो, पर अुसमें चरित्र-बल जरूर चाहिये।

अिस कामके लिअे मैंने स्वयंसेवकोंकी सार्वजनिक मांग की। अुसके जवाबमें गंगाधरराव देशपाण्डेने बाबासाहब सोमण और पुण्डरीकको भेजा। बम्बअीसे अवन्तिकाबाअी गोखले आअीं। दक्षिणसे आनन्दीबाअी आअीं। मैंने छोटेलाल, सुरेन्द्रनाथ और अपने लड़के देवदासको बुला लिया। अिसी अरसेमें महादेव देसाअी और नरहरि परीख मुझे मिल गये थे। महादेव देसाअीकी पत्नी दुर्गाबहन और नरहरि परीखकी पत्नी मणिबहन भी आ गअीं। कस्तूरबाअीको भी मैंने बुला लिया था। अितने शिक्षकों और शिक्षिकाओंका जत्था काफी था। श्री अवन्तिकाबाअी और आनन्दीबाअी तो पढ़ी-लिखी मानी जा सकती थीं, पर मणिबहन परीख और दुर्गाबहन देसाअीको गुजरातीका ही थोड़ासा ज्ञान था, और कस्तूरबाअीको तो नहीं के बराबर ही था। ये बहनें हिन्दी-भाषी बच्चोंको कैसे पढ़ातीं?

बहनोंको मैंने दलीलें देकर समझाया कि अुन्हें बच्चोंको व्याकरण नहीं, पर तौर-तरीके सिखाने हैं, लिखने-पढ़नेके बजाय सफाअीके नियम सिखाने हैं। अुन्हें यह भी बताया कि हिन्दी, गुजराती और मराठीमें बहुत फर्क नहीं है। और पहले दर्जेमें तो केवल गिनती ही लिखना सिखाना होता है, अिसलिअे मुश्किल नहीं है। फल यह हुआ कि बहनोंके वर्ग बहुत अच्छी तरह चल निकले। बहनोंमें आत्म-विश्वास आ गया और अुन्हें अपने काममें रस भी आने लगा। अवन्तिकाबाअीकी पाठशाला आदर्श पाठशाला बन गअी। अुन्होंने अपनी पाठशालामें जान डाल दी। वे अिस कामको जानती भी खूब थीं। अिन बहनोंके जरिये गांवोंकी स्त्रियोंमें भी प्रवेश हो सका।

लेकिन मुझे शिक्षा तक ही रुकना नहीं था। देहातकी गन्दगीका पार नहीं था। गलियोंमें कचरा भरा था, कुओंके पास कीचड़ और बदबू थी और चौक देखे नहीं जा सकते थे। बड़ोंके लिअे सफाअीकी शिक्षाकी जरूरत थी। चम्पारनके लोग बीमारियोंसे तकलीफ पाते देखे जाते थे। अिसलिअे हमारी वृत्ति जितना हो सके सफाअीका काम करनेकी और अैसा करके लोगोंके जीवनके हर हिस्सेमें प्रवेश करनेकी थी।

अिस काममें डॉक्टरकी जरूरत थी। अिसलिअे मैंने गोखलेके समाजसे डॉक्टर देवकी मांग की। अुनके साथ मेरी प्रेमकी गांठ तो बंध ही गअी थी। छह महीनेके लिअे अुनकी सेवाका लाभ मिला। शिक्षकों और शिक्षिकाओंको अुनकी देखरेखमें काम करना था।

सबके साथ यह समझौता था कि किसीको नीलवालोंकी शिकायतोंमें नहीं पड़ना है और राजनीतिको नहीं छूना है। शिकायतें करनेवालोंको मेरे ही पास भेज देना है और किसीको अपने क्षेत्रसे अेक कदम भी बाहर नहीं जाना है। चम्पारनके अिन साथियोंका अनुशासन अजीब था। मुझे अैसा कोअी मौका याद नहीं आता कि जब किसीने मिली हुअी सूचनाका अुल्लंघन किया हो।

नवजीवन, ५-८-'२८

३

हरिजन-शिक्षकोंके लिअे

१

अेक सज्जन पच्चीससे ज्यादा हरिजन पाठशालायें चला रहे हैं। अन पाठशालाओंके चलानेमें जो मुश्किलें आती हैं, अुनके बारेमें अुन्होंने मुझे अेक लम्बा पत्र लिखा है और पूछा है कि 'वे पाठशालायें आपके हाथमें होतीं तो आप किस तरह चलाते?' ये मुश्किलें अुन्होंने सावधानीके साथ बयान की हैं। अुन्हें गिनानेकी यहां जरूरत नहीं है। अुनके जवाबमें मुझे जो कुछ कहना है, वह कह देता हूं।

मौजूदा सामान्य शिक्षा-संस्थाओंमें पढ़नेवाले हरिजन लड़के-लड़कियोंको हमें छात्रवृत्तियां और दूसरी मदद देनी ही चाहिये। लेकिन जो स्कूल हम चलाते हों, अुनमें अुन स्कूलोंके रूपरंग और तरीकेकी अंधी नकल करनेका कोअी कारण नहीं है।

हमें यह समझना चाहिये कि हरिजन बच्चोंको किसी भी पाठशालामें भेजना बड़ा मुश्किल काम है। अुनमें नियमितता तो होती ही नहीं। और भूतकालमें हमारी की हुअी भयंकर अुपेक्षाके कारण अुनमें सुघड़पनकी अितनी कमी होती है कि शुरूमें तो हमें अुनके साथ और बच्चोंसे दूसरे ही ढंगसे बरताव करना पड़ता है।

ये बच्चे जब पहले-पहल भरती हों, तब अुनके शरीरकी बारीकीसे जांच करनी चाहिये और अुसे पूरी तरह साफ करना चाहिये। अुनके कपड़े जहां पैबन्द लगाने लायक हों, वहां धोकर अुन्हें पैबन्द लगाने चाहियें। अिस तरह कुछ दिन तो रोज सबसे पहली शिक्षा शरीर और आसपासकी जगह साफ रखने और कपड़ोंको पैबन्द लगानेकी ही देनी होगी। शायद पहले पूरे वर्षमें मैं अुनके लिअे पुस्तक काममें ही न लूं। जिन चीजोंकी अुन्हें जानकारी हो अुन्हींकी बात अुनसे करूं और अैसा करते हुअे अुनके अुच्चारण सुधारूं, अुन्हें व्याकरणका कुछ खयाल कराअूं और नये शब्द सिखाअूं। वे रोज जो नये

शब्द सीखते जायं, वे सब मैं दर्ज करता रहूं और जब तक वे अुनके मनमें जम न जायं, तब तक अुन्हें बार-बार अिस्तेमाल करूं। शिक्षक भाषण न दे, बल्कि बातचीतके ढंगसे पढ़ावे। बातचीतके जरिये वह अपने विद्यार्थियोंको अितिहास, भूगोल और गणितका नया-नया ज्ञान देता जाय। अितिहास हमारे अपने समयसे और अुसमें भी हमारे नजदीकसे नजदीककी घटनाओं और मनुष्योंसे शुरू किया जाय। भूगोल पाठशालाके आसपासकी जगहसे शुरू किया जाय। गणित विद्यार्थीके घर-सम्बन्धी हिसाबोंसे शुरू किया जाय। यह तरीका मैंने खुद आजमाया है। अिसलिअे मैं जानता हूं कि अेक खास समयमें मौजूदा तरीकेसे विद्यार्थियोंको जो कुछ ज्ञान दिया जा सकता है, अुससे कहीं ज्यादा ज्ञान विद्यार्थियोंके दिमाग पर बोझ डाले बिना अिस पद्धतिसे दिया जा सकता है। ककहरेके ज्ञानको बिलकुल अलग ही विषय मानना चाहिये। अक्षरोंको चित्रोंकी तरह बच्चोंको बताना चाहिये और अुन्हें पहचानकर अुनका नाम बताना सिखाना चाहिये। चित्र बनाना सिखानेके बाद लिखना सिखा दिया जाय। कीड़े-मकोड़े जैसे अक्षर लिखनेके बजाय बच्चोंको अुनके सामने रखे हुअे नमूनेकी पूरी नकल करते आना चाहिये। अिसलिअे जब तक अुनका अंगुलियों और कलम पर काबू न हो जाय, तब तक अुनसे अक्षर नहीं लिखवाना चाहिये। किताबोंसे अितना ही सिखाकर कि सालभरमें बच्चा ज्यों त्यों करके पढ़ सके, बच्चेका मानसिक विकास रोकना पाप है। हम यह बात नहीं समझते कि बच्चोंको घर छुड़ाकर सारे समय पाठशालामें ही रखा जाय, तो बहुत वर्ष तक वे जड़ ही रहेंगे। पाठशालामें नहीं, बल्कि घरमें अनजाने और अपने-आप वे नअी-नअी जानकारी और भाषा सीख लेते हैं। अिसीलिअे हम सुसंस्कारी घरोंके बच्चोंमें और जो घर घर ही नहीं कहे जा सकते अैसे असंस्कारी घरोंके बच्चोंमें जमीन-आसमानका फर्क देखते हैं।

मैंने जो योजना बयान की है, अुसमें मैंने शिक्षकसे यह आशा रखी है कि वह अपने कामको अेकाग्रतासे करेगा और बच्चोंके साथ अेकरूप हो जायगा। मैं जानता हूं कि अिस योजनाको अमलमें लानेमें बड़ीसे बड़ी दिक्कत योग्य शिक्षकोंके मिलनेकी है। लेकिन जब तक हम सच्ची दिशामें काम शुरू नहीं करेंगे, तब तक हमें योग्य शिक्षक नहीं मिलेंगे।

अितना करनेके बाद बच्चोंके हाथमें पुस्तकें दी जायं, अिस स्थितिका विचार बादमें करेंगे।

हरिजनबंधु, ५-११-'३३

२

आजकल पाठशालाओंमें, खासकर बच्चोंके लिअे, जो पाठ्यपुस्तकें काममें ली जाती हैं, अुनमें से ज्यादातर हानिकारक नहीं तो निकम्मी जरूर होती हैं। अिससे अिनकार नहीं किया जा सकता कि अुनमें से बहुतेरी बढ़िया भाषामें लिखी होती हैं। अंग्रेजीकी जो पाठ्यपुस्तकें पाठशालाओंमें अिस्तेमाल की जाती हैं, अगर अुनकी बात की जाय तो जिन लोगों और जिस वातावरणके लिअे वे लिखी जाती हैं, अुनके लिअे वे बहुत अच्छी होंगी। लेकिन ये पुस्तकें हिन्दुस्तानके लड़के-लड़कियोंके लिअे या हिन्दुस्तानके वातावरणके लिअे नहीं लिखी जातीं। हिन्दुस्तानके बच्चोंके लिअे जो लिखी जाती हैं, वे पुस्तकें भी ज्यादातर अधकचरी नकलें होती हैं और अुनसे विद्यार्थियोंको जो लाभ होना चाहिये वह नहीं होता। जिस देशमें जैसा प्रान्त और जैसी बच्चोंकी सामाजिक स्थिति हो, वैसी ही अुनकी शिक्षा होनी चाहिये। जैसे, हरिजन बालकोंको शुरूमें तो दूसरे बच्चोंसे कुछ दूसरी ही शिक्षा मिलनी चाहिये।

अिसलिअे मैं अिस निर्णय पर पहुंचा हूं कि पाठ्यपुस्तकोंकी जितनी जरूरत विद्यार्थियोंको है, अुससे ज्यादा शिक्षकोंको है; और हरअेक शिक्षक अगर अपने विद्यार्थियोंको सच्चे दिलसे पढ़ाना चाहता है, तो अुसे अपने पासकी सामग्रीसे रोज नया पाठ तैयार करना चाहिये। ये पाठ भी अिस तरहके तैयार करने होंगे, जो अुसके वर्गके बच्चोंकी खासियत और अुनकी खास जरूरतोंके साथ मेल खा सकें।

सच्ची शिक्षा तो लड़कों और लड़कियोंके भीतरी जौहरको बाहर लाना है। यह बात विद्यार्थियोंके दिमागमें निकम्मी हकीकतोंकी खिचड़ी भर देनेसे कभी नहीं हो सकेगी। ये हकीकतें विद्यार्थियोंके लिअे बोझ बन —ती हैं, अुनकी स्वतंत्र विचार-शक्तिको नष्ट कर देती हैं और विद्यार्थियोंको · बना देती हैं। हम खुद अगर अिस पद्धतिके शिकार न हुअे होते,

तो आज लोक-शिक्षण देनेकी जो आधुनिक प्रथा खास तौर पर हिन्दुस्तानमें जारी है, अुससे होनेवाले नुकसानका खयाल हमें कभीका हो गया होता।

अिसमें शक नहीं कि बहुतसी संस्थाओंने अपनी-अपनी पाठ्यपुस्तकें तैयार करनेकी कोशिश की है। अिसमें अुन्हें थोड़ी-बहुत सफलता भी मिली है। मगर मैं मानता हूं कि अिन पाठ्यपुस्तकोंसे देशकी सच्ची जरूरतें पूरी नहीं हो सकतीं।

मैंने जो विचार यहां जाहिर करनेकी कोशिश की है, मेरा यह दावा नहीं है कि वह पहले-पहल मुझे ही सूझा है। हरिजन पाठशालाओंके जिन संचालकों और शिक्षकोंके सामने यह भगीरथ कार्य पड़ा है, अुनके लाभके लिअे मैंने यह विचार यहां प्रकट किया है। हरिजन पाठशालाओंके संचालकों और शिक्षकोंको अितनेसे संतोष नहीं हो सकता कि अुनके विद्यार्थियोंसे मशीनकी तरह काम कराया जाय और अुन्हें अैसी शिक्षा दी जाय कि वे मुकर्रर पुस्तकोंसे जैसे तैसे अूपरी और तोतेकी तरह ज्ञान ले। अुन्होंने जो बड़ी जिम्मेदारी अुठाअी है, अुसे अुन्हें हिम्मत, होशियारी और अीमानदारीके साथ निभाना चाहिये।

यह काम कठिन तो जरूर है; पर शिक्षक या संचालक अगर अपना सारा दिल अिस काममें लगा दें तो हम जितना समझते हैं अुतना कठिन वह नहीं है। वे अगर अपने विद्यार्थियोंके पिताका पद ले लें, तो अुन्हें अपने-आप मालूम हो जायगा कि अुन्हें किस चीजकी जरूरत है और वे फौरन अुन्हें देने बैठ जायेंगे। अगर वह देने लायक सम्पत्ति अुनके पास न होगी, तो अुसे जुटाने बैठ जायेंगे और कोशिश करके अुतनी योग्यता प्राप्त कर लेंगे। और चूंकि हमने अिस विचारसे शुरुआत की है कि लड़के-लड़कियोंको अुनकी जरूरतके अनुसार शिक्षा देनी है, अिसलिअे क्या तो हरिजन और क्या दूसरे बच्चे, किसीके भी शिक्षकको असाधारण चातुर्य या बाहरी ज्ञानकी जरूरत नहीं पड़ेगी।

और हर तरहकी शिक्षाका अुद्देश्य चरित्र बनाना है या होना चाहिये, यह बात याद रखें तो चरित्रवान शिक्षकोंको निराश होनेकी जरूरत नहीं है।

हरिजनबंधु, १२-११-'३३

४
हरिजन छात्रालय

अेक हरिजन छात्रालयके संचालक लिखते हैं:

"अभी छात्रालयमें १५ विद्यार्थी हैं। अेक रसोअिया रखा गया है। छात्रालयका बाकीका रोजका काम छात्रालयमें रहनेवालोंको करना होता है। मैंने कामका बंटवारा किया, अुसमें खाना बनानेके बर्तन माजनेका काम दो जनोंको सौंपा। अिस पर मेरे साथीने कहा कि हरिजनोंमें अब भी यह भावना है कि वे हलके हैं। अुनसे बर्तन मंजवाये जायेंगे तो यह भावना बढ़ेगी। मैंने अुन्हें सताराके छात्रालयकी मिसाल दी; वहां विद्यार्थी ही भोजन भी बनाते हैं। दूसरा अुदाहरण मद्रासके रामकृष्ण छात्रालयका दिया; वहां लगभग १२० विद्यार्थियोंके लिअे नौकर सिर्फ दो रसोअिये ही रखे गये हैं। मगर मेरे साथीको पूरा संतोष नहीं हुआ और अुन्होंने मेरी बात अिसलिअे मान ली है कि अभी हम दूसरा नौकर नहीं रख सकते। क्या आपको अिसमें हर्ज मालूम होता है कि रोज सुबह विद्यार्थियोंसे खाना बनानेके बर्तन मंजवाये जायं?"

यह पुरानी बात है। मुझे अिसमें बिलकुल शक नहीं कि हर छात्रालयमें पाखाने साफ करने तककी सभी मजदूरी विद्यार्थियोंको करनी चाहिये। अैसा करनेसे विद्यार्थियोंकी पढ़ाअीमें कोअी रुकावट नहीं पड़ती। सच पूछें तो अिससे अुनकी पढ़ाअीमें और अुनकी तन्दुरुस्तीमें मदद मिलती है और रुपयेकी भी बचत होती है। पर जो संचालक विद्यार्थियोंमें प्रिय बननेके लिअे या विद्यार्थियोंके साथ अिस चीजकी चर्चा के आलस्यके मारे विद्यार्थियोंको छात्रालयका सब काम करनेको नहीं समझाते, वे विद्यार्थियोंकी निश्चित रूपसे कुसेवा करते हैं। अिस तरहकी मेहनतको विद्यार्थियोंकी तालीमका अेक अंग मानना चाहिये। मगर विद्यार्थियोंसे यह नित्यकर्म करानेके लिअे अेक शर्त है: संचालकोंको खुद अिसमें मदद करके मिसाल कायम करनी चाहिये। अैसा होगा तो फिर हलकेपनकी भावना बढ़नेका कुछ भी डर नहीं रहेगा।

हरिजनबंधु, २४-९-'३३

५

हरिजनोंको असहयोग लागू नहीं होता?

[यह कितनी विचित्र बात है कि सरकारी स्कूलों और कॉलेजोंमें जानेवाले हरिजन विद्यार्थियोंको छात्रवृत्तिया देकर असहयोगी लोग अुनकी मदद करें? क्या बारह साल तक हम जो कुछ करते रहे हैं, अुस पर पानी फेर दिया जाय? — ये सवाल अेक साथीने पूछे हैं। अुसे जवाब देते हुअे गांधीजीने लिखा :]

तुम्हारा पत्र मिला। अुन भाअीको नीचे लिखी बात कहना। अिसमें किसीको ताज्जुब नहीं होता कि जो खुराक अेक मजबूत आदमीका पेट स्वीकार कर सकता है, वह कमजोर आदमीका पेट स्वीकार नहीं करता। जो महान नियम समझदार पर लागू किया गया हो, अुसीको निरे अपढ़ पर लागू करना बड़ी मूर्खता है। सभी नियम तीनों काल और हर जगह सबके लिअे लागू नहीं होते। अैसे नियम अितने भी नहीं निकलेंगे, जो अुंगलियों पर गिने जा सकें। दूसरे बहुतसे नियम समय, जगह और आदमीके फर्कके कारण अलग होते हैं। समाजकी भलाअी सोचनेसे मालूम होगा कि जो नियम हमने अपने पर लागू किया, अुसे हरिजन बच्चों पर लागू करनेसे भारी अन्याय हो सकता है। अुन भाअीको अपनी जगह पर डटे रहकर मजबूतीके साथ हरिजन बच्चोंको छात्रवृत्ति वगैरा देनेमें भाग लेना चाहिये।

हरिजनबंधु, २-४-'३३

६
अलग संस्थायें

[दिल्लीमें श्रद्धानंद-वस्तीके हरिजनोंने गांधीजीको मानपत्र दिया था। अुसमें अुन्होंने पूछा था कि 'हमारे लिअे अलग स्कूल, अलग कुअें क्यों खोले जाते हैं? अिससे तो हमारा अलगाव कायम रहेगा।' अिसका जवाब देते हुअे गांधीजीने जो कुछ कहा था, वह ता० २४-१२-'३३ के 'हरिजनबंधु' में छपे साप्ताहिक पत्रसे लिया गया है।]

तुम्हारे लिअे जो कुअें और स्कूल खोले जाते हैं, वे तुम्हें अछूत रखनेके लिअे नहीं खोले जाते। लेकिन मुझसे यह नहीं सहा जाता कि तुम्हें पानी ही न मिले। यह कैसे सहा जाय कि जिस जगहसे कुत्ते और ढोर पानी पीते हैं, अुसी जगहसे हरिजनोंको पानी मिले? तुम तो शहरके रहनेवाले ठहरे, अिसलिअे तुम्हें शायद नलका पानी मिल जाता होगा; मगर गांवमें सवर्ण लोग अुद्दण्डतासे हरिजनोंको कुअेंके पास भी नहीं फटकने देते, पानी देते हैं तो दूरसे गाली देकर देते हैं। यह चीज तुम्हें और मुझे बरदाश्त न होनी चाहिये। हरिजनोंके लिअे जो कुअें खुदवाये जाते हैं, वे अुन्हें अछूत रखनेके लिअे नहीं हैं, बल्कि अिसलिअे कि अुन्हें साफ पानी मिले। और ये कुअें सिर्फ हरिजनोंके लिअे नहीं हैं। और लोग भी वहां पानी भरने आ सकते हैं। पर हरिजनोंको तो वहां जानेका हक है ही। अुन्हें हौजसे, जहां पशु पानी पीते हैं, जो पानी लेना पड़ता है वह बन्द होना चाहिये। सच पूछें तो अुनके लिअे जितने कुअें खुदवाने चाहिये, अुतने नहीं खुदवाने जा सके। और तुम यह भी देखते हो कि कितने ही सवर्ण मरजीसे अपने कुअें हरिजनोंके लिअे खोलते जा रहे हैं। यही बात पाठशालाओंकी है। सार्वजनिक पाठशालाओंमें हरिजनोंको भरती करानेकी कोशिश तो हो ही रही है; मगर जब तक तमाम सार्वजनिक पाठशालाओंमें हरिजनोंको भरती नहीं कराया जा सकता, तब तक यह सवाल रहता है कि या तो हरिजनोंके लिअे स्कूल खोले जायं या बच्चोंको बिना पढ़े रखा जाय। अिसलिअे अुनके स्कूल खोलने हैं। अुनमें और बच्चे भी आ सकते हैं। मगर हरिजनोंको तो अुनमें आनेका पूरा अधिकार है ही।

हरिजनबंधु, २४-१२-'३३

७

हरिजनोंके लिअे आदर्श विद्यालय

हरिजन-सेवक-सघके सभापति श्री धनश्यामदासजी बिडला लिखते है :

"हरिजन विद्यार्थियोंकी शिक्षाके लिअे हम छात्रावासवाली कुछ अैसी शालायें स्थापित करनेका विचार करते है, जिनमें दूसरी जातियोंके विद्यार्थी भी रह सकें। अब तक जब-जब हमने हरिजन छात्रावासो और विद्यालयोंकी चर्चा की है, तब-तब अैसी सस्ती पाठशालाओं और सस्ते छात्रावासोका ही विचार किया है, जिनमें बहुत ही कम तनखाहवाले, साधारण पढे-लिखे शिक्षक और गृहपति हो और छात्रोको भी पर्याप्त पोषक आहार न मिलता हो। जब तक हम हरिजनोको और दूसरे गरीब विद्यार्थियोंको अिस तरहकी सस्ती सस्थाओमें पढायेंगे, तब तक अुन विद्यार्थियोके दिलसे लघुताकी वह भावना दूर नही होगी, जो आज अुनमें जड जमाये हुअे है। और, जो शिक्षक स्वय पूरी तरह सुशिक्षित नही है और जिन्हें वेतन भी पर्याप्त नही मिलता है, अुनसे विद्यार्थी सीखेंगे भी क्या? फिर अिन विद्यार्थियोको दूसरे विद्यार्थियोके साथ पढ़नेका मौका भी तो नही मिलता। गरीबो और अमीरोंके अथवा हरिजनो और सवर्णोंके बीच किसी प्रकारका संपर्क न रहनेसे दोनो पक्ष नुक्सानमें रहते हैं। अिसलिअे मेरा प्रस्ताव यह है कि हम सुन्दर वातावरणके बीच छात्रावासवाले कुछ विद्यालय खोलें। ये विद्यालय किसी भी सुसंचालित शिक्षण-संस्थाकी तुलनामें टिकनेवाले होने चाहिये। शुरूमें बतौर प्रयोगके अैसे कुछ ही विद्यालय खोले जाने चाहिये।

"अिन विद्यालयोंमें मैट्रिक तककी पढाअीका प्रबंध रहना चाहिये और ये विश्वविद्यालयोंसे सम्बद्ध होने चाहिये। अधिकतर विद्यार्थी छात्रावासमें रहनेवाले होने चाहिये। हरअेक विद्यार्थीकी पूरी-पूरी देखभालका संबंध अिन विद्यालयोंकी अपनी विशेषता होनी

चाहिये। सारी शिक्षा मातृभाषा द्वारा दी जानी चाहिये; और अन्य भाषाके रूपमें अंग्रेजी सिखाओी जानी चाहिये। विद्यार्थियोंको कुछ अैसी अुपयोगी दस्तकारियां भी सिखानी चाहिये, जिनका अपना तालीमी महत्त्व हो।

"अिस शिक्षाको सम्पूर्ण और स्वावलम्बी बनानेकी दृष्टिसे मैट्रिकके लिअे तैयार होनेमें जितना समय लगता है, अुससे दो साल ज्यादा हम अपने यहां रखें और अिन दो सालोंमें विद्यार्थियोंको मैट्रिककी पढ़ाओीके सिवा दूसरी आवश्यक शिक्षा दें।

"हम चाहते हैं कि नीचे लिखी तीन दस्तकारियोंके सिखानेका प्रबन्ध हो, और विद्यार्थी अिनमें से किसी अेकको अपने लिअे चुन लें:

१ सिलाओी, कताओी, बुनाओी, धुलाओी और रंगाओी।

२ बढ़ओीगिरी और लुहारी।

३ हाथ-कागज बनाना, जिल्द बांधना और साधारण 'कम्पोज' वगैरा करना।

"हम चाहते हैं कि पर्याप्त वेतन देकर अच्छी योग्यतावाले अूंचे दर्जेके शिक्षक रखें। अिसकी तहमें खयाल यह है कि विद्यार्थियोंको कॉलेजकी शिक्षाकी कमी महसूस न हो, हालांकि जो कॉलेजमें जाना चाहेंगे अुनके लिअे कोओी रुकावट तो होगी ही नहीं। हम यह भी सोच रहे हैं कि पढ़ाओी पूरी करनेके बाद विद्यार्थियोंको प्रामाणिकताके साथ आजीविका प्राप्त करनेमें कोओी कठिनाओी न हो, ताकि जिन विद्यार्थियोंको रोजगार-धन्धेकी जरूरत हो अुनको कामसे लगानेका प्रबन्ध करना हम अपना कर्तव्य समझें।

"विश्वविद्यालय द्वारा निश्चित पाठ्यक्रम और अुद्योगके सिवा विद्यार्थियोंका सामान्य ज्ञान और आरोग्य विषयक ज्ञान बढ़ानेकी ओर विशेष ध्यान दिया जायगा। संगीत, खेल-कूद, कवायद, घुड़सवारी और तैराकी वगैरा भी सिखाये जायेंगे। धार्मिक अथवा नैतिक शिक्षाकी अवगणना न की जायगी। सिन्धुप्रदेशके अितिहास और भारतीय संस्कृतिके विशिष्ट अंगोंके परिचयके साथ छात्रोंमें सर्वधर्म-समभावकी राष्ट्रीय हिन्दुस्तानी वृत्ति पैदा की जायगी।

"जिन छात्रालयोंमें आधो-आध विद्यार्थी हरिजन होंगे, जिनके लिअे रहने, खाने और पढ़नेका निःशुल्क प्रबन्ध रहेगा। बाकी आधे सवर्ण छात्र अपने खर्चसे रहेंगे।

"मेरी कल्पनाके अेक अच्छे हाओीस्कूलकी यह बहुत ही स्थूल और संक्षिप्त रूपरेखा है।

"लेकिन अिस रूपरेखाके सम्बन्धमें हमारे अन्दर मतभेद हैं। कुछ कहते हैं: 'हम अपने यहां मैट्रिककी पढ़ाओी क्यों रखें?' दूसरे कुछ कहते हैं: 'हम अिस खर्चीली शिक्षाके चक्करमें न फंसें। अिससे अेक गलत आदर्श अुपस्थित होगा।' यह भी कहा जाता है कि हमें शिक्षक तो अूंची योग्यतावाले ही रखने चाहिये, बशर्ते कि वे त्यागपूर्वक केवल अपनी आजीविकाके लिअे आवश्यक वेतन लेकर काम करना स्वीकार करें। अर्थात्, अुनकी रायमें जो शिक्षक त्यागपूर्वक सादा जीवन बितानेको तैयार न हों, अुनको अिन विद्यालयोंमें कोओी स्थान न मिलना चाहिये। कुछ तो यहां तक कहते हैं कि अगर हमें अुच्च कोटिके त्यागी और तपस्वी शिक्षक न मिलें, तो हम अिन विद्यालयोंके खोलनेका विचार ही छोड़ दें।

"मुझे तो यह सब अव्यावहारिक प्रतीत होता है। स्पष्ट ही अिसके जवाबमें अपनी ओरसे कुछ कहना मुझे आवश्यक नहीं मालूम होता।

"क्या आप अिस प्रश्न पर अपने विचार व्यक्त कीजियेगा?"

श्री घनश्यामदासजीकी अिस योजनाका मैं हृदयसे स्वागत करता हूं। विरोधी दलकी ओरसे जो दलीलें पेश की गओी हैं, वे सैद्धान्तिक नहीं, सावधानीकी सूचक हैं। अगर अिस योजनाके लिअे हरिजन-सेवक-संघकी स्वल्प निधिका अुपयोग किया जानेवाला हो, तब तो मुझे भी विरोधी दलमें शरीक होना पड़ेगा। लेकिन मैं यह मान लेता हूं कि अिन आदर्श विद्यालयोंके लिअे विशेष रूपसे कोओी अैसी निधि अेकत्र की जायगी, जिससे अिनका संचालन समुचित रीतिसे हो सके। मैं बीस साल तक अफ्रीकामें रहा हूं, जहां हरअेक हिन्दुस्तानी करीब करीब अस्पृश्य

चाहिये। सारी शिक्षा मातृभाषा द्वारा दी जानी चाहिये; अं
अन्य भाषाके रूपमें अंग्रेजी सिखाओी जानी चाहिये। विद्यार्थियोंको कु
अैसी अुपयोगी दस्तकारियां भी सिखानी चाहियें, जिनका अपन
तालीमी महत्त्व हो।

"अिस शिक्षाको सम्पूर्ण और स्वावलम्बी बनानेकी दृष्टि
मैट्रिकके लिअे तैयार होनेमें जितना समय लगता है, अुससे दो साल
ज्यादा हम अपने यहां रखें और अिन दो सालोंमें विद्यार्थियोंक
मैट्रिककी पढ़ाओीके सिवा दूसरी आवश्यक शिक्षा दें।

"हम चाहते हैं कि नीचे लिखी तीन दस्तकारियोंके सिखानेक
प्रबन्ध हो, और विद्यार्थी अिनमें से किसी अेकको अपने लिअे चुन लें

१. पिंजाओी, कताओी, बुनाओी, धुलाओी और रंगाओी।

२. बढ़अीगिरी और लुहारी।

३. हाथ-कागज बनाना, जिल्द बांधना और साधारण 'कम्पोज' वगैरा करना।

"हम चाहते हैं कि पर्याप्त वेतन देकर अच्छी योग्यतावाले अूंचे दर्जेके शिक्षक रखें। अिसकी तहमें खयाल यह है कि विद्यार्थियोंको कॉलेजकी शिक्षाकी कमी महसूस न हो, हालांकि जो कॉलेजमें जाना चाहेंगे अुनके लिअे कोओी रुकावट तो होगी ही नहीं। हम यह भी सोच रहे हैं कि पढ़ाओी पूरी करनेके बाद विद्यार्थियोंको प्रामाणिकताके साथ आजीविका प्राप्त करनेमें कोओी कठिनाओी न हो, यानी जिन विद्यार्थियोंको रोजगार-धन्धेकी जरूरत हो अुनको काममें लगानेका प्रबन्ध करना संघ अपना कर्तव्य समझे।

"विश्वविद्यालय द्वारा निश्चित पाठ्यक्रम और अुद्योगके सिवा विद्यार्थियोंका सामान्य ज्ञान और आरोग्य-विषयक ज्ञान बढ़ानेकी ओर विशेष ध्यान दिया जायगा। संगीत, खेल-कूद, कसरत, भुड़सवारी और तैराकी वगैरा भी सिखाये जायेंगे। धार्मिक अथवा नैतिक शिक्षाकी अुपेक्षा न की जायगी। हिन्दू-धर्मके सिद्धान्तों और भारतीय संस्कृतिकी विशेषताओंके अच्छे परिचयके साथ छात्रोंमें सर्वधर्म-समभावकी ठीक-ठीक वृत्ति पैदा की जायगी।

"अिन छात्रालयोंमें आधे-आध विद्यार्थी हरिजन होंगे, जिनके लिअे रहने, खाने और पढ़नेका निःशुल्क प्रबन्ध रहेगा। बाकी आधे सवर्ण छात्र अपने खर्चसे रहेंगे।

"मेरी कल्पनाके अेक अच्छे हाओीस्कूलकी यह बहुत ही स्थूल और संक्षिप्त रूपरेखा है।

"लेकिन अिस रूपरेखाके सम्बन्धमें हमारे अन्दर मतभेद हैं। कुछ कहते हैं: 'हम अपने यहां मैट्रिककी पढ़ाओी क्यों रखें?' दूसरे कुछ कहते हैं: 'हम अिस खर्चीली शिक्षाके चक्करमें न फंसें। अिससे अेक गलत आदर्श अुपस्थित होगा।' यह भी कहा जाता है कि हमें शिक्षक तो अूंची योग्यतावाले ही रखने चाहिये, बशर्ते कि वे त्यागपूर्वक केवल अपनी आजीविकाके लिअे आवश्यक वेतन लेकर काम करना स्वीकार करें। अर्थात्, अुनकी रायमें जो शिक्षक त्यागपूर्वक सादा जीवन बितानेको तैयार न हों, अुनको अिन विद्यालयोंमें कोओी स्थान न मिलना चाहिये। कुछ तो यहां तक कहते हैं कि अगर हमें अुच्च कोटिके त्यागी और तपस्वी शिक्षक न मिलें, तो हम अिन विद्यालयोंके खोलनेका विचार ही छोड़ दें।

"मुझे तो यह सब अव्यावहारिक प्रतीत होता है। स्पष्ट ही अिसके जवाबमें अपनी ओरसे कुछ कहना मुझे आवश्यक नहीं मालूम होता।

"क्या आप अिस प्रश्न पर अपने विचार व्यक्त कीजियेगा?"

श्री घनश्यामदासजीकी अिस योजनाका मैं हृदयसे स्वागत करता हूं। विरोधी दलकी ओरसे जो दलीलें पेश की गओी हैं, वे सैद्धान्तिक नहीं, सावधानीकी सूचक हैं। अगर अिस योजनाके लिअे हरिजन-सेवक-संघकी स्वल्प निधिका अुपयोग किया जानेवाला हो, तब तो मुझे भी विरोधी दलमें शरीक होना पड़ेगा। लेकिन मैं यह मान लेता हूं कि अिन आदर्श विद्यालयोंके लिअे विशेष रूपसे कोओी अैसी निधि अेकत्र की जायगी, जिससे अिनका संचालन समुचित रीतिसे हो सके। मैं बीस साल तक अफ्रीकामें रहा हूं, जहां हरअेक हिन्दुस्तानी करीब करीब अस्पृश्य

समझा जाता है; अिसलिअे मैं जानता हूं कि जब मनुष्यके साथ अस्वाभाविक व्यवहार किया जाता है, तो वह कितना तुनकमिजाज बन जाता है। 'खुद मुझे अपने मनका तोल संभालनेमें काफी समय लगा, और अपनी तुनकमिजाजी या तनकहवानीको तो मैं दूर ही न कर सका। युरोपियनोंके अग दलमें मैं अपने आपको अेक अजीब-सा प्राणी माना करता था। हमारे देशमें हरिजनोंकी दशा अुससे भी ज्यादा खराब है, क्योंकि अुनमें बहुत ज्यादा अज्ञान और बहुत ज्यादा गरीबी है। अिस-लिअे अगर हम चाहते हैं कि यह दुहेरी गांठ सुलझे, तो हमें काफी तादादमें हरिजन बालकोंको अच्छी हैसियतके सवर्ण बालकोंके साथ सब प्रकारकी समानतावाले वातावरणमें रखना होगा। जो योजना पेश की गअी है, अुसका यह अुद्देश्य तो कदापि नहीं है कि अिन विद्यालयोंसे अैसे मुहर्रिर या कारकुन पैदा हों, जो अपनेको अपनी योग्यतासे ज्यादा अूंचा समझें और कहीं नौकरी न मिलनेके कारण सहज भावसे असन्तुष्ट रहें। अिस योजनाके अनुसार तैयार होनेवाले विद्यार्थी ज्ञानकी दृष्टिसे दूसरे मैट्रिक पास विद्यार्थियोंसे किसी तरह कम न होंगे, बल्कि कुछ हद तक अुनसे बढ़कर ही होंगे; क्योंकि अुनकी शारीरिक गठनका ज्यादा ध्यान रखा गया होगा और अुनके हाथमें कोअी खास तरहका हुनर आ चुका होगा। अैसे विद्यार्थियोंको अपने भविष्यकी कोअी चिन्ता हो ही नहीं सकती। अुनमें आत्म-विश्वास रहेगा। वे अपनी जाति और अपने रिश्ते-दारोंसे दूर नहीं जा पड़े होंगे, बल्कि अुनसे तो यह आशा रखी जायगी कि वे अपनी जातिकी सेवा करेंगे, और जो शिक्षा अुन्हें मिली है अुसका लाभ अपनी जातिको पहुंचायेंगे।

अिस पर यह आपत्ति की जा सकती है कि मेरे अिस कथनमें असंगति है, क्योंकि मैं तो वर्तमान शिक्षा-प्रणालीके खिलाफ लिखता और कहता रहा हूं। परन्तु यह आपत्ति अूपरी है। पहली बात तो यह है कि अिस योजनाके अनुसार शिक्षाका माध्यम मातृभाषा रखा गया है; और अिसमें विद्यार्थियोंके लिअे स्वतन्त्र और प्रामाणिक रीतिसे अपनी आजीविका प्राप्त करने योग्य अुद्योग-धन्धोंकी शिक्षाका प्रबन्ध भी सोचा गया है। अिस तरह वर्तमान पद्धतिके बड़ेसे बड़े दोषोंका निवारण अिसमें कर

दिया गया है। दूसरे, जो आपत्ति अधिक अच्छी शिक्षा प्राप्त कर सकनेवाले छात्रोंके सम्बन्धमें अुठाअी जाती है, वह अुन छात्रोंके सम्बन्धमें नहीं अुठाअी जानी चाहिये, जिनके सामने घमंडगी या चुनावका दूसरा कोअी क्षेत्र ही नहीं है। अुन लोगोंका सबसे बड़ा दुख तो यह है कि दूसरे हजारों विद्यार्थियोंको जो शिक्षा मिल सकती है, वह अुन्हें सिर्फ हरिजन होनेके कारण नहीं मिल रही है। हरिजन विद्यार्थियोंके साथ यह दलील करके मैं अुनका अपमान नहीं करूंगा कि चूंकि हजारों गैर-हरिजन छात्र जो कर रहे हैं सो गलत है, अिसलिअे अुन्हें भी श्री घनश्यामदासजीके पत्रमें अुल्लिखित दीन-दरिद्र शालाओं और शिक्षकोंसे अपना सन्तोष कर लेना चाहिये।

मैं अिस योजनाका स्वागत करता हूं और चाहता हूं कि यह सफल हो। जितनी जल्दी अिसका श्रीगणेश होगा, अुतना ही हरिजनोंका और देशका लाभ होगा। ये विद्यालय अस्पृश्यता-रूपी दैत्यके नाशका बलवान साधन सिद्ध होंगे।

हरिजनसेवक, १-३-'४२

शिक्षाकी समस्या

चौथा भाग

निराकरणकी दिशा

१
शिक्षाकी समस्या

१

अगर सत्रह करोड़की आमदनी पर पानी फिर जाय, तो हमारी शिक्षाका क्या होगा? क्योंकि सरकार कहती है और हम भी बिना विचारे मान लेते हैं कि शराबकी आमदनीसे ही हमारी शिक्षाका खर्च चलता है। अगर यह बात सही हो, तो मैं तो यही कहूंगा कि हमारे लिअे सरकारी शिक्षा दुगुनी त्याज्य हो गअी है। अेक कारण तो सरकारकी मामूली राक्षसी नीति है ही; और दूसरा, पापकी कमाअीसे मिलनेवाली शिक्षा। क्या हम अपने बच्चोंको शराब और अफीमकी आमदनीसे पढ़ाकर पवित्र शिक्षा दे सकेंगे? धन जिस ढंगसे आता है, अुसी ढंगका फल देता है। शराबकी दुकानवाला हमारे बच्चोंको शिक्षा दे, तो क्या हम किसी भी तरह अुसकी दुकान बन्द कर सकते हैं?

सरकार किसलिअे शराबकी आमदनी शिक्षाके खातेमें जमा करती है? जमीनका लगान वह क्यों नहीं शिक्षाके खातेमें जमा करती? शराबकी कमाअी भले ही वह फौजके खातेमें जमा करे, और वह आय बन्द हो जाय तो अुतनी फौज कम कर दे। स्वराज्य मिलेगा तब हम फौज पर करोड़ों रुपये खर्च नहीं करेंगे। सत्रह करोड़ रुपया तो सैनिक खर्चमें से आसानीसे बचाया जा सकता है। अिसलिअे शराब और अफीमकी आमदनी बन्द हो जानेसे हमें हरगिज न डरना चाहिये।

स्वराज्यमें जो शिक्षा मिलेगी, अुसका साधन न शराब हो सकती है और न जमीनका लगान। अुसका साधन सुन्दर चरखा है। अगर हर स्कूलमें चरखा और करघा जारी कर दिया जाय, तो हमारी शिक्षाका खर्च हम पर पड़ेगा ही नहीं। आज तो हम बच्चोंका सारा वक्त चरखेको ही देना चाहते हैं। स्वराज्य मिलनेके बाद भी बालक कमसे कम अेक घंटा तो देंगे ही। स्वराज्यका असर हरअेक महकमे पर पड़े,

तभी अुसका नाम स्वराज्य है। मौजूदा शिक्षा गुलामोंको तैयार करने — नौकर बनाने — के लिअे दी जाती है। स्वराज्यकी शिक्षा बच्चोंको जवानीमें ही स्वावलम्बी बनानेके लिअे दी जानी चाहिये। अिसलिअे हम अुन्हें कातना-बुनना जरूर सिखायेंगे। अिसके अलावा, और कोअी धंधा सिखाना हो तो भले ही सिखाया जाय, मगर कातना-बुनना तो अनिवार्य होना चाहिये। चरखा 'दुःखियोंका आसरा और गरीबोंका सहारा' होना चाहिये। अुसमें जो बरकत है वह और किसी धंधेमें नहीं है, क्योंकि खेतीके सिवा और खेतीकी पूर्तिके तौर पर चरखा ही व्यापक हो सकता है। सब कोअी बढ़अी नहीं हो सकते, सब लुहार नहीं बन सकते, मगर कातना तो सबको आना ही चाहिये और सभीको जनताके खातिर या कमाअीकी पूर्तिके लिअे कातना चाहिये। चूंकि रोटी-कपड़ा सभीको चाहिये, अिसलिअे चरखा व्यापक प्रवृत्तिके तौर पर चल सकता है। अूपर लिखे अनुसार हमारी राष्ट्रीय शिक्षाका रूप आजसे ही तय हो जाना चाहिये, नहीं तो स्वराज्यमें पहला झगड़ा हमारे बीच यही होगा। कोअी कहेंगे कि शिक्षाके अंगके रूपमें अुद्योग न सिखाया जाय। हमें आजसे ही अुद्योगको शिक्षाका अंग बना देना चाहिये, ताकि लोकमत अिस हद तक तैयार हो जाय कि बादमें अुसके विषयमें वाद-विवादकी कोअी गुंजाअिश ही न रहे।

नवजीवन, २७-३-'२१

२

अगर हम यह मानते हों कि सूतके धागेमें ही स्वराज्य है, अगर चरखेकी शक्तिके बारेमें हमें पूरा भरोसा हो, अगर हम मानते हों कि हिन्दुस्तानकी आर्थिक अुन्नति और किसी तरह हो ही नहीं सकती, अगर हम समझते हों कि करोड़ों आदमी दूसरे धंधेके बिना हमेशा थोड़ी आमदनीके कारण कर्जदारीकी हालतमें रहते हैं, तो हम तुरंत समझ जायेंगे कि हमारे बच्चोंको पहली शिक्षा सिर्फ कातनेकी ही दी जानी चाहिये। अिससे दो नतीजे निकलेंगे: अेक तो यह कि बच्चे स्वावलम्बी बनना सीखेंगे और जब बच्चोंको स्कूलमें भी कातना सिखाया जायगा, तो कातनेका आन्दोलन तुरंत सब जगह फैल जायगा। जो लोग बिलकुल

निराश हो गये हैं और जिन्हें भीख मागकर ही पेट भरनेकी आदत पड़ गअी है, अुन्हें चरखा सिखाना जरा मुश्किल काम है। अगर यह काम हम अुन्हींके लिअे रख दें और अुसे कंगालोंका धधा बना दें, तो वह कभी फैल नहीं सकेगा। पर जब अच्छेसे अच्छे लोग अिसे धर्म समझकर ग्रहण करेंगे, तब साधारण लोग अुसे फौरन अपना लेंगे। अिसलिअे यह सहज ही समझमें आने जैसी बात है कि आज बच्चों और बड़ोंकी शिक्षा चरखेके सिवा दूसरी हो ही नहीं सकती।

हिसाब लगानेका तरीका आसान है। जिस प्रवृत्तिसे हमें जल्दीसे जल्दी स्वराज्य मिले, अुसीमें हम सबको लग जाना चाहिये। अैसी प्रवृत्ति चरखा ही है। क्योंकि अुसके जरिये हम अिसी सालमें विलायती कपड़ेका पूरा बहिष्कार कर सकते हैं। और विलायती कपड़ेका बहिष्कार करनेके मानी ही स्वराज्य लेना है। हम अंग्रेजीका ज्ञान बढाकर अिस वर्ष स्वराज्य नहीं ले सकते, अिसलिअे अुसे बढानेका काम तो अभी मौकूफ ही रखना चाहिये। हम बडे गणितशास्त्री बनकर या बड़ी शास्त्रीय खोजें करके अिस साल स्वराज्य नहीं ले सकते, अिसलिअे अिन्हें भी अभी मौकूफ रखना चाहिये। हम पिनोंके और कागजके या अैसी ही दूसरी चीजोंके कारखाने खोलकर भी अिस साल स्वराज्य नहीं ले सकते, अिसलिअे वह काम भी अभी मौकूफ रखें। अिस तरह किसी भी दूसरे कामके बारेमें हम दिलसे सवाल करें, तो अेक ही जवाब मिलता है। अिससे हम देख सकते हैं कि हमारे महाविद्यालयमें, विनय-मन्दिरमें, कुमार-मन्दिरमें, अध्यापन-मन्दिरमें और हरअेक शिक्षण-संस्थामें आज तो अेक ही प्रवृत्तिके लिअे स्थान हो सकता है। जो अक्षर-ज्ञान हमें आज देना जरूरी मालूम हो, वह विनोदके समय, हाथोंको आराम देनेके समय दिया जा सकता है। अेक अंग्रेज विद्वान सिर्फ कामकी किस्म बदलकर अपना आराम ले लिया करता था। अगर वह लोकसभामें से थककर निकलता, तो मक्खियों और चींटियोंकी हलचलका अवलोकन करता। अुससे थक जाता तो पुस्तकें पढ़ता। अिस तरह वह अपनी विविध प्रवृत्तियोंसे निर्दोष आनन्द और आराम ले लिया करता था। हम अपने विद्यार्थियोंमें अैसी ही आदत क्यों न डालें?

खेसे थक जायं तो वे हिन्दी पढ़ें, अुससे थकें तो चरखे पर जा बैठें। वैसा
नेकी हिम्मत न हो तो संगीत सीखें और अुससे थक जायं तो फिर
खेका विचार करें। अुसके बाद भी चरखे पर मन न लगे तो कवायद
रें; फिर चरखेका विचार करें। अैसा करते करते अुन्हें आदत पड़
एगी। अगर अिस वक्त जनताको किसी व्यसनकी जरूरत है तो वह
खेका है। शराब पीनेवालेके लिअे चरखा मैं अकसीर अिलाजके तौर
बताता हूं। शराबके नशेसे चरखेका नशा कम नहीं है। जिसे यह
ा लगा है, वही अिसका असर जानता है। फर्क यही है कि अेक
रता है, दूसरा जिलाता है।

कामकी होशियारीके बिना चरखा चल नहीं सकता। है तो यह
टासा हथियार ही — चलानेमें हलका, कीमतमें भी मुकाबलेमें कुछ
ी। फिर भी यह आदमीके अुद्यमकी, दृढ़ताकी, अीमानदारीकी, शान्तिकी
की परीक्षा लेता है। कातनेका अर्थ रूओको चाहे जिस तरह खींचना
ी है। कातनेका मतलब है अुससे पहलेकी क्रियाओंको जानना। जिन्होंने
ामानुज'का लेख पढ़ा है, वे अिसे समझ सकते हैं। आन्ध्र देशमें
२० नम्बरका सूत कातनेवाली स्त्रियां कपासकी जांच करना जानती
कपासकी ढोंडियां छीलती हैं, कपास खुद ही लोढ़ती हैं, खुद ही
अुनती हैं, और वे ही समुद्रके झागकी-सी चमकदार, सफेद और
तनी ही मुलायम पूनियां बना लेती हैं। अिसीमें अुनकी कलाका मुख्य
पयोग हो जाता है। फिर तो १२० नम्बरका सूत निकालना अुनके
यें हाथका खेल हो जाता है। कातनेकी क्रियामें वक्त लगता है।
ससे पहलेकी क्रियायें जानना आसान है और वे समय भी थोड़ा लेती
सबको अुन आदर्श स्त्रियोंकी जगह पहुंचनेकी जरूरत नहीं, मगर
ईको पीजने और पूनिया बनानेकी क्रियायें जान लेना तो जरूरी है
। पूनी बनाना अेक दिनमें सीखा जा सकता है। पीजना सीखनेमें मान
अेक हफ्ता लग जाय। अितना समय लगाकर हर कातनेवालेको
जना सीख ही लेना चाहिये। मिलकी पूनी काममें लेनेसे काम नहीं
लता। और हर जगह मिलकी पूनी पहुंचाओ भी नहीं जा सकती।

पाठकोंको यह भी मालूम होना चाहिये कि पिंजारेका पहले तो यह धन्धा ही था, धर्म नहीं था। अिसलिअे पिंजारेको दूसरे कारीगरोंकी तरह ही रोजी मिलती थी। पिंजारे ४५ रुपये या कमसे कम ३० रुपये माहवार आसानीसे कमा लेते हैं। कुछको बम्बअीमें २॥ रुपये रोज तककी कमाअी हो जाती है। कातनेवालेको खुद पीज लेनेमें अितना काम समय लगता है कि वह कमाअीका अुद्देश्य रखे तो अेक सेर सूत पर दो आने बढ़ा सकता है। हरअेक आदमी दिनभरमें जितना काते, अुतना बहुत थोड़े समयमें पीज लेता है।

मैं अनुभवसे देखता हूं कि जब मैंने स्कूलके बच्चेकी चार घण्टेकी कमाअी अेक आना गिनी तब भूल की थी। खुशकिस्मतीसे ये भूलें मेरी सावधानीकी हैं। अज्ञानके कारण मैंने बहुत सावधानीसे लिखा था। आठ घण्टे कातनेवालेकी कमाअी मैंने दो ही आने गिनी थी। अब देखता हूं कि आठ घण्टे कातनेवाला बीस तोला नहीं, बल्कि ४० तोला आसानीसे कात सकता है। अगर हम ४० तोलेके मामूली दाम चार आने गिनें, तो आठ घण्टे काम करनेवालेको चार आने मिल सकते हैं। सत्याग्रह आश्रमके बच्चोंने सत्याग्रह सप्ताहमें सिर्फ कातनेका ही काम किया। कुछने दस दस घण्टे काता। कोअी सुबहके साढ़े चार बजेसे शुरू करते। फल यह हुआ कि अेक विद्यार्थीने दस घण्टेमें ७० तोला सूत काता! अेक घण्टेके सात तोले हुअे। पांच तोले फी घण्टा तो ज्यादातर विद्यार्थियोंने काता। अिन सबमें से किसीको भी पांच महीनेसे ज्यादा की तालीम नहीं मिली है। वह भी रोज चार चार घण्टे भी नहीं मिली। अिन बच्चोंकी शक्तिने मेरी आंखें खोली हैं और मैं देखता हूं कि सावधानी रखनेवाला बच्चा जरूर पांच तोला सूत फी घण्टे दे सकता है। अिस हिसाबसे चार घण्टे काम करनेवाला बच्चा अपने स्कूलके लिअे फी घंटे दो पैसे दे सकता है या पच्चीस दिनके चार घण्टेके हिसाबसे रु० ३-२-० दे सकता है। यह आमदनी मैं ज्यादासे ज्यादा मानता हूं। मगर औसत दो रुपये महीना पड़े, तो भी बीस बच्चोंके वर्गमें ४० रुपये हुअे। अच्छे शिक्षकको अच्छे बालक ६० रुपये महीना जरूर देंगे।

मगर यह तो अेक ही भूल हुअी।

विशेष अनुभव बताता है कि पिजाअी भी बच्चे ही करें और पूनियां भी बच्चे ही बनायें। अैसा होनेसे आखिर रुअी पर अेक आनेकी आमदनी और हो जायगी। मैं अेक सेर पिजाअी और पूनी बनानेके दो आने गिनता हूं। अिसमें थोड़ा वक्त चला जायगा, अिसलिअे हम चार घंटेकी वृद्धि चार पैसेके बजाय दो ही पैसे गिन लें, तो अिस हिसाबसे २५ दिनकी वृद्धि ५० पैसे हुअी। अिस तरह अच्छा बालक रु० ३–२–० + ०–१२–६ = ३–१४–६ दे देगा। मेरा पहला हिसाब सिर्फ रु० १–३–० ही था। यह मानना मेरी दूसरी भूल थी कि पिजाअी अलग की जाय, और वह पिंजारोंके जरिये ही हो।

अिसके सिवा, जब स्कूलोंमें कातने-बुननेका काम होगा, तब कपास वगैरा पहलेसे ही भरकर रखे होंगे और सूतका बाजार भाव गिनने पर हमेशा थोड़ा-बहुत बढ़ेगा ही। अेक सेर सूत पर दो पैसे बढ़ाना मैं कुछ भी ज्यादा नहीं समझता। ये सब दाम जोड़ने पर जनताको सब तरफसे कितना लाभ होगा, यह अुन लोगोंसे जो कारखाने चलाते हैं, पूछनेसे पता चल सकता है। लाखों बच्चोंको, जो स्कूलोंमें पढ़ते हैं, यह धंधा सिखाया जाय, अुनकी मेहनतकी कीमत लगाअी जाय और अुससे सूतके बाजार पर जनताका अंकुश रहे, तो अुससे कितना ज्यादा फायदा होगा, अिसका जब मैं विचार करता हूं तब मुझे यही लगता है कि अगर जनता अिस सीधी-सी बातको समझ ले, तो देशकी भुखमरी कुछ ही समयमें दूर हो जाय।

अभी अेक चीज और रह जाती है। जब स्कूलोंमें बुनाअी भी जारी कर देंगे, तो स्कूलकी आमदनी और भी बढ़ जायगी। जब हम कताअीके फी घंटा दो पैसे गिनते हैं, तब जुलाहेका फी घंटा अेक आना तो आसानीसे गिना जा सकता है। मगर अभी हम बुनाअीको न भी गिनें, तो जिस स्कूलमें हरअेक विद्यार्थी लगभग चार रुपया महीना कमाअी कर लेता हो, यानी चार रुपया महीना फीस देता हो, अुस स्कूलको न किसी सरकारी मददकी जरूरत है और न किसीके दानकी। वह स्कूल अपने पैरों पर खड़ा रहेगा। बच्चोंको फीस देनी ही न पड़ेगी।

सूरत म्युनिसिपैलिटीको मैंने अिस तरह शिक्षा देनेकी सलाह दी है। सूरत म्युनिसिपैलिटीको अेक लाख दस हजार रुपयेकी ग्रांट या सरकारी

मदद छोड़नी है। अैसा किया जा सके, ज्यादा कर भी न लगाना पड़े, बच्चोंको मुफ्त तालीम दी जा सके और स्वराज्य लेनेमें भी बड़ी मदद मिल सके, अैसा यह अकसीर अिलाज है।

मुश्किलें मेरे ध्यानसे बाहर नहीं हैं। मकानकी कठिनाअी सबसे बड़ी है। शहरियोंकी जहां मदद हो वहां अैसी कठिनाअी दूर करना बायें हाथका खेल होना चाहिये। पंचायती मकानों, मन्दिरों और मस्जिदोंमें चरखा समा सकता है। मौजूदा मकानोंमें जितने बच्चे भरे जाते हैं, अुतने बच्चोंको अुनमें चरखेकी शिक्षा नहीं दी जा सकती। सौभाग्यसे चरखा कुछ न कुछ जगह तो घेरता ही है और चूंकि अुसे श्वास नहीं लेना-निकालना पड़ता, अिसलिअे जगह रोक कर भी वह हवा खराब करनेके बजाय अुसे सुधारेगा। और हवा कम गंदी होनेके कारण बच्चोंकी मानसिक स्थितिके अलावा अुनकी शारीरिक स्थिति भी सुधरेगी।

अेक गृहस्थ बड़े नम्र भावसे, दलीलोंके साथ, चरखेकी स्वराज्य दिलानेकी शक्तिके बारेमें शंका अुठाते हैं। यह पत्र यद्यपि है तो सारा ही छापने लायक, लेकिन जगहकी तंगीके कारण अुसकी दलीलें ही थोड़ेमें देता हूं। वे कहते हैं: "चरखेसे स्वावलंबी बन सकते हैं, सुखसे पेट भर सकते हैं; मगर अुससे हमारे हाथमें राज्यसत्ता कैसे आयेगी, यह समझमें नहीं आता। क्लाअिवके समय चरखा तो था ही, फिर भी हम आजादी खो बैठे। अिसलिअे लंकाशायरका स्वार्थ बन्द होने पर अिग्लैंडका स्वार्थ कोअी बन्द नहीं हो जाता, यानी विदेशी कपड़ेके बन्द हो जाने पर भी अिग्लैण्डका स्वार्थ तो कायम ही रहेगा।" ये शंकाअें अनुचित नहीं हैं, मगर 'नवजीवन' पढ़नेवालोंके लिअे अिनका जवाब देना आसान होना चाहिये। फिर भी अिन मित्रको, जो 'नवजीवन'को ध्यानसे पढ़नेवाले जान पड़ते हैं, यह शंका है, तो अिसमें मैं अपनी समझानेकी शक्तिकी कमी देखता हूं। मैं आशा रखता हूं कि यही बात धीरजके साथ नये-नये ढंगसे समझाता रहूंगा, तो वह पढ़नेवालोंके गले अुतर जायगी। कारण मुझे भरोसा है कि मेरे समझनेमें कहीं दोष नहीं है। मेरी समझानेकी शक्तिमें ही कमी होनी चाहिये। ये लेखक यह तो मानते ही दीखते हैं कि चरखेके जरिये हम विदेशी कपड़ेका बहिष्कार कर सकते हैं मैं सुझाता हूं कि जिस

शक्तिके जरिये हम कभी तरहकी दिक्कतों और सरकारकी तरफसे होनेवाली
परेशानियोंके होते हुअे भी विदेशी कपड़ेका बहिष्कार कर सकते हैं, वही
शक्ति हमें पूरी राज्यसत्ता दिलानेके लिअे काफी होनी चाहिये।

अब आंकड़ोंकी जांच करें। हम विदेशी कपड़े पर ६० करोड़ रुपये
खर्च करते हैं। दूसरे नम्बर पर खांड़ है; अुसमें २३ करोड़ रुपये चले जा
है। तीसरा नम्बर लोहेका आता है; अुसके १६ करोड़ होते हैं। अुस
बाद जानने लायक लगभग ९॥ करोड़की रकम मशीनोंकी है; औ
करीब अुतनी ही खनिज तेलकी है। और चीजें मुकाबलेमें नाममात्रकी है
अगर हम ६० करोड़ रुपये बचानेके साहसमें सफल हो जायं, तो दूसरी रकम
बचानेका साहस तो बच्चोंका-सा खेल लगेगा। यानी अगर हम अिंग्लैण्ड
स्वार्थनीतिका सबसे बड़ा हिस्सा रद्द कर सकें, तो और हिस्सोंको मि
देना असंभव नहीं है। और मेरी पक्की राय है कि जब असी बढ़िया हाल
पैदा हो जायगी, तब निःस्वार्थ अिंग्लैण्ड हिन्दुस्तानमें फौज वगैराकी सत
जबरन् नहीं रखेगा।

अब अिसी चीजको दूसरे ढंगसे जांच करें। स्वराज्य लेनेके लि
अीमानदारी, अेकता, दृढ़ता, संघशक्ति, राष्ट्रीय व्यापार-शक्ति, सर्वव्याप
राष्ट्रीयता, बहादुरी और त्यागकी जरूरत है। ये सब गुण हम बना
तभी चरखा हिन्दुस्तानमें फिरसे व्यापक हो सकता है। अिनमें गुण बनाने
वाली जातिको कोअी भी हुकूमत गुलामीमें नहीं रख सकती।

जिस वक्त हिन्दुस्तान धर्म समझकर विदेशी कपड़ेको छोड़ देगा
अुस वक्त हम सरकारको अल्टीमेटम — अंतिम चेतावनी — भेजने लि
शक्तिमान होंगे। अुस वक्त हम यहां तक तैयार होंगे कि वह अल्टीमेटम
मंजूर न करे — हमारी अिच्छाका आदर न करे — तो हम लगान ब
करनेको तैयार हो जायेंगे।

यह बात सच है कि क्लाअिवके समयमें हम चरखा चलाते थे। अु
वक्त हम पराधीन नहीं बन गये थे। मगर हमारा पराधीन बनना शुरू
गया था। और जैसे-जैसे चरखा छूटता गया, वैसे-वैसे हम पराधीन ह
गये या हमें गुलाम बनानेमें अीस्ट अिण्डिया कम्पनीकी दिलचस्पी बढ़ती गयी

नवजीवन, ८-५-'२१

२

शिक्षकोंका क्या हो?

अेक कुमार-मन्दिरके आचार्य पूछते हैं कि जिस गांवमें लोगोंको राष्ट्रीय स्कूलकी परवाह न हो, जहां शिक्षक तनख्वाहके बगैर भूखों मरता हो, वहां शिक्षक क्या करे? अैसा ही सवाल अेक बंगाली शिक्षकने पूछा था। अुसका जवाब मैंने 'यंग अिण्डिया' में दिया है। यहां अुसी सवाल पर जरा ज्यादा विचार करें। अभ्यास साहबने अुसी सवाल पर गौर करनेका काम मुझे दूसरे ढंगसे सौंपा है। वे कहते हैं कि *बहुतसे गांवोंमें स्कूल ही नहीं हैं,* वहां क्या किया जाय? पहली मुश्किलका जवाब सीधा है। शिक्षकमें सामर्थ्य होगा तो वह किसी न किसी तरह अपना काम बना लेगा। शिक्षक लोह-चुम्बककी तरह काम करे। अुसके पीछे लड़के पागल हो जायं, अेक क्षणके लिअे भी अुसे न छोड़ें, शिक्षकका वियोग शिष्योंके लिअे असह्य हो जाय, तो अैसे शिक्षकका मां-बाप कभी अनादर नहीं कर सकते। शिक्षक साहूकार बन जायगा तो चोर माना जायगा, और भूखों मरेगा तो जड़ कहलायेगा। अुपरोक्त शिक्षकको मेरी सलाह है कि वह घर-घर भीख मांग कर पेट भर ले, मगर अपना शिक्षकका धर्म न छोड़े। बाकाने जो लिखा है कि शिक्षणको पेशा न मानना चाहिये सो सही बात है।

अिसके सिवा अब तो शिक्षण सस्ता हो जाना चाहिये। लड़के पढ़ें और पढ़ाओका खर्च कमा भी लें। पुराने जमानेमें अैसा ही होता था। विद्यार्थी 'समित्पाणि' होकर गुरुके पास जाता था। अिसके दो अर्थ हैं: अेक तो वह अैसा करके प्रतिज्ञा करता था कि वह गुरु पर भार नहीं बनेगा, बल्कि मजदूरी करके अपना और गुरुका पेट भरेगा। दूसरा अर्थ यह है कि शिष्य हमेशा विनयी होगा। आज भी अिन दोनों बातोंकी जरूरत है। चरखेमें मजदूरी है और विनय भी है। अुपरोक्त शिक्षकको चाहिये कि वह लोगोंको रुओीकी *सब क्रियायें सिखावे और सुन्दर सूत तैयार करावे।* सूत तैयार कराते समय अुसे खुद भी सामने बैठकर कातना चाहिये।

साथ-साथ लड़कोंको पहाड़े याद करायें, संस्कृतके रूप रटायें, श्लोकोंका अर्थ समझायें, अच्छी अैतिहासिक कहानियां कह · लड़कोंकी कक्षाओंको दिलचस्प और ज्ञानमय बना दे। अैसा हो तो लड़कोंको घबराहट भी नहीं होगी। मैंने तकलीफका सुझाव रखा है। अुसे काममें लेनेसे काम तुरन्त शुरू हो सकता है।

अब अभ्यास साहबके प्रश्नका विचार करें। 'नवजीवन' पढ़नेवाले शायद ही जानते होंगे कि हिन्दुस्तानमें अंग्रेजीका ज्ञान भले बढ़ा हो, पर अक्षर-ज्ञान कुल मिलाकर घटा है। हिन्दुस्तानमें पिछले पचास सालमें देहाती पाठशालायें घटी हैं; यानी जिस हद तक हम निचले दरजेके लोग अपनेको अूंचा अुठा हुआ मानते हैं, अुसी हद तक देहाती बच्चे नीचे गिरे हैं। जैसे हमारी माली हालत सुधरी है, वैसे देहातकी बिगड़ी है। जिसी तरह हमारी विद्यामें अुन्नति हुआी है, तो देहातकी विद्यामें अवनति हुआी है। यह बात भयंकर तो है, मगर अक्षरशः सच्ची है। जिसे कोअी भी अंकशास्त्री साबित कर सकता है। ब्रह्मदेशमें अैसा देखा गया है कि अंग्रेजी राज्य जारी होनेसे पहले जनताके लगभग सभी बच्चोंको अक्षर-ज्ञान था, क्योंकि अेक भी गांव ग्राम-पाठशालासे खाली नहीं था। आज हालत बदलती जा रही है। ग्राम-पाठशालाओंका नाश होता जा रहा है, जिससे अक्षरहीनता बढ़ती जा रही है।

हमारा आन्दोलन खास तौर पर गरीबोंके लिअे होनेके कारण जिस हद तक फैलेगा, अुस हद तक गरीबोंकी माली हालत और अक्षर-ज्ञानकी अुन्नति होगी। हर गांवमें वहांके शिक्षकको ढूंढ़कर अुससे पाठशाला खुलवाना ही जिसका अुपाय है। वह पेड़के नीचे बैठकर पढ़ाये। हिन्दू लड़के मन्दिरमें पढ़ें और मुसलमान मस्जिदमें। जिस तरह शुरू करके आखिरमें दोनोंके लिअे अेक पाठशालाका बन्दोबस्त हो सकता है। मुश्किलें तो सब हैं ही, मगर अुन्हें हल करनेमें ही हमारी शक्तिकी कसौटी है। गांवोंमें जितनी जागृति, अितना विद्याप्रेम पैदा करना चाहिये। चरखेके आन्दोलनमें ये सब चीजें छिपी हुआी हैं। जिला और तालुका समितियोंको सावधान होकर ये काम करने हैं।

नवजीवन, २७-७-'२४

३

पूछने लायक प्रश्न

अेक भाअी पत्र लिखकर पूछते हैं :

"क्या आप हिन्दुस्तानमें अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा जारी करनेके पक्षमें हैं? क्या शिक्षाको अनिवार्य करना अन्याय है? क्या यह गैरजरूरी है? अगर हमें स्वराज्य मिल जाय, तो आजकी हालतमें क्या आप हिन्दुस्तानमें सब जगह प्राथमिक शिक्षाको अनिवार्य करेंगे?"

मुझे लगता है कि अिनमें से मुख्य सवालका जवाब मुझे अिनकारमें देना पड़ेगा। मैं भरोसेके साथ तो हरगिज नहीं कह सकता कि मैं अनिवार्य शिक्षाका किसी भी समय विरोध नहीं करूंगा। किसी भी मामलेमें — फिर भले वह कितनी ही अच्छी चीज हो — लोगोंको मजबूर करनेसे मुझे बहुत चिढ़ है। जिस तरह मैं जनतासे जबरदस्ती व्यसन नहीं छुड़ाअूंगा, अुसी तरह जनताको जबरदस्ती शिक्षा भी नहीं दूंगा। लेकिन जिस तरह मैं शराबकी नअी दुकानें खोलनेसे अिनकार करके और मौजूदा दुकानोंको बन्द करके शराबकी बुराअीको दूर करूंगा, वैसे ही जनताकी अक्षर-ज्ञानकी कमीको शानमें रुकावट डालनेवाली चीजें हटाकर और जनताकी जरूरत पूरी करनेवाली शिक्षा देनेवाले बिना फीसके स्कूल खोलकर दूर करूंगा। मगर अभी तो हमने मुफ्त शिक्षा देनेका कोअी बड़ा प्रयोग किया नहीं है। हमने मा-बापको किसी भी तरह ललचाया नहीं है। हमने जनताको लिखने-पढ़नेका महत्त्व जितना चाहिये अुतना या बिलकुल समझाया नहीं है। हमारे पास अैसे योग्य शिक्षक भी नहीं हैं, जो अैसी शिक्षा दे सकें। अिसलिअे मुझे तो अैसा लगता है कि शिक्षाको अनिवार्य करनेका विचार फिलहाल असामयिक है।

मुझे यह भी भरोसा नहीं कि जहां-जहां अनिवार्य शिक्षाका प्रयोग किया गया है, वहां सभी जगह वह सफल हुआ है। जनताके बहुत बड़े हिस्सेको अगर शिक्षाकी जरूरत हो तो जबरदस्ती करना अनावश्यक है, और जरूरत न हो तो अैसा करना नुकसान पहुंचायेगा। जनताके कड़े विरोधके बावजूद तो जालिम सरकार ही कानून बनाती है।

क्या जनताके ज्यादातर बच्चोंकी शिक्षाके लिअे सरकारने तमा
सुविधायें कर दी है? पिछले सौ या अुससे भी ज्यादा सालोंसे हम अ
अनिवार्य राज्यतंत्रके भारके नीचे कुचले जा रहे हैं। यह राज्यतंत्र हम
पूछे बिना ही हमारे तरह-तरहकी बाधाओंमें फँसे हुअे जीवनका कारोबा
संभाले हुअे है। अब तक अुसने जनतासे सब-कुछ जबरदस्तीसे कराया है
अिसीलिअे आजिजी, प्रार्थना या अर्जीका अुस पर असर नहीं होता। क्यों
जनताने अब तक जो आजिजी और प्रार्थनाअें की हैं, वे सरकारने कहां सुन
हैं? अिसलिअे अैसी सरकारसे जनता और क्या सीख सकती है? अग
जनताको यह माननेकी आदत पड़ जाय कि अपनी मरजीसे कोशिश करके
कोअी सुधार हो ही नहीं सकता, तो अिससे ज्यादा और कोअी चीज अुसके
सच्चे विकासमें बाधक नहीं हो सकती। अिस तरह अनिवार्य तंत्रके मातहत
जो जनता तैयार होती है, वह स्वराज्यके लिअे बिलकुल नालायक होती है।
अिससे मेरी अूपरकी दलीलोंका सार यह निकलता है कि हमें अगर आज
स्वराज्य मिल जाय, तो और कुछ नहीं तो मुझे तब तक तो अनिवार्य
शिक्षाका विरोध करना ही पड़ेगा, जब तक अैच्छिक प्राथमिक शिक्षाके सभी
प्रामाणिक प्रयोग असफल साबित न हो जायं। पाठक अितना जरूर याद
रखें कि अक्षर-ज्ञानकी जितनी कमी आजसे पच्चीस वर्ष पहले थी, अुससे
आज ज्यादा है। और अिसका कारण यह नहीं है कि जनता अपने
बच्चोंको शिक्षा नहीं देना चाहती, बल्कि यह है कि जनताके पास पहले जो
सहूलियतें थीं, वे सब अेक कृत्रिम और पराअी हुकूमतमें नष्ट हो गअी हैं।

लिखनेवाले भाअी दूसरा सवाल पूछते हैं:

"आजकल जब यह काम सभी मतके लोगोंके सहयोगसे हो सकता है, तब क्या आप यह चाहेंगे कि 'अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा' के ताजा कानूनसे फायदा अुठाकर म्युनिसिपैलिटिया और लोकलबोर्ड प्राथमिक शिक्षाको अनिवार्य बनायें?"

यह सवाल असहयोगियोंसे सम्बन्ध रखता है। मुझे लगता है कि म्युनिसिपैलिटियों या लोकल बोर्डोंके सदस्य अिस कानूनसे फायदा अुठाना चाहें, तो अिसमें अैसी कोअी बात नहीं जो कांग्रेसके प्रस्तावसे बेमेल हो।
.९ अूपर बताये हुअे सबबसे शिक्षाको अेकदम अनिवार्य करनेमें मैं जरूर

हिचकिचाअूंगा। फिर भी अिसकी अच्छाअी-बुराअी पर निश्चित राय देनेसे पहले और शिक्षाको अनिवार्य करनेके खिलाफ अपनी मूल आपत्तिको अेक तरफ रख देनेसे पेश्तर मैं अितना जानना चाहूंगा

१. क्या सम्बन्धित जगह पर अब तक प्राथमिक शिक्षाको मुफ्त कर देनेकी कोशिश की गअी है? अगर अैसा हुआ है तो अुसका क्या फल निकला?

२. क्या हर मां-बापसे मिलकर अुनकी राय ली गअी थी? और अुनकी आपत्ति पर ठीक ध्यान देकर जहां वह वाजिब मालूम हुअी हो, वहां अुसका अुपाय किया गया था? भरसक दूसरे नरम अुपाय किये बिना अिस तरह जबरदस्ती करनेकी जल्दबाजीमें विवेककी कमी और अुतावलापन है। हमें यह मनवानेका क्या हक है कि घरके सामने मुफ्त शिक्षा मिलनेकी व्यवस्था होने पर भी मां-बाप अितने नासमझ और भावनाहीन होंगे कि अपने बच्चोंकी शिक्षाकी परवाह नहीं करेंगे?

नवजीवन, ७-९-'२४

४

निरक्षरी बालशिक्षा

१

['नवजीवन'के २६-१०-'२४के शिक्षाका 'अेक रास्ता' शीर्षक लेख।]

शिक्षा-परिषद्में अेक प्रस्ताव अैसा पास हुआ था कि विद्यापीठको प्राथमिक शिक्षाको प्रधानता देनी चाहिये। अिस प्रस्तावके बारेमें कोअी न कोअी व्यावहारिक सूचना विद्यापीठके सामने रखनेका मेरा अिरादा था, लेकिन अुसे पूरा करनेसे पहले मेरे लिअे युग बीत गया और मैं दूसरे ही कामोंमें फंस गया। फिर भी प्राथमिक शिक्षाकी बात मैं भूला नहीं।

लेकिन कोअी व्यावहारिक सूचना विद्यापीठके आगे रखूं, अिससे पहले शिक्षाके बारेमें कुछ विचार शिक्षकोंके सामने रखनेकी अिजाजत लेता हूं। बहुत बरसोंसे मुझे अैसा लगता है कि शिक्षाक्रममें हम अक्षर-ज्ञान

पर जरूरतसे ज्यादा जोर देते हैं और अिसलिअे पाठ्यपुस्तकें दिन-दिन बढ़ती जा रही हैं।

हम अिस भ्रममें पड़ गये हैं कि जब तक बच्चा ककहरा न सीख ले तब तक अुसे कोअी ज्ञान ही नहीं दिया जा सकता; शिक्षाके क्षेत्रमें अिससे बड़ा वहम मैं नहीं जानता। मेरा पक्का खयाल है कि अिस भ्रमसे हम बच्चोंके विकासको रोकते हैं। यह खयाल अनुभवसे बना है कि बच्चेका मानसिक विकास अुसे अक्षर-ज्ञान मिलनेसे पहले हो सकता है। अक्षर-ज्ञानको पहले रखनेसे बच्चेका विकास रुकता है। सात वर्षके बालकको बारहखड़ी सिखानेमें न रोककर अगर शिक्षक अुसे जबानी ज्ञान दे, तो अुसका कितना ज्यादा विकास होगा, यह कोअी भी शिक्षक महीने भरमें अनुभव कर सकता है। शिक्षक बच्चोंको बातों ही बातोंमें अितिहास, भूगोल और विज्ञान सिखा सकता है। रामायण-महाभारतका सार बच्चा अेक सालमें अच्छी तरह सीख सकता है। यही चीज आम तौर पर बच्चे चार-पांच बरसकी पढ़ाअीके बाद जान पाते हैं। यह कितनी दयाजनक बात है कि 'मा, भू पा' — 'मां, पानी पिला' पढ़ने और सोचनेमें बच्चेका अेक साल बीत जाय? अक्षर-ज्ञानका बोझ बच्चे पर डालकर हम अुसकी तरक्कीको रोकते हैं, अुसे ज्ञानरहित रखते हैं, अुसकी स्मरण-शक्तिको रोकते हैं, अुसे झट बारहखड़ी सिखानेकी होड़में अुसके अक्षर बिगाड़ते हैं; और अुसे बचपनसे पाठ्यपुस्तकोंका गुलाम बनाकर अन्तमें गरीब हिन्दुस्तान पर निकम्मी पुस्तकोंको खरीदनेका फिजूल बोझ डालते हैं।

अगर मैं शिक्षकोंको समझा सकूं, तो प्राथमिक शिक्षाके लिअे पाठ्य-पुस्तकें सिर्फ शिक्षकोंके लिअे ही रखूं। अैसी किताबोंकी रचना दूसरी ही तरहकी होगी। बच्चेको पहले ककहरा सिखानेके बजाय ड्राअिंग सिखाना चाहिये, ताकि बच्चा शुरूसे ही सुन्दर शक्लें बनाना सीख जाय। बारहखड़ी पूरी करनेमें भले ही अुसके दो से तीन साल चले जायं। अिन तीन वर्षोंमें बच्चेको जबानी बहुत-सा व्यावहारिक और धार्मिक ज्ञान दिया जाय। गीताजी वगैरामें से श्लोक याद कराकर अुसकी स्मरण-शक्ति बढ़ाअी जाय। [illegible]के जरिये अुसके कानोंको शिक्षा दी जाय। अुसकी जबानको शुद्ध अुच्चा-[illegible]ण और अुसकी आंखोंको ध्यानसे देखनेकी शिक्षा मिले। अिस तरह

बालककी सारी शक्तियोंका अेक साथ विकास किया जाय। अिसी बीचमें अक्षर-ज्ञानको अलग कलाके तौर पर विकसित किया जा सकता है। आजकल नौजवानोंके अक्षर अितने खराब होते हैं कि अुन्हें देखकर घिन आती है और पढ़ते घबराहट होती है। मैं अपने अनुभवसे ये वाक्य लिख रहा हूं, क्योंकि मेरे अक्षर अितने खराब हैं कि किसीको खत लिखते शर्म आती है और मुझे अपने कच्चे और बेतुके अक्षरोंके लिअे हमेशा अफसोस होता है। जैसे कच्चा अनाज नहीं खाया जाता, वैसे ही कच्चे अक्षर लिखनेवाला जंगली माना जाता है। मुझे बहुत दफे अैसा लगा है कि अैसे आदमीको लेख पढ़नेका बहिष्कार होना चाहिये।

अगर हम प्राथमिक शिक्षाके बारेमें यह पहला और जरूरी कदम अुठा लें तो बहुतसे खर्चसे बच जायं। अितना ही नहीं, हम बच्चोंकी जिन्दगी भी बढ़ा देंगे, क्योंकि अुनका विकास बढ़ जायगा।

२

[श्री काकासाहब कालेलकरको लिखा गया अेक पत्र।]

शिक्षकके लिअे लेख लिखनेके बाद मैं बच्चोंकी शिक्षाके बारेमें बहुत अुतावला हो गया हूं। हम आश्रमके बच्चोंके लिअे यह प्रयोग क्यों न शुरू करें? यानी अगर वे विचार आपके गले अुतरे हों, तो जैसे बच्चा घोड़ेका चित्र घोड़ेके तौर पर नहीं खींचता, अुसी तरह वह अक्षर पढ़ भले ही ले, पर लिखता नहीं। और पढ़नेसे पहले जैसा वह सुनता है वैसा ही अुच्चारण करता है — बोलता है। लक्ष्मी, रसिक, वगैरा बच्चोंको लिखना शुरू करनेसे पहले ड्राअिंग क्यों न सिखाया जाय? ज्यादा तो अुन्हें जबानी ही न सिखाया जाय? अभी तो वे हाथका अुपयोग चित्र खींचनेमें ही करेंगे। अिसके लिअे शिक्षकोंको ड्राअिंगके मूलतत्त्व जान लेने चाहिये। अब मैं महत्व जाने लगा, अिसलिअे ठहर जाता हूं। अभी तो अितना ही सोचिये। मिलने पर और बात करेंगे।

१७-११-'२४

५

शरीर-श्रमका गौरव

"हर रोज हमें अपनी युनिवर्सिटियोंके ग्रेज्युअेट अपनी डिग्री बेचनेके लिअे चक्कर काटते देखनेको मिलते हैं। वे किसी अशिक्षित किन्तु धनवान आदमीकी सिफारिश ढूंढते हैं और ९० फी सदी मामलोंमें अिन धनवानोंकी सिफारिशको ही सरकारी अफसर युनिवर्सिटीकी डिग्रीसे ज्यादा मान देते हैं। अिससे क्या सिद्ध होता है? अिससे यही सिद्ध होता है कि विद्यासे रुपयेका महत्त्व ज्यादा है। अिस तरह बुद्धिकी कीमत कम हो जाती है। अिसका कारण क्या है? कारण यही है कि बुद्धि रुपया पैदा नहीं कर सकती। और अिसका कारण यह है कि कोअी अैसा धन्धा नहीं मिलता जिसमें बुद्धिका अुपयोग हो। मानवसमाजकी निहायत जरूरी और बलवान शक्ति — बुद्धि बाजारके अभावमें कचरेमें पड़ी है।

"किसानकी पूंजी अुसके हाथ हैं। जमींदारकी पूंजी अुसकी जमीन है। जमीनकी जुताअी खेती है। हाथकी शक्तिका विकास ही अुद्योग है। मुझे मालूम है कि खेतीको अुद्योग कहा जाता है, लेकिन दोनोंके विशेष गुण देखें तो खेतीको अुद्योगके दरजेमें नहीं रखा जा सकता। जिस काममें हाथकी मजदूरीकी जरूरत पड़े और जिसमें हाथकी कारीगरीके विकासकी गुंजाअिश हो, अुसीको अुद्योग कहना चाहिये। जमीन पर मजदूरीसे जो जुताअी होती है, अुसके बारेमें अैसा नहीं कहा जा सकता। हल जोतनेवाला या बीज बोनेवाला या खेत निरानेवाला अपने हाथकी कारीगरीका विकास करके ज्यादा मजदूरी नहीं पैदा कर सकता। खेतीके धंधेमें बुद्धिशक्तिके अुपयोगमें ज्यादा रुपया कमानेकी गुंजाअिश नहीं है। अब बढ़अीका अुदाहरण लीजिये। वह देवदारकी सादी पेटिया बनानेसे शुरुआत करता है। ज्यादा अभ्याससे वह शराबकी बोतल रखनेकी पेटी बनाना सीखेगा। और यह शक्ति आनेसे अुसकी रोजीमें कितनी वृद्धि होगी, अिसका विचार कीजिये। मुझे आपसे कहना चाहिये कि मैंने अैसा ही बढ़अी

मामूली देवदारकी पेटियां बनानेके लिअे रखा था। वह अब शीशिया सुरक्षित रखनेके लिअे सुन्दर नागफणीवाली पेटियां बनाने लगा है। अुसे पहले छह आने रोज मिलते थे और दो सालमें अुसे अेक रुपया मिलने लगा और अुसके कामकी बाजारमें अितनी खपत थी कि अुसके सेठको रोज चार आनेका नफा होने लगा। यानी दो वर्षके अनुभवके बाद अुसे १३३ रुपये सालानाके बजाय ३६५ रुपये मिलने लगे। . . . ९८ फी सदीसे ज्यादा आबादी खेतीका काम करती है। जमीन तो जितनी है अुतनी ही रहती है। जैसे आबादी बढ रही है, वैसे मजदूर भी बढ़ रहे हैं। ५ आदमियोंके अेक कुटुम्बके लिअे काफी होनेवाली जमीनके टुकडेको १२ से १५ आदमियोंका पेट भरना पड़ता है। कभी-कभी लोगोंके विदेश जानेके कारण जमीन परका बोझ कम हो जाता है, लेकिन ज्यादातर लोग तो थोडी कमाओसे ही मजबूर होकर सन्तोष मानते हैं।"

श्री मधुसूदन दासने बिहारके युवक-संघमें १९२४ में अेक भाषण दिया था। अुसीमें से अूपरका अुद्धरण लिया गया है। यह भाषण मैंने अभी तक रख छोडा था, अिस खयालसे कि मौका आने पर अिसे काममें लूंगा। श्री दासने जो कुछ कहा है अुसमें कोओी नअी बात नहीं है। मगर अुनकी कही हुओी बातोंका महत्त्व अिस बातमें है कि मशहूर वकील होकर भी अुन्होंने हाथकी मेहनतसे नफरत नहीं की अपनी ढलती हुओी अुम्रमें हाथकी मेहनतका काम सीखा, और वह शौकके लिअे नहीं बल्कि नौजवानोंको परिश्रमका गौरव सिखानेके लिअे और अुन्हें यह बतानेके लिअे कि वे जब तक देशके अुद्योगोंकी तरफ ध्यान नहीं देंगे, तब तक देशका भावी कमजोर है। श्री दासने खुद कटकमें अेक चमड़ेका कारखाना निकलवाया है, जिसमें बहुतसे अैसे जवानोंको शिक्षा दी जाती है, जो पहले महज बिना बुद्धिकी मजदूरी करते थे।

मगर जिसमें करोड़ों आदमियोंकी बुद्धिकी गुजाअिश हो सकती है, वह बड़ा अुद्योग तो खादीका ही है। हमारे देशके किसानोंको बडी आबादीको अैसा अुद्योग देना चाहिये, जो सहायक हो और जिसमें अकल लगानी पडे, ताकि अुनकी बुद्धि और हाथ दोनोंको तालीम मिले। यही

थुनके लिअे सबसे अच्छी और सबसे सस्ती शिक्षा है — सबसे सस्ती अिस-लिअे कि अुससे अुसी वक्त फल मिल जाता है। और अगर हमें देशमें सब जगह शिक्षा फैलानी है, तो प्राथमिक शिक्षा लिखना-पढ़ना और गणित सिखानेमें नहीं है, बल्कि कातने और कातनेकी क्रियामें जितनी बातें आ जाती हैं, अुनकी शिक्षामें है। और अुनके जरिये हाथ और आंखकी ठीक शिक्षा मिलनेके बाद ही लड़का या लड़की अक्षर सीखनेके लायक होती है। मैं जानता हूं कि कुछ लोगोंको यह बात बिलकुल बेहूदा और कुछको अव्यावहारिक लगेगी। मगर अैसा माननेवाले लोग करोड़ोंकी हालत नहीं जानते और न यह जानते हैं कि हिन्दुस्तानके किसानोंको कैसी शिक्षा दी जानी चाहिये। और यह निहायत जरूरी शिक्षा तभी मिल सकेगी, जब देशमें राजनीतिक जागृति पैदा करनेके लिअे जिम्मेदार शिक्षित वर्ग परिश्रमका गौरव समझेगा और जब हरअेक युवक कातनेकी कला जान लेगा और अुसे गांवोंमें जारी करना अपना धर्म समझेगा।

नवजीवन, १२–९–'२६

६

विद्यार्थीकी परेशानी

अेक सरलचित्त विद्यार्थी लिखता है :

"मेरे पत्रमें खादी-सेवक बननेके बारेमें आपने जो कुछ लिखा अुसे मैंने ध्यानसे पढ़ा। सेवा करनेका तो अिरादा है ही। मगर अभी मुझे यह सोचना बाकी है कि खादी-सेवक ही बनूंगा या और किसी तरह सेवा करूंगा। अभी मुझे अैसा नहीं लगा कि खादीके अुद्धारमें ही आत्माकी अुन्नति समाअी हुअी है। अभी तो मैं हिन्दुस्तानकी आर्थिक हालत सुधरे और वह स्वतंत्र हो सके, अिस-लिअे कातना जरूरी समझकर समाजके प्रति अपना धर्म पालनेके लिअे ही कातता हूं। आखिर तो जो सेवा मेरे लिअे सबसे अच्छी निर्धारित हुअी होगी वैसा ही होगा। अभी तो अितना ही मकसद

है कि जितना ज्ञान मिल सके अुतना लेकर सेवा करनेके लिअे तैयार हो जाअूं।

"ब्रह्मचर्य पालनके बारेमें तो मैं लिख ही क्या सकता हूं? अीश्वरसे यही प्रार्थना है कि वह ब्रह्मचर्य पालन करनेकी महत्त्वाकांक्षा पूरी करनेकी शक्ति दे।

"मेरी समझमें यह नहीं आता कि आप पाठशालाओंमें ज्ञान और अुद्योग दोनोंको अेक ही समय बराबरीका स्थान कैसे देते हैं। मुझे यही लगा करता है कि दो चीजें अेक साथ करनेमें हम अेक भी चीज अच्छी तरह नहीं कर सकते।

"हमें अुद्योग तो सीखना ही है। मगर क्या यह अच्छा नहीं कि पढ़ाअी पूरी करनेके बाद अुद्योग सिखाया जाय? कातनेको मैं अुद्योगमें नहीं गिनता। कातना समाजके लिअे हरअेक आदमीका धर्म है और अिसलिअे हरअेकको कातना चाहिये। मगर मुझे लगता है कि दूसरे बुनाअी, खेती और अुसके काम आनेवाली बढ़अी-गिरी वगैरा अुद्योग पढ़ाअीके बाद किये जा सकते हैं। यह हरअेक काम भी अेक स्वतंत्र विषय है। अेकाध साल अिसके लिअे दे दिया जाय तो काफी होगा।

"मैं आज अपनी हालत पर विचार करने बैठूं, तो मुझे लगता है कि दोनों चीजें बिगड़ रही हैं। तीन घंटे अुद्योग करके फालतू वक्तमें कातना और अेक बाहरके स्कूलमें पढ़ाये जानेवाले विषयोंके बराबर ही विषय पढ़ना, स्वाध्याय करना और जरूरी कामोंमें शरीक होना सचमुच मुश्किल बात मालूम होती है।

"बच्चोंकी पढ़ाअी तो कम की ही नहीं जा सकती। अिनके लिअे सारे विषय सीखना जरूरी ही है। तब अितने विषय पढ़ने और स्वाध्याय करने हुअे बच्चों पर हम ज्यादा बोझ कैसे डालें? बच्चे दिया हुआ काम भी अच्छी तरह न कर सकें, तो स्वाध्याय तो कर ही क्या सकते हैं? मैं देखता हूं कि जैसे-जैसे पढ़ाअी आगे बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे स्वाध्याय बढ़ाना जरूरी होता जाता है, और अितना वक्त निकाला नहीं जा सकता।

"ये विचार मैंने शिक्षकोंको भी बताये हैं। चर्चा भी
मगर अिससे मुझे अभी संतोष नहीं हुआ। मुझे अैसा लगत
वे अभी हमारी मुश्किल नहीं समझ सके। आप मुझे अिस वि
विचार करके समझाअियेगा ?"

अिस पत्रमें दो सवाल बहुत जरूरी हैं। यह तो पाठक समझ हैं
है कि यह पत्र मेरे पत्रके जवाबमें है। अिसका जुत्तर खानगी देनेके
बहुतसे विद्यार्थियोंको मददगार साबित होगा, अिस आशासे 'न
के जरिये देनेका सोचकर मैंने अुसे तीन महीने तक संभाल कर रख

आत्मोन्नति और समाजसेवाके धर्ममें जो भेद अिस पत्रमें कि
है, वह भेद हिन्दुस्तानमें बहुत लोग करते हैं। मुझे अैसा फर्क
विचारदोष दीखता है। मैं यह मानता हूं और यही मेरा अनुभव
जो चीज आत्मोन्नतिके खिलाफ है, वह समाजसेवाके भी खिल
सेवाके कामके जरिये ही आत्माकी अुन्नति हो सकती है। सेवाकार्य
है यज्ञ। जो सेवा आत्मोन्नतिको रोकती है वह त्याज्य है।

अैसा कहनेवालोंका भी अेक पंथ है कि झूठ बोलकर सेवा हो
है। लेकिन यह तो सभी मानते हैं कि झूठ बोलनेसे आत्माकी
होती है। अिसलिअे झूठ बोलनेसे होनेवाली सेवा हराम है। स
यह है कि यह खयाल भी अेक भ्रम ही है कि झूठ बोलनेसे से
सकती है। अिसका नतीजा थोड़ी देरके लिअे भले ही समाजको फा
मालूम हो, लेकिन यह बताया जा सकता है कि अुससे हानि ही हो

अिससे अुलटे, चरखेकी प्रवृत्तिसे समाजको फायदा होता है, दु
फायदा होता है, अिसलिअे आत्माको फायदा होता है। अिसका
यह नहीं है कि हरअेक कातनेवाला आत्मोन्नति कर लेता है। जो
कमानेके लिअे कातता है, अुसे अुतना ही फल मिलता है। जो अ
पहचाननेके लिअे कातता है, वह अुसके जरिये मोक्ष भी पा सकता है
भक्तिभावसे पानी पिलाता है', वह भी मोक्षके लायक बन जाता है
दंभसे या रुपयेके लिअे चौबीसों घंटे गायत्रीका मंत्र जपते हैं, अुनमें से
अवनति होती है और दूसरा रुपया पाने तक फल पाकर अटक जा
जहां सर्वोत्तम हेतु होता है और सर्वोत्तम काम होता है वहीं मोक्ष हो

असलमें यह जाननेके लिअे ही कि सर्वोत्तम हेतु कौनसा है और सर्वोत्तम कार्य क्या है, ब्रह्मज्ञानकी जरूरत रहती है। आत्मोन्नतिके खयालसे खादी-सेवाके लिअे योग्यता पैदा करना छोटी-मोटी बात नही है। आत्मार्थी खादी-सेवकको रागद्वेषसे मुक्त रहना चाहिये। अिसमे सब कुछ कह दिया गया है। नि.स्वार्थ होकर सिर्फ गुजारे लायक मिल जाने पर सतुष्ट रहकर, रेलसे दूर छोटेसे गावमें प्रतिकूल परिस्थितिमें अटल श्रद्धासे आसन जमाकर बैठनेवाला अेक भी खादी-सेवक अभी तक तो हमें मिला नही। अैसा खादी-सेवक सस्कृत जानता होगा, सगीत जानता होगा, और सब धर्मोको जाननेवाला होगा। वह जितनी कलाअें जानता होगा, अुन सबका वहा अुपयोग कर सकता है। चरखाशास्त्रके सिवा और कुछ न जानता हो, तो भी सन्तुष्ट रहकर सेवा कर सकता है।

मुद्दतोका आलस्य, मुद्दतोके वहम, मुद्दतोकी भुखमरी और मुद्दतोका अविश्वास — यह सब घोर अधकार दूर करनेके लिअे तो मोक्षके दरवाजे तक पहुंचे हुअे तपस्वियोकी जरूरत है। अिस धर्मका थोडासा पालन भी बडे भारी भयसे बचानेवाला है। अिसलिअे वह आसान है। लेकिन अुसका पूरा पालन तो मोक्षार्थीकी तपस्याके बराबर ही कठिन है।

मेरे कहनेका यह मतलब नही कि कोअी अपनी पढाअी छोड़कर अभीसे खादीसेवा करने लग जाय। मगर अिसका यह अर्थ जरूर है कि जिस विद्यार्थीमें हिम्मत, बल और विश्वास हो, वह आज ही से पक्का निश्चय कर ले कि मुझे पढाअी खतम करके खादी-सेवक बनना है। वह अैसा करेगा तो आजसे ही अुसकी खादीसेवा शुरू हो जायगी, क्योंकि वह अपने सारे विषयोका चुनाव सिर्फ अिस सेवाकी योग्यता हासिल करनेके लिअे करेगा।

अब दूसरी परेशानीकी जाच करें। 'मेरी समझमें यह नही आता कि आप पाठशालाओंमें ज्ञान और अुद्योग दोनोको अेक ही समय बराबरीका स्थान कैसे देते हैं?'

यह सवाल मैंने जबसे देशमें आया हू, तभीसे सुना है और तबसे मैंने अिसका अेक ही जवाब दिया है। वह यह है कि दोनोको बराबरीका स्थान मिलना ही चाहिये। पहले अैसा ही होता था। विद्यार्थी

समित्पाणि होकर गुरुके घर जाता था, यह अुसकी नम्रता और सेवाभावको बताता था। और वह सेवा गुरुके लिअे जंगलसे लकड़ी और पानी वगैरा लानेकी होती थी। यानी विद्यार्थी गुरुके घर खेती, गोपालनके अुद्योग और शास्त्रकी जानकारी हासिल करता था।

आज अैसा नहीं होता। अिसीलिअे दुनियामें भुखमरी और दुराचार बढ़ा है। अक्षर-ज्ञान और अुद्योग अलग-अलग नहीं हैं। फिर भी अुन्हें अलग करनेसे, अेक-दूसरेका सम्बन्ध तोड़ देनेसे ज्ञानका व्यभिचार होने लगता है। पतिकी छोड़ी हुअी पत्नी जैसी अुद्योगकी हालत है। और ज्ञान-रूपी पति अुद्योगको छोड़कर मनमानी करनेवाला बन गया है और जगह-जगह अपनी गन्दी नजर डालता हुआ भी अपनी कामना पूरी नहीं कर पाता। अिसलिअे आखिरमें मनमानी करनेसे थककर गिर जाता है।

दोनोंमें किसीका पहला दर्जा हो सकता हो तो वह अुद्योगका है। बच्चा जन्मसे अपनी अकल काममें नहीं लेता, मगर शरीरसे काम लेता है। पहले हाथ-पैर और बादमें आखें अिस्तेमाल करता है। फिर चार-पाच सालकी अुम्रमें समझने — ज्ञान पाने लगता है। समझने लगते ही वह शरीरको भुला दे, तो शरीर और समझ दोनोंका नाश हो जाय। शरीरके बिना समझ हो नहीं सकती। अिसलिअे समझका अुपयोग शरीरके अुद्यममें करना होता है। आजकल शरीरकी मेहनत सिर्फ शरीरको गठीला बनानेके लिअे कसरत करनेमें ही रह गअी है, जब कि पहले कसरत अुपयोगी श्रममें हो जाती थी। कहनेका आशय यह नहीं है कि बच्चे खेलें-कूदें ही नहीं। पर अिस खेलकूदकी गुंजाअिश थोड़ी ही होगी और वह शरीर और मनके लिअे अेक किस्मका आराम होगा। शुद्ध शिक्षामें आलस्यको स्थान नहीं होता। शिक्षा अुद्योगकी हो या अक्षर-ज्ञानकी, दोनों रसमय होनी चाहिये। बच्चा पढ़ाअी-लिखाअी या अुद्यमसे अूब जाय, तो अिसमें अुसका दोष नहीं, बल्कि शिक्षा और शिक्षकका दोष है।

...नको मैंने संभाल कर रखा था। अिस बीच मेरे हाथमें अेक ...। अुसमें मैंने देखा कि अभी अिंग्लैण्डमें अुद्योगके साथ शिक्षा ... खोलनेवाली जो संस्था खड़ी हुअी है, अुसमें अिंग्लैंडके ... आदमियोंके नाम हैं। अुनका मकसद यह है कि अभी जो

शिक्षा दी जाती है, अुसका रुख बदलकर बच्चोंको अुद्योग और अक्षर-ज्ञान साथ-साथ सिखानेके लिअे अुन्हें लम्बे-चौड़े मैदानोंवाली जगहों पर रखा जाय, जहां वे धंधे सीखें, अुनसे कुछ कमा भी ले और लिखना-पढ़ना भी सीख जाय। संपादक कहते हैं कि असा करनेमें अक्षर-ज्ञानका समय बढ़ेगा मगर वे यह भी कहते हैं कि असा होनेमें फायदा है नुकसान नहीं। क्योंकि अिस बीचमें विद्यार्थी कमाने लगता है और अुसे जैसे-जैसे ज्ञान मिलता जाता है, वैसे-वैसे वह अुसे पचाने लगता है।

दक्षिण अफ्रीकामें मैंने जो प्रयोग किये मेरा खयाल है वे अिस बातकी ताअीद करते हैं। जहां तक मुझे करना आया और मैं अुन्हें कर सका, वहां तक वे सफल हुअे थे।

जहां शिक्षाका तरीका अच्छा होता है वहां स्ववाचनके लिअे नाम-मात्रको समय चाहिये। विद्यार्थियोंको जो जीमें आवे वही करना पढ़ना या बेकार रहना हो तो बेकार रहनेके लिअे थोड़ा वक्त तो चाहिये ही। मुझे अभी मालूम हुआ है कि योगविद्यामें अिसका नाम शवासन है। 'शवासन' का अर्थ है मुर्देकी तरह लम्बा होकर पड़ जाना और शरीर मन वगैराको ढीला करके जानबूझ कर जड़की तरह पड़े रहना। अुस वक्त भी रामनाम तो हर सांसके साथ चलता ही रहेगा मगर वह आराममें कोअी खलल नहीं डालेगा। ब्रह्मचारीके लिअे अुसकी मांग ही यह नाम होता है।

मगर मेरा कहना ठीक हो, तो अुसका असर अिस विद्यार्थीका और अुसके साथियोंको भी, जो झूठे नहीं हैं घमंडी नहीं हैं और प्रयत्न-शील हैं, क्यों नहीं होता?

हमारी दयाजनक हालत यह है कि हम सब शिक्षक अक्षर-ज्ञानके जमानेमें पैदा हुअे हैं। अितने पर भी कुछकी बुद्धि अिस चीजकी कमीको देख पाअी है। यह तुरन्त मालूम न हुआ, अब भी नहीं होता कि सुधार किस तरह किया जाय। फिर जितनी समझ आअी है अुतना अमल करनेकी शक्ति नहीं है। रघुवंश रामायण या शेक्सपियर पढ़ानेवालोंमें बढ़अीगिरी या बुनाअीका काम सिखानेकी ताकत नहीं है। अुन्हें जितना रघुवंश पढ़ाना आता है, अुतना बुनाअीका काम आता ही नहीं

होगा। आता होगा तब भी अुसमें अुनकी अितनी दिलचस्पी नहीं होगी जितनी रघुवंशमें। अैसे अधूरे साधनोंसे पूर्ण अुद्योग और ज्ञान सीखे हुअे चरित्रवान विद्यार्थी तैयार करना कोअी छोटा काम नहीं है। अिसलिअे अिस संधिकालमें अध्यापकों शिक्षकों और प्रयत्नशील विद्यार्थियोंको धीरज और श्रद्धा रखनी ही पड़ेगी। श्रद्धासे समुद्र लांघा जा सकता है और बड़े बड़े किले तोड़े जा सकते हैं।

नवजीवन, ३–७–२७

७

दक्षिण अफ्रीकाका मेरा अनुभव*

१

बालशिक्षा

सन् १८९७की जनवरीमें मैं जब डरबन अुतरा, तब मेरे साथ तीन बच्चे थे, मेरा भतीजा दस सालकी अुमरका, मेरा बड़ा लड़का नौ बरसका और दूसरा लड़का पांच बरसका। अिन सबको कहां पढ़ाया जाय?

गोरोंके लिअे जो स्कूल थे, अुनमें मैं अपने लड़कोंको भेज सकता था। मगर वह अेक मेहरबानी और अपवादके तौर पर शुमार होता। दूसरे हिन्दुस्तानी बच्चे वहां नहीं पढ़ सकते थे। हिन्दुस्तानी बच्चोंको पढ़ानेके लिअे कुछ अीसाअी मिशनकी पाठशालाअें थीं। अुनमें भेजनेको मैं तैयार न था। वहां दी जानेवाली शिक्षा मुझे पसन्द नहीं थी। गुजरातीमें

** अिस अनुभवका सार गांधीजीने अपने लेखोंमें कअी बार लिख दिया है, जिसलिअे अुसे यहां दे दिया जाय तो पाठकोंको मदद मिलेगी। अिस दृष्टिसे अिस प्रकरणकी वस्तु अुनकी 'आत्मकथा'से यहां ली गअी है।*

जरिये तो वहां शिक्षा मिलती ही कहासे? अंग्रेजीमें ही मिलती या बहुत जोर मारें तो अशुद्ध तामिल या हिन्दीमें मिल जाती। अिस और दूसरी खामियोंको मैं बरदाश्त नहीं कर सकता था।

मैं खुद बच्चोंको पढानेकी कुछ कोशिश करता था, मगर वह अत्यंत अनियमित थी। अैसा गुजराती शिक्षक मैं ढूढ न सका, जो मुझे अनुकूल हो सके।

मुझे परेशानी हुअी। मैंने अैसे अंग्रेजी शिक्षकके लिअे विज्ञापन दिया, जो मेरी पसन्दकी शिक्षा दे सके। अैसा सोचा कि अिससे जो शिक्षक मिल जायगा, अुसके जरिये थोड़ी नियमित शिक्षा दी जाय और बाकीका काम जैसे तैसे मुझे खुदको चलाना चाहिये। अेक अंग्रेज स्त्रीको सात पौण्ड वेतन पर रखकर किसी तरह गाडीको आगे बढाया।

मेरा व्यवहार बच्चोके साथ सिर्फ गुजरातीमें ही होता था, अिससे अुन्हें कुछ न कुछ गुजराती सीखनेको मिल जाती थी। अुन्हे देश भेज देनेको मैं तैयार नहीं था। मुझे अुस वक्त भी अैसा लगता था कि छोटे बच्चोंको मा-बापसे अलग न रहना चाहिये। जो शिक्षा बच्चे सुव्यवस्थित घरमें सहज ही पाते हैं, वह छात्रालयोंमें नहीं पा सकते। अिसलिअे ज्यादातर वे मेरे साथ ही रहे। भानजे और बड़े लड़केको कुछ महीनोंके लिअे देशमें अलग अलग छात्रालयोंमें मैंने भेजा जरूर, मगर वहासे अुन्हें फौरन वापस बुला लिया। बादमें मेरा बड़ा लड़का अपनी खुशीसे ठीक अुम्रमें पहुचकर अहमदाबादके हाअीस्कूलमें पढ के लिअे दक्षिण अफ्रीका छोड़कर आ गया था। मेरा खयाल है कि अपने भानजेको मैं जो कुछ दे सका था अुससे अुसे सन्तोष था। वह थोड़े दिन बीमार रहकर भरी जवानीमें चल बसा। बाकीके तीन लड़के कभी किसी स्कूलमें गये ही नहीं। दक्षिण अफ्रीकाके सत्याग्रहके सिलसिलेमें मैंने जो स्कूल कायम किया था, अुसमें अुन्होने कुछ नियमित पढ़ाअी की थी।

मेरे ये प्रयोग अधूरे थे। बच्चोको मै जितना समय खुद देना चाहता था नहीं दे सका। अिससे और दूसरी अनिवार्य परिस्थितियोंके कारण मैं

जैसा चाहता था, वैसा अक्षर-ज्ञान अुन्हें नहीं दे सका। मेरे सभी लड़कोंको अिस मामलेमें मुझसे थोड़ी-बहुत शिकायत भी रही है। क्योंकि जब जब वे 'बी० अे०', 'अेम० अे०' और 'मेट्रिक्युलेट' के भी समागममें आते थे, तब वे स्कूलमें न पढ़े होनेकी कमी महसूस करते थे।

अितने पर भी मेरी खुदकी अैसी राय है कि अुन्होंने जो अनुभव-ज्ञान हासिल किया है, मा-बापका जो सहवास वे पा सके हैं, आजादीका जो पदार्थपाठ अुन्हें सीखनेको मिला है वह अुन्हें न मिलता, अगर मैं अुन्हें किसी न किसी तरह स्कूल भेजनेका आग्रह रखता। अुनकी तरफसे आज जो निश्चिन्तता मुझे है वह न होती। और अुन्होंने जो सादगी और सेवाभाव सीखा है, वह मुझसे अलग रहकर विलायतमें या दक्षिण अफ्रीकामें बनावटी शिक्षा पाकर वे नहीं सीख सके होते; बल्कि अुनकी बनावटी रहन-सहन मेरे देशके काममें शायद रुकावट बन जाती।

अिसलिअे हालांकि मैं जितना चाहता था अुतना अुन्हें लिखा-पढ़ा न सका, तो भी जब मैं अपने पिछले बरसोंका विचार करता हूं, तब मुझे यह खयाल नहीं होता कि मैंने अुनके प्रति अपने धर्मका भरसक पालन नहीं किया। न मुझे पछतावा होता है। अिससे अुलटे, मैं अपने बड़े लड़केके बारेमें जो दुःखदायी नतीजा देखता हूं, अुसके लिअे मुझे हमेशा अैसा लगता रहा है कि वह मेरे अधकचरे पूर्वकालकी प्रतिध्वनि है। अुस वक्त अुसकी अुम्र अैसी थी कि जिसे मैंने हर तरह अपना मूर्च्छाका, वैभवका समय माना है, अुसकी अुसे याद रहे। वह कैसे मान सकता है कि वह मेरा बेहोशीका जमाना था? वह क्यों न माने कि वह मेरा ज्ञानका समय था और अुसके बाद हुअे फेरबदल अनुचित और मोहजन्य थे? वह क्यों न माने कि अुस वक्त मैं दुनियाके राजमार्ग पर चल रहा था और अिसलिअे सुरक्षित था, और अुसके बाद किये हुअे मेरे फेरबदल मेरे सूक्ष्म अभिमान और अज्ञानकी निशानी थे? अगर मेरे लड़के बैरिस्टर वगैराकी पदवी पाते तो क्या बुराई थी? मुझे अुनके पर काटनेका क्या हक था? मैंने अुन्हें पदवियां लेने देकर खुदकी अिच्छासे स्वतन्त्र मार्ग पसन्द करनेकी हालतमें क्यों नहीं रखा? अैसी दलीलें मेरे कुछ मित्रोंने भी मुझसे की हैं।

मुझे अिन दलीलोंमें कोअी सार नहीं लगा। मैं बहुतेरे विद्यार्थियोंके समागममें आया हूं। दूसरे बच्चों पर मैंने दूसरे प्रयोग भी किये हैं या करानेमें मदद दी है। अुनके नतीजे भी मैंने देखे हैं। वे और मेरे लड़के अेक अुम्रके हैं। मैं नहीं मानता कि वे मेरे लड़कोंसे अिन्सानियतमें बढ़े-चढ़े हैं या अुनसे मेरे लड़कोंको कुछ सीखना है।

फिर भी, मेरे प्रयोगका आखिरी नतीजा तो आगे चलकर ही मालूम होगा। अिस विषयकी यहां चर्चा करनेका मतलब तो यही है कि मनुष्यजातिके विकासका अध्ययन करनेवाला घरकी शिक्षा और स्कूली शिक्षाके फर्कका और मा-बाप द्वारा अपनी जिन्दगीमें किये हुअे फेरबदलका अुनके बच्चों पर होनेवाले असरका थोड़ा बहुत अन्दाज लगा सके।

अिसके अलावा अिस प्रकरणका यह भी तात्पर्य है कि सत्यका पुजारी देख सके कि सच्चाअीकी पूजा अुसे कहां तक ले जाती है और स्वतंत्रता देवीका पुजारी देख सके कि यह देवी कितना भोग मांगती है। बच्चोंको अपने साथ रखकर भी मैंने स्वाभिमान छोड़ दिया होता और यह विचार पक्का न किया होता कि जो चीज दूसरे हिन्दुस्तानी बच्चे नहीं पा सकते अुसे अपने बच्चोंके लिअे नहीं चाहना चाहिये, तो जरूर मैं अपने बच्चोंको अक्षर-ज्ञान दिला सकता था। मगर तब अुन्होंने स्वतंत्रता और स्वाभिमानका जो पदार्थपाठ सीखा, वह वे नहीं सीख सकते थे। और जहां आजादी और अक्षर-ज्ञानके बीच ही चुनाव करना हो, वहां कौन कहेगा कि आजादी अक्षर-ज्ञानसे हजार गुनी ज्यादा अच्छी नहीं है?

जिन नौजवानोंको मैंने सन् १९२० में आजादीके घातक स्कूल-कॉलेज छोड़नेका न्यौता दिया था और जिनसे मैंने कहा था कि आजादीके खातिर अपढ़ रहकर सड़क पर पत्थर फोड़ना गुलामीमें रहकर अक्षर-ज्ञान पानेसे अच्छा है, वे शायद अब मेरे कहनेकी असलियत समझ सकेंगे।

नवजीवन, २-१-'२७

२

घरमें फेरबदल व बच्चोंकी शिक्षा

डरबनमें घर-गृहस्थी रची, तो अुसमें फेरबदल तो किये ही थे। खर्च बड़ा रखा था तो भी झुकाव सादगीकी तरफ ही था। मगर जोहानिस्वर्गमें 'सर्वोदय'के विचारोंने ज्यादा परिवर्तन कराये।

बैरिस्टरके घरमें जितनी सादगी रखी जा सकती थी, अुतनी तो शुरू की ही गअी। फिर भी कुछ सजावटके बिना काम चलाना मुश्किल था। सच्ची सादगी तो मनकी बढ़ी। हर काम अपने हाथसे करनेका शौक बढ़ा और अुसमें बच्चोंको भी कुशल बनाना शुरू किया।

बाजारकी रोटीके बजाय घर पर बिना खमीरकी क्यूनेकी सूचनाके अनुसार हाथसे रोटी बनाना शुरू किया। अिसमें मिलका आटा काम नहीं आता। अिसके सिवा, मैं मानता था कि मिलका पिसा हुआ आटा अिस्तेमाल करनेके बजाय हाथका पिसा आटा काममें लेनेमें सादगी, तन्दुरुस्ती और रुपयेकी रक्षा ज्यादा होती है। अिसलिअे हाथसे चलानेकी अेक चक्की सात पौण्ड खर्च करके खरीदी। अिसका पहिया भारी था। अुसे चलानेमें अेक आदमीको कष्ट होता, दो आसानीसे चला लेते थे। यह चक्की चलानेमें मैं, पोलाक और बच्चे खास तौर पर लगते थे। कभी कभी कस्तूरबाअी भी आ जाती थीं, हालांकि अुसका वह समय रसोअी बनानेमें लगा होता था। जब श्रीमती पोलाक आअीं, तब वे भी शरीक हो गअीं। यह कसरत बच्चोंके लिअे बहुत अच्छी साबित हुअी। अुनसे मैंने यह या और कोअी काम जबरन् कभी नहीं कराया। मगर वे यों ही खेल समझकर पहिया चलाने आते थे। थकने पर छोड़ देनेकी अुन्हें आजादी थी। मगर कौन जाने क्या कारण था कि अिन लड़कोंने और दूसरोंने, जिनकी पहचान हमें बादमें करनी है, मुझे तो हमेशा खूब ही काम दिया है। मेरी तकदीरमें ढीठ लड़के तो थे ही, मगर ज्यादातर सौंपा हुआ काम लगनसे करते थे। 'थक गये' कहनेवाले अुस जमानेके बच्चोंमें मुझे थोड़े ही याद हैं।

घर साफ रखनेके लिअे अेक नौकर था। वह घरका बनकर रहता था और अुसके काममें बच्चे पूरा हाथ बटाते थे। पाखाना अुठाकर ले जानेवाला तो म्युनिसिपैलिटीका नौकर आता ही था, मगर पाखानेकी कोठरी साफ करना, बैठक धोना, वगैरा काम नौकरोंको नहीं सौंपे जाते थे। अैसी आशा भी नहीं रखी जाती थी। ये काम हम खुद करते थे और अिसमें भी बच्चोंको तालीम मिलती थी। फल यह निकला कि शुरूसे ही मेरे अेक भी लड़केको पाखाने साफ करनेमें घिन नहीं रही और वे तन्दुरुस्तीके मामूली नियम भी सहजमें सीख गये। जोहानिस्बर्गमें बीमार तो शायद ही कोअी पड़ता था। लेकिन बीमारीका मौका आ जाता, तो सेवाके काममें बच्चे रहते ही थे। वे यह काम खुशीसे करते थे।

यह तो मैं नहीं कहता कि मैंने अुनकी पढ़ाओ-लिखाओकी परवाह नहीं की, लेकिन अुसे छोड़ देनेमें मुझे संकोच नहीं हुआ। और अिस कमीके लिअे मेरे लड़कोंको मुझसे शिकायत करनेका कारण भी मिला है। अुन्होंने कअी बार अपने असन्तोषको जाहिर भी किया है। मैं मानता हूँ कि अिसमें किसी हद तक मुझे अपना दोष स्वीकार करना चाहिये। अुन्हें अक्षर-ज्ञान देनेकी अिच्छा बहुत थी, कोशिश भी करता था, मगर अिस काममें हमेशा कुछ न कुछ रुकावट पड़ ही जाती थी। अुनके लिअे घर पर दूसरी शिक्षाका अिन्तजाम नहीं किया था, अिसलिअे अुन्हें अपने साथ पैदल दफ्तर ले जाता था। दफ्तर अढाअी मील दूर होगा। अिस तरह सुबह-शाम मिलकर कमसे कम पांच मीलकी कसरत अुन्हें और मुझे हो जाती थी। रास्ते चलते अुन्हें कुछ न कुछ सिखानेकी कोशिश करता, लेकिन वह तब जब मेरे साथ अुनके सिवा और कोअी चलनेवाला न होता। दफ्तरमें वे मुवक्किलों और मुणियोंके संसर्गमें आते, कुछ पढ़नेको दिया होता अुसे पढ़ते, अिधर अुधर घूमते और बाजारसे मामूली खरीदी करनी होती तो वह करते। सबसे बड़े हरिलालके सिवा सब बच्चोंने अिसी तरह परवरिश पाअी। हरिलाल देशमें रह गया था। अगर मैं अुन्हें पढ़ाने-लिखानेको नियमसे अेक घंटा भी बचा सका होता, तो मैं यह मानता कि अुन्हें आदर्श शिक्षा मिली है।

मैंने अैसा आग्रह नहीं रखा, अिसका अफसोस मुझे व अुन्हें दोनोंको र
है। सबसे बड़े लड़केने अिसका दुःख मुझसे और खुले तौर पर कअी
जाहिर किया है। दूसरोंने दिलकी अुदारतासे काम लेकर अिस
अनिवार्य समझकर दरगुजर किया है। अिस कमीके लिअे मुझे प
नहीं, या है तो अितना ही कि मैं आदर्श पिता न निकला।
मेरी राय है कि अुनकी पढ़ाअी-लिखाअीकी कुर्बानी मैंने भले ही अ
की हो, तो भी सद्भावसे मानी हुअी सेवाके लिअे की है। मैं यह
सकता हूं कि अुनके चरित्र बनानेके लिअे जो कुछ करना जरूरी था,
करनेमें मैंने कहीं भी कसर नहीं रखी है। और मैं मानता हूं कि
मां-बापका *यह लाजिमी फर्ज है। मेरा पक्का विश्वास है* कि
मेहनतके बावजूद मेरे अुन बच्चोंके चरित्रमें जो खामी पाअी जा
वह हम पति-पत्नीकी खामियोंकी परछाअीं है।

जैसे बच्चोंको मा-बापकी शकलकी विरासत मिलती है, वैसे
विरासतमें अुनके गुण-दोष भी जरूर मिलते हैं। बेशक, अुसमें आसपा
परिस्थितियोंके कारण कअी तरहकी कमीबेशी होती है, लेकिन
पूंजी तो बापदादों वगैराकी तरफसे ही मिली होती है। मैंने देखा है
विरासतमें मिले हुअे अैसे दोषोंसे कुछ बच्चे अपनेको बचा लेते हैं।
आत्माका असली स्वभाव है, अुसकी बलिहारी है।

पोलाकके और मेरे बीच अिन बच्चोंकी अंग्रेजी-शिक्षाके बारेमें कि
ही बार तेज बातचीत हुअी थी। मैंने शुरूसे ही मान रखा था कि
हिन्दुस्तानी मा-बाप अपने बच्चोंको अंग्रेजी बोलनेवाले बना देते हैं,
अुनका और देशका द्रोह करते हैं। मैंने यह भी माना है कि अि
बच्चे अपने देशकी धार्मिक और सामाजिक विरासतसे वंचित रहते
और अुस हद तक देशकी और दुनियाकी सेवा करनेके कम लायक ब
हैं। अिस विश्वासके कारण मैं हमेशा जान-बूझकर बालकोंके साथ गु
रातीमें ही बातचीत करता था। पोलाकको यह अच्छा न लगता थ
अुनकी यह दलील थी कि मैं बच्चोंका भविष्य बिगाड़ता हूं। वे
आग्रह और प्रेमके साथ समझाते थे कि बच्चे अंग्रेजी जैसी व्यापक भाषा
बचपनसे ही सीख लेंगे, तो दुनियामें चलनेवाली जिन्दगीकी होड़में वे

बड़ी दूरी सहज ही पार कर लेंगे। यह दलील मेरे गले न अुतरी। अिस वक्त मुझे याद नहीं है कि अंतमें मेरा जवाब अुनके गले अुतरा या अुन्होंने मेरी हठ देखकर चुप्पी साध ली। अिस सवादको लगभग बीस वर्ष हो गये, फिर भी मेरे जो विचार अुस वक्त थे, वे ही अनुभवसे ज्यादा पक्के हुअे हैं। और अगरचे मेरे बच्चे अक्षर-ज्ञानमें कच्चे रह गये हैं, तो भी मातृभाषाका मामूली ज्ञान अुन्हें अपने-आप मिल गया। अिससे अुन्हें और देशको फायदा ही हुआ है और आज वे विदेशी जैसे नहीं बन गये हैं। वे दुभाषिये तो सहजमें ही बन गये, क्योंकि अंग्रेजोंकी बड़ी मित्र-मंडलीके सपर्कमें आनेसे और जहां खास तौरसे अंग्रेजी ही बोली जाती है अैसे देशमें रहनेसे वे अंग्रेजी बोलने और मामूली लिखने भी लग गये।

नवजीवन, २३–१०–'२७

३

गुरुजी

'सत्याग्रहका अितिहास' में जो चीज नहीं आ सकी या थोड़ी आयी है, वही चीज अिन प्रकरणोंमें आ रही है। पाठक यह याद रखेंगे तो अिन प्रकरणोंका आपसका सम्बन्ध समझ सकेंगे।

टॉल्स्टॉय आश्रममें लड़कों और लड़कियोंके लिये कुछ न कुछ शिक्षाका प्रबन्ध जरूरी था। मेरे साथ हिन्दू, मुसलमान, पारसी और अीसाअी नौजवान थे और थोड़ीसी हिन्दू लड़कियां भी थीं। खास शिक्षक रखना संभव नहीं था और रखना मुझे अनावश्यक भी लगा। रखना असंभव अिसलिये था कि योग्य हिन्दुस्तानी शिक्षकोंकी कमी थी और मिलते तो भी भारी वेतनके बिना डरबनसे अिक्कीस मील दूर कौन आता? मेरे पास रुपयेकी बहुतायत न थी। बाहरसे शिक्षक लाना बेजरूरी समझा, क्योंकि मुझे मौजूदा शिक्षाकी पद्धति पसन्द नहीं थी। मैंने अनुभव करके नहीं देखा था कि सच्ची पद्धति क्या है। अितना समझता था कि आदर्श हालतमें सच्ची शिक्षा मां-बापके पास ही

मिल सकती है। आदर्श हालतमें बाहरकी मदद कमसे कम ... चाहिये। मैंने सोचा कि टॉल्स्टॉय आश्रम अेक कुटुम्ब है और मैं ... पिताकी जगह हूं, अिसलिअे मुझे अुन नौजवानोंको गढ़नेकी जि... भरसक अुठानी चाहिये।

अिस कल्पनामें दोष तो खूब थे ही। नवयुवक मेरे पास ... नहीं थे। सब अलग-अलग परिस्थितियोंमें पले थे। सब अेक धर्म... नहीं थे। अैसी हालतमें रहे हुअे लड़कों और लड़कियोंके साथ मैं ... बनकर भी कैसे न्याय कर सकता था?

लेकिन मैंने हृदयकी शिक्षाको यानी चरित्रके विकासको ... पहला दर्जा दिया है। और अिसकी जानकारी किसी भी अुम्रमें ... किसी भी तरहके वातावरणमें पले हुअे लड़के-लड़कियोंको थोड़ी ... कराअी जा सकती है, अैसा सोचकर अिन लड़कों और लड़कि... साथ मैं रात-दिन पिताकी तरह रहता था। चाल-चलनको मैंने ... शिक्षाकी बुनियाद समझा। बुनियाद पक्की होगी तो और सब ... बच्चे मौका मिलने पर दूसरोंकी मदद लेकर या अपने-आप सीख ...

फिर भी मैं यह समझता था कि अक्षर-ज्ञान थोड़ा बहुत देन... चाहिये ही। अिसलिअे वर्ग खोले और अुनमें मि० केलनबैककी ... प्रागजी देसाअीकी मदद ली।

मैं शारीरिक शिक्षाकी जरूरत समझता था। यह शिक्षा अुन्हें ... बार मिल जाती थी।

आश्रममें नौकर तो थे ही नहीं। पाखानेसे लगाकर रसोअी ... सब ... ही करने पड़ते थे। फलोंके पेड़ खूब थे। ... मि० केलनबैकका खेतीका शौक था। वे सरका... समय काम सीख आये थे। जिन लोगोंको रसो... ... था, अुन सब छोटे-बड़े आश्रमवासियोंको ... काम करना ही पड़ता था। अिसमें बालकोंका ... है खोदना, दरख्त काटना, बोझा अुठाकर ले जा... शरीर अच्छी तरह बन रहे थे। अिसमें ...

आनंद आता था और अिसलिअे किसी और कसरत या खेल-कूदकी अुन्हें जरूरत नहीं रहती थी। काम करनेमें कुछ या कभी-कभी सभी विद्यार्थी नखरे करते, सुस्ती करते थे। मैं अकसर अिस तरफसे आंख बंद कर लेता था। कभी-कभी अुनके साथ सख्तीसे भी काम लेता था। मैं यह भी देखता था कि जब सख्ती करता था, तो वे अुकता अुठते थे; फिर भी मुझे याद नहीं कि बालकोंने कभी सख्तीका विरोध किया हो। जब जब मैं सख्ती करता तभी अुन्हें समझाता और अुन्हींसे मनवा लेता कि कामके वक्त खेलना अच्छी आदत नहीं मानी जा सकती। वे अुस वक्त तो समझ जाते, फिर भूल जाते, अिस तरह गाड़ी चलती थी। मगर अुनके शरीर बनते जाते थे।

आश्रममें बीमारी शायद ही आती थी। कहना होगा कि अिसमें आबोहवा और अच्छे व नियमित भोजनका भी बड़ा हाथ था।

शारीरिक शिक्षाके संबंधमें ही शारीरिक धंधेकी शिक्षा भी गिना दूं। सबको कुछ न कुछ अुपयोगी धंधा सिखानेका अिरादा था। अिसलिअे केलनबैक साहब ट्रेपिस्ट मठमें चप्पल बनाना सीख आये। अुनसे मैंने सीख लिया और जो बच्चे यह धंधा सीखनेको तैयार हुअे अुन्हें सिखा दिया। केलनबैक साहबको बढ़अीके कामका कुछ अनुभव था, और आश्रममें बढ़अीका काम जाननेवाला अेक साथी था, अिसलिअे यह काम भी कुछ कुछ सिखाया जाता था। रसोअी बनाना तो लगभग सभी बच्चे सीख गये।

ये सब काम बालकोंके लिअे नये थे। अुन्हें अैसे काम सीखनेका खयाल सपनेमें भी नहीं होगा। दक्षिण अफ्रीकामें हिन्दुस्तानी बच्चे जो कुछ शिक्षा पाते थे, वह सिर्फ प्रारम्भिक अक्षर-ज्ञानकी ही होती थी। टॉल्स्टॉय आश्रममें पहलेसे ही यह रिवाज डाला था कि जो काम हम शिक्षक न करें, वह बच्चोंसे न कराया जाय; और अुनी कामको करनेवाला अेक शिक्षक हमेशा अुनके साथ रहता था, अिसलिअे बच्चे लगनसे सीखते थे।

चरित्र और अक्षर-ज्ञानके बारेमें अब अिसके बाद।

नवजीवन, २५-१२-'२७

४

अक्षर-ज्ञान

पिछले प्रकरणमें हम किसी हद तक देख चुके हैं कि शारीरिक शिक्षा और असके सिलसिलेमें कुछ न कुछ दस्तकारी सिखानेका काम टॉल्स्टॉय फार्ममें किस तरह शुरू हुआ। हालांकि वह काम जिस तरह तो मैं हरगिज नहीं कर सका जिससे मुझे संतोष हो, फिर भी अुसमें थोड़ी-बहुत सफलता मिली थी। लेकिन लिखना-पढ़ना सिखाना मुश्किल मालूम हुआ। मेरे पास असके लिअे काफी सामान नहीं था। जितना मैं चाहता था अुतना खुद मुझे वक्त नहीं मिलता था, न अुतनी जानकारी ही थी। सारे दिन शारीरिक काम करते करते मैं थक जाता था। और जिस वक्त जरा आराम लेनेकी अिच्छा होती थी, अुसी वक्त वर्गको पढ़ाना होता था। अिसलिअे मैं ताजा होनेके बजाय जबरन् जाग्रत रह सकता था। सुबहका वक्त खेती और घरके काममें चला जाता था। अिसलिअे दुपहरके खानेके बाद फौरन स्कूल शुरू हो जाता था। अिसके सिवा और कोअी भी वक्त अनुकूल नहीं था।

पढ़ाअी-लिखाअीके लिअे ज्यादासे ज्यादा तीन घण्टे रखे थे। फिर वर्गमें हिन्दी, तामिल, गुजराती और अुर्दू पढ़ाना पड़ता था। शिक्षा हरअेक बच्चेको अुसकी मातृभाषाके जरिये ही देनेका आग्रह था। अंग्रेजी भी सबको सिखाअी ही जाती थी। अिसके अलावा गुजराती, हिन्दी और संस्कृतका सबको कुछ परिचय कराया जाता था; अितिहास, भूगोल और अंकगणित सबको सिखाया जाता था। अितना क्रम था। तामिल और [illegible] मेरे जिम्मे था।

[illegible] ज्ञान जहाजोंमें और जेलमें पाया हुआ था। वह 'तामिल स्वयंशिक्षक' नामकी बढ़िया पुस्तकसे था। अुर्दू लिपिकी जानकारी जहाजमें हासिल की [illegible] फारसी अरबी शब्दोंका ज्ञान जितना मुसलमान [illegible] मिल सका था अुतना ही था। संस्कृत अुतनी ही हाअीस्कूलमें सीखी थी। गुजराती भी स्कूली ही थी।

अिस पूंजीसे मुझे काम लेना था। और अुसमें मददगार थे मुझसे भी कम जाननेवाले। लेकिन देशकी भाषाओंसे मेरे प्रेम, अपनी शिक्षण-शक्ति पर मेरे विश्वास, विद्यार्थियोंके अज्ञान और अुससे भी बढ़कर अुनकी अुदारताने मेरे काममें काफी मदद दी।

तामिल विद्यार्थी दक्षिण अफ्रीकामें पैदा हुअे थे, अिसलिअे तामिल बहुत कम जानते थे। अुन्हें लिपि तो बिलकुल नहीं आती थी। अिसलिअे मुझे अुन्हें लिपि सिखाना और व्याकरणके बुनियादी तत्त्व बताना था। यह आसान था। विद्यार्थी जानते थे कि तामिल बातचीतमें वे मुझे आसानीसे हरा सकते थे और जब कोअी तामिल जाननेवाला मुझसे मिलने आता तो वे मेरे दुभाषिये बनते थे। लेकिन मेरी गाड़ी अिस लिअे चलती थी कि मैंने विद्यार्थियोंसे अपना अज्ञान छिपानेकी कभी कोशिश ही न की। सभी मामलोंमें मैं जैसा था वैसा ही वे मुझे जानने लगे थे। अिसलिअे अक्षर-ज्ञानकी गहरी कमी होने पर भी मैंने अुनका प्रेम और आदर कभी नहीं खोया।

मुसलमान बच्चोंको अुर्दू पढ़ाना अिससे आसान था। वे लिपि जानते थे। मेरा काम अुनमें पढ़नेका शौक बढ़ाना और अुनके अक्षर सुधारना ही था।

मुख्यतः ये सब बच्चे अपढ़ और स्कूलमें न पढ़े हुअे थे। पढ़ाते-पढ़ाते मैंने देखा कि मुझे अुन्हें बहुत ही कम सिखाना है। अुनसे सुस्ती छुड़वाने, अुन्हें अपने-आप पढ़नेवाले बनाने और अुनकी पढ़ाअी पर निगाह रखनेका काम ही ज्यादा था। मैं अिसीसे संतोष कर लेता था और अिसीलिअे अलग-अलग अुमरके अलग-अलग विषयोंवाले विद्यार्थियोंको अेक ही कमरेमें बिठाकर काम ले सकता था।

पाठ्यपुस्तकोंका शोर समय-समय पर सुना जाता है, पर अुनकी मुझे कभी गरज नहीं पड़ी। मुझे याद नहीं है कि जो पुस्तकें थीं, वे भी बहुत काममें ली गअी हों। हर बालकको ज्यादा पुस्तकें दिलानेकी मुझे जरूरत नहीं मालूम हुअी। मुझे अैसा लगा है कि विद्यार्थियोंकी पाठ्य-पुस्तक शिक्षक ही होना चाहिये। मेरे शिक्षकोंने पुस्तकोंसे जो कुछ पढ़ाया, वह मुझे थोड़ा ही याद है। जिन्होंने जबानी सिखाया अुनका बताया

हुआ आज भी याद रह गया है। बच्चे जो कुछ आंखसे ग्रहण करते है, अुसके बजाय कानसे सुना हुआ कम मेहनतसे और बहुत ज्यादा ग्रहण कर सकते हैं। मुझे याद नहीं कि मैंने बालकोंसे अेक भी पुस्तक पूरी पढ़वाओी हो।

लेकिन मैंने बहुतसी पुस्तकोंमें से जो कुछ हजम किया था और अपनी भाषामें अुनसे कहा था, मैं मानता हू कि वह अुन्हें आज भी याद होगा। पढ़वाया हुआ याद रखनेमें तकलीफ होती थी। मैं अुन्हें जो कुछ सुनाता था, अुसे वे मुझे अुसी वक्त फिर सुना देते थे। पढ़नेमें वे अूब जाते थे। सुननेमें जब मैं अपनी थकावटके मारे या और किसी कारणसे सुस्त और बेमन नहीं होता था तब वे रस लेकर सुनते थे। अुनके दिलमें जो सवाल अुठते थे, अुन्हें हल करनेमें मुझे अुनकी ग्रहण-शक्तिका अंदाज लग जाता था।

नवजीवन, १-१-'२८

५

आत्मिक शिक्षा

विद्यार्थियोंके शरीर और मनको शिक्षा देनेके बनिस्बत आत्माको शिक्षा देनेमें मुझे बहुत ज्यादा मेहनत करनी पड़ी। आत्माका विकास करनेमें धर्मकी पुस्तकोंका मैंने बहुत कम सहारा लिया। मैं यह मानता था कि विद्यार्थियोंको अपने-अपने धर्मके मूलतत्त्व यानी बुनियादी अुसूल जानने चाहिये, अुन्हें अपने-अपने धर्मकी पुस्तकोंका सामान्य ज्ञान होना चाहिये। अिसलिये मैंने वह ज्ञान हासिल करनेकी अुनके लिये भरसक सहूलियत कर दी थी। लेकिन अिसे मैं बुद्धिकी शिक्षाका ही हिस्सा समझता हूं। आत्माकी शिक्षा अेक अलग ही विभाग है, यह मैंने टॉल्स्टॉय आश्रमके बच्चोंको पढ़ाना शुरू किया अुससे पहले ही देख लिया था। आत्माका विकास करनेका मतलब है चरित्रका निर्माण करना, अीश्वरका ज्ञान प्राप्त करना, आत्मिक ज्ञान पाना। यह ज्ञान पानेमें बच्चोंको बहुत ही मदद चाहिये; और अुसके बिना दूसरा ज्ञान बेकार है, हानिकारक भी हो सकता है, अैसा मैं मानता था। मैंने यह वहम सुना है कि आत्मिक ज्ञान चौथे

आश्रममें मिलता है। लेकिन यह तजरबा सब जगह पाया जाता है कि जो चौथे आश्रम तक अिस अमूल्य चीजको मुलतवी रखते हैं, वे आत्मिक ज्ञान नहीं पाते, बल्कि बुढापा और दूसरा लेकिन दयाजनक बचपन पाकर पृथ्वी पर बोझा बनकर जीते हैं। यह विचार अिस भाषामें मैं सन् १९११-१२ में शायद न रखता, लेकिन मुझे पूरी तरह याद है कि अिस तरहके विचार मैं अुस वक्त भी रखता था।

आत्माकी शिक्षा कैसे दी जाय? बच्चोंसे भजन गवाता, नीतिकी पुस्तकें पढकर सुनाता, लेकिन अिससे सन्तोष नहीं होता था। ज्यों-ज्यों अुनके संपर्कमें आता गया, त्यों-त्यों मैंने देखा कि पुस्तकोंके जरिये तो यह ज्ञान हरगिज नहीं दिया जा सकता। शरीरकी शिक्षा शरीरकी कसरतसे दी जा सकती है, बुद्धिकी शिक्षा बुद्धिकी कसरतसे और अिसी तरह आत्माकी शिक्षा आत्माकी कसरतसे दी जा सकती है। आत्माकी कसरत तो बच्चे शिक्षकके बरतावसे ही सीख सकते हैं। अिसलिअे विद्यार्थी मौजूद हो या न हों, शिक्षकको सावधान रहना ही चाहिये। लंकामें बैठा हुआ शिक्षक अपने बरतावसे अपने शिष्योंकी आत्माको हिला सकता है। मैं झूठ बोलूं और अपने शिष्योंको सच्चा बनानेकी कोशिश करूं तो वह बेकार होगी। डरपोक शिक्षक शिष्योंको बहादुरी नहीं सिखा सकता। व्यभिचारी शिक्षक शिष्योंको संयम कैसे सिखायेगा? मैंने देखा कि मुझे अपने पास रहनेवाले युवक-युवतियोंके सामने मिसाल बनकर रहना पड़ेगा। अिस तरह मेरे शिष्य मेरे शिक्षक बन गये। मैंने समझ लिया कि अपने लिअे नहीं तो अुनके लिअे मुझे अच्छा बनना और रहना चाहिये; और यह कहा जा सकता है कि टॉल्स्टॉय आश्रमका मेरा ज्यादातर संयम अिन युवकों और युवतियोंके कारण था।

आश्रममें अेक युवक बड़ी शरारत करता था। झूठ बोलता, किसीको गिनता नहीं और दूसरोंके साथ लड़ता था। अेक दिन अुसने बहुत ही अूधम मचाया। मैं घबराया। विद्यार्थियोंको मैं कभी सजा नहीं देता था। अिस बार मुझे बड़ा गुस्सा आया। मैं अुसके पास गया। अुसे समझाया पर वह किसी तरह नहीं समझा। अुसने मुझे धोखा देनेकी भी कोशिश की। मैंने अपने पास पड़ी हुअी रूलपटरी अुठाअी और अुसकी बांह पर मार दी। मारते

वक्त मैं काम रहा था, यह अुसने देख लिया होगा। अैसा अनुभव किसी विद्यार्थीको मेरी तरफसे कभी नहीं हुआ था। विद्यार्थी रो पड़ा। अुसने मुझसे माफी मागी। वह अिसलिअे नहीं रोया कि अुसे लकड़ी लगनेका दुख हुआ। वह मेरा सामना करना चाहता, तो मुझसे निपट लेनेकी शक्ति रखता था। अुसकी अुमर १७ सालकी होगी। अुसके शरीरकी गठन मजबूत थी। मगर मेरी रूलटरोमें अुसने मेरी पीड़ा देख ली। अिस घटनाके बाद अुसने कभी मेरा सामना नहीं किया। लेकिन मुझे वह पटरी मारनेका पछतावा आज तक है। मुझे डर है कि मैंने अुसे पीट कर अपनी आत्माके बजाय अपनी हैवानियतके दर्शन अुसे कराये थे। बच्चोंको मार-मार कर पढ़ानेके मैं हमेशा खिलाफ रहा हूं। अेक ही मौका मुझे याद है, जब मैंने अपने लड़कोंमें से अेकको मारा था। यह सजा देकर मैंने ठीक किया या नहीं, अिसका फैसला मैं आज तक नहीं कर सका हूं। अिस सजाके ठीक होनेमें मुझे शंका है, क्योंकि अुसमें क्रोध भरा हुआ था और दण्ड देनेका भाव था। अगर अुसमें सिर्फ अपना दुख ही जाहिर करना होता, तो मैं अुस सजाको ठीक समझता। लेकिन अुसके भीतर मिलीजुली भावना थी। अिस प्रसंगके बाद मैं विद्यार्थियोंको सुधारनेका ज्यादा अच्छा ढंग सीख गया। मैं नहीं कह सकता कि अिस कलाको मैंने अुस मौके पर काममें लिया होता तो कैसा परिणाम आता। अिस प्रसंगको वह युवक तो फौरन भूल गया। मैं नहीं कह सकता कि अुसमें बहुत सुधार हुआ होगा, लेकिन अुस प्रसंगने विद्यार्थीके प्रति शिक्षकके धर्मके विषयमें मुझे ज्यादा सोचनेकी प्रेरणा दी। अुसके बाद युवकोंके अैसे ही कसूर हुअे, पर मैंने दण्डनीति हरगिज अिस्तेमाल नहीं की। अिस तरह आत्मिक ज्ञान देनेकी कोशिशमें मैं अपनी आत्माके गुणोंको ज्यादा समझने लगा।

नवजीवन, ८–१–'२८

६

प्रायश्चित्तके रूपमें अुपवास

लड़कों और लड़कियोंको अीमानदारीसे पालने और शिक्षा देनेमें कितनी और कैसी कठिनाअी होती है, अिसका अनुभव दिन-दिन बढ़ता

गया। शिक्षक और पालकके तौर पर मुझे अुनके दिलमें घुसना था, अुनके दु:ख-सुखमें भाग लेना था, अुनके जीवनकी गुत्थियां सुलझानी थीं, अुनकी अुछलती हुअी जवानीकी लहरोंको सीधे रास्ते ले जाना था।

जेलसे कुछ लोगोंके छूटने पर टॉल्स्टॉय आश्रममें थोड़े ही आदमी रह गये। ये ज्यादातर फिनिक्सके रहनेवाले थे। अिसलिअे मैं आश्रमको फिनिक्स ले गया। फिनिक्समें मेरी कड़ी परीक्षा हुअी। टॉल्स्टॉय आश्रमके बचे हुअे लोगोंको फिनिक्समें रखकर मैं जोहानिस्बर्ग गया। जोहानिस्बर्गमें थोड़े दिन रहा कि वहीं मेरे पास दो आदमियोंके भयंकर पतनके समाचार आये। सत्याग्रहकी बड़ी लड़ाअीमें कहीं भी असफलता जैसी चीज दिखाअी देती, तो अुससे मुझे चोट नहीं पहुंचती। लेकिन जिस घटनाने मुझ पर वज्र-सा प्रहार किया, मेरे दिलमें घाव हो गया। मैंने अुसी दिन फिनिक्सकी गाड़ी पकड़ी। मि० केलनबैकने साथ चलनेका हठ किया। वे मेरी दयाजनक हालत जान गये थे। अुन्होंने मुझे अकेले जाने देनेसे साफ अिनकार कर दिया। पतनकी खबर मुझे अुन्हींसे मिली थी।

रास्तेमें मैंने अपना धर्म जान लिया या जान लिया अैसा मैंने मान लिया। मुझे अैसा लगा कि पालक या शिक्षककी देखरेखमें रहनेवालोंकी गिरावटके लिअे वह भी थोड़ा-बहुत जिम्मेदार है। अिस घटनामें मुझे अपनी जिम्मेदारी साफ मालूम हुअी। मेरी पत्नीने मुझे चेतावनी दी ही थी। लेकिन स्वभावसे विश्वास करनेवाला होनेके कारण मैंने अुसकी चेतावनी पर ध्यान नहीं दिया। फिर मुझे अैसा लगा कि अगर मैं अिस पतनके लिअे प्रायश्चित्त करूंगा, तो ही गिरनेवाले लोग मेरा दु:ख समझ सकेंगे और अिससे अुन्हें अपने दोषका कुछ भान होगा और अन्दाज लगेगा। अिसलिअे मैंने ७ दिनका अुपवास करने और ४॥ महीने अेक वक्त खानेका व्रत लिया। मि० केलनबैकने मुझे रोकनेकी कोशिश की। अुनकी न चली। आखिरमें प्रायश्चित्तका ठीक होना अुन्होंने मान लिया और अुन्होंने भी मेरे साथ ही वह व्रत रखनेका आग्रह किया। मैं अुनके निर्मल प्रेमको रोक नहीं सका। यह निश्चय करते ही मेरा मन तुरन्त हलका हो गया, शान्त हो गया; दोषी परका क्रोध जाता रहा और दया ही रह गअी।

अिस तरह गाड़ीमें ही मन हलका करके मैं फिनिक्स पहुंचा। ज... करके जो ज्यादा जानना था जान लिया। अगरचे मेरे अुपवाससे सब... कष्ट तो हुआ, पर अुसने वातावरण शुद्ध हो गया। पाप करनेकी भयंकर... सबको मालूम हो गअी और विद्यार्थियों तथा विद्यार्थिनियोंके और मेरे बीच... सम्बन्ध ज्यादा मजबूत और सरल बन गया।

अिस घटनाके थोड़े ही समय बाद मेरे लिअे चौदह अुपवास करने... मौका आ गया। मेरा विश्वास है कि अुसका नतीजा जो सोचा था अुस... भी ज्यादा अच्छा निकला।

अिस घटनासे मेरा यह साबित करनेका आशय नहीं है कि शिष्यों... हरअेक दोषके लिअे शिक्षकोंको अुपवास वगैरा करने ही चाहिये। मगर... मानता हूं कि कुछ परिस्थितियोंमें अैसे प्रायश्चित्तके तौर पर अुपवास... गुंजाअिश जरूर है। पर अुसके लिअे विवेक और अधिकार चाहिये। जहां... शिक्षक और शिष्यके बीच शुद्ध प्रेमकी गांठ नहीं होती, जहां शिक्षक... अपने शिष्यके दोषसे सचमुच चोट नहीं पहुंचती, जहां शिष्यको शिक्षकके... लिअे आदर नहीं होता, वहां अुपवास फिजूल होता है और शायद नुकसान... भी पहुंचाता है। *अैसे अुपवास और अेक वक्त खानेके बारेमें शंका हो... सकती है, लेकिन अिस बारेमें मुझे जरा भी शंका नहीं कि शिक्षक शिष्यकी... बुराअियोंके लिअे थोड़ा-बहुत जिम्मेदार होता ही है।*

नवजीवन, २२-१-'२८

८

स्वावलम्बन यानी स्वाभिमान

अैसी सूचना बहुत बार अिस पत्रमें दी गयी है कि शिक्षाको अनिवार्य करनेके लिअे या शिक्षा पानेकी अिच्छा रखनेवाले हरअेक लड़के और लड़कीको शिक्षा मिल सकनेके लिअे हमारे स्कूल और कालेजोंको पूरी तरह तो ज्यादासे ज्यादा स्वावलम्बी बनाना चाहिये। स्वावलम्बीका मतलब यह नहीं कि दान या सरकारी मदद या विद्यार्थियोंके जानकारोंकी रकमसे काम चल जाय, बल्कि यह मतलब है कि विद्यार्थियोंकी अपनी मेहनतकी कमाअीसे काम चले। विद्यार्थियोंको स्वावलम्बन और साथ अुद्योगकी शिक्षा देनेकी जरूरत दिन-दिन मानी जा रही है। अिसके अलावा अिस देशमें शिक्षाको स्वावलम्बी बनानेके लिअे अुद्योगकी शिक्षा देनेकी और भी ज्यादा जरूरत है। यह तभी हो सकता है जब हमारे विद्यार्थी शारीरिक मेहनत करनेका गौरव समझने लगें और हाथ मेहनतका काम न जाननेको शर्मकी बात समझनेका रिवाज पड़ जाय। दुनियामें सबसे मालदार समझे जानेवाले अमरीका देशमें, जहां शिक्षाको स्वावलम्बी बनानेकी शायद सबसे कम जरूरत है, यह मामूली बात है कि विद्यार्थी मेहनत करके अपना थोड़ा या पूरा खर्च निकाल लेते हैं। अमरीकाके हिन्दुस्तान अेसोसियेशनके अखबार 'हिन्दुस्तानी विद्यार्थी' में अिस तरह लिखा है:

> "अमरीकाके विद्यार्थियोंमें लगभग ५० फी सदी विद्यार्थी गर्मीकी छुट्टियोंमें और चालू सत्रके अेक खास भागमें मेहनत करके अपना खर्च निकाल लेते हैं। केलिफोर्निया यूनिवर्सिटीके समाचार-पत्रसे मालूम होता है कि वहां 'स्वावलम्बी विद्यार्थियोंको अिज्जतकी नजरसे देखा जाता है।' चालू सत्रमें मामूली अुद्योगमें अेक विद्यार्थी हफ्तेमें ३६ से ३८ घण्टे विद्यालयका काम करनेके अलावा आसानीके साथ १२ से २५ घण्टे तक बाहरका काम कर सकता है।
> नीचेके किसी भी विषयका प्रयोग-ज्ञान अैसे होना चाहिये : बढ़ओगिरी, पैमायश-काम, नक्शे खींचना, अीटें ढालना, प्लास्टर लगाना, मोटर चलाना, फोटो खींचना तथा मशीन-शॉपका, रंगनेका, सेनीका या कोअी

बाजा बजानेका काम। चालू सत्रमें भोजनके समय परोसने वगैरा दो घण्टेका काम मिल जाता है और जिससे विद्यार्थीका खाने खर्च निकल आता है। आवा स्वावलम्बी विद्यार्थी गर्मीकी छुट्टियों डेढ़ सौ से दो सौ डालर बचा सकता है। कंसास, न्यूयार्क युनिवर्सिटी पिट्सबर्ग, युनियन युनिवर्सिटी और अॅंटीओक कॉलेजमें औद्योगि अिंजीनियरीके 'सहकारी' अभ्यासक्रम हैं, जिनके मुताबिक विद्या किसी कारखानेमें काम करके अेक सालकी फीसके बराबर कम सकता है और अुसकी मेहनत अुसके व्यावहारिक ज्ञानकी योग्यता भी गिन ली जाती है।

"मिकिगन युनिवर्सिटीमें सिविल और अेलेक्ट्रिकल अिंजीनियरी अैसे ही 'सहकारी' अभ्यासक्रम शुरू करनेका विचार हो रहा है अैसा सहयोगी अभ्यासक्रम लेनेसे अिंजीनियरी विषयमें ग्रेजुअे होनेके लिअे अेक ही साल ज्यादा चाहिये।"

अगर अमरीका जैसे देशमें स्कूल और कॉलेजकी पढ़ाअी अिस तरहकी रखी जाती हो कि जिससे विद्यार्थियोंको शिक्षाका खर्च निकाल लेना आसान हो जाय, तो फिर हमारे देशमें तो अुसकी जरूरत कितनी ज्यादा होगी? गरीब विद्यार्थियोंको छात्रवृत्ति देकर अुन्हें निराधार कर डालनेके बजाय क्या अुन्हें काम देना बेहतर नहीं है? अपने गुजारे या शिक्षाके खर्चके लिअे हाथ-पैरोंसे मेहनत करके कमानेमें हलकापन है, अैसा गलत खयाल हमारे विद्यार्थियोंके दिमागमें भरकर हम अुनका कितना ज्यादा नुकसान कर रहे हैं? यह नुकसान नैतिक और आर्थिक दोनों तरहका है, बल्कि आर्थिकसे नैतिक ज्यादा है। टेकवाले विद्यार्थीके मन पर छात्रवृत्तिका बोझ जन्मभर रहता है और रहना चाहिये। पिछले जीवनमें यह मंजूर करना किसे अच्छा लगता है कि अपनी शिक्षाके लिअे अुसे धर्मादाका सहारा लेना पड़ा था? अिससे अुलटे, जिसने बढ़अीगिरी या अैसा ही कोअी काम करके अपने मन, शरीर और आत्माकी शिक्षा पानेका सौभाग्य प्राप्त किया होगा, अुसे क्या अुन दिनोंकी याद करते वक्त अभिमान हुअे बिना रह सकता है?

नवजीवन, १२-८-'२८

शिक्षाकी समस्या

पांचवां भाग

वर्धा-योजना

१

शिक्षाके प्रश्नका हल

१

शिक्षाका सवाल दुर्भाग्यवश शराबके साथ जोड दिया गया है। शराबकी आय बन्द हो जाय, तो शिक्षाका क्या होगा? नि सदेह नये कर लगानेके और भी तरीके हो सकते हैं। अध्यापक शाह और खभातान यह दिखाया भी है कि असि गरीब देशमें भी कुछ नये-नये कर लगानेकी गुजाअिश है। संपत्ति पर अभी काफी कर नही लगा है। ससारके अन्य देशामे जो कुछ भी हो, यहा तो व्यक्तियोके पास अत्यधिक सपत्तिका होना भारतकी मानवताके प्रति अेक अपराध ही समझा जाना चाहिये। अिसलिअे सम्पत्तिकी अेक निश्चित मर्यादाके बाद जितना भी कर अुस पर लगाया जाय, थाडा ही होगा। जहा तक मुझे पता है, अिग्लैंडमें आदमीकी आय अेक निश्चित हद तक पहुंच जानेके बाद अुससे आयका ७० % तक कर लिया जाता है। कोअी वजह नहीं कि हिन्दुस्तानमें हम अिससे भी काफी अधिक कर क्या न लगावें? किसी मनुष्यके मरनेके बाद दूसरेको जो विरासत मिले, अुस पर कर क्यों न लगाया जाय? करोडपतियोके लडकोको बालिग होने पर भी जब विरासतमें पैतृक सम्पत्ति मिलती है, तो अिस विरासतके कारण अुन्हें नुकसान अुठाना पडता है। अिस तरह राष्ट्रकी तो दूनी हानि होती है। जो विरासत असलमें राष्ट्रकी होनी चाहिये, वह अुसे नही मिलती, और दूसरे, राष्ट्रका अिस तरह भी नुकसान होता है कि सम्पत्तिके बोझके कारण अिन वारिसोंके सम्पूर्ण गुणोका विकास भी नही हो पाता। अैसा अुत्तराधिकार-कर डालनेकी प्रान्तीय सरकारोको सत्ता नही है, अिससे मेरी दलीलमें कोअी बाधा नही पहुचती।

परन्तु समस्त राष्ट्रकी दृष्टिसे हम शिक्षामें अितने पिछडे हुअे हैं कि अगर शिक्षा-प्रचारके लिअे हम केवल धन पर ही निर्भर रहेंगे, तो अेक निश्चित समयके अन्दर राष्ट्रके प्रति अपने फर्जको अदा करनेकी आशा हम कभी कर ही नहीं सकते। अिसलिअे मैंने यह सुझानेका साहस किया है कि शिक्षाको हमें स्वावलंबी बना देना चाहिये, फिर चाहे लोग भले हो

मुझे यह कहें कि मेरे अन्दर किसी रचनात्मक कार्यकी योग्यता नहीं है। शिक्षासे मेरा मतलब है बच्चे या मनुष्यकी तमाम शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियोंका सर्वतोमुखी विकास। अक्षर-ज्ञान न तो शिक्षाका आरम्भ है और न अन्तिम लक्ष्य। वह तो अुन अनेक अुपायोंमें से अेक है, जिनके द्वारा स्त्री-पुरुषोंको शिक्षित किया जा सकता है। फिर सिर्फ अक्षर-ज्ञानको शिक्षा कहना गलत है। अिसलिअे बच्चेकी शिक्षाका प्रारंभ मैं किसी दस्तकारीकी तालीमसे ही करूंगा और अुसी क्षणसे अुसे कुछ निर्माण करना सिखा दूंगा। अिस प्रकार हरअेक पाठशाला स्वावलम्बी हो सकती है। शर्त सिर्फ यह हो कि अिन पाठशालाओंकी बनी चीजें राज्य खरीद लिया करे।

मेरा मत यह है कि अिस तरहकी शिक्षा-प्रणाली द्वारा अूंचीसे अूंची मानसिक और आध्यात्मिक अुन्नति प्राप्त की जा सकती है। सिर्फ अेक बातकी जरूरत है। वह यह कि आजकी तरह प्रत्येक दस्तकारीकी केवल यांत्रिक क्रियायें सिखा कर ही हम न रह जायं, बल्कि बच्चेको प्रत्येक क्रियाका कारण और पूर्ण विधि भी सिखा दिया करें। यह मैं आत्म-विश्वासके साथ कह रहा हूं, क्योंकि अुसके मूलमें मेरा अपना अनुभव है। जहां-जहां भी कार्यकर्ताओंको कताओी सिखाओी जाती है, न्यूनाधिक पूर्णताके साथ अिसी पद्धतिका अवलम्बन किया जाता है। मैंने खुद अिसी पद्धतिसे चप्पल बनानेकी तथा कताओीकी शिक्षा दी है और अुसके परिणाम अच्छे आये हैं। अिस पद्धतिमें अितिहास और भूगोलका बहिष्कार भी नहीं है। मैंने तो देखा है कि अिस तरहकी साधारण और व्यावहारिक जानकारीकी बातें जबानी कहनेसे ही अधिक लाभ होता है। लिखने और पढ़नेसे बच्चा जितना नहीं सीखता, अुससे दस गुनी अधिक जानकारी अुसे अिस पद्धति द्वारा दी जा सकती है। वर्णमाला (के चिह्नों) का ज्ञान बच्चेको बादमें भी दिया जा सकता है, जब बच्चा गेहूं और घोकरको पहचानने लग जाय और जब अुसकी बुद्धि और रुचि कुछ विकसित हो जाय। यह प्रस्ताव क्रांतिकारी जरूर है, पर अिसमें परिश्रमकी खूब बचत होती है और विद्यार्थी अेक सालमें अितना सीख जाता है कि जिसके लिअे साधारणतया अुसे बहुत अधिक समय लग सकता है। फिर अिस पद्धतिमें सब तरहसे किफायत ही किफायत है।

हो, विद्यार्थीको गणितका ज्ञान तो दस्तकारी सीखते हुओ अपने-आप ही होता रहता है।

प्राथमिक शिक्षा मेरी नजरमें सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण चीज है। अुसकी मर्यादा मैंने यही कायम की है कि जितनी पढाओी मैट्रिक तक —अंग्रेजीको छोडकर— होती है, अुतनी ही असमें हो जानी चाहिये। फर्ज कीजिये कि कॉलिजोंके पढे हुओ और पढनेवाले सब लोग यकायक अपनी सारी पढ़ाओी भूल जायं, तो अिन कुछ लाख लोगोंके स्मृतिनाशसे जितनी हानि देशको हो सकती है, वह अुस हानिके मुकाबलेमें कुछ भी नहीं है, जो देशके तीस-पैंतीस करोड लोगोंको अज्ञानके सागर जैसे महा अन्धकारके कारण अब तक हुआी है और हो रही है। करोडों ग्रामवासियोंके अज्ञानकी थाह हम केवल निरक्षरतासे होनेवाली हानिसे कभी नहीं पा सकते।

कॉलिजकी शिक्षामें भी मैं जबरदस्त क्रान्ति कर देना चाहूंगा। अुसे मैं राष्ट्रकी जरूरतोंसे जोड़ दूंगा। यन्त्रों तथा वैसी ही अन्य कलाकौशल-सम्बन्धी निपुणताकी कुछ अुपाधियां होंगी। वे भिन्न-भिन्न अुद्योगोंसे सम्बद्ध रहेंगी और यही अुद्योग अपने लिअे आवश्यक विशारदोंको तैयार करनेका खर्च बरदाश्त करेंगे। मसलन्, टाटा कंपनीसे यह अपेक्षा की जायगी कि वह यन्त्रकला-विशारदोंके लिअे अेक महाविद्यालय राज्यकी देखभालमें चलावे। अिसी प्रकार मिलोंके लिअे आवश्यक विशारद पैदा करनेके लिअे अेक कॉलेज मिल-मालिकोंका संघ चलावे। यही अन्य अुद्योग भी करें। व्यापारियोंका भी अपना कॉलेज रहे। अब रह जाते हैं साधारण ज्ञान (आर्ट्स), आयुर्वेद और खेती। साधारण ज्ञानके कितने ही खानगी कॉलेज आज भी स्वाश्रयी हैं ही। अिसलिअे राज्यको अपना कोआी स्वतंत्र कॉलेज खोलनेकी जरूरत नहीं रहेगी। आयुर्वेद-सम्बन्धी महाविद्यालय प्रमाणित औषधालयोंके साथ जोड़ दिये जायेंगे, और चूंकि धनिक लोगोंको ये प्रिय होते ही हैं, अिसलिअे अुनसे यह जरूर अपेक्षा की जा सकती है कि वे चन्दा करके अिन विद्यालयोंको चलावें। रहे खेतीके विद्यालय। सो अगर अब अिन्हें अपने नामकी लाज रखनी हो, तो अिन्हें भी स्वावलम्बी बनना ही पड़ेगा। मुझे अिन विद्यालयोंमें शिक्षा-प्राप्त कुछ अुपाधिधारियोंका दुःखद अनुभव हुआ है। अुनका ज्ञान छिछला होता है। अुन्हें व्यवहारका भी

अनुभव नहीं है। अगर अुन्हें राष्ट्रकी जरूरतोंकी पूर्ति करनेवाली स्वावलम्बी श्रेणियों पर काम सीखनेका मौका मिला होता, तो अुन्हें अुपाधि प्राप्त करनेके बाद और अपने मालिकोंके धन पर अनुभव प्राप्त करनेकी जरूरत हरगिज नहीं रहती।

यह कोअी निरा कल्पना-विलास नहीं है। सिर्फ अपनी मानसिक जड़ताको दूर करने भरकी देरी है कि हम देखेंगे कि कांग्रेसके मंत्रि-मंडलके अर्थात् कांग्रेसके सामने खड़े हुअे शिक्षाके सवालका यह हल अत्यन्त युक्ति-संगत और व्यावहारिक भी है। यदि ये घोषणाअें सत्य हों, जो कि हाल ही में ब्रिटिश सरकारकी ओरसे की गयी हैं, तो मंत्रि-मंडलोंके पक्षमें तो अुनकी योजनाओंको सफल बनानेके लिये सिविल सर्विसकी सुसंगठित बुद्धिचातुरी और संगठन-शक्ति भी है। सिविल सर्विसके अधिकारियोंको तो वह कला याद है, जिसकी सहायतासे अैसी-अैसी शासन-नीतिको भी वे अमलमें ले आते हैं, जो अुनके लिये झक्की गवर्नर या वाअिसरॉय बनाकर दे देते हैं। अिसी तरह मंत्री भी अेक निश्चित और विचारपूर्ण नीति कायम कर दें। अुस पर अमल करना सिविल सर्विसका काम रहेगा। अुनकी ओरसे जो वचन दिये गये हैं, अुनका पालन करके सिविल सर्विसके अधिकारी अुन लोगोंके प्रति अुऋण हों, जिनका कि नमक वे खा रहे हैं।

अब शिक्षकोंका सवाल रह जाता है। प्रो० शाहने अभी अपने अेक लेखमें जो विचार प्रगट किये हैं,* अुन्हें मैं पसन्द करता हूं। वे विचार यही हैं कि विद्वान स्त्री-पुरुषोंके लिअे यह लाजिमी करार दे दिया जाय कि वे अपने जीवनके कुछ — मसलन् पांच — वर्ष अैसा विषय पढ़ानेके लिअे देशको अर्पण कर दें, जिसकी अुन्हें अच्छी रुचि और अध्ययन भी हो। अिसके लिअे अुन्हें कुछ खर्च भी दिया जा सकता है, जो देशकी आर्थिक स्थितिको ध्यानमें रखते हुअे हो। आज अुच्च शिक्षणकी संस्थाओंमें शिक्षकों और अध्यापकोंको जो अूची-अूची तनखाहें दी जा रही हैं, वे बन्द कर दी जायं। साथ ही, आजकल गांवोंमें काम करनेवाले मौजूदा शिक्षकोंको हटाकर अुनके स्थान पर अधिक योग्य शिक्षक हमें वहां भेजने चाहिये।

हरिजनसेवक, ३१–७–'३७

---

* देखिये हरिजनसेवक, ता० २१–८–३७।

२

['शिक्षाकी समस्या' नामक टिप्पणीसे।]

"अिन नये सुधारोंके अन्दर सबसे निष्करुण बात तो यह है कि अपने बच्चोंको शिक्षा देनेके लिअे हमारे पास शराबकी आयके अतिरिक्त और कुछ है ही नहीं।" कांग्रेस-मन्त्रियोंने जबसे पद ग्रहण किया तबसे अिस विषय पर अनेक लोगोंसे गांधीजीने जो बातचीत की अुनमें से अेकमें अुन्होंने कहा: "यही तो शिक्षामें हमारे सामने सबसे बड़ी समस्या है। पर अिससे हमें घबराना नहीं चाहिये। हमें अिसका हल ढूंढना ही होगा। पर अिसका हल ढूंढते हुअे हमें शराबकी पूर्ण बन्दीके अपने आदर्शमें जरा भी ढील नहीं करनी चाहिये। फिर अिसकी खातिर जो कीमत हमें देनी पड़े। हमारे लिअे तो यह खयाल भी शर्मनाक और अपमानजनक मालूम होना चाहिये कि अगर हमें शराबकी आय न मिले, तो अपने बच्चोंको हम शिक्षा ही न दे सकेंगे। पर अगर यह भी नौबत आ पहुंचे, तो 'अर्धं त्यजति पण्डितः.' अिस न्यायसे हमें अुसे कबूल कर लेना चाहिये। अेक तो हम खर्चके भूतसे न घबरायें, और दूसरे, बच्चोंको आज जिस किस्मकी शिक्षा दी जा रही है अुसके मोहको छोड़ दें, तो यह समस्या भी भारी नहीं है।"

अिससे पाठकोंको पता चल जायगा कि क्यों गांधीजी अिस बात पर अितना जोर दे रहे हैं कि देशके शिक्षाशास्त्रियोंको अेकत्र होकर अेक अैसी शिक्षा-प्रणाली ढूंढनी चाहिये, जो हमारी असंख्य ग्रामीण जनताकी जरूरतोंको पूरा भी कर दे और साथ ही कम खर्चीली भी हो।

अुपर्युक्त बात सुनकर अेक प्रश्नकर्ताने बड़े आश्चर्यके साथ पूछा "तब तो आप सचमुच ही माध्यमिक शिक्षाको बिलकुल अुड़ा देना चाहते हैं और मैट्रिक तककी सारी शिक्षा ग्रामीण पाठशालाओंमें ही पूरी कर देना चाहते हैं?"

गांधीजीने कहा: "बिलकुल ठीक। आखिर आपकी अिस माध्यमिक शिक्षामें सिवा अिसके है ही क्या कि विद्यार्थी जो बात अपनी मातृभाषामें

दो सालके अन्दर सीख सकता है, अुसीको विदेशी भाषामें पढ़ावें और अिसमें सात वर्ष बरबाद कर दें? आज हमारे बच्चोंको अपने सारे विषय विदेशी भाषाके माध्यमसे पढ़ने पड़ते हैं। हमें अेक तो यह मार बच्चों परसे अुठा लेना है; और दूसरे, अुन्हें अपने हाथ-पैरोंसे अिस तरह काम लेना सिखा देना है, जिससे कुछ लाभ हो सके। अितना किया कि हमारी शिक्षा-समस्या भी हल हुआी। अगर शराबकी सारीकी सारी आय हम छोड़ दें, तो भी हमें भीतरसे अैसी हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिये कि हमने कोआी बुरा काम कर डाला। सबसे पहले अिसे छोड़नेका हम निश्चय कर लें, और तब यह सोचें कि बच्चोंकी शिक्षाका प्रबंध क्या और कैसे करें। सबसे पहले यह बड़ी बात करें।"

हरिजनसेवक, २१–८–'३७

३

['प्रश्नोत्तरी' नामक लेखमें 'रचनात्मक कार्य करनेवालोंमें क्या क्या गुण होने चाहिये?' अिस प्रश्नका जवाब देते हुअे नअी तालीमके बारेमें गांधीजीने कहा :]

नअी तालीमके बिना हिन्दुस्तानके करोड़ों बालकोंको शिक्षण देना लगभग असंभव है, यह चीज सर्वसामान्य हो गअी कही जा सकती है। अिसलिअे ग्रामसेवकको अुसका ज्ञान होना ही चाहिये। अुसे नअी तालीमका शिक्षक होना चाहिये।

अिस तालीमके पीछे प्रौढ़-शिक्षण अपने-आप चला आयेगा। जहां नअी तालीमने घर कर लिया होगा, वहां बच्चे ही माता-पिताके शिक्षक बन जानेवाले हैं। कुछ भी हो, ग्रामसेवकके मनमें प्रौढ़-शिक्षण देनेकी लगन होनी चाहिये।

हरिजनसेवक, १०–८–'४०

२

अनावश्यक भय

१

तीन सालमें शराबबन्दी करनेके कांग्रेसी कार्यक्रमकी खूब सराहना करते हुअे अेक लिबरल मित्रने शिक्षाके बारेमें अपना भय अिस प्रकार प्रकट किया है :

> "कांग्रेसका शिक्षा-सबधी कार्यक्रम कुछ परेशान करनेवाला मालूम पडता है। अिस बातका बड़ा डर है कि अिसके कारण कहीं अुच्च शिक्षाकी प्रगति न रुक जाय। अत मुझे आशा है कि अिसके लिअे अच्छी तरह सोच-विचार करके ही कोअी योजना बनाअी जायगी और जो कुछ परिवर्तन करना हो, अुसकी काफी पहले सूचना दी जायगी। जनताको कांग्रेसी योजना पर पूरी तरह विचार करनेका मौका दिये बगैर अिस सबधमें कोअी जल्दबाजी तो हरगिज नहीं करनी चाहिये।"

यह भय बिलकुल अनावश्यक है। कांग्रेस कार्य-समितिने अिस बारेमें अपनी कोअी आम नीति निर्धारित नहीं की है। कांग्रेस काशी विद्यापीठ, जामिया मिलिया, तिलक विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ, गुजरात विद्यापीठ जैसी अनेक शिक्षा-संस्थाओंके लिअे जिम्मेदार जरूर है, लेकिन अिस बारेमें अुसने कोअी आम घोषणा नहीं की है। मैंने अिस बारेमें जो कुछ लिखा है, वे सब मेरे अपने विचार हैं। अिसमें कोअी शक नहीं कि मौजूदा शिक्षा-प्रणालीने हमारे देशके नौजवानोंको और भारतकी भाषाओं तथा सामान्य सस्कृतिको जो भारी नुकसान पहुंचाया है, अुसको मैं बहुत तीव्रतासे महसूस करता हू। अिस संबंधमें मेरे विचार बड़े तीव्र हैं, लेकिन मैं यह दावा नहीं करता कि कांग्रेसियोंको भी आम तौर पर मैंने अपने विचारोंके अनुकूल बना लिया है; तब भला अुन शिक्षाशास्त्रियोंके बारेमें मैं क्या कह सकता हूं, जो कांग्रेसी वातावरणसे भी बाहर हैं और भारतीय विश्वविद्यालयों पर

बदला किये हुअे हैं? अुनके विचारोंको बदलना कोअी आसान काम नहीं है। मेरे मित्र और अुनका-सा भय रखनेवाले दूसरे लोगोंको अिस बातका विश्वास रखना चाहिये कि जो लोग शिक्षामें हेरफेर करनेका प्रयत्न कर रहे हैं, वे श्री शास्त्री द्वारा दी गयी सलाह पर पूरा ध्यान देंगे और शिक्षा-संबंधी मामलोंमें जिन लोगोंकी सलाहका महत्त्व है, अुनसे काफी सलाह और विचार किये बगैर अिस दिशामें कोअी बड़ा कदम नहीं अुठायेंगे। यहां मैं यह भी बता दूं तो अप्रासंगिक न होगा कि बहुतसे शिक्षाशास्त्रियोंके साथ अभी भी मेरा पत्र-व्यवहार चल रहा है और अुनकी बेशकीमती रायें मुझे मिल रही हैं; और मुझे यह कहते हुअे खुशी होती है कि वे आम तौर पर मेरी योजनाके अनुकूल ही हैं।

हरिजनसेवक, २८-८-'३७

२

['साक्षरताके बारेमें' शीर्षक लेखसे।]

अिस पत्रके जरिये शिक्षाके बारेमें मैं जो विचार प्रतिपादित कर रहा हूं, अुन पर मुझे बहुत-सी रायें मिली हैं। अुनमें से कुछको मैं अिस पत्रमें अपने खयालके मुताबिक दे भी सकूंगा। लेकिन अभी तो मैं अेक विद्वान मित्रके मुझ पर साक्षरताकी अुपेक्षाका जो अपराध लगाया है, अुसीका जवाब देना चाहता हूं। मैंने जो कुछ भी लिखा है, अुसमें अैसा खयाल बना लेनेका कोअी भी कारण नहीं है। क्योंकि क्या मैंने यह नहीं कहा है कि मेरे मनमें जिस तरहके स्कूलकी कल्पना है, अुसके विद्यार्थियोंको अुन्हें सिखाअी जानेवाली दस्तकारीके जरिये हर तरहकी तालीम दी जायगी? अिसमें साक्षरता भी शामिल है। जुदा-जुदा विषयों पर मेरी जो तजवीजें हैं, अुनमें हाथ अक्षर बनाने या लिखनेकी कोशिश करनेके पहले औजार चलानेका काम करेंगे; आंखें जैसे जिन्दगीकी दूसरी चीजें देखती हैं, अुसी तरह अक्षरों और शब्दोंके चित्र देखेंगी; कान चीजों और वाक्योंके नाम और अर्थको समझेंगे। सारी शिक्षा कुदरती और रस पैदा करनेवाली होगी और अिसीलिअे देशकी सब शिक्षाओंसे तेज रफ्तारवाली और सस्ती रहेगी। अिसलिअे मेरे स्कूलके लड़के जितनी तेज रफ्तारसे लिखेंगे, अुससे भी बहुत तेज रफ्तारसे वे

पढ़ने लगेंगे। और जब वे लिखना शुरू करेंगे, तो भद्दी लकीरें नहीं खींचेंगे, जैसे कि मैं अब तक (शिक्षकोंकी कृपासे) खींचता रहता हूं; बल्कि जिस तरह वे अपनेको दिखाओी देनेवाली दूसरी चीजोंकी ठीक शकलें खींच सकेंगे, अुसी तरह अक्षरोंकी भी ठीक शकलें बना सकेंगे। अगर मेरे कयासके स्कूल कभी कायम हों, तो मैं यह कहनेका साहस करता हूं कि वाचनके मामलेमें वे सबसे आगे बढ़े हुअे स्कूलोंके साथ होड़ कर सकेंगे; और अगर यह आम खयाल हो कि लिखावट, जैसी कि आजकल ज्यादातर मामलोंमें होती है वैसी गलत नहीं बल्कि सही तरीकेकी हो, तो लिखाओीमें भी मेरे ये स्कूल आजके अुन्नतसे अुन्नत स्कूलकी बराबरी कर सकेंगे। सेगांव स्कूलके विद्यार्थियोंका लिखना मौजूदा ढंगके अनुकूल भले ही हो, लेकिन मेरे खयालसे तो वे स्लेट और कागज दोनों खराब ही करते हैं।

हरिजनसेवक, ४–९–'३७

३

स्वावलम्बी शिक्षा

डॉ॰ अे॰ लक्ष्मीपतिने मद्रासमे लिखा है:

"मैंने मिशनरियों द्वारा सचालित कुछ सस्थाअें देखी हैं। वहां मदरसे सुबह लगते हैं और शामको विद्यार्थियोंसे या तो खेतीका या किसी गृह-अुद्योगका काम लिया जाता है। और जैसा तथा जितना जिसका काम होता है, अुसके अनुसार अुसे मजदूरी भी दी जाती है। अिस तरह सस्था न्यूनाधिक परिमाणमें स्वावलम्बी बन जाती है, और चूंकि विद्यार्थी भी कमसे कम अपनी आजीविका प्राप्त करने लायक कुछ न कुछ काम सीख लेते हैं, पढ़ाओी छूटने पर वे अपने-आपको असहाय महसूस नहीं करते। मैंने यह भी देखा कि अिन पाठशालाओंका वायुमंडल सरकारी शिक्षा-विभागों द्वारा संचालित टकसाली पाठशालाओंके आकर्षणहीन

कार्यक्रमसे नहीं भिन्न था। लड़के अधिक स्वस्थ और प्रसन्न दिखाई दिये — अिस कल्पनासे कि वे कुछ अुपयोगी काम कर रहे हैं। अुनके शरीरकी गठन भी मजबूत है। ये पाठशालायें कुछ दिन बिलकुल बन्द भी रहती हैं क्योंकि अुन दिनों लड़कोंको सारे दिन खेतों पर काम करना पड़ता है।

"शहरोंमें भी अैसे लड़कोंको तरह-तरहके व्यापार या धंधेमें लगा सकते हैं, जिनमें अपने-आपको अुसके लायक बना लेनेकी शक्ति हो। यह परिवर्तन मनोरंजनका काम भी देता है। सुबहके वर्गोंमें जो आध घंटेकी छुट्टी होती है, अुस वक्त जिन्हें जरूरत हो अथवा जो चाहें, अुन सबके लिअे अेक वारके भोजनका प्रबन्ध भी किया जा सकता है। अिस तरह गरीब लड़के तो खुद-ब-खुद खुशीसे दौड़ते हुअे पाठशालाओंमें आने लग जायेंगे और माता-पिताको भी अपने बच्चोंको नियमित रूपसे पढ़नेके लिअे भेजते हुअे अुत्साह होगा।

"अगर यह आधे दिनकी पाठशालाओंकी योजना जारी की जा सके, तो कुछ अध्यापकोंका अुपयोग गांवोंमें प्रौढ़ोंकी शिक्षाके काममें किया जा सकता है। और अिसके लिअे अुन्हें अलग मेहनताना देनेकी भी जरूरत नहीं रहेगी। अिस तरह अिमारतका और पढ़नेकी अन्य सामग्रीका भी अुपयोग हो सकता है।

"मद्रासके शिक्षा-मंत्रीसे मैंने भेंट की है और अुन्हें पत्र भी लिखा है, जिसमें मैंने बताया है कि वर्तमान पीढ़ीकी शारीरिक दुर्बलताका अेक खास कारण पाठशालाओंका यह असुविधाजनक समय ही है। मेरा तो यह खयाल है कि तमाम पाठशालायें और कॉलेज केवल सवेरे ही यानी ६ बजेसे ११ बजे तक लगा करें। ४ घंटेका अभ्यास-क्रम काफी होना चाहिये। दोपहरको लड़के घर पर रहें और शामको खेलें-कूदें तथा अपने शरीरके विकासकी ओर भी ध्यान दें। कुछ लड़के दोपहरमें अपनी आजीविका कमानेमें लग सकते हैं और कुछ अपने माता-पिताके कामकाज या व्यापार-व्यवसायमें मदद कर सकते हैं। अिस तरह विद्यार्थी अपने माता-पिताके सम्पर्कमें अधिक

रह सकेंगे, जो कि किसी भी पेशे या परम्परागत व्यवसायके लायक अुन्हें बनानेके लिअे जरूरी है।

"अगर हम यह अनुभव कर लें कि शारीरिक विकास अेक प्रकारका राष्ट्र-निर्माण है, तो पाठशालाके समयमें यह प्रस्तावित परिवर्तन अूपरसे दीखनेमें क्रान्तिकारी होते हुअे भी हिन्दुस्तानकी आबोहवा और पुराने रिवाजके अनुकूल ही मालूम होगा और अधिकांश लोग अिसका स्वागत भी करेंगे।"

विद्यालयोंका समय केवल सुबहका ही रखनेके संबंधमें डॉ० अे० लक्ष्मीपतिका यह जो सुझाव है, अिसके संबंधमें मुझे विशेष कहनेकी अिच्छा नहीं है, सिवा अिसके कि शिक्षा-विभागके अधिकारियोंसे मैं अिसकी सिफारिश कर दूं। और न्यूनाधिक परिमाणमें स्वाश्रयी बननेवाली अिन संस्थाओंके बारेमें तो यही कहना होगा कि अगर अुन्हें अपना सारा या कुछ खर्च निकालना है और विद्यार्थियोंको भी किसी लायक बनाना है, तो वे सिवा अिसके कुछ कर ही नहीं सकतीं। फिर भी मेरी सूचनाओंने बड़ी शिक्षाशास्त्रियोंको जबरदस्त आघात पहुंचाया है — महज अिसीलिअे कि वे शिक्षा देनेका आजसे दूसरा तरीका जानते ही नहीं। शिक्षाको स्वावलंबी बनानेकी बात सुनकर ही अुन्हें अैसा मालूम होने लगता है, मानो अुसका सारा महत्त्व चला गया। सीधे बच्चोंसे ही अिस तरह अुनकी शिक्षाका मुआवजा लेना अुन्हें बड़ा खटकता है। पर शिक्षाके संबंधमें यहूदियोंके अेक प्रयत्न पर लिखी गअी किताब मैं आजकल पढ़ रहा हूं। यहूदी पाठशालाओंमें जो धंधेका शिक्षण जारी किया गया है, अुसके संबंधमें लेखकने लिखा है

"अिस तरह लड़के अपने हाथसे जो काम करते हैं, वह खुद भी बड़ा कीमती होता है। चूंकि कामके साथ-साथ बच्चोंको सोचना भी पड़ता है, अिसलिअे कामसे अुन्हें थकावट नहीं आती और अुसके मूलमें देशहितकी भावना होनेके कारण अिस शरीर-श्रमको अेक प्रकारका गौरव प्राप्त हो जाता है।"

अगर हमें जैसे चाहिये वैसे शिक्षक मिल जायं, तो हमारे बच्चे श्रमधर्मके गौरवको समझने लगेंगे और अुसे अपने बौद्धिक विकासका साधन

और महत्त्वपूर्ण अंग भी मानने लगेंगे। साथ ही, वे यह भी अनुभव करने लगेंगे कि वे जो शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं, अुसका मूल्य श्रमके रूपमें चुकाना भी अेक प्रकारकी देशसेवा ही है। मेरे सुझावका आशय तो यह है कि हम बच्चोंको दस्तकारियोंकी शिक्षा महज अिसलिअे न दें कि वे कुछ अुत्पादक काम करना सीखें, बल्कि अिसलिअे दें कि अुसके द्वारा अुनकी बुद्धिका विकास हो। सचमुच अगर राज्य ७ से १४ वर्षकी अुम्रके अन्दरके बच्चोंको अपने हाथमें ले ले, अुत्पादक श्रम द्वारा अुनके मन और शरीरको विकसित करनेकी कोशिश करे और फिर भी यह शिक्षा स्वावलंबी न हो सके, तो कहना होगा कि निश्चय ही वे पाठशालाअें ठगीके स्थान हैं, और अुनमें काम करनेवाले शिक्षक निरे बेवकूफ हैं।

मान लीजिये कि अेक लड़का या लड़की यंत्रकी तरह नहीं, बल्कि अकलमन्दीके साथ काम करने लग जाय और अेक विशेषज्ञके मार्गदर्शनमें होनेवाले सामूहिक कार्यमें दिलचस्पी भी लेने लगे, तो अेक वर्षकी शिक्षाके बाद हरअेक औसत दर्जेके विद्यार्थीको फी घंटा अेक आना कमाने योग्य हो जाना चाहिये। अिस तरह अगर महीनेमें २६ दिन मदरसा लगे और रोज बच्चा ४ घंटे काम करे, तो हरअेक विद्यार्थी रु० ६–८–० महीना कमा लेगा। अब सवाल सिर्फ यही है कि क्या हम अिस तरह करोड़ों बच्चोंके श्रमका लाभदायक अुपयोग कर सकेंगे? अेक बरसकी तालीमके बाद भी अगर हम बच्चोंकी शक्ति और बुद्धिको अिस लायक न बना सकें कि अुनकी बनाअी चीजें बाजारमें भेजने पर अुनसे अितनी कीमत आ सके, जिससे लड़कोंको फी घंटा अेक आनेके हिसाबसे मजदूरी पड़ जाय, तो समझना चाहिये कि हमारी बुद्धिका दिवाला ही निकल गया है। मैं जानता हूं कि हिन्दुस्तानमें आज कहीं भी गांवोंके लोग अितना नहीं कमा सकते, जिससे कि फी घंटा अेक आनेकी मजदूरी पड़ जाय। पर अिसका कारण तो यह है कि हमने अपनेको आज गरीबों और अमीरोंके बीचकी गहरी विषमताका आदी बना लिया है, और दूसरे यह भी कि शहरके निवासी गांवोंको लूटनेमें शायद अनजानमें अंग्रेजोंके साथी बने हुअे हैं।

हरिजनसेवक, ११–९–'३७

४

राष्ट्रीय शिक्षकोंसे

१

जो किसी भी प्रकारकी राष्ट्रीय शिक्षण-सस्था चला रहे है, अुन शिक्षकोको मेरी यह सूचना है कि यदि प्राथमिक शिक्षाके बारेमें आजकल मै जो कुछ लिख रहा हूं, वह अुनके गले अुतरा हो तो वे अुस पर यथाशक्ति अमल करें, अुसका पद्धतिपूर्वक हिसाब रखें और अपने अनुभव मुझे लिख भेजें। जो मेरी सुझाओी हुओी पद्धतिके अनुसार स्कूल चलानेको तैयार हों, जो अभी खाली या बेकार हो और जो दूसरा काम करते हो, पर अुसे छोड़कर स्कूल चलानेको तैयार हो, वे मुझे लिखें।

मेरी मान्यता यह है कि प्राथमिक स्कूलको स्वावलम्बी बनानेका तुरंत नजरमें आनेवाला अुद्योग कताओी, पिंजाओी वगैरा है। अिसमें कपास चुननेसे लेकर रंग-बिरंगी तथा बेल-बूटेवाली खादी बनाने तककी सब क्रियाओंका समावेश होता है। अिसमें मजदूरी अेक घंटेकी कमसे कम दो पैसे गिननी चाहिये। स्कूल यदि पाच घंटे चले, तो चार घंटे तक मजदूरी और अेक घंटे तक जो अुद्योग सिखाया जाय अुसका शास्त्र तथा अन्य विषय — जो अुद्योग सिखाते हुअे नही सिखाये जा सकते हो — सिखाये जायं। अुद्योग सिखाते हुअे जो विषय सिखाये जा सकते हैं, अुनमें कुछ अशोमें या पूर्णत: अितिहास, भूगोल और गणितशास्त्र आते है। भाषाज्ञान और अुसके साथ ही व्याकरण तथा शुद्ध अुच्चारण तो आ ही जायेगा। क्योंकि शिक्षक अुद्योगको अिस सारे ज्ञानका वाहन या माध्यम समझेगा और अिसमे बालककी बोली स्पष्ट करावेगा। अैसा करते हुअे सहज ही व्याकरणका ज्ञान दे देगा। पहलेसे ही गिननेकी क्रिया तो बालकको सीखनी ही चाहिये। अत गणितसे ही 'श्री गणेशाय नम.' होगा। स्वच्छताका विवेक तो अलग विषय होगा ही नही। बालकोके हरअेक कार्यमें स्वच्छता होनी ही चाहिये। अुनका स्कूलमें प्रवेश ही स्वच्छतासे शुरू होगा। अतः अभी तो मेरी कल्पनामें अेक भी विषय अैसा नही आता, जो अुद्योग सिखाते-सिखाते बालकोको नही सिखाया जा सके।

मेरी कल्पना अैसी है कि जिस तरह मैंने सीखनेके विषयोंको अ
अलग नहीं गिना, बल्कि यह माना है कि सब अेक-दूसरेमें अंतर्गत है
सब अेकमें से ही अुत्पन्न हुअे हैं, अुसी तरह शिक्षकको भी अेकको ही क
है। विषयवार अलग-अलग शिक्षक नहीं, पर अेक ही। क्योंकि अनु
अलग-अलग हो सकते हैं। अर्थात् सात कक्षाअें हों तो सात शिक्षक
और अेक शिक्षकके पास २५ से अधिक लड़के नहीं होंगे। यदि शि
अनिवार्य हो, तो शुरूसे ही बालकों व बालिकाओंके लिअे अलग क
होनेकी मुझे आवश्यकता लगती है। क्योंकि आखिरमें हरअेकको अेक
धंधा नहीं सिखाया जायगा, असलिअे पहलेसे ही अलग वर्ग हो
अधिक सहूलियत होगी, अैसी मेरी मान्यता है।

अिस पद्धतिमें, धंधोंमें, शिक्षकोंकी संख्यामें या विषयोंके अनुप
भले ही कुछ फेरफारकी गुंजाअिश हो, पर जिस सिद्धान्तका अवलम्
करके हरअेक स्कूलको चलना होगा, अुस सिद्धान्तको अवश्य समझकर
मेरी कल्पनाका स्कूल चल सकता है। अभी चाहे अिस सिद्धान्तका अ
करके किसी प्रकारका परिणाम नहीं बताया जा सके, पर जो शिक्षक अे
शिक्षाकी शुरुआत करनेकी अिच्छा रखता हो, अुसे अिस सिद्धांतके प्र
श्रद्धा होनी ही चाहिये। और यह श्रद्धा बुद्धि पर आधारित है, जिसलि
अंधी नहीं बल्कि ज्ञानमय होनी चाहिये। ये सिद्धांत दो हैं :

(१) *शिक्षाका वाहन या माध्यम कोअी भी ग्रामोपयोगी अुद्योग हो*

(२) कुल मिलाकर शिक्षा स्वावलंबी होनी चाहिये। अर्थात् पह
अेक-दो बरस भले ही वह स्वावलम्बी न हो, पर सात वर्षका हिस
निकालने पर जमा व खर्च दोनों बराबर होने चाहिये। मैंने अिस शिक्षा
७ वर्ष गिने हैं। पर अिसमें कमी-बेशीको स्थान है।

हरिजनबन्धु, १९–९–'३७

२

मैंने राष्ट्रीय अध्यापकोंको लक्ष्य करके जो लिखा था, अुसके जवाब
मेरे पास रोज अनेकों खत आ रहे हैं। यह सन्तोषकी बात है। अि
पत्रोंसे मैं देखता हूं कि जिन्हें लिखनेवालोंने मेरी अपीलका ठीक-ठीक

अर्थ समझता नहीं। जिन्हें किसी लाभदायक दस्तकारी द्वारा शिक्षा देनेके सिद्धान्तमें पूर्ण श्रद्धा न हो और जो अिस कामको केवल प्रेमभावसे और सिर्फ जीविकाके साधन जैसा लेकर करनेके लिअे तैयार न हों अुनकी ज़रूरत नहीं है। अुन्हें मेरी यह सलाह है कि वे कातनेकी कलामें और अुसके पहलेकी तमाम क्रियाओंमें पूर्ण निष्णात बन जायं। अिस बीचमें मैं अुन सबके नाम नोट करके रख लेता हूं। मेरी योजनाके अमलमें जो प्रगति होगी, अुसकी अुन अुम्मेदवारोंको समयसमय खबर दे दी जायगी। कहीं प्रान्तीय सरकारें अगर मेरी योजनाको मंजूर कर लें और अुसका प्रयोग करनेके लिअे तैयार हो जायं, तो अुनकी मांग पूरी करनेके लिअे मेरा यह प्रयत्न है।

हरिजनसेवक, १६–१०–'३७

५

बम्बअीमें प्राथमिक शिक्षा

अब तक मैंने जो चर्चा की है, वह ग्राम-शिक्षाके बारेमें की है, क्योंकि यही सारे हिन्दुस्तानका प्रश्न है। यदि अिसको हम सीधी तरहसे हल कर सकें, तो शहरोंके लिअे कठिनाअी नहीं होगी, यह समझकर मैंने शहरोंके बारेमें कुछ नहीं लिखा। पर बम्बअीके शिक्षामें दिलचस्पी लेनेवाले अेक नागरिकका नीचेका प्रश्न अुत्तर मांगता है।

> "प्राथमिक शिक्षाके भारी खर्चके प्रश्नको हल करनेमें कांग्रेसका मन्त्रि-मंडल लगा हुआ दीखता है। शिक्षाका खर्च शिक्षामें से ही निकल सकता है, जैसा सुझाया गया है। बम्बअी जैसे शहरमें किस तरहसे और कितने अंशमें अिस शिक्षासे खर्च निकल सकते हैं, अिस प्रश्नकी चर्चा आवश्यक लगती है। कहा जाता है कि शिक्षाके पीछे बम्बअी कारपोरेशनके खर्चका अंदाज अिस सालके लिअे ३५ से ३६ लाख रुपयेका है; और सारे शहरमें शिक्षा अनिवार्य करनेमें

दूसरे कितने ही लाखका खर्च बढ़ जायेगा। शिक्षकोंकी
२० लाखसे और किरायेमें ४ लाखसे ज्यादा रकम खर्च हो
प्रति विद्यार्थी औसत सालाना खर्च ४० से ४२ रुपये है
विद्यार्थी पढ़ने-रहते अितनी रकमका काम करें, तभी शिक्षा
शिक्षामें से निकल सकता है। यह कैसे हो सकता है?'

मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि यदि अुद्योगका तत्त्व बम्बअीके
दाखिल हो, तो अुससे बम्बअीके बालकोंको और बम्बअी शहरको
ही होगा। शहरमें बढ़े हुअे बालक तोतेकी तरह कवितायें रटेंगे
सुनायेंगे, नाचेंगे, दूसरे हाव-भाव दिखायेंगे, ढोल बजायेंगे, कूच
अितिहास-भूगोलके जवाब देंगे, तो कोअी थोड़ा अंकगणित जानेंगे
अुससे आगे नहीं बढ़ेंगे। मैं भूल गया। वे थोड़ी अंग्रेजी जरूर जानते
पर अेक टूटी हुअी कुर्सी ठीक करनी हो, अथवा फटा हुआ कपड़ा
हो, तो वे नहीं कर सकेंगे। अैसी बातोंमें हमारे शहरोंके लड़के जित
देखे जाते हैं, अुतने पंगु लड़के मैंने दक्षिण अफ्रीका या अिंग्लैण्डके
प्रवासमें कहीं नहीं देखे।

अिसलिअे मैं तो मानता ही हूं कि शहरोंमें भी यदि अुद्योगों द्वा
शिक्षा दी जाय, तो बालकोंको बेहद लाभ हो सकता है और पूरे
लाभ नहीं, तो अुसका अेक बहुत बड़ा हिस्सा तो बच ही सकता
४२ के बजाय वार्षिक ४० रु० ही प्रति बालक गिने जाय, तो म्युनि
सिटी ८७,५०० बालकोंको पढ़ाती है, अैसा कहा जा सकता है।
लाखकी आबादी हो तो बालकोंकी संख्या कमसे कम डेढ़ लाख
चाहिये, अर्थात् लगभग ६२ हजार बालक बिना शिक्षाके रहते होंगे
सब गरीब नहीं होंगे और अिसलिअे ६ हजार बालक प्राअिवेट स्कूलोंमें
होंगे, अैसा मानें तब भी ५६,००० बालक बचते हैं। अुनके लिअे
हिसाबसे ७७ लाख ४० हजार रुपये और चाहियें। अितने पैसे बम्बअी
पैदा करे और कब सब बालकोंको पढ़ावे? और क्या पढ़ावे?

मैं मानता हूं कि शिक्षा अनिवार्य और मुफ्त दोनों ही चाहिये।
बालकोंको अुपयोगी अुद्योग देकर अुनके मारफत ही अुनके मन

वह अनुचित नहीं है। अर्थशास्त्र नैतिक और अनैतिक दोनों प्रकारका होता है। नैतिक अर्थशास्त्रमें दोनों बाजू बराबर होंगी। अनैतिकमें तो जिसकी लाठी अुसकी भैंस। अिसका प्रमाण कितना हो, यह अुसकी ताकत पर आधार रखता है। अनैतिक अर्थशास्त्र जैसे घातक है, वैसे ही नैतिक आवश्यक है। अुसके बिना धर्मकी पहचान और अुसका पालन मैं असंभव मानता हूं।

मेरा नैतिक शास्त्र मुझे यह सुझाता है कि बम्बओके बालक हर महीने खेलते-कूदते तीन रुपयेका काम कर सकते हैं। वे यदि ४ घंटे काम करें और हर घंटेके दो पैसे गिने जाय, तो महीनेमें २५ दिन खुलनेवाले स्कूलमें वे ५० आने यानी रु० ३–२–० का काम कर सकते हैं।

जब शिक्षाके रूपमें अुद्योग सिखाया जाय, तब यह माननेका कोअी कारण नहीं है कि बालक कामके बोझसे दब जायगे। नाममात्रके शिक्षक अितिहास-भूगोल जैसे सरल और रसप्रद विषय सिखाते हुअे शिष्योंको बोझरूप लगते हैं। सच्चे अध्यापक हंसते-खेलते अपने शिष्योंको अुद्योग सिखाते हैं, यह मैंने अपनी आंखोंसे देखा है। अैसे शिक्षक कहांसे ढूंढे जाय, यह तो कोअी नहीं कहेगा। कोअी चीज करने लायक है, अैसा माननेके बाद अुसे करनेवाले तैयार करना तो स्वाभाविक ही अुसे माननेवाले व्यक्ति या संस्थाका धर्म हो जाता है। अैसे शिक्षकोंको तैयार करनेमें समय तो लगेगा ही। आजकी अयोग्य शिक्षाकी रचनामें और अुसके लिअे शिक्षक तैयार करनेमें जितना समय गया, अुसका शतांश भी अिसमें नहीं लगेगा। खर्च तो प्रमाणमें कम ही लगेगा। यदि मेरे हाथमें बम्बअी कारपोरेशन हो, तो मैं अपनी कल्पनामें श्रद्धा रखनेवाले शिक्षाशास्त्रियोंकी अेक छोटी समिति नियुक्त करके अुनसे अेक महीनेके भीतर योजनाकी मांग करूं और अुसका अमल शुरू कर दूं। अिसमें यह मान्यता अवश्य आ जाती है कि मुझे अिस कल्पनाकी संभावनाके बारेमें अचल श्रद्धा है। पराअी श्रद्धासे आज तक कोअी अच्छे व महान कार्य नहीं हुअे।

अेक प्रश्न बाकी रहता है। कौनसे अुद्योग शहरोंमें सरलतापूर्वक सिखाये जा सकते हैं? मेरे पास तो अुत्तर तैयार ही है। मैं जो

चाहता हूं, वह तो गांवकी ताकत है। आज गांव शहरोंके लिये जीते है, अुन पर अपना आधार रखते है। यह अनर्थ है। शहर गांवों पर निर्भर रहें, अपने बलका सिंचन गांवोंमें करें अर्थात् अपने लिये गांवोंका बलिदान करनेके बजाय खुद गांवोंके लिअे बलिदान व त्याग करें, तो अर्थ सिद्ध होगा और अर्थशास्त्र नैतिक बनेगा। अैसे शुद्ध अर्थकी सिद्धिके लिये शहरोंके बालकोंके अुद्योगका गांवोंके अुद्योगोंके साथ सीधा संबंध होना चाहिये। अैसा होनेके लिअे मेरे खयालमें अभी तो पींजनसे लेकर कताओ तकके अुद्योग आते हैं। आज भी कुछ तो अैसा होता ही है। गांव कपास देते हैं और मिलें अुसमें से कपड़ा बुनती है। अिसमें शुरूसे आखिर तक अर्थका नाश किया जाता है। कपास जैसे-तैसे बोओ जाती है, जैसे-तैसे चुनी जाती है और जैसे-तैसे साफ की जाती है। अिस कपासको कओ बार नुकसान सहकर भी किसान राक्षसी जिनोंमें बेचता है। वहां वह बिनौलेसे अलग होकर, दबकर, अधमरी बनकर मिलोंमें गाठोंके रूपमें जाती है। वहां अुसे धीजा जाता है, काता जाता है और बुना जाता है। ये सब क्रियाअें अिस तरह होती हैं कि कपासका तत्व — सार — तो जल जाता है और अुसे निर्जीव बना दिया जाता है। मेरी भाषासे कोओ द्वेष न करे। कपासमें जीव तो है ही। अिस जीवके प्रति मनुष्य या तो कोमलतासे बरताव करे या राक्षसकी तरह। आजकलके बरतावको मैं राक्षसी व्यवहार मानता हूं।

कपासकी कुछ क्रियाअें गांवोंमें और शहरोंमें हो सकती हैं। अैसा होनेसे शहरों और गांवोंका संबंध नैतिक और शुद्ध होगा। दोनोंकी वृद्धि होगी और आजकी अव्यवस्था, भय, शंका, द्वेष सब मिट जायंगे या कम हो जायंगे। गांवोंका पुनरुद्धार होगा। अिस कल्पनाका अमल करनेमें थोड़ेसे द्रव्यकी ही जरूरत है। वह आसानीसे मिल सकता है। विदेशी बुद्धि या विदेशी यंत्रोंकी जरूरत ही नहीं रहती। देशकी भी अलौकिक बुद्धिकी जरूरत नहीं है। अेक छोर पर भुखमरी और दूसरे छोर पर जो अमीरी चल रही है, वह मिटकर दोनोंका मेल सधेगा; और विग्रह तथा खून-खराबीका जो भय हमको हमेशा डराता रहा है, वह दूर होगा। पर बिल्लीके गलेमें घंटी कौन बांधे? बम्बओ कारपोरेशनका हृदय मेरी कल्पनाकी तरफ किस प्रकारसे

मुझे? अिसका जवाब मैं सेगांवसे दूं, अिसके बजाय तो यह पत्र लिखनेवाले बम्बअीके विचारशील नागरिक ही ज्यादा अच्छी तरह दे सकते हैं।

हरिजनबंधु, २६-९-'३७

६

अुद्योग द्वारा शिक्षणके लिअे दो आधार

यद्यपि विनोबा और मैं सिर्फ पांच मीलके ही फासले पर रहते हैं, फिर भी काममें संलग्न रहनेसे और दोनोंकी तबीयत कुछ शिथिल होनेके कारण हम अेक-दूसरेसे शायद ही मिलते हैं। अिसलिअे कुछेक कामोंको हम चिट्ठी-पत्री द्वारा निपटा लेते हैं।

"आपके शिक्षा-विषयक ताजे विचार मुझे बहुत पसन्द आये हैं। मेरे विचार भी अिसी दिशाकी ओर जाते हैं। 'अुद्योग + शिक्षण' यह द्वैती भाषा मुझे पसन्द आती ही नहीं। मैं तो 'अुद्योग = शिक्षण' अैसा अद्वैती समीकरण मानता हूं। शिक्षणके स्वावलम्बी हो सकनेमें मुझे तनिक भी शंका नहीं। मुझे अैसा लगता है कि जिस शिक्षणमें स्वावलम्बन नहीं, अुसे शास्त्रकी दृष्टिसे 'शिक्षण' की संज्ञा ही नहीं दी जा सकती। आपके विचारोंके साथ मैं अिस विषयमें पूर्णतया सहमत हूं, अतः अिस सम्बन्धमें कुछ खास लिखनेकी अिच्छा नहीं हुअी। हां, अुस पर प्रयोग करनेकी अिच्छा होती है। थोड़ा किया भी है, और अीश्वरकी मरजी होगी तो अिस विषयका निर्णय लानेकी भी आशा रखता हूं।"

अुक्त विचार मैंने अुनके अेक अैसे ही पत्रसे अुद्धृत किया है। अिस विचारको मैं बहुत महत्त्व देता हूं, क्योंकि अिस विषयमें जितने प्रयोग विनोबाने किये हैं, अुतने मैंने या मेरे अन्य साथियोंमें से किसी औरने मेरी जानकारीमें नहीं किये। तकलीकी गतिमें जो क्रान्तिकारी वृद्धि हुअी है, अुसके मूलमें विनोबाकी प्रेरणा और अुनका अपार श्रम है। अेक बड़ी संस्थाका

औसे विचारका समर्थन मेरे लिये कोओ आश्चर्यकी बात नहीं है। और 'शिक्षासप्ताह' के बाद किसीके लिये भी यह कोअी नयी-सी बात मालूम नहीं पड़ेगी। पर यदि अुसका समर्थन न मिले तो मुझे पछतावा होना चाहिये। अपने पुराने पुराने साथियोंको मैं यह बात मैं नहीं समझा सकता, अुन सबको समझानेकी हिम्मत बान्धूं यह मेरी मनोदशा ही समझी जायगी; या घटनायें या मेरे अुस प्रयासकी गिनती होगी ही। मगर श्री मनु सुबेदारका निम्नलिखित पत्र जब मिला तो अुससे मुझे अवश्य आनन्द और आश्चर्य हुआ। शिक्षा सम्बन्धित आदिके सम्बन्धमें मेरे जो विचार हैं, अुनके विषयमें मेरा जिनके साथ पत्रव्यवहार चल रहा है, जिनके परिणामस्वरूप निम्नलिखित पत्र आया है। अिसे देखकर पाठकोंको प्रसन्नता होगी। अुन्होंने अिस पत्रके साथ अंग्रेजीमें कुछ सूचनायें भी भेजी थीं, जिन्हें मैं 'हरिजन' में प्रकाशित कर चुका हूं।

"*शिक्षाका भार विद्यार्थी कितने अंशों तक अुठावें और अुनके* भविष्यमें सुधार होकर शरीरको किस प्रकार फौरन व्यायाम मिले, तथा अुद्योगके कार्यमें मिलनेवाले अनुशासन वगैरासे अुनका मानसिक विकास किस तरह हो, यह विचार मैं कर ही रहा था कि खबर मिली कि आपने शिक्षा-परिषद्की अध्यक्षता स्वीकार कर ली है। अिसलिअे यह लगा कि अिस विषय पर तैयार किये हुअे अपने नोट आपके पास तुरन्त भेज दूं।

"*गृह-अुद्योगोंकी योजनाओं और शाला-अुद्योगकी योजनाओंमें* सिवा अिसके कुछ भी फर्क नहीं कि शाला-अुद्योगको कच्चा माल

मिलना ही चाहिये; और गृह-अुद्योगके लिअे भी अैसा हो तो अच्छा, पर हमेशा यह हो नहीं सकता।

"सब किस्मके साँचे (मोल्ड) और हाथसे यंत्र बनानेवाली संस्था सरकार शायद ही खड़ी कर सके, क्योंकि हाथ निकालकर पैसा खर्च करनेकी नीति अभी कअी साल तक चलेगी। शायद जेलोंका अुपयोग अिसमें हो जाय।

"सामान्य योजना बनाकर हरअेक शहर और जिलेमें भेजनी चाहियें, और यह सब ब्यौरा प्राप्त करना चाहिये कि वहां क्या-क्या सुविधाअें हैं और कौन-कौनसा कच्चा माल आसानीसे बिलकुल मामूली कीमतमें मिलता है। शहरोंमें तो बहुत सुविधा मिलेगी। पर गांवोंमें क्या हो सकता है अिस पर मेरी अपेक्षा अधिक जानकारी रखनेवाले व्यक्ति विचार कर सकेंगे।

"जिस गांवमें कोअी पाठशाला वगैरा नहीं है वहां तो यह बड़ी आसान बात है कि पहलेसे ही किसी अैसे व्यक्तिको वहां नियुक्त कर दिया जाय जो खुद भी काम करे और दूसरोंसे भी करा सके। बालकोंको पढ़ावे और साथ ही अुनसे काम भी करावे। दोनों चीजें साथ-साथ चल सकें तो बड़ा ही अच्छा हो।

"आपने जब पहले-पहल कहा तब यह चीज बहुत मुश्किल मालूम हुअी। जब अुस पर थोड़ा विचार किया तो अुद्योग-हुनर, बेकारी और शिक्षा अिन तीन बड़े-बड़े प्रश्नोंका निर्णय संगठित रूपसे किस प्रकार किया जाय यह दिखाअी देने लगा। गत १८ वीं तारीखके 'हरिजन' में 'अेक अध्यापक' का लेख पढ़नेके बाद मुझे लगता है कि शिक्षामें भी कुछ 'वेस्टेड अिन्टरेस्ट' (स्थापित स्वार्थ) जैसी बात है, और जैसा कि आप कहते हैं वे सब पढ़नेसे पाप किये गये गलत विचार हैं। ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं कि तोता डंड पर बैठ जाता है और खुद अुसे पकड़ लेता है, और फिर कहता है कि मैं बंधनमें पड़ गया हूं।

· "गरीब देशमें शिक्षा और अुद्योगको अलग-अलग रखना पुसा ही नहीं सकता। थोड़े वर्षोंमें शरीर दबता रहा अिसलिअे जरा

अधिक खर्चका भार उठाना चाहिये। किसी राज्यने यह क
नहीं किया। 'जैसा कम है तो शिक्षा थोड़ी दो' — अैसा विं
ही कह सकते हैं। फ्रांसके राज्यमें जिससे जो बोझा अुठ सके,
अुसे अुठावे। विद्यार्थी कितना बोझा अुठा सकते हैं, अिसकी अ
छान-बीन की जाय तो मालूम होगा कि अगर व्यवस्था ठीक ह
तो शिक्षाके खर्चमें वे बहुत अच्छा हिस्सा दे सकते हैं, बल्कि बड़े होन
रोजीके लायक कुछ कोअी अुद्योग भी सीख सकते हैं।"

हरिजनसेवक, १६-१०-'३७

७

कुछ आलोचनाओंका जवाब

मेरी प्राथमिक शिक्षाकी योजना पर अेक अुच्च शिक्षाधिकारी
हमारे अेक मित्र द्वारा अपनी विस्तृत और विचारपूर्ण आलोचना भेजी है
वे अपना नाम प्रगट नहीं करना चाहते। स्थानाभावके कारण मैं अुनकी
सारी दलीलें तो नहीं दे सकता, और न अुनमें कोअी अैसी नअी बात है
है। फिर भी और कुछ नहीं तो लेखकने जिस पत्र पर जो परिश्रम किया
है अुसीके खातिर अुन्हें जवाब तो देना चाहिये।

लेखकने अपने शब्दोंमें मेरी तजवीजोंका मतलब अिस प्रकार
दिया है:

"(१) प्राथमिक शिक्षाका प्रारंभ और अन्त दस्तकारियों
और अुद्योगोंकी तालीमके साथ हो और सामान्य जानकारीकी
दृष्टिसे जो कुछ भी सिखाने-पढ़ानेकी जरूरत हो, वह सहायक
पढ़ाअीके रूपमें शुरू-शुरूमें बता दिया जाय। और लिखने-पढ़ने द्वारा
दिया जानेवाला अितिहास, भूगोल और गणितका बाकायदा शिक्षण
बिलकुल आखिरमें हो।

"(२) प्राथमिक शिक्षा शुरूसे ही स्वावलम्बी होनी चाहिये
और राज्य बच्चोंकी बनायी हुअी चीजोंको लेकर अगर जनताको

बेच दिया करे, तो प्राथमिक शिक्षा स्वावलम्बी हो सकती है — और असे होना चाहिये।

"(३) प्राथमिक शिक्षामें वह सब पढाओ हो जाय, जितनी कि मैट्रिक तक आज होती है — बेशक अंग्रेजीको छोडकर।

"(४) प्रो० के० टी० शाहकी अिस योजनाको अच्छी तरह जांच की जाय, और यदि सम्भव हो तो अुस पर अमल भी किया जाय, कि देशके नवयुवक और युवतियां प्राथमिक शालाओंमें लाजिमी तौर पर अक्षर पढावें।"

अिसके बाद फौरन ही लेखकने लिखा है :

"यदि हम अुपर्युक्त कार्यक्रमका विश्लेषण करें, तो यह दिखाओ देगा कि अिसकी कुछ मूलभूत कल्पनाअें मध्यकालीन हैं; और कहीं-कहीं तो अैसी मान्यताओं पर आधार रखती हैं, जो परीक्षामें ठहर नहीं सकती। शायद नंबर ३ में लिखी मर्यादा बहुत अूंची मानी जायगी।"

अच्छा होता अगर मेरी सूचनाओंका मतलब अपने शब्दोंमें देनेके बजाय लेखक मेरे ही शब्दोंको अुद्धृत कर देते। क्योंकि नंबर १ में जितने भी वाक्य लिखे गये हैं, वे मेरे भावोंको व्यक्त करनेमें बिलकुल असफल रहे हैं। मेरा यह तो हरगिज मतलब नहीं कि शिक्षण दस्तकारियोंसे प्रारंभ किया जाय और अन्य बातें गौण रूपमें सहायकके तौर सिखायी जायं। अिसके विपरीत मैंने तो यह कहा है कि प्रायः सारी सामान्य पढाओ दस्तकारियोंके जरिये और अुनके साथ-साथ ही हो, और ज्यों-ज्यों विद्यार्थी आगे बढ़ता जाय, अुसे अन्य बातें भी सिखायी जायं। लेखकके शब्दोंसे जो भाव निकलता है, वह और यह बिलकुल जुदा-जुदा चीजें हैं। मुझे पता नहीं कि मध्ययुगमें क्या होता था। हां, मैं यह जरूर जानता हूं कि मध्य या किसी भी युगमें यह अुद्देश्य तो कभी नहीं रहा कि दस्तकारियोंकी सहायतासे मनुष्यका पूर्ण विकास साधा जाय। यह कल्पना अेकदम नओी है। अगर यह गलत भी साबित हो, तो भी अुसकी मौलिकता और नवीनतामें कोओी अन्तर नहीं पड़ता। और जब [illegible] कल्पनाको

अच्छी तरह आजमा नहीं लेते, अुस पर अेकदम सीधा आक्रमण भी न कर सकते। बगैर सिद्ध किये ही अेकदम यह कह देना कि यह असम्भव है कोओी दलील नहीं है।

मैंने यह भी नहीं कहा है कि विधिवत् शिक्षा लेखन और पठन द्वारा बिलकुल आखिरमें दी जाय। अिसके विपरीत, असलमें सच्ची शिक्षा तो शुरू-शुरूमें ही आ जाती है। सचमुच यह तो साधारण शिक्षाका अेक महत्त्वपूर्ण अंग है। हां, मैंने यह जरूर कहा है और फिर कहता हूं कि वाचन कुछ देरसे सिखाया जाय और लेखन सबके अन्तमें। पर ये सब क्रियाअें अेक वर्षके अन्दर समाप्त कर देनी चाहिये, जिससे मेरी कल्पनाकी पाठशालामें सात सालका अेक लड़का या लड़की, वर्तमान प्राथमिक शालाओंमें साधारण लड़के-लड़कियोंको अेक सालमें जितना सामान्य ज्ञान होता है, अुससे कहीं अधिक प्राप्त कर ले। वह आजकलके बच्चोंकी भांति जिस तरह नहीं लिखेगा, मानो कागज परसे कीड़ा गुजर गया हो, बल्कि साफ और मोतीके दाने जैसे सुन्दर अक्षर लिखेगा और अच्छी तरह शुद्ध पढ़ेगा भी। वह मामूली जोड़ तथा पहाड़े भी सीख लेगा। और यह सब अेक सालके अन्दर अपनी रुचिकी अेक अुत्पादक दस्तकारी — मसलन् बुनाओी — के जरिये और अुसके साथ-साथ सीख लेगा।

नं० २ भी पहलेकी ही तरह भद्दे ढंगसे लिखा गया है। मैंने दावा तो यह किया है कि दस्तकारियोंकी सहायतासे जब शिक्षा दी जायगी, तो मेरी बतायी हुअी कुल अवधि अर्थात् सात वर्षमें अुसे स्वावलम्बी हो जाना चाहिये। मैंने यह साफ कह दिया है कि पहले दो वर्षमें तो अुसमें कुछ अंशोंमें नुकसान भी होगा।

मध्यकाल शायद बुरा रहा हो, पर मैं किसी चीजकी महज अिसलिअे निन्दा करनेको तैयार नहीं हूं कि वह मध्यकालकी है। निस्सन्देह चरखा अेक मध्यकालीन चीज है। पर आज तो वह वर्तमान जीवनमें अपना स्थान पा चुका है, यद्यपि वस्तु तो वही है। पहले अेक समय, अीस्ट अिंडिया कम्पनीके आगमनके बाद, जहां वह गुलामीका चिह्न था, वहां आज वह स्वतन्त्रता और अेकताका प्रतीक बन गया है। नवीन भारतको आज अुसके अन्दर वे गहन और सच्चे रहस्य नजर आने लग गये हैं, जिनकी

कल्पना हमारे बुजुर्गोंको सपनेमें भी नहीं हुआी होगी। अिसी प्रकार ये दस्तकारियां भी भले ही किसी समय कारखानोंकी गुलामीका चिह्न रही हों, लेकिन आज वे संपूर्ण और सच्चेसे सच्चे अर्थमें शिक्षाका प्रतीक और वाहन बन सकती हैं। अगर मंत्रियोंके अन्दर आवश्यक साहस और कल्पना होगी, तो वे जरूर अिस कल्पनाको कार्यमें परिणत करके देखेंगे, भले ही अुच्च शिक्षाधिकारी तथा अन्य लोग काल्पनिक शंकाओंके आधार पर अिसकी टीकाअें — भले वे सद्हेतुसे प्रेरित ही हों — करते रहें।

यद्यपि लेखकने प्रो० के० टी० शाह द्वारा सुझाअी हुअी लाजिमी सेवाकी योजनाकी व्यावहारिकताको कुछ अंशमें स्वीकार करनेकी भलमनसाहत बतायी है, तो भी आगे चलकर अुन्हें अिस पर अफसोस होना है और वे कहते हैं :

> "देशके नवयुवकों और युवतियोंको पाठशालाओंमें आकर पढ़ानेके लिअे मजबूर करनेवाली कल्पना तो अत्याचारपूर्ण मालूम होती है। जहां पर छोटे-छोटे बच्चे अेकत्र होते हैं, वहां तो हमें अैसे शिक्षकोंको भेजना चाहिये, जिन्होंने स्वेच्छापूर्वक अपनेको अिस कामके लिअे अुस अंश तक अर्पित कर दिया है, जिस अंश तक संसारमें अैसा आत्मोत्सर्ग संभव है। और साथ ही वे लोग अैसे हों, जो बच्चोंको अुत्साहपूर्वक पढ़ा सकें और अुन्हें रोशनी दे सकें। हमने अपने देशके युवकों और युवतियों पर अब तक काफी प्रयोग किये हैं। पर यह तो अेक अैसा प्रयोग है, जिसका अितना बड़ा अनर्थकारी परिणाम होगा कि अुससे हम आधी शताब्दि तक अपना पिंड नहीं छुड़ा पायेंगे। अिस सारी कल्पनाकी जड़में यह मान लिया गया है कि पढ़ाना अेक अैसी कला है, जिसके लिअे किसी प्रकारकी ट्रेनिंगकी जरूरत नहीं है और यह कि हरअेक आदमी जन्मजात शिक्षक होता है। बड़े आश्चर्यकी बात है कि श्री के० टी० शाह जैसे विद्वानके दिमागमें यह बात कैसे बैठ गअी! यह तो अेक निरी सनक है और अिस पर कहीं अमल होने लगा तो अुसके भयंकर दुष्परिणाम होंगे। और फिर हर शिक्षक बच्चोंको दस्तकारियोंकी शिक्षा कैसे देगा?"

प्रो० शाह अपनी योजनाको प्रतिपादित करनेकी काफी क्षमता रखते हैं। पर मैं लेखकको याद दिला देना चाहता हूँ कि वर्तमान शिक्षक स्वयंसेवक नहीं हैं। वे भी (शुद्ध अर्थमें) किराये पर अर्थात् रोटीके लिये काम कर रहे हैं।

प्रो० शाहने अपनी योजनामें यह मान लिया है कि जो शिक्षक नियुक्त किये जायँगे, अुनमें अपने देशके लिये प्रेम, स्वार्थत्यागकी भावना, कुछ सुसंस्कार और अेकाध दस्तकारीका सक्रिय ज्ञान भी होगा। अुनकी कल्पनामें सार है, वह व्यावहारिक है और सबसे अधिक गौर करनेके काबिल है। अगर हम अिस बातकी राह देखते रहें कि हमें जन्मजात अध्यापक मिलें, तब तो कयामत तक ठहरना पड़ेगा। मैं तो कहता हूँ कि हमें बहुत बड़े पैमाने पर शिक्षकोंको तैयार करना पड़ेगा और सो भी थोड़ेसे थोड़े समयमें। यह तब तक संभव नहीं, जब तक कि देशके मौजूदा शिक्षित नौजवान और बहनें अपनी सेवायें अिस कामके लिअे न दे दें। पर यह काम स्वेच्छापूर्वक और प्रेमके साथ हो, तभी सफल हो सकता है। सविनय-अवज्ञाके दिनोंमें देशकी पुकार पर, चाहे कितनी ही थोड़ी संख्यामें क्यों न हो, वे दौड़ पड़े थे। अपने गुजरके लिअे थोड़ासा पारिश्रमिक लेकर देशकी रचनात्मक सेवाकी पुकार पर क्या अब वे फिर नहीं दौड़ पड़ेंगे?

अब लेखक पूछते हैं :

"(१) जब छोटे-छोटे बच्चे काम करेंगे, तो क्या वस्तुओंका अपव्यय नहीं होगा?

(२) अिन चीजोंकी बिक्री किसी मध्यवर्ती संगठन द्वारा ही होगी न? अुसका खर्च कहाँसे आयेगा?

(३) क्या लोगोंको ये चीजें खरीदनेके लिअे मजबूर किया जायगा?

(४) अुन जातियोंकी क्या दशा होगी, जो आजकल ये चीजें बना रही हैं? अुन पर अिस पद्धतिकी क्या प्रतिक्रिया होगी?"

मेरे अुत्तर ये हैं :

(१) बेशक, कुछ अपव्यय तो जरूर होगा, पर अेक वर्षके अन्तमें तो प्रत्येक विद्यार्थीको कुछ लाभ भी होगा।

(२) तैयार चीजोंमें से राज्य अपनी जरूरतोंकी पूर्तिके लिअे खुद ही काफी हिस्सा रख लेगा।

(३) देशके बच्चों द्वारा बनायी हुअी चीजें खरीदनेके लिअे किसीको मजबूर नहीं किया जायगा। लेकिन अुससे यह अपेक्षा जरूर रखी जायगी कि वह अभिमानपूर्वक अुन चीजोंको ले। साथ ही, यह भी अपेक्षा की जा सकती है कि बच्चों द्वारा देशकी जरूरतोंकी पूर्तिके लिये बनायी गअी अिन चीजोंको खरीदनेमें राष्ट्र अेक प्रकारका आनन्द-लाभ भी करेगा।

(४) गांवोंकी दस्तकारियोंसे बनी चीजोंमें तो मुश्किलसे कोअी होड होगी। फिर अिस बातका भी खास तौर पर ध्यान रखा जायगा कि गावोंकी बनी चीजोंसे जिनकी अनुचित होड न हो, अैसी ही चीजें स्कूलोंमें बनें। मसलन् खादी, गावका बना कागज, खजूरका गुड आदि चीजोंमें किसी प्रकारकी प्रतिस्पर्धा नहीं चलेगी।

हरिजनसेवक, १६-१०-'३७

८

'स्वावलम्बी स्कूल'

"हमारी आजकी आर्थिक स्थितिका मुख्य लक्षण यह है कि हमारे देशकी साधन-सामग्री पर आधार रखनेवाले मनुष्योंकी सख्याका बोझा बढता जा रहा है। अुदाहरणार्थ, हिन्दुस्तानमें पड़ती जमीनें विशाल मात्रामें नहीं हैं, न हमारे पास अुपनिवेशों और पूंजीकी ही बहुलता है। अतः हमारी साधन-सामग्रीमें से माल पैदा करनेका काम सीखे हुअे लोगोंको ही सौंपा जाना चाहिये। सौ व्यक्ति जमीनके सौ अलग-अलग टुकड़े जोतें, तो ५० व्यक्तियोंके लिअे पूरी हो सके, अुतनी खुराक ही पैदा होगी। पर यदि ये सब टुकड़े अिकट्ठे किये जायं और २० चतुर (निष्णात) व्यक्ति अुस पर खेती करें, तो यही जमीन सौ व्यक्तियोंको निभा सकती है। आजकल अैसी खोजें

प्रो० शाह अपनी योजनाको प्रतिपादित करनेकी काफी क्षमता रखते हैं। पर मैं लेखकको याद दिला देना चाहता हूं कि वर्तमान शिक्षक स्वयंसेवक नहीं हैं। वे भी (शुद्ध अर्थमें) किराये पर अर्थात् रोटीके लिअे काम कर रहे हैं।

प्रो० शाहने अपनी योजनामें यह मान लिया है कि जो शिक्षक नियुक्त किये जायगे, अुनमें अपने देशके लिअे प्रेम, स्वार्थत्यागकी भावना, कुछ सुसंस्कार और अेकाध दस्तकारीका सक्रिय ज्ञान भी होगा। अुनकी कल्पनामें सार है; वह व्यावहारिक है और सबसे अधिक गौर करनेके काबिल है। अगर हम अिस बातकी राह देखते रहें कि हमें जन्मजात अध्यापक मिलें, तब तो कल्पांत तक ठहरना पड़ेगा। मैं तो कहता हूं कि हमें बहुत बड़े पैमाने पर शिक्षकोंको तैयार करना पड़ेगा और सो भी थोड़ेसे थोड़े समयमें। यह तब तक संभव नहीं, जब तक कि देशके मौजूदा शिक्षित नौजवान और बहनें अपनी सेवाअें अिस कामके लिअे न दे दें। पर यह काम स्वेच्छापूर्वक और प्रेमके साथ हो, तभी सफल हो सकता है। सविनय-अवज्ञाके दिनोंमें देशकी पुकार पर, चाहे कितनी ही थोड़ी संख्यामें क्यों न हो, वे दौड़ पड़े थे। अपने गुजरके लिअे थोड़ासा पारिश्रमिक लेकर देशकी रचनात्मक सेवाकी पुकार पर क्या अब वे फिर नहीं दौड़ पड़ेंगे?

अब लेखक पूछते हैं:

"(१) जब छोटे-छोटे बच्चे काम करेंगे, तो क्या वस्तुओंका अपव्यय नहीं होगा?

(२) अिन चीजोंकी बिक्री किसी मध्यवर्ती संगठन द्वारा ही होगी न? अुसका खर्च कहांसे आयेगा?

(३) क्या लोगोंको ये चीजें खरीदनेके लिअे मजबूर किया जायगा?

(४) अुन जातियोंकी क्या दशा होगी, जो आजकल ये चीजें बना रही हैं? अुन पर अिस पद्धतिकी क्या प्रतिक्रिया होगी?"

मेरे अुत्तर ये हैं:

(१) बेशक, कुछ अपव्यय तो जरूर होगा, पर अेक वर्षके अन्तमें तो प्रत्येक विद्यार्थीको कुछ लाभ भी होगा।

(२) तैयार चीजोंमें से राज्य अपनी जरूरतोंकी पूर्तिके लिअे खुद ही काफी हिस्सा रख लेगा।

(३) देशके बच्चों द्वारा बनायी हुआी चीजें खरीदनेके लिअे किसीको मजबूर नहीं किया जायगा। लेकिन अुससे यह अपेक्षा जरूर रखी जायगी कि वह अभिमानपूर्वक अुन चीजोंको ले। साथ ही, यह भी अपेक्षा की जा सकती है कि बच्चों द्वारा देशकी जरूरतोंकी पूर्तिके लिअे बनायी गअी अिन चीजोंको खरीदनेमें राष्ट्र अेक प्रकारका आनन्द-लाभ भी करेगा।

(४) गांवोंकी दस्तकारियोंसे बनी चीजोंमें तो मुश्किलसे कोअी होड होगी। फिर अिस बातका भी खास तौर पर ध्यान रखा जायगा कि गांवोंकी बनी चीजोंसे जिनकी अनुचित होड न हो, अैसी ही चीजें स्कूलोंमें बनें। मसलन् खादी, गांवका बना कागज, खजूरका गुड आदि चीजोंमें किसी प्रकारकी प्रतिस्पर्धा नहीं चलेगी।

हरिजनसेवक, १६-१०-'३७

८

'स्वावलम्बी स्कूल'

"हमारी आजकी आर्थिक स्थितिका मुख्य लक्षण यह है कि हमारे देशकी साधन-सामग्री पर आधार रखनेवाले मनुष्योंकी संख्याका बोझा बढता जा रहा है। अुदाहरणार्थ, हिन्दुस्तानमें पड़ती जमीनें विशाल मात्रामें नहीं हैं, न हमारे पास अुपनिवेशों और पूंजीकी ही बहुलता है। अतः हमारी साधन-सामग्रीमें से माल पैदा करनेका काम सीखे हुअे लोगोंको ही सौंपा जाना चाहिये। सौ व्यक्ति जमीनके सौ अलग-अलग टुकड़े जोतें, तो ५० व्यक्तियोंके लिअे पूरी हो सके, अुतनी खुराक ही पैदा होगी। पर यदि ये सब टुकड़े अिकट्ठे किये जायं और २० चतुर (निष्णात) व्यक्ति अुस पर खेती करें, तो यही जमीन सौ व्यक्तियोंको निभा सकती है। आजकल अैसी खोजें

खोजकर अुसका अुपयोग करनेके लिअे आवश्यक आबादी नहीं है, बच्चोंको मजदूरी पर लगानेकी प्रथाका बचाव नहीं हो सकता, तो हिन्दुस्तानमें, जहां बच्चोंको काम पर लगानेसे बड़े बेकार बनते हैं, अुसका बचाव हो ही कैसे सकता है?

"माल तैयार करके बाजारमें बेचनेवाले कारखानों जैसे स्वावलम्बी स्कूल शिक्षा देंगे, अैसी भ्रांति रखना अुचित नहीं है। व्यवहारमें तो वह कानूनसे मान्य की हुअी बाल-मजदूरी ही हो जायगी। अुदाहरणस्वरूप, अेक स्कूल कातनेका काम शुरू करेगा, तो चरखा चलाना अेक यांत्रिक क्रिया बन जायगी। अेक थानके लिअे कितना सूत चाहिये, यह गिनकर गणित सीखा जा सकता है या रुअीके विकास और सुधारको देखकर विज्ञान और भूगोल सिखाया जा सकता है, यह बात मेरे गले नहीं अुतरती। ये वस्तुअें मनको अेक-दो बार मनोरंजक बना सकती हैं, पर वर्षों तक यदि ये चालू रहें, तो मनका विकास होना बंद हो जायगा और वह किसी निश्चित लकीर पर ही काम करने लग जायेगा। आंख, कान और हाथोंकी शिक्षा बहुत आवश्यक है और हाथसे की जानेवाली मेहनत सभी स्कूलोंमें अनिवार्य कर दी जानी चाहिये। पर हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि जिसे हाथोंकी शिक्षा कहते हैं, वह वस्तुतः दिमागकी ही शिक्षा होती है। कोअी भी स्कूल शिक्षा देना चाहता हो, तो अुसे बेचा जा सके अैसा माल बनानेका विचार छोड़ ही देना चाहिये। अुसे बच्चोंको भांति-भांतिका कच्चा माल और यंत्र देने चाहिये। अुस पर प्रयोग करके बच्चे अुसे भले ही बिगाड़ें। बिगाड़ तो होगा ही। श्री नरहरि परीखने साबरमती हरिजन आश्रमकी बालाओंकी बताअीके जो आंकड़े दिये हैं, अुनका ध्यानपूर्वक अध्ययन करनेसे प्रकट हो जाता है कि स्कूल अेक ही काम लेकर चलता है, और अुसमें तालीम पाये हुअे बड़ी अुम्रके बालक होते हैं, तब भी काफी मात्रामें बिगाड़ होता है। धंधेको सिखानेवाला स्कूल विज्ञानके कॉलेजकी तरह प्रयोग करने और साधन-सामग्री बिगाड़नेकी जगह है। हिन्दुस्तान जैसे गरीब देशमें तो अैसे स्कूल कमसे कम आवश्यक संख्यामें खोले जाने

चाहिये और वे कुछ खास केन्द्रोंमें होने चाहिये। गोरखपुर या अवधके लड़कोंको चुनकर चमड़ा कमानेका काम सीखनेके लिअे कानपुर भेजा जाय, तो अुससे राष्ट्रको कोअी नुकसान नहीं होगा। पर धंधा सिखानेवाले अगणित स्कूल खोलनेसे तो बिगाड़ होगा ही।

"दूसरा अेक तरहका नुकसान आम तौर पर ध्यानमें नहीं आता। अेक रतल रुअीमें से यदि प्रौढ़ वयका कुशल मजदूर चार मनुष्योंकी जरूरत पूरी हो सके अितने कपड़े बना सकता है, तो बिना सीखा हुआ मजदूर मुश्किलसे दो मनुष्योंकी जरूरतके कपड़े बना सकेगा। अिसका अर्थ यह है कि हिन्दुस्तानके लिअे वस्त्रोंकी जरूरतको पूरा करनेके लिअे आजके मुकाबले दुगुनी जमीनमें कपास बोनी पड़ेगी। दूसरे शब्दोंमें कहें तो बिना सीखे हुअे मजदूरोंसे काम लिया जाय, तो हिन्दुस्तानकी वस्त्रोंकी जरूरत पूरी करनेके लिअे जरूरी कपास अुगानेके लिअे जितनी जमीन चाहिये, अुतनी जमीनमें यदि कुशल मजदूरोंसे काम लिया जाय, तो हिन्दुस्तानकी अन्न और वस्त्र दोनोंकी आवश्यकता पूरी हो सके, अितना अनाज और कपास पैदा हो सकते हैं।

"अिस नुकसानका अेक तीसरा पहलू भी ध्यान देने लायक है। यह कहा जाता है कि स्कूलके बालक तरह तरहकी सुंदर चीजें बना सकते हैं। कुछ दिन पहले अेक अुद्योगशालामें पढ़कर आये हुअे लड़केको मैंने 'प्लाअीवुड'से खिलौने बनाते देखा था। वह जो लकड़ी, नगूचा और औजार अिस्तेमाल करता था, वे सब विदेशी थे। अैसे अुद्योग विदेशी मालकी खपतको, यदि वह हमारे यहां न हो तो, नये सिरेसे पैदा करते हैं। कोअी यह कहेगा कि हम अपना 'प्लाअीवुड' पैदा कर सकते हैं। पर अमेरिकामें अिस पेड़को अुगानेके लिअे जो फालतू जमीन पड़ी है, वह हिन्दुस्तानमें नहीं है। कच्चे माल और पूंजीका अुपयोग बेकार चीजें पैदा करनेमें होता हो, तो अुसे रोकना चाहिये; अुसे अुत्तेजन देना योग्य नहीं।

"स्कूलों या कॉलेजोंमें कोमल दिमागवाले विद्यार्थी पैसे और नफे-टोटेकी नहीं, पर विचारों और आदर्शोंकी सृष्टिमें बसते हैं। अैसी कोमल वयमें यदि अुनके सामने माल पैदा करने, बेचने और अुसके पैसे पैदा करनेका आदर्श रखा जाय तो अुससे बालकोंका विकास रुकेगा और आज जो जगतमें धनकी बहुलताके बीच भी लोगोंको दरिद्रतामें रहना पड़ता है, वह स्थिति बहुत बढ़ जायगी। श्री रामकृष्ण अुद्योगको शिक्षाको कुछ भी महत्त्व नहीं देते थे, यह भी अेक जानने लायक बात है।

"हम शिक्षाके वेगको बढ़ा सकेंगे और आज लड़का जो चीज सात वर्षमें सीखता है, अुसे दो वर्षोंमें सिखा देंगे, अैसा मानना भी अेक विचित्र भ्रम है। लड़केका दिमाग कोअी खाली बरतनकी तरह नहीं है कि अुसमें जो कुछ भरना हो, सो भरा जा सके। बालक जो वस्तु १६ वें वर्षमें सीख सकता है, अुसे वह ८ वें वर्षमें सीखनेका प्रयत्न नहीं कर सकता, न अुसे करना चाहिये। विदेशी भाषाके कारण देरी लगती है, अैसा नहीं है; और लोग मानते हैं अुतना समय भी अिस विषयको नहीं दिया जाता। निबंध-लेखन दिमाग और भावनाका शिक्षण है। अैसी शिक्षा तो धीमी होगी ही। दिमागका विकास करनेके लिअे काममें लिये जानेवाले तरीके शायद अनुत्पादक, नुकसानदेह तथा धीमे लग सकते हैं; पर अितना याद रखना चाहिये कि शिक्षाका अुद्देश्य मनको बलवान बनाना और जीवनमें मनको जरूरी समाधान करना सिखाना है। स्कूल मनुष्य ही नहीं पर माल भी तैयार करें, यह माग करना हमारे लिअे अुचित नहीं है।

"अिस सबका सार यही है कि स्कूल समृद्ध और राष्ट्र दिवालिया बने, अैसी अल्पदृष्टिवाली नीति रखना गलत अर्थशास्त्र है।"

* यह लेख अेक प्रसिद्ध विश्वविद्यालयके अेक अध्यापकका है। जिसके कागज पर लेखकके हस्ताक्षर हैं, पर यह लेख बिना हस्ताक्षरका अिसलिअे मैं लेखकका नाम नहीं देता। पाठकको तो लेखसे मतलब

है, ऐसा भी नहीं। *गहरी जड़ जमाकर बैठी हुई कल्पनाओंसे मनुष्यकी दृष्टि कैसी संकुचित हो जाती है,* अुसका यह अेक जोरदार अुदाहरण है। अिस लेखकने मेरी योजनाको समझनेका कष्ट नहीं अुठाया। मेरी कल्पनाके स्कूलके लड़कोंका वे ऐसे अर्ध-गुलामीवाले कारखानेके लड़कोंके साथ मुकाबला करते हैं, अिससे वे अपनी ही बुद्धिका प्रदर्शन करते हैं। *वे यह भूल जाते हैं कि अुन कारखानोंमें काम करनेवाले लड़कोंको विद्यार्थी नहीं गिना जाता। अुनकी मजदूरी अुनकी शिक्षाका हिस्सा नहीं है।* मैं जिन स्कूलोंकी हिमायत करता हूँ अुनमें तो लड़के हाओी-स्कूलोंमें अंग्रेजीको छोड़कर जितना सीखते हैं वह सब और अुसके अुपरान्त कवायद, संगीत, ड्रॉअिंग और बेशक अेकाध अुद्योग — अितना सीखेंगे। अिन स्कूलोंको कारखाना कहना अनेक स्पष्ट हकीकतोंको समझनेसे अिनकार करनेके बराबर है। *किसी व्यक्तिने बन्दरके सिवा कोओी प्राणी देखा हो न हो और मनुष्यका वर्णन — कुछ ही अंशोंमें —* बन्दरके वर्णनसे मिलता हो अिसी कारण वह मनुष्यका वर्णन पढ़नेसे अिनकार कर दे, अिस तरहकी यह बात है। मैंने अपने सुझावमें से जितने परिणाम पैदा करनेका दावा किया है वे सब परिणाम आवेंगे ही, ऐसी आशा न रखनेकी चेतावनी अिन अध्यापकने लोगोंको दी होती, तो अिसके कहनेमें कुछ तथ्य है, ऐसा समझा जाता। पर वह चेतावनी भी अनावश्यक होती, क्योंकि मैंने स्वयं यह चेतावनी दे दी है।

मेरा सुझाव नया है, यह मैं मानता हूँ। पर नवीनता कोओी अपराध नहीं है। अिसके पीछे काफी अनुभव नहीं है, यह भी मैं मानता हूँ। पर मेरे साथियोंको जो अनुभव मिला है, अुस परसे मुझे यह माननेके लिअे प्रोत्साहन मिलता है कि यदि अिस योजनाको पूरी निष्ठासे अमलमें *लाया जाय तो यह सफल होगी।* यह प्रयोग निष्फल हो, तब भी अिसे आजमा लेनेमें राष्ट्रका कोओी नुकसान नहीं होगा। और यदि यह प्रयोग कुछ अंशोंमें ही सफल हो, तो भी अुससे अपार लाभ होगा। दूसरे किसी तरीकेसे प्राथमिक शिक्षा मुफ्त, अनिवार्य और असरकारक नहीं बनाओी जा सकती। आजकलकी प्राथमिक शिक्षा तो अेक जाल और भ्रमरूप है, यह निर्विवाद वस्तु है।

श्री नरहरि परीखके दिये हुअे आकड़े अिस योजनाका जितना समर्थन हो सके, अुतना करनेके लिअे ही लिखे गये हैं। अिन आकड़ो परसे ही आखिरी निर्णय नही किया जा सकता। ये आकडे प्रोत्साहन अवश्य देते हैं। अुत्साही व्यक्तिको ये अपने काममें आगे बढ़नेके लिअे हकीकतोका अच्छा सहारा देते हैं। सात वर्षका समय मेरी योजनाका अविभाज्य अंग नहीं है। यह भी हो सकता है कि मेरी सोची हुअी बौद्धिक भूमिका पर पहुंचनेमें अधिक वक्त लगे। शिक्षाके समयको बढ़ानेसे राष्ट्रको कोअी नुकसान होनेवाला नही है। मेरी योजनाके आवश्यक अंग ये हैं :

१. सब तरहसे देखने हुअे अेक (या अनेक) अुद्योग लड़के या लड़कीके सर्वांगीण विकासका अच्छेसे अच्छा साधन है और अिसलिअे सारा पाठ्यक्रम अुद्योग-शिक्षाके आसपास गूथा जाना चाहिये।

२ अिस कल्पनाके अनुसार दी हुअी प्राथमिक शिक्षा कुल मिलाकर स्वावलम्बी अवश्य होगी, यद्यपि पहले वर्षके या दूसरे वर्षके पाठ्यक्रममे शायद वह पूर्ण स्वावलम्बी न बने। यहा प्राथमिक शिक्षाका अर्थ अुच्चशिक्षासे है।

गणित और दूसरे विषय अुद्योग द्वारा सिखानेके बारेमें अिन अध्यापकने शंका की है। अिसमें वे बिना अनुभवके बोलते हैं। मैं अपने अनुभवसे कह सकता हूं। दक्षिण अफ्रीकामें टॉल्स्टॉय फार्म पर जिन लड़के-लड़कियोंकी शिक्षाके लिअे मैं सीधा जिम्मेदार था, अुनका सर्वांगीण विकास करनेमें मुझे कोअी मुश्किल नही हुअी। वहा शिक्षाका केन्द्र-बिन्दु करीब आठ घण्टेका अुद्योग था। अुनका अेक या बहुत हुआ तो दो घंटेकी अक्षर-ज्ञानकी शिक्षा मिलती थी। अुद्योगमें खोदना, खाना पकाना, पाखाना साफ करना, झाड़ू लगाना, चप्पल बनाना, सादा बढ़अी-काम और संदेशे लाना ले जाना — ये काम थे। बालकोंकी अुम्र ६ से १६ वर्षकी थी। यह प्रयोग अुसके बाद तो खूब फला-फूला है।

हरिजनबन्धु, ३-१०-'३७

९

विचार नहीं, प्रत्यक्ष कार्य

डॉ० जी० अेम० अरंडेलने मुझे पहलेसे अपने अेक लेखकी अप्रकाशित प्रति भेज दी है, जो अुन्होंने 'ओरियंट' नामक सचित्र साप्ताहिकमें छपनेके लिअे भेजा है। और साथमें लिखा है:

"आपने यह अिच्छा जाहिर की है कि अिस देशमें शिक्षा, जो आज तक कृत्रिम रही है, अब वास्तविक हो जाय। अेक अैसे आदमीकी हैसियतसे कि जिसने तीससे भी अधिक साल तक शिक्षाके क्षेत्रमें प्रत्यक्ष कार्य किया है, मैं आपको अपना लेख भेजता हूं, जो 'ओरियंट' नामक सचित्र साप्ताहिकमें छपने जा रहा है। संभव है अिसमें — कुछ अंशोंमें — आपके ही विचारोंका समर्थन हो। मैं भी जरूर यह अनुभव करता हूं कि हमें शिक्षाकी अेक राष्ट्रीय योजना बनानी चाहिये, जिसे प्रत्येक मंत्री अपने प्रान्तमें सफल करनेका अपनी शक्तिभर प्रयत्न करे। अिस दिशामें स्वतन्त्र रूपसे काफी प्रयत्न किये गये हैं। पर मुझे अैसा लगता है कि अब तो शिक्षाके अुन महान सिद्धान्तों पर जल्दीसे जल्दी अमल शुरू हो जाना चाहिये, जिससे सरकार और जनता दोनों मिलकर समान दिलचस्पीके साथ अिस यत्नमें जुट पड़ें।"

अिस लेखसे मैं सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और कामके अवतरण नीचे दे रहा हूं। अिस यत्नको हम किस प्रकार शुरू करें, यह बताकर डॉ० अरंडेल लिखते हैं

"राष्ट्रीय शिक्षाके मूलभूत सिद्धान्त क्या हैं, यह प्रतिपादन करनेके लिअे यहां मेरे पास स्थान नहीं है। पर हां, अितना तो कह देना आवश्यक है कि जहां तक लड़कों और लड़कियोंकी स्कूली शिक्षासे सम्बन्ध है, मैं आशा करता हूं कि हम 'स्कूल' और 'कॉलेज'की शिक्षाका बेतरतीबसा भेद मिटा देंगे। मुझसे आखिर तक अेक ही अुद्देश्य रहेगा — प्रत्यक्ष कार्य, क्योंकि विचारोंको चाहे कितनी ही अुत्तेजना दीजिये,

जब तक हम कार्य-प्रवृत्त नहीं होते, वे निरर्थक ही हैं। यही बात हृदयके धर्मोके विषयमें भी कही जा सकती है। पर अधिकाश आधुनिक शिक्षा-प्रणालियोंमें जिनकी बडी अपेक्षा की जा रही है, जो अेक भयंकर बात है। आज हिन्दुस्तानके युवकोंको कार्यकर्ता बननेकी जरूरत है — अैसे कार्यकर्ता, जिनके चरित्रका शिक्षा द्वारा अिस प्रकार निर्माण हुआ हो कि वह स्वभावतः कार्यमें, वास्तविक योग्यतामें, सेवामें परिणत हो जाय। हिन्दुस्तानको अैसे जवान नागरिकोंकी जरूरत है, जो परिस्थिति और परम्परानुसार जिस किसी क्षेत्रमें जायं वहा कुछ अच्छा करके दिखा सकें। पाठ्यक्रमके प्रत्येक विषयका अुद्देश्य यही है कि बच्चोंका जीवन ठीक वैसा ही हो, जैसा कि अुसे होना चाहिये। प्रत्येक विषय जीवनके मर्मको, विधि और अुद्देश्यको खोलकर रख दे। कठोर वास्तविकताओंका मुकाबला करते समय शिक्षक अिन बातोंको कभी न भूलें। वे यह स्मरण रखें कि हमारा बुद्धिक्षेत्र वास्तविकताओंमें नहीं, रूढिगत विश्वासोंसे भरा हुआ है। सर आर्थर अेडिंगटनने बिलकुल ठीक कहा था कि विज्ञानने यह अेक जबरदस्त सेवा की है कि अुसने हमें सन्देहसे सत्यताकी ओर प्रयत्न करना सिखाया है। अिसलिअे बच्चोंको पढ़ाया भी अिस तरह जाय कि वे सच-सच बातें अच्छी तरह जान लें और दूसरी तमाम बातोंके अलावा वे अुनके चरित्र-निर्माणमें सहायक हों; क्योंकि राष्ट्र और व्यक्ति दोनोंके लिअे यही तो सबसे अधिक सुरक्षित आधारभूत वस्तु है।

"जहां अेक बार चरित्र निर्माण हुआ कि कुछ करनेकी अिच्छा प्रबल होगी ही, दोनों ही क्षेत्रोंमें — स्वावलम्बनमें और स्वार्थत्यागमें। जमीन अर्थात् भूमाताकी ओर हमारी अधिकसे अधिक बढनेकी अिच्छा होगी। खेती द्वारा हम अुसकी पूजा करना चाहेंगे। हमारी जरूरतें कम होंगी और अिच्छायें धर्मानुकूल होंगी। मैं तो मानता हूं कि भूमाताका कोअी भी बालक अैसा न हो, जो किसी न किसी रूपमें अपनी आजीविका खुद अुसीसे प्राप्त न कर सकता हो। और हर प्रकारकी शिक्षामें, शहरकी शिक्षा-संस्थाओंमें भी, मैं चाहूंगा कि किसी न किसी अंशमें अुनसे हमारा सम्पर्क बना रहे।

"आज अुन सब रूढ़ियोंसे हमें अेकबारगी अपना नाता तोड़ देना चाहिये, जिन्होंने शिक्षाको अितना अधिक निरर्थक बना दिया है। राष्ट्रीय मंत्रि-मंडलोंकी संरक्षकतामें हमें सच्ची शिक्षाकी पद्धति शुरू कर देनी चाहिये। सच्ची शिक्षाके मानी यह नहीं हैं कि हम बच्चोंके दिमागमें कोरी जानकारी ठूंस दें। हम तो शिक्षा-सम्बन्धी अुन रूढ़ियों और ढकोसलोंके अन्दर बुरी तरह बंद कर दिये गये हैं, जो अब पुराने और बेकार साबित हो चुके हैं। *अिसलिअे मैं गांधीजी द्वारा प्रतिपादित स्वावलम्बी शिक्षा-पद्धतिका* हृदयसे स्वागत करता हूं। हां, अभी मुझे अिसका पूरा निश्चय तो नहीं हुआ है कि वे कितनी दूर तक हमें ले जाना चाहते हैं और हम दरअसल वहां तक जा सकेंगे या नहीं। पर मैं अुनकी अिस तजवीजसे पूरी तरह सहमत हूं कि सात वर्षकी पढ़ाअीके बाद हर विद्यार्थीको अेक स्वाश्रयी नागरिक बनकर संसारमें प्रवेश करना चाहिये। मुझे खुद यही लगता है कि प्रत्येक मनुष्यको कुछ हद तक शिक्षा द्वारा अपनी सृजन-शक्तिका भान हो जाना चाहिये। क्योंकि वह भी तो *अुस परमात्माकी अेक विकासोन्मुख कला है, और अिसलिअे अुसमें परम अीश्वरीय गुणका, सृजन-शक्तिका होना जरूरी* है। मनुष्यके अिस श्रेष्ठ धर्मको यदि शिक्षा जाग्रत नहीं कर सकती, तो वह आखिर है किस मसरफकी? तब तो वह शिक्षा नहीं, किसी न किसी प्रकारसे मस्तिष्कमें जानकारी ठूंस देना है।

"मस्तिष्ककी भांति हमारे हाथोंमें भी तो कला-कौशलका निवास है। लम्बे अरसेसे निष्क्रिय बुद्धिको अीश्वर समझकर हम अुसकी पूजा करते आये हैं। *अुसने हम पर बड़ा जुल्म किया है। वह हमारी शासिका और स्वामिनी* रही है। *हमारी नवीन समाज-रचनामें बुद्धि* हमारे अनेक सेवकोंमें से अेक होगी। और जो जो बातें हमारे जीवनको सरल और सादा बनानेवाली हों, प्राकृतिक सुन्दरताओंकी ओर हमें खींचकर ले जायं, अपने हाथसे काम करके अुसके सहारे अपनी आजीविका कमानेमें सहायक हों, अैसे हर तरहके कामको — चाहे वह कलाकारका हो, शिल्पकारका हो या किसानका हो — हमें गौरवान्वित करना सीखना चाहिये।

"*मैं जानता हूं कि अगर मुझे अिस तरहकी शिक्षा मिली होती, तो* मेरा जीवन अधिक सुखी और सफल होता।"

अब तक मैं जो बात साधारण आदमीकी हैसियतसे साधारण पाठकोंके लिअे कहता आया हूं, वही बात डॉ० अरुंडेल अेक शिक्षाशास्त्रीकी हैसियतसे शिक्षाशास्त्रियोंके लिअे तथा अुन लोगोंके लिअे कहते हैं जिनके सुपुर्द देशके युवकोंके निर्माणका कार्य है। स्वावलम्बी शिक्षाकी कल्पनाका अुल्लेख जिस सावधानीसे वे कर रहे हैं, अुससे मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। पर मेरे लिअे तो वही सबसे महत्वपूर्ण समस्या है। मुझे अफसोस तो अिस बातका हो रहा है कि परिस्थिति-वश वह चीज मुझे आज अितनी देरीसे साफ-साफ नजर आअी है, जिसे मैं गत चालीस वर्षसे काचके बीचमें अस्पष्ट-सा देख रहा था।

सन् १९२० में मैंने वर्तमान शिक्षा-पद्धतिकी काफी कडे शब्दोंमें निन्दा की थी। और आज चाहे कितने ही थोड़े अंशोंमें क्यों न हो, देशके सात प्रांतोंमें अुन मंत्रियों द्वारा अुस पर असर डालनेका मुझे मौका मिला है, जिन्होंने मेरे साथ सार्वजनिक कार्य किया है और देशकी स्वाधीनताके अुस महान युद्धमें मेरे साथ तरह-तरहकी मुसीबतें अुठाअी हैं। आज मुझे भीतरसे अेक अैसी दुर्दमनीय प्रेरणा हो रही है कि मैं अपने अिस आरोपको सिद्ध करके दिखा दूं कि वर्तमान शिक्षा-पद्धति नीचेसे लेकर अूपर तक मूलतः बिलकुल गलत है। और 'हरिजन' में जिस बातको प्रगट करनेका मैं अब तक प्रयास करता रहा हूं और फिर भी ठीक-ठीक प्रगट नहीं कर सका, वही अब मेरे सामने सूर्यवत् स्पष्ट हो गअी है और प्रतिदिन अुसकी सचाअी मुझ पर अधिकाधिक स्पष्ट होती जा रही है। अिसलिअे मैं देशके शिक्षाशास्त्रियोंसे यह कहनेका साहस कर रहा हूं कि जिनका अिसमें किसी प्रकारका स्वार्थ नहीं है और जिन्होंने अपने हृदयको नये विचारोंको पानेके लिअे बिलकुल खुला रखा है, वे मेरे बताये अिन दो प्रश्नोंका अध्ययन करें और अिसमें वर्तमान शिक्षाके कारण मजबूत बनी हुअी कल्पनाको अपनी बुद्धिके स्वतंत्र प्रवाहमें बाधक न होने दें। मैं जो कुछ लिख रहा हूं और कह रहा हूं, अुस पर विचार करते समय वे यह न सोचें कि मैं शिक्षाके शास्त्रीय और रूढ़िमान्य रूपसे बिलकुल अनभिज्ञ हूं। कहा जाता है कि ज्ञान अकसर बच्चोंके मुंहसे प्रकट होता है। 'बालादपि सुभाषितम् ग्राह्यम्' अिसमें कविकी अत्युक्ति हो सकती है, पर अिसमें कोअी शक नहीं कि वह कभी-कभी

दरअसल बच्चोंके मुहसे प्रगट होता है। विशेषज्ञ अुसे सुधारकर बाद
वैज्ञानिक रूप दे देते हैं। अिसलिअे मैं चाहता हूं कि मेरे प्रश्नों पर निरपे
और केवल सारासारकी दृष्टिसे विचार हो। यों तो पहले भी मैं अि
सवालोंको पेश कर चुका हूं, पर यह लेख लिखते समय जिन शब्दोंमें वे
मुझे सूझ रहे हैं, मैं फिर अुन्हें पाठकोंके सामने पेश कर देता हूं :

(१) *सात सालमें प्राथमिक शिक्षाके अुन सब विषयोंकी पढ़ाअी हो* जो आज मैट्रिक तक पढ़ाये जाते हैं। पर अुनमें से अंग्रेजीको हटाकर अुनके *स्थान पर किसी अुद्योगकी शिक्षा बच्चोंको अिस तरह दी जाय कि जिससे* ज्ञानकी तमाम शाखाओंमें अुनका आवश्यक मानसिक विकास हो जाय। आज *प्राथमिक, माध्यमिक और हाअीस्कूलकी शिक्षाके नाम पर जो पढ़ाअी* होती है, अुसकी जगह पर अिस पढ़ाअीको ले लें।

(२) *यह पढ़ाअी स्वावलम्बी हो सकती है और यह अैसी होनी ही* चाहिये। वास्तवमें, स्वावलम्बन ही अुसकी सचाअीकी सच्ची कसौटी है।

हरिजनसेवक, २-१०-'३७

१०

स्वाश्रयी शिक्षा

सरकारीका अर्थ मात्र प्रान्तोंमें कांग्रेस-सरकारी समझना चाहिये। *पर कांग्रेस-सरकार बन गयी, अिसलिअे जो मानस कांग्रेसवादी लोगोंका न था वह सहायक हो जायगा, यह माननेका कोअी कारण नहीं है। यद्यपि कांग्रेसका रचनात्मक कार्यक्रम १९२० के महापरिवर्तन कालसे चलता आ रहा है, तो भी अिसके लिअे कांग्रेसवादियोंमें अुचित वातावरण पैदा हो गया है, यह नहीं कहा जा सकता। फिर जो लोग कांग्रेससे बाहर हैं, अुनके बारेमें तो कहना ही क्या? पर यद्यपि ('सहायक' विशेषणका अहिंसक रचनामें अुपयोग करना अयोग्य न हो तो) सहायक या विधेयात्मक कार्यक्रम जितना लोकप्रिय बना, अुतना रचनात्मक अथवा सुधारक कार्यक्रम नहीं बन सका, तब भी कांग्रेस अुसे १९२० से सहन करती आयी है।*

काग्रेसने अुसे कभी रद्द नहीं किया और कांग्रेसजनोंने अुसे अच्छी संस्थामें अपना लिया है ; अिससे अिस क्षेत्रमें जो कुछ हो सका है, वह कांग्रेसवालोंसे ही हो सका है और प्रगति होनेकी आशा भी जहां कांग्रेस-सरकार बनी है वहीं रखी जा सकती है। पर कांग्रेस-सरकार बन गअी, अिसलिअे रचनात्मक कार्यमें श्रद्धा रखनेवाले धीमे न पड़ें, गफलतमें न रहें। कांग्रेस-सरकार बननेसे अुनका धर्म अधिक जाग्रत, अधिक अुद्यमी और अधिक अभ्यासी होनेका है। और अैसा होगा तभी कांग्रेस-सरकारके बारेमें जो आशा रखी होगी, वह सफल होगी। कांग्रेस-सरकारका अर्थ है, लोकतंत्रके प्रति जिम्मेदार सरकार। अिस सरकारको लोकतंत्र यदि आज हटाना चाहे तो हटा सकता है। लोकतंत्रकी अिच्छा और सत्ता पर ही यह सरकार निर्भर है। अिससे कांग्रेसवादी लोग चाहें तो रचनात्मक कार्यक्रमको स्वीकार करा सकते हैं और अुसका अमल भी करा सकते हैं, और तभी वह हो सकता है। सरकारके पास स्वतंत्र ताकत यानी तलवारका जोर नहीं है। अुसका कांग्रेसने ही अिच्छापूर्वक त्याग कर दिया है। यह ताकत तो ब्रिटिश सरकारके पास है। जब कांग्रेस सरकारको ब्रिटिश सत्ताका यानी तलवारकी ताकतका अुपयोग करना पड़े, तब समझना चाहिये कि तिरंगा झंडा नीचे गिर गया। कांग्रेस-सरकार अुस दिनसे खतम हुअी समझना। यदि लोग कांग्रेसकी अर्थात् कांग्रेस-सरकारकी बात नहीं मानेंगे या अुनमें अहिंसाने प्रवेश नहीं किया होगा, तो आज तेजस्वी लगनेवाली सरकार कल निस्तेज हो जायगी।

अतः रचनात्मक कार्यक्रममें श्रद्धा रखनेवाले कांग्रेसवादी सावधान हो जायं। मेरा पेश किया हुआ शिक्षाक्रम भी रचनात्मक कामका ही अेक बड़ा अंग है। जो रूप अुसे मैं आज दे रहा हूं, अुसे कांग्रेसने अपना लिया है, यह कहनेका मेरा आशय नहीं है। पर मैं जो लिख रहा हूं, वह १९२० से राष्ट्रीय शालाओंके लिअे जो कुछ मैंने कहा है या लिखा है, अुसकी जड़में छिपा हुआ ही था। समय आने पर वह मेरे सामने यकायक प्रगट हुआ है, अैसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

अब यदि प्राथमिक शिक्षा अुद्योग द्वारा ही देनी है, तो यह काम अभी तो खास कर चरखे और दूसरे ग्रामोद्योगोंके बारेमें विश्वास रखनेवालोंसे ही हो सकता है। क्योंकि ग्रामोद्योगोंमें मुख्य वस्तु चरखा है। अुसके अुद्योगमें

चरखा-संघने काफी जानकारी प्राप्त कर ली है और दूसरे अुद्योगोंके बारेमें ग्रामोद्योग-संघ जानकारी प्राप्त कर रहा है। अतः जो तात्कालिक रचना हो सकती है, वह चरखे आदि ग्रामोद्योगों द्वारा ही हो सकती है, अैसा मुझे लगता है। पर जिनको चरखेमें श्रद्धा है, वे सब शिक्षक नहीं होते। हरअेक बढ़अी बढ़अीगिरीका शास्त्री नहीं होता। जो अुद्योगका शास्त्र नहीं जानता, वह अुद्योग द्वारा सामान्य शिक्षा नहीं दे सकता। अिससे जिनको शिक्षाशास्त्रमें दिलचस्पी है और चरखे अित्यादिमें दिलचस्पी है, अैसे मनुष्य ही प्राथमिक शिक्षामें मेरा सुझाया हुआ क्रम दाखिल कर सकते हैं। मेरे पास आया हुआ श्री दिलखुश दीवानजीका पत्र अैसे लोगोंको मदद करेगा, यह मानकर अुसे नीचे पेश करता हूं :

"स्वाश्रय और अुद्योग द्वारा शिक्षाके बारेमें आप 'हरिजन' और 'हरिजनबंधु' में जो सुन्दर विचार और अनुभव लिख रहे हैं, अुनसे मुझे अपने यहांके अिस दिशाके कार्यमें अितना अधिक प्रोत्साहन और अुत्तेजन मिलता है कि मैं यह पत्र लिखनेको प्रेरित हुआ हूं और आपकी सारी योजना कितनी योग्य है, अुसके बारेमें मेरा अुत्साह बतानेके लिअे ललचाया हूं। दो बरससे मैं यहां छोटीसी अुद्योगशाला चला रहा हूं। अुसके अनुभव आपके विचारोंसे सूत्र मिलते जा रहे हैं, अिससे मुझे बहुत हर्ष होता है। अिस-लिअे आप जो क्रांतिकारी विचार बता रहे हैं, अुनका मैं पूरी तरहसे स्वागत करता हूं और अुसमें मेरी सौ फी सदी सहमति दे सकता हूं। यह मेरी अंधश्रद्धाका परिणाम नहीं है, बल्कि अनुभवजन्य श्रद्धाका प्रतीक है, अैसा आप समझ सकेंगे। आप सारे देशको अुपयोगी हो, अैसी शास्त्रीय और सम्पूर्ण योजनाका विचार कर रहे हैं। मैं यहां जो काम कर रहा हूं, अुसमें पूर्णता और शास्त्रीयताकी काफी गुंजाअिश है और मैं अुस दिशामें प्रयत्न कर रहा हूं। अिसमें अधिक पूर्ण बननेमें अत्यन्त अुत्साह और आनन्द मिलता है। पर दो वर्षसे मुझे जो भी अनुभव हो रहे हैं, अुनके बारेमें अुत्पन्न होनेवाले प्रश्नों पर जो कुछ चिन्तन, विचार वगैरा चल रहे हैं, अुन परसे मुझे आपके स्वाश्रयी और अुद्योगी शिक्षाके विचार बहुत ही योग्य और अनुभवसिद्ध हो सकने जैसे लगते हैं। मैं आपके विचार और मुद्दे समझ सका हूं। अिसी तरह मेरा अनुभव भी अैसा होता जा रहा है कि :

"१. अुद्योगको सब प्रकारकी शिक्षाका माध्यम रखनेसे सचमुच ही विद्यार्थीको सर्वोत्तम शिक्षा मिल जाती है और पुरुषार्थ और चरित्रके संस्कार तो अुसमें अैसी अुद्योगमय शिक्षाकी बहुत कीमती बख्शिश ही हो जाते हैं। अतः हिन्दुस्तान जैसे गरीब देशकी शिक्षाको स्वाश्रयी बनानेकी अिसमें जो अपार शक्ति भरी हुअी है, अुसके सिवा शिक्षाके शुद्ध शास्त्रकी दृष्टिसे भी अुद्योगको शिक्षाका माध्यम बनानेसे विद्यार्थियोंका सर्वांगीण विकास बहुत ही सरल हो जाता है।

"२. अुद्योगको शिक्षाका माध्यम बनानेसे प्राथमिक शिक्षा जरूर आसानीसे स्वाश्रयी बन सकती है। हिन्दुस्तान जैसे गरीब देशकी शिक्षाका प्रश्न शिक्षाको स्वावलम्बी बनानेसे ही हल किया जा सकता है। अिसके अलावा यही पद्धति हमारी आर्य संस्कृतिके अनुरूप हो सकती है। मुझे तो चरखेका अुद्योग ही खूब पसन्द आ गया है। यही सर्व-व्यापक हो सकता है, अैसा लगता है। अिसलिअे मेरे दो वर्षके अनुभवमें चरखा अुद्योगकी प्राप्तिके ही आकड़े मेरे पास पड़े हैं। आपने विचार किया है, अुतना व्यवस्थित रूप मेरे शिक्षाकार्यको अभी नहीं मिला है। अतः अिसमें मिले हुअे अनुभवके विस्तारके लिअे काफी गुंजाअिश है। ये आकडे और अुनके बारेमें दी हुअी टिप्पणियां आप देखना चाहें तो भेजूंगा।

"३. मुझे तो यह भी स्पष्ट होता जा रहा है कि अंग्रेजीको हटा देनेसे और प्राथमिक शिक्षाका अधिक व्यापक दृष्टिसे विचार करनेसे — और अधिक समय अुद्योगमें देने पर भी — अिस पद्धतिसे थोड़े वर्षोंमें विद्यार्थियोंका अधिक विकास हम साध सकेंगे। 'पंडिताअी', 'विद्वत्ता', 'कौशल', आदिके शिक्षाके आजके अत्यन्त भ्रामक विचारोंको छोड़ देंगे, तभी अुद्योग-शिक्षामें रहे हुअे सर्वगामी विकासकी पहचान हम कर सकेंगे।

"४. स्कूलके कुल समयका पौना भाग अुद्योगके लिअे देनेकी पहली क्रांति करके शिक्षा-पद्धतिमें दूसरी क्रांति यह करनी होगी कि वाचन, लेखन, समय-पत्रक, परीक्षा, विषयवार शिक्षा आदि आजके साधन दूर करके अुद्योग-शिक्षाके लिअे नीचेके साधन काममें लिये जायं, जो बहुत ही अुपयोगी और सरल सिद्ध होते जा रहे हैं :

"(अ) श्रुतशिक्षा : पुस्तकों पर आधार रखनेके बजाय शिक्षक ही विद्यार्थियोंके आगे जीवित पुस्तक बनकर बैठ जाय, तो घूमते-फिरते बातोंमें और व्यवस्थित रीतिसे विद्यार्थी थोड़े समयमें जितना अधिक सीख लेते हैं कि शिक्षकके अुत्साह और विद्यार्थियोंकी जिज्ञासाके परिणामस्वरूप अिस जीवित पुस्तकमें नित्य नये प्रकरण जुड़ते ही जाते हैं। और असी श्रुत-शिक्षामें पुस्तकोंका खर्च लगभग मिट ही जाता है।

"*(आ) शिक्षकका सहवास : अुद्योग-शिक्षाका यह बिलकुल* अनिवार्य साधन है। शिक्षकके हृदयमें विद्यार्थियोंके लिअे प्रेम और अुत्साह भरा हुआ होगा, तो यह सहवास बहुत ही सरल, रसिक और परस्पर विकास-साधक हो जायगा। असा शिक्षक शिक्षाके साथ-साथ निरंतर विद्यार्थी भी बना रहता है।

"(अि) राष्ट्रीय और सार्वजनिक प्रवृत्तियोंमें सतत सहयोग देनेका क्रम : अुद्योगों द्वारा तो विद्यार्थीवर्ग बचपनसे ही प्रजा, समाज या सरकारकी मदद करने लग जाता है। पर जैसा कि आप लिखते हैं, शराब-बन्दी, हरिजन-सेवा और ग्राम-सफाओ जैसी प्रवृत्तियोंमें *सतत सहयोग देनेका क्रम अपने स्कूलमें दाखिल करके कुशल और अुत्साही शिक्षक जीवनकी शुरुआतमें ही विद्यार्थियोंको सेवा और समाज-परिचयकी* अुत्तम प्रकारकी व्यावहारिक और जीवित शिक्षा दे देता है। हमारी अुद्योग-शिक्षाका यह नया साधन सारी शिक्षाको अत्यन्त व्यावहारिक, जीवित और फलप्रद बना देता है। जैसे-जैसे अिस बारेमें मैं ज्यादा-ज्यादा विचार करता हूं, वैसे-वैसे मुझे अधिकाधिक स्पष्ट होता जा रहा है कि स्वराज्य-साधना और स्वराज्य-संचालनकी खादी, ग्रामोद्योग, मद्यनिषेध, हरिजन-सेवा और *ग्राम-सफाओ* जैसी हमारी प्राणदायक प्रवृत्तियोंके लिअे *अुद्योग-प्रधान प्राथमिक स्कूल खूब ही मददगार होनेवाले हैं। 'विद्यार्थी ही प्रजाका सच्चा निर्माण कर सकते हैं'* — अिस सूत्रका अिसमें कितना सुन्दर प्रयोग होनेवाला है!

"(ओ) माता-पिता — बड़ोंके साथ अधिक निकट, अधिक जीवित सम्बन्ध : हमारी नअी प्राथमिक शिक्षाका यह साधन बहुत शक्तिशाली बननेवाला है। आजकी शिक्षा तो विद्यार्थियों और अुनके माता-पिताके बीचका अन्तर बढ़ाती रहती है। रजिस्टर पर दस्तखत करने और फीस देनेके *सिवा*

माता-पिताओंको बच्चोंकी स्कूली शिक्षामें कोअी दिलचस्पी नहीं होती। स्कूलमें मिलनेवाली शिक्षा पुस्तकीय होनेसे गृहतन्त्रके व्यवहारसे दूर ही भागती है — कौटुम्बिक प्रेम टूटता जाता है। वर्ण-व्यवस्थामें रही हुअी परम्परागत खेती व अुद्योगकी शृंखलाकी कड़ियां पुस्तकीय शिक्षामें खोने और अुलझ जानेसे शुद्ध वर्ण-व्यवस्थाका लोप हो रहा है। परिणामस्वरूप देशकी खेती और ग्रामोद्योग सूखते जा रहे हैं। हमारी शिक्षा अुद्योगमय होगी, अत: गांवके अुद्योगोंके साथ अर्थात् माता-पिताके धंधेके साथ अुसका सीधा संबंध होगा। अत: माता-पिताको अुसमें खूब दिलचस्पी होगी। अुनको विश्वास हो जायगा कि लड़के-लड़की पढ़कर अुद्योग-विहीन नहीं होंगे, बल्कि गृह-कार्यमें, घरके धंधोंमें मदद करेंगे। अिस तरह प्राथमिक शिक्षाको अनिवार्य बनानेका प्रश्न अधिक सरल बनेगा। अनिवार्य शिक्षाके पीछेकी ताकत सजा नहीं होगी; माता-पिताका अुत्साहयुक्त सहयोग ही अुसकी सच्ची शक्ति होगी।

"(अु) प्राथमिक शिक्षाके खयालको आप व्यापक बनाना चाहते हैं, यह बहुत योग्य है। गुजरातीकी चार कक्षा तक पढ़े हुअे विद्यार्थी मेरे पास आते हैं। अुनके अनुभव अैसे प्राप्त हो रहे हैं कि चार कक्षाओं तक पढ़ लेनेवाले गांवोंके विद्यार्थियोंके पूरे प्रश्न पर नये और कारगर तरीकेसे विचार किया जाना चाहिये। अनुभव तो यह होता है कि चार कक्षाओंके बाद अंग्रेजीके मोहसे गांवोंके विद्यार्थी शहरी स्कूलोंकी तरफ आकर्षित होते हैं। यह शिक्षा खर्चीली होनेसे बहुतोंके लिअे अुसके दरवाजे बन्द रहते हैं। अुनकी शिक्षा बीचमें ही बन्द हो जाती है। जो बड़ी मुश्किलसे आते हैं, वे विलासी, परोपजीवी शिक्षा लेकर आनेसे, माता-पिताको और गांवके हितोंको धोखा देते हैं। अिस वर्गको यदि गांवमें अुद्योगशाला रखकर पढ़ायें, तो अिसमें माता-पिताका, विद्यार्थीका और गांवका अपार हित होता है। विद्यार्थियोंको विनीत (मैट्रिक) तकका ज्ञान बहुत थोड़े समयमें चार घण्टे अुद्योग और दो घण्टे अभ्यासवाले स्कूलमें बहुत आसानीसे दिया जा सकता है, अैसा मेरा अनुभव दृढ़ होता ही जा रहा है।"

हरिजनबंधु, १७-१०-'३७

११

वर्धा-शिक्षा-परिषद्

१

[ता० २२-२३ अक्तूबर, १९३७ को वर्धामें हुई शिक्षा-परिषद्के सामने गांधीजी द्वारा पेश किया हुआ मूल विचार यह था :]

"१. शिक्षाकी वर्तमान पद्धति किसी भी तरह देशकी आवश्यकताओंकी पूर्ति नहीं कर सकती। अुच्च शिक्षाकी तमाम शाखाओंमें अंग्रेजी भाषाको माध्यम बना देनेके कारण अुसने अुच्च शिक्षा पाये हुअे मुट्ठीभर लोगों तथा आम जन-समुदायके बीच अेक स्थायी दीवार-सी खड़ी कर दी है। अिसकी वजहसे जन-साधारण तक छन छन कर ज्ञानके आनेमें बड़ी रुकावट पड़ गयी है। अंग्रेजीको अिस तरह अत्यधिक महत्त्व देनेके कारण शिक्षित लोगों पर अितना अधिक भार पड़ गया है कि सच्चे जीवनके लिअे अुनकी मानसिक शक्तियां पंगु हो गयी हैं और वे अपने ही देशमें विदेशियोंकी भांति बेगाने बन गये हैं। अुद्योगोंके शिक्षणके अभावने शिक्षितोंको अुत्पादक कामके सर्वथा अयोग्य बना दिया है और शारीरिक दृष्टिसे भी अुनका बड़ा नुकसान किया है। प्राथमिक शिक्षा पर आज जो खर्च हो रहा है, वह बिलकुल निरर्थक है। क्योंकि जो कुछ भी सिखाया जाता है, अुसे पढ़नेवाले बहुत जल्दी भूल जाते हैं और शहरों तथा गांवोंकी दृष्टिसे अुनका तो कौड़ीका भी मूल्य नहीं है। वर्तमान शिक्षा-पद्धतिसे जो कुछ भी लाभ होता है, अुससे देशका प्रधान करदाता वर्ग तो वंचित ही रहता है। अुसके बच्चोंके पल्ले लगभग कुछ नहीं आता।

२. प्राथमिक शिक्षाका पाठ्यक्रम कम-से-कम सात सालका हो। जिसमें अंग्रेजीका जितना सामान्य ज्ञान मिल जाना चाहिये, जो आज साधारणतया मैट्रिक तककी शिक्षामें मिल जाता है। जिसमें

अंग्रेजी नहीं रहेगी। असकी जगह कोअी अेक अच्छा-सा अुद्योग सिखाया जायगा।

३. अिसलिअे कि लडकों और लडकियोंका सर्वतोमुखी विकास हो, सारी शिक्षा जहां तक हो सके अेक अैसे अुद्योग द्वारा दी जानी चाहिये, जिसमें कुछ अुपार्जन भी हो सके। अिसे यों भी कह सकते हैं कि अिस अुद्योग द्वारा दो हेतु सिद्ध होने चाहिये — अेक तो विद्यार्थी अिस अुद्योगकी अुपज और अपने परिश्रमसे अपनी पढ़ाअीका खर्च अदा कर सके, और साथ ही स्कूलमें सीखे हुअे अिस अुद्योग द्वारा अुस लड़के या लड़कीमें अुन सभी गुणों और शक्तियोंका पूर्ण विकास हो जाय, जो अेक पुरुष या स्त्रीके लिअे आवश्यक हैं।

पाठशालाकी जमीन, अिमारतें और दूसरे जरूरी सामानका खर्च विद्यार्थीके परिश्रमसे निकालनेकी कल्पना नहीं की गअी है।

कपास, रेशम और अूनकी बिनाअीसे लेकर सफाअी, (कपासकी) लुढ़ाअी, पिंजाअी, कताअी, रंगाअी, मांड लगाना, ताना लगाना, दोसूती (दुबटा) करना, डिजाअिन (नमूने) बनाना तथा बुनाअी आदि तमाम क्रियायें और कसीदा काढ़ना, सिलाअी, कागज बनाना, कागज काटना, जिल्दसाजी, अलमारी-फरनीचर वगैरा तैयार करना, खिलौने बनाना, गुड़ बनाना, अित्यादि अैसे निश्चित अुद्योग हैं, जिन्हें आसानीसे सीखा जा सकता है और जिनके चलानेके लिअे बहुत बड़ी पूंजीकी भी जरूरत नहीं होती।

अिस प्रकारकी प्राथमिक शिक्षासे लड़के और लडकियां अिस लायक हो जायं कि वे अपनी रोजी कमा सकें। अिसके लिअे यह जरूरी है कि जिन धंधोंकी शिक्षा अुन्हें दी गअी हो, अुनमें राज्य अुन्हें काम दे। अथवा राज्य द्वारा मुकर्रर की गअी कीमतों पर सरकार अुनकी बनाअी हुअी चीजोंको खरीद लिया करे।

४. अुच्च शिक्षाको खानगी प्रयत्नों तथा राष्ट्रकी आवश्यकता पर छोड़ दिया जाय। अिसमें कअी प्रकारके अुद्योग और अुनसे संबंध

रखनेवाली कलायें, साहित्य, संगीत, चित्रकला, शास्त्रादि शामिल समझे जायं।

सरकारी विश्वविद्यालय केवल परीक्षा लेनेवाली संस्थायें रहें और वे अपना सर्च परीक्षा-शुल्कसे ही निकाल लिया करें।

विश्वविद्यालय शिक्षाके समस्त क्षेत्रका ध्यान रखें और अुसके विविध विभागोंके लिअे पाठ्यक्रम तैयार करें और अुन्हें स्वीकृति दें। किसी भी विषयकी शिक्षा देनेवाला अेक भी स्कूल तब तक नहीं खुलेगा, जब तक कि वह अिसके लिअे अपने क्षेत्रसे सम्बन्ध रखनेवाले विश्वविद्यालयसे मंजूरी हासिल नहीं कर लेगा। विश्वविद्यालय खोलनेकी अिजाजत (चार्टर) सुयोग्य और प्रामाणिक किसी भी अैसी संस्थाको अुदारतापूर्वक दी जा सकती है, जिसके सदस्योंकी योग्यता और प्रामाणिकताके विषयमें कोअी सन्देह न हो। हां, यह सबको बता दिया जाय कि राज्य पर अुसका जरा भी सर्च नहीं पड़ना चाहिये, सिवा अिसके कि वह केवल अेक केन्द्रीय शिक्षा-विभागका सर्च अुठायेगा।"

अिस पर चर्चा होकर अन्तमें कान्फरेन्समें जो प्रस्ताव पास हुअे वे ये हैं

"१. अिस कान्फरेन्सकी रायमें देशके सब बच्चोंके लिअे सात बरसकी मुफ्त और लाजिमी तालीमका अिन्तजाम होना चाहिये।

"२ तालीमका जरिया मातृभाषा होनी चाहिये।

"३ यह कान्फरेन्स महात्मा गांधीकी अिस तजवीजकी ताअीद करती है कि अिस तमाम मुद्दतमें तालीमका मध्यबिन्दु किसी किस्मकी दस्तकारी होना चाहिये, जिससे कुछ मुनाफा हो सके; और बच्चोंमें जो कुछ अच्छे गुण पैदा करने हैं और अुनको जो शिक्षा-दीक्षा देना है, वह जहां तक हो सके किसी केन्द्रीय दस्तकारीसे सम्बन्ध रखती हो और अिस दस्तकारीका चुनाव बच्चोंके माहौल (वातावरण) का लिहाज रखकर किया जाय।

"४ यह कान्फरेन्स आशा रखती है कि अिस तरीकेसे धीरे-धीरे अध्यापकोंकी तनख्वाहका खर्च निकल आयेगा।"

अिसके बाद अुक्त प्रस्तावोंके आधार पर प्राथमिक शिक्षाके अभ्यासक्रमकी योजना* तैयार करनेके लिअे नीचे लिखे सज्जनोंकी अेक कमेटी बनाअी गयी :

डॉ० जाकिर हुसेन (अध्यक्ष)
श्री आर्यनायकम् (संयोजक)
श्री ख्वाजा गुलाम सैयदुद्दीन
श्री विनोबा भावे
श्री काकासाहब कालेलकर
श्री किशोरलाल मशरूवाला
श्री जे० सी० कुमारप्पा
श्री श्रीकृष्णदास जाजू
प्रो० के० टी० शाह
श्रीमती आशादेवी

कमेटी और भी नाम शामिल कर सकती है।

कमेटी बनानेके बाद नीचे लिखा प्रस्ताव पास हुआ :

"जो दरख्वास्त अिस कान्फरेन्सने कबूल की है, अुसके मुताबिक अेक अैसी योजना बनाअी जाय, जिससे कि मंत्रियोंको दरख्वास्त पर अमल करनेमें मदद मिले। कमेटी अपनी योजनाको कान्फरेन्सके सभापतिके पास अेक महीनेके अन्दर भेज दे।"

२

[गांधीजीने अध्यक्षपदसे जो प्रारंभिक विवेचन किया अुसका सार।]

मैं आप लोगोंके सामने परिषद्के अध्यक्षकी हैसियतसे अुपस्थित होअूं या अेक सदस्यकी हैसियतसे, मैंने तो आप लोगोंको यहां अिसलिअे आनेका कष्ट दिया है कि मैंने जो प्रस्ताव तैयार किये हैं, अुन पर आपकी — और खास कर जो अिनका विरोध करते हैं अुनकी — राय सुनूं और अुनसे सलाह

* यह योजना हरिजनसेवकके ता० १८ तथा २५ दिसम्बर, १९३७ के अंकोंमें प्रकट हुअी है।

लूं। मैं चाहता हूं कि आप मेरी अिन तजवीजों पर स्वतंत्र रूपसे स्पष्टताके साथ पूरी-पूरी चर्चा करें; क्योंकि मुझे अफसोस है कि मैं अपने कमजोर स्वास्थ्यकी वजहसे पंडालके बाहर आप सज्जनोंसे नहीं मिल सकता।

मैंने जो प्रस्ताव विचारार्थ रखे हैं, अुनमें प्राथमिक शिक्षा और कॉलेजकी शिक्षा दोनोंका ही निर्देश है। पर आप लोग तो अधिकतर प्राथमिक शिक्षाके बारेमें ही अपने विचार जाहिर करें। माध्यमिक शिक्षाको मैंने प्राथमिक शिक्षामें शामिल कर लिया है, क्योंकि प्राथमिक कही जानेवाली शिक्षा हमारे गांवोंके बहुत ही थोड़े लोगोंको मयस्सर होती है। १९१५ से शुरू किये हुअे अपने कअी दौरोंमें मैंने सैकड़ों गाव देखे हैं। मैं महज गांवोंके ही लड़कों और लड़कियोंकी जरूरतोंके बारेमें कह रहा हूं, जिनका कि बहुत बड़ा भाग बिलकुल निरक्षर है। मुझे कॉलेजकी शिक्षाका अनुभव नहीं है, हालांकि कॉलेजके हजारों लड़कोंके सम्पर्कमें मैं आया हूं, अुनके साथ दिल खोलकर मैंने बातें की हैं और खूब पत्र-व्यवहार भी हुआ है। अुनकी आवश्यकताओंको, अुनकी नाकामयाबियोंको और अुनकी तकलीफोंको मैं जानता हूं। पर अच्छा हो कि आप अपनेको प्राथमिक शिक्षा तक ही महदूद रखें। कारण यह है कि मुख्य प्रश्नके हल होते ही कॉलेजकी शिक्षाका गौण प्रश्न भी हल हो जायगा।

मैंने खूब सोच-समझकर यह राय कायम की है कि प्राथमिक शिक्षाकी यह मौजूदा प्रणाली न केवल धन और समयका अपव्यय करनेवाली है, बल्कि नुकसानदेह भी है। अधिकांश लड़के अपने मां-बापके तथा अपने खानदानी पेशे-धंधेके कामके नहीं रहते। वे बुरी-बुरी आदतें सीख लेते हैं, शहरी तौर-तरीकोंके रंगमें रंग जाते हैं और थोड़ी-सी अधूरी बातोंकी जानकारी ही अुन्हें हासिल होती है, जिसे और चाहे जो नाम दिया जाय, पर शिक्षा तो हरगिज नहीं कहा जा सकता। अिसका अिलाज मेरे खयालमें यह है कि अुन्हें औद्योगिक या दस्तकारीकी तालीमके जरिये शिक्षा दी जाय। मुझे अिस प्रकारकी शिक्षाका कुछ व्यक्तिगत अनुभव है। मैंने दक्षिण अफ्रीकामें खुद अपने लड़कोंको और दूसरे हर जाति और धर्मके बच्चोंको टॉल्स्टॉय फार्ममें किसी न किसी दस्तकारी द्वारा अिस प्रकारकी तालीम दी थी। जैसे बढ़अीगिरी या जूते बनानेका काम सिखाया था, जिसे कि मैंने कैलनबैकसे

सीखा था, और केलनबैकने अेक ट्रेपिस्ट मठमें जाकर अिस हुनरकी शिक्षा प्राप्त की थी। मेरे लड़कोंने और अुन सब बच्चोंने, मुझे विश्वास है, कुछ गंवाया नहीं है। यद्यपि मैं अुन्हें अैसी शिक्षा नहीं दे सका, जिससे कि खुद मुझे या अुन्हें सन्तोष हुआ हो। क्योंकि समय मेरे पास बहुत कम रहता था और काम अितने अधिक रहते थे कि जिनका कोअी शुमार नहीं।

मैं असल ज़ोर धन्धे या अुद्यम पर नहीं, बल्कि हाथ-अुद्योग द्वारा शिक्षण पर दे रहा हूं। साहित्य, अितिहास, भूगोल, गणित, विज्ञान अित्यादि सभी विषयोंकी शिक्षा अुद्योग द्वारा ही दी जानी चाहिये। शायद अिस पर यह आपत्ति अुठायी जाय कि मध्ययुगमें तो अैसी कोअी चीज़ नहीं सिखायी जाती थी। मगर पेशे-धंधेकी तालीम तब अैसी होती थी कि अुससे कोअी शैक्षणिक मतलब नहीं निकलता था। जिस युगमें यह दशा हुअी है कि लोग अुन पेशोंको, जो अुनके घरोंमें होते थे, भूल गये हैं, पढ़-लिखकर अुन्होंने क्लर्कोंका काम हाथमें ले लिया है और अिस तरह वे आज देहातके कामके नहीं रहे हैं। नतीजा अिसका यह हुआ है कि किसी भी औसत दर्जेके गांवमें हम जायं, तो वहां अच्छे निपुण बढ़अी या लुहारका मिलना असंभव हो गया है। दस्तकारियां करीब-करीब अदृश्य हो गअी हैं और कताअीका अुद्योग, जो अुपेक्षाकी नज़रसे देखा जा रहा था, लंकाशायर चला गया, जहां कि अुसका विकास हुआ। धन्यवाद है अंग्रेज़ोंकी अनोखी प्रतिभाको कि हुनर-अुद्योगोंको अुन्होंने आज जिस हद तक विकसित कर दिया है। पर मैं यह जो कहता हूं, अुसका मेरे अुद्योगीकरण सम्बन्धी विचारोंसे कोअी संबंध नहीं।

अिलाज अिसका यह है कि हर अेक दस्तकारीकी कला और विज्ञानको व्यावहारिक शिक्षण द्वारा सिखाया जाय और फिर अुस अुद्योग द्वारा शिक्षा दी जाय। अुदाहरणके लिअे, तकली परकी कताअी-कलाको ही ले लीजिये। अिसके द्वारा कपासकी मुख्तलिफ़ किस्मोंका और हिन्दुस्तानके विभिन्न प्रान्तोंकी तरह-तरहकी ज़मीनोंका ज्ञान दिया जा सकता है। वस्त्र-अुद्योग हमारे देशमें किस तरह नष्ट हुआ, अिसका अितिहास हम अपने बच्चोंको बता सकते हैं। अिसके राजनीतिक कारणोंको बतायेंगे, तो भारतमें अंग्रेज़ी राज्यका अितिहास भी अुसमें आ जायगा। गणित अित्यादिकी भी शिक्षा

जिसके द्वारा अुन्हें दी जा सकती है। मैं अपने छोटे पोते पर अिसका प्र कर रहा हूं, जो शायद ही यह महसूस करता हो कि अुसे कुछ सिखाया रहा है; क्योंकि वह तो हमेशा खेलता-कूदता रहता है, हंसता है और गाता है।

तकलीका अुदाहरण मैंने जो खासकर दिया है, वह अिसलिअे जिसके विषयमें आप लोग मुझसे सवाल पूछें, क्योंकि मुझे अिसमें बहु कुछ काम निकालना है। अिसकी शक्ति और अिसका अद्भुत पराक्र मैंने देखा है; और अेक कारण यह भी है कि वस्त्र-निर्माणकी दस्तकारी अेक अैसी चीज है, जो सब जगह सिखायी जा सकती है। और तकली कुछ खर्च भी नहीं होता। जितनी आशा की जाती थी, अुससे कहीं ज्या तकलीका मूल्य और महत्त्व साबित हो चुका है। जिस हद तक भी हम रचनात्मक कार्यक्रम पूरा किया है, अुसीके परिणामस्वरूप सात प्रान्तों में कांग्रेसी मंत्रि-मण्डल बने हैं; और जिस हद तक अिस कार्यक्रम प अमल होगा, अुसी हद तक अिन मंत्रि-मण्डलोंको सफलता मिलेगी।

मैंने सोचा है कि *अध्ययन-क्रम सात सालका रखा जाय। जहां त तकलीका संबंध है, अिस मुद्दतमें विद्यार्थी बुनाअी तकके व्यावहारिक ज्ञान* (जिसमें रंगाअी, डिजाअिनिंग आदि भी शामिल हैं) निपुण हो जायेंगे हम जितना कपड़ा पैदा कर सकेंगे, अुसके लिअे ग्राहक तो तैयार हैं ही।

मैं अिसके लिअे बहुत अुत्सुक हूं कि विद्यार्थियोंकी दस्तकारीकी चीजोंसे शिक्षकका खर्चा निकल आना चाहिये, क्योंकि मेरा यह विश्वास है कि हमारे देशके करोड़ों बच्चोंको तालीम देनेका दूसरा कोअी रास्ता ही नहीं है। जब तक कि हमें सरकारी खजानेसे आवश्यक पैसा न मिल जाय, जब तक कि वाअिसरॉय फौजी खर्चको कम न कर दें, या अिसी तरहका कोअी कारगर जरिया न निकल आवे, तब तक हम रास्ता देखते हुअे बैठे नहीं रहेंगे। आप लोगोंको याद रखना चाहिये *कि अिस प्राथमिक शिक्षामें सफाअी, आरोग्य और आहार-शास्त्रके प्रारंभिक सिद्धान्तोंका समावेश हो जाता है। अपना काम खुद कर लेने तथा* घर पर अपने मां-बापके काममें मदद देने वगैराकी शिक्षा भी अुन्हें मिल जायगी। वर्तमान पीढ़ीके लड़कोंको न तो सफाअीका ज्ञान है, न

वे यह जानते हैं कि आत्म-निर्भरता क्या चीज है; और शारीरिक स्वास्थ्य भी अुनका काफी कमजोर होता है। अिसलिअे अुन्हें मैं लाजिमी तौर पर गाने और बाजेके साथ कवायद वगैराके जरिये शारीरिक व्यायामकी भी तालीम दूंगा।

मुझ पर यह दोषारोपण किया जा रहा है कि मैं साहित्यिक शिक्षाके खिलाफ हूं। नहीं, यह बात नहीं है। मैं तो केवल वह तरीका बता रहा हूं, जिस तरीकेसे साहित्यिक शिक्षा देनी चाहिये। और मेरे 'स्वावलम्बन'के पहलू पर भी हमला किया गया है। यह कहा गया है कि प्राथमिक शिक्षा पर जहां हमें करोड़ों रुपये खर्च करने चाहिये, वहां हम अुलटे बच्चोंका ही शोषण करने जा रहे हैं। साथ ही, यह आशंका भी की जाती है कि जिस तरह बहुत-सी शक्ति व्यर्थ चली जायगी। लेकिन अनुभवने जिस भयको गलत साबित कर दिया है और जहां तक बच्चे पर बोझ डालने या अुसका शोषण करनेका सवाल है, मैं कहूंगा कि बच्चे पर यह बोझ डालना क्या अुसे सर्वनाशसे बचानेके लिअे ही नहीं है? तकली बच्चोंके खेलनेके लिअे अेक काफी अच्छा खिलौना है। चूंकि वह अेक अुत्पादक खिलौना है, अिसलिअे यह नहीं कहा जा सकता कि वह खिलौना नहीं है या खिलौनेसे किसी तरह कम है। आज भी बच्चे किसी हद तक अपने मां-बापकी मदद करते ही हैं। हमारे सेगांवके बच्चे खेती-किसानीकी बातें मुझसे कहीं ज्यादा जानते हैं, क्योंकि अुन्हें अपने मां-बापके साथ खेतों पर काम करना पड़ता है। लेकिन जहां बच्चोंको अिस बातका प्रोत्साहन दिया जायगा कि वह कातें और खेतीके काममें अपने मां-बापकी मदद करें, वहां अुसे अैसा भी महसूस कराया जायगा कि अुसका संबंध सिर्फ अपने मां-बापसे ही नहीं, बल्कि अपने गांव और देशसे भी है और अुसे अुनकी भी कुछ सेवा करनी ही चाहिये। मैं मंत्रियोंसे कहूंगा कि बैठानमें शिक्षा देकर तो वे बच्चोंको असहाय ही बनायेंगे; लेकिन शिक्षाके लिअे अुनसे मेहनत करा कर वे अुन्हें बहादुर और आत्म-विश्वासी बनायेंगे।

यह पद्धति हिन्दू, मुसलमान, पारसी, अीसाअी सभीके लिअे अेकसी लागू होगी। मुझसे पूछा गया है कि मैं धार्मिक शिक्षा पर कोअी जोर

क्यों नहीं देता? अिसका कारण यह है कि मैं बच्चोंको स्वावलम्बनका धर्म ही तो सिखा रहा हूं, जो कि धर्मका अमली रूप है।

अिस तरह जो विद्यार्थी शिक्षित किये जायं, अुन्हें जरूरत पड़ने पर रोजी देनेके लिअे राज्य बंधा हुआ है। और जहां तक अध्यापकोंका प्रश्न है, प्रोफेसर शाहने लाजिमी सेवाका अुपाय सुझाया है। अिटली तथा अन्य देशोंके अुदाहरण देकर अुन्होंने अिसका महत्व बताया है। अुनका कहना है कि अगर मुसोलिनी अिटलीके तरुणोंको देशकी सेवाके लिअे प्रोत्साहित कर सकता है, तो हमें हिन्दुस्तानके तरुणोंको प्रोत्साहित क्यों नहीं करना चाहिये? हमारे नौजवानोंको अपना रोजगार शुरू करनेसे पहले अेक या दो सालके लिअे लाजिमी तौर पर अध्यापनका काम करना पड़े, तो अुसे गुलामी क्यों कहा जाय? क्या यह ठीक है? पिछले सत्रह सालोंमें आजादीके हमारे आन्दोलनने जो सफलता प्राप्त की है, अुसमें नौजवानोंका हिस्सा कोअी कम नहीं है। अिसलिअे मैं अुनसे अपने जीवनका अेक साल राष्ट्रसेवाके लिअे अर्पण करनेको कह सकता हूं। अिस संबंधमें कानून बनानेकी भी जरूरत हुअी, तो वह जबरदस्ती नहीं होगी, क्योंकि हमारे प्रतिनिधियोंके बहुमतकी रजामन्दीके बगैर वह कभी मंजूर नहीं हो सकता।

अिसलिअे, मैं आपसे पूछूंगा कि शारीरिक परिश्रम द्वारा दी जानेवाली शिक्षा आपको जंचती है या नहीं? मेरे लिअे तो अुसे स्वावलम्बी बनाना ही अुसकी असली कसौटी होगी। सात सालके अन्तमें बालकोंको अैसा तो हो ही जाना चाहिये कि अपनी शिक्षाका खर्च वे खुद चुका सकें और परिणाममें अनकमाअू पूत न रहें।

कॉलेजकी शिक्षा ज्यादातर शहरी है। यह तो मैं नहीं कहूंगा कि वह भी प्राथमिक शिक्षाकी तरह बिलकुल असफल रही है, लेकिन अुसका जो परिणाम हमारे सामने है, वह काफी निराशाजनक है। नहीं तो कोअी भी ग्रेज्युअट भला बेकार क्यों रहे?

तकलीको मैंने शिक्षित बुनियादके रूपमें सुझाया है, क्योंकि ...लोगोंको अिसका सबसे ज्यादा व्यावहारिक अनुभव है और अिस बारेमें ... अेतराज अुठाये जायं, तो अुनका जवाब देनेके लिअे मैं यहां

मौजूद है। काकासाहब भी अिस बारेमें कुछ कह सकेंगे, हालांकि अुनका अनुभव व्यावहारिकके बनिस्बत सैद्धान्तिक अधिक है। अुन्होंने जनरल आर्मस्ट्रांगकी लिखी हुअी 'अेज्युकेशन फॉर लाअिफ' (जीवनकी शिक्षा) पुस्तककी तरफ और अुसमें भी खासकर 'हाथकी शिक्षा' वाले अध्याय पर खास तौरसे मेरा ध्यान खींचा है। स्वर्गीय मधुसूदन दास थे तो वकील, लेकिन अुनका यह विश्वास था कि अगर हम अपने हाथ-पैरोंसे काम न लेंगे, तो हमारा दिमाग कुन्द पड़ जायगा और अगर अुसने काम किया भी तो वह शैतानका ही घर बनेगा। टॉल्स्टॉयने भी हमें अपनी बहुत-सी कहानियोंके द्वारा यही बात सिखायी है।

[गांधीजीने स्वावलम्बी प्राथमिक शिक्षाकी अपनी योजनाका मूलभूत तत्त्व समझाते हुअे कहा:]

हमारे यहां साम्प्रदायिक झगड़े होते रहते हैं, लेकिन यह कोअी हमारी ही खासियत नहीं है। अिंग्लैंडमें भी अैसी ही लड़ाअियां हो चुकी हैं। और आज ब्रिटिश साम्राज्यवाद सारे संसारका शत्रु हो रहा है। अगर हम साम्प्रदायिक और आन्तर-राष्ट्रीय संघर्षको बंद करना चाहें, तो हमारे लिअे यह जरूरी है कि जिस शिक्षाका मैंने प्रतिपादन किया है, अुससे अपने बालकोंको शिक्षित करके शुद्ध और दृढ़ आधारके साथ जिसकी शुरुआत करें। अहिंसासे अिस योजनाकी अुत्पत्ति हुअी है। संपूर्ण मद्य-निषेधके राष्ट्रीय निश्चयके सिलसिलेमें मैंने अिसे सुझाया है। लेकिन मैं कहता हूं कि आमदनीमें कोअी कमी न हो और हमारा खजाना भरा हुआ हो, तो भी अगर हम अपने बालकोंको शहरी न बनाना चाहें, तो यह शिक्षा बड़ी अुपयोगी होगी। हमें तो अुनको अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता और अपने देशकी सच्ची प्रतिभाका प्रतिनिधि बनाना है; और यह अुन्हें स्वावलम्बी प्राथमिक शिक्षा देनेसे ही हो सकता है। यूरोपका अुदाहरण हमारे लिअे कोअी अुदाहरण नहीं है। क्योंकि वह हिंसामें विश्वास करता है और अिसलिअे अुसकी सब योजनाओं और अुनके कार्यक्रमोंका आधार भी हिंसा पर ही रहता है। रूसने जो सफलता हासिल की है, अुसको मैं कम महत्त्वपूर्ण नहीं समझता। लेकिन अुसका सारा आधार जबरदस्ती और हिंसा पर ही है। अगर हिन्दुस्तानने

हिंसाके परित्यागका निश्चय किया है, तो अुसे जिस अनुमानमें से होकर गुजरना पड़ेगा, अुसका यह शिक्षा-पद्धति अेक खास अंग बन जाती है। हमसे कहा जाता है कि शिक्षा पर अिंग्लैंड लाखों रुपया खर्च करता है और यही हाल अमेरिकाका भी है; लेकिन हम यह भूल जाते हैं कि वह सब धन शोषणसे ही प्राप्त होता है। अुन्होंने शोषणकी कलाको विज्ञानका रूप दे दिया है, जिससे अुनके लिअे अपने बालकोंको अैसी महंगी शिक्षा देना संभव हो सका है, जैसी कि वे आज दे रहे हैं। लेकिन हम तो शोषणकी बात न सोच सकते हैं और न अैसा करेंगे ही; अिसलिअे हमारे पास शिक्षाकी अिस योजनाके सिवा, जिसका आधार अहिंसा पर है, और कोअी मार्ग ही नहीं है।

३

[प्रस्ताव पर हुअी चर्चामें कुछ आलोचनाओंका जवाब देते हुअे गांधीजीने कहा:]

तकली कोअी अेक ही अुद्योग नहीं है, पर यही अेक अैसी चीज जरूर है, जो कि सब जगह दाखिल की जा सकती है। यह काम तो मंत्रियोंके देखनेका है कि किस स्कूलको कौनसा अुद्योग अनुकूल पड़ेगा। जिनको यंत्रोंका मोह है, अुन्हें मैं यह चेतावनी दे देना चाहता हूं कि यंत्रों पर जोर देनेसे मनुष्योंके यंत्र बन जानेका पूरा-पूरा खतरा है। जो यंत्रयुगमें बसना चाहते हैं, अुनके लिअे तो मेरी योजना व्यर्थ होगी। पर अुनसे मैं यह भी कहूंगा कि गांवोंके लोगोंको यंत्रों द्वारा जीवित रखना असंभव है। जिस देशमें ३० करोड़ जीवित यंत्र पड़े हुअे हैं, वहां नये जड़ यंत्र लानेकी बात करना निरर्थक है। डॉ० जाकिर हुसेनने कहा है कि आदर्शकी भूमिका चाहे जैसी हो, फिर भी यह योजना शिक्षाकी दृष्टिसे पुख्ता है। अुनका यह कहना ठीक नहीं। अेक बहन मुझसे मिलने आयी थीं। वे कहती थी कि अमेरिकाकी 'प्रोजेक्ट' पद्धति और मेरी पद्धतिमें बहुत बड़ा अन्तर है। पर मैं यह नहीं कहता कि मेरी योजना आपके गले न अुतरे, तब भी आप अुसे स्वीकार कर ही लें। अगर हमारे अपने आदमी न्यायसे काम करें, तो अिन स्कूलोंमें से

ुलाम नहीं, किन्तु पूरे कारीगर निकलेंगे। लड़कोंसे चाहे किसी भी
किस्मकी मेहनत ली जाय, अुसकी कीमत प्रति घंटा दो पैसे जितनी तो
होनी ही चाहिये। पर आप लोगोंका मेरे प्रति जो आदरभाव है, जो
लिहाज है, अुसके कारण आप कुछ भी स्वीकार न करें। मैं मौनके
दरवाजे पर बैठा हुआ हूं। कोअी भी चीज जबरन् लोगोंसे स्वीकार करानेका
मुझे स्वप्नमें भी विचार नहीं आता। अिस योजनाको तो पूर्ण और
पुख्ता विचारके बाद ही स्वीकार करना चाहिये, जिससे कि अिसे कुछ
ही समयमें छोड़ न देना पड़े। मैं प्रो० शाहकी अिस बातसे सहमत हूं
कि जो राज्य अपने बेकारोंके लिअे व्यवस्था नहीं कर सकता, अुसकी
कोअी कीमत नहीं। पर अुन्हें भीखका टुकड़ा देना यह कोअी बेकारीका
अिलाज नहीं। मैं तो अैसे हरअेक आदमीको काम दूंगा और अुसे पैसे
नहीं दे सकूंगा तो खुराक दूंगा। अीश्वरने हमें खाने-पीने और मौज
उड़ानेके लिअे नहीं, बल्कि पसीना बहाकर रोजी कमानेके लिअे बनाया है।

४

गांधीजीने अध्यक्षपदसे परिषद्की कार्रवाअीको समाप्त करते हुअे
कहा: आप सब लोग यहां आये हैं और अिस काममें योग
दिया है, अिसके लिअे म आपका आभारी हूं। आप लोगोंसे मैं और भी
अधिक सहयोगकी आशा रखूंगा, क्योंकि यह कान्फरेन्स तो अभी पहली
ही है, और अैसी कअी कान्फरेन्सें हमें करनी पड़ेंगी। मालवीयजी महा-
राजने मुझे चेतावनीका तार भेजा है, पर अुन्हें तो मैं आश्वासन दे सकता
हूं कि अिस कान्फरेन्समें कोअी अन्तिम फैसला नहीं हुआ है। यह तो
शिक्षकोंकी परिषद् है। और हरअेक व्यक्तिको अपनी तजवीज रखने और
आलोचना करनेके लिअे निमंत्रण दिया गया है। किसी भी चीजको जनतामें
जबरदस्तीसे करा डालनेका मेरा जरा भी विचार नहीं। राष्ट्रीय शिक्षा
और शराबबन्दीकी कल्पनाअें असहयोगके जितनी पुरानी हैं। पर यह
आज अिस रूपमें तो मुझे आज देशकी बदली हुअी परिस्थितियोंमें सूझी है।

हरिजनसेवक, ६–११–’३७

१२

अेक कदम आगे

वर्धामें गत सप्ताहमें हुअी शिक्षा-परिषद्के कार्यकी रिपोर्ट दी जा चुकी है (प्रकरण ११ में देखिये)। जनता और कांग्रेसी मंत्रियोंके आगे मेरी योजना पेश करनेके काममें अिस परिषद्से अेक नया और अेक महत्वपूर्ण प्रकरण प्रारम्भ होता है। जितने सब मंत्री परिषद्में अुपस्थित थे, यह अेक शुभ चिह्न था। परिषद्में खासकर जो आपत्तियां अुठाअी गअीं और जो आलोचनाअें हुअीं, वे अिस विचार — मेरे पेश किये हुअे संकुचित अर्थमें भी — के विरोधमें थीं कि शिक्षाको स्वावलम्बी होना चाहिये। परिषद्ने जो प्रस्ताव पास किये हैं, अुनमें बहुत साव-धानीसे काम लिया गया है। जिसमें तो कोअी सन्देह नहीं कि परिषद्को अेक अज्ञात समुद्रमें नाव खेनी थी। अुसकी नजरके सामने पहलेका अेक भी संपूर्ण अुदाहरण नहीं था। मैंने जो विचार रखा है वह अगर निर्दोष होगा, तो अुस पर अवश्य अमल हो सकेगा। अन्तमें जिनको स्वावलम्बनवाले भाग पर श्रद्धा होगी, अुन्हें अिस विचारके अनुसार पाठशालाअें चलाकर अिसकी सचाअीको साबित करके दिखाना है।

माध्यमिक अभ्यास-क्रममें से अंग्रेजीको निकालकर बाकीके विषयोंकी पूरी प्राथमिक शिक्षा किसी भी अुद्योग द्वारा देनी चाहिये, अिस प्रश्नके विषयमें तो परिषद्में आश्चर्यजनक अेकमत था। लड़कोंके पूर्ण पुरुषत्वका और लड़कियोंके पूर्ण स्त्रीत्वका विकास अुद्योग द्वारा करना है — यह तथ्य खुद ही स्कूलोंको कारखाने बन जानेसे बचाता है। क्योंकि लड़कों और लड़कियोंको जिस अुद्योगकी शिक्षा मिलेगी, अुसमें अमुक हद तक निष्णात होनेके अलावा अुन्हें जो अन्य विषय सीखने होंगे, अुनमें भी अुन्हें अुतनी ही योग्यता दिखानी पड़ेगी।

अिस योजना पर व्यावहारिक अमल किस तरह हो सकता है और लड़कों व लड़कियोंको अेकके बाद दूसरे वर्षमें नया-नया सीखना होगा, यह तो हम डॉ० जाकिरहुसेन समितिके परिश्रम परसे ही जान सकेंगे।

अेक अेतराज यह अुठाया गया है कि परिषद्में क्या क्या प्रस्ताव ास करने हैं, यह तो पहलेसे ही निश्चित हो चुका था। अिस अेतराजमें रा भी तथ्य नहीं है। सारे देशमें से शिक्षा-विशारदोंको चाहे जिस रह चुनकर बुलाना और अेक अैसी योजना पर, जो अुनके अनुसार ा सन्देह क्रान्तिकारी योजना है, अपना मत अेकाअेक प्रदर्शित करनेके ठअे अुनसे कहना वस्तुतः असंभव था। अिसलिअे अैसे ही व्यक्तियोंको नमंत्रण भेजा गया था, जिन्हें कि शिक्षकके रूपमें अुद्योग-शिक्षणका ुछ अनुभव है। राष्ट्रीय शिक्षाका कार्य करनेवाले मेरे साथी अिस अी कल्पनाको जिस तरह सहानुभूतिपूर्वक ग्रहण कर लेंगे, यह ख़याल तो वयं मुझे भी नहीं था। यह योजना जब जाकिरहुसेन समिति द्वारा ाकार और अधिक पूर्ण रूपमें जनताके आगे आयेगी, तब शिक्षा-ास्त्रियोंके विशाल वर्गको अिस पर विचार करनेके लिअे जरूर निमंत्रण दिया जायगा। जिन शिक्षाशास्त्रियोंके पास सहायता दे सकनेवाली ुछ सूचनाअें हों, अुनसे मेरी प्रार्थना है कि वे कृपया अुन सूचनाओंको मेटीके मंत्री श्री आर्यनायकमूके पास वर्धाके पतेसे भेज दें।

परिषद्में अेक वक्ताने जोर देकर यह कहा था कि छोटे-छोटे बच्चोंको ालीम देनेका काम पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियां ज्यादा अच्छा कर सकती ; और कुमारियोंकी अपेक्षा मातायें और भी अच्छी तरह कर सकती । अेक दूसरी दृष्टिसे भी प्रो० शाहकी लाजिमी सेवाकी योजनामें आनेकी नुकूलता अुन्हें अधिक मिलती है। जिन देशभक्त महिलाओंके पास ुरसतका समय हो, अुनके लिअे अेक सबसे बड़े सत्कार्यमें अपनी सेवा र्पण करनेका यह बड़ा सुन्दर अवसर है, अिसमें सन्देह नहीं। लेकिन ि अगर तैयार हों, तो अुन्हें पूरी प्राथमिक शिक्षा लेनी पड़ेगी। ाजीविकाकी तलाशमें लगी हुअी गरजमन्द बहनें अिस कामको अेक धन्धा ानकर अिसमें आनेका विचार करती हों, तो अुनसे कोअी मतलब िकलनेका नहीं। वे अगर अिस योजनामें आना चाहती हैं, तो अुन्हें ुद्ध सेवाभावसे ही अिसमें पड़ना चाहिये और अिसे अपना जीवन-कार्य बना लेना चाहिये। वे यदि स्वार्थवृत्तिसे अिसमें पड़ेंगी, तो अिस काममें सफल नहीं हो सकेंगी और अुन्हें अत्यन्त निराश होना पड़ेगा। अगर

भारतवर्षकी संस्कारी महिलायें गांवोंके लोगोंके साथ — और वह भी अुनके बच्चों द्वारा — अैक्य साधें, तो वे भारतवर्षके गांवोंके जीवनमें अेक शान्त और सुन्दर क्रान्ति कर सकती हैं। क्या वे अिसके लिअे तत्पर होंगी?

हरिजनसेवक, ६–११–'३७

१३

वर्धा-योजनाका हृदय*

[अेक प्रश्नोत्तरी]

डॉ० बोअरने कहा कि यह शिक्षा-योजना तो अुन्हें बहुत ही अच्छी लगी है, क्योंकि अिसकी जड़में अहिंसा है। पर अुन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि पाठ्यक्रममें अहिंसाको अितना कम स्थान दिया गया है।

"आपको जिस वजहसे वह अितनी पसन्द आओी, वह बिलकुल ठीक है," गांधीजीने कहा, "किन्तु सारा पाठ्यक्रम अहिंसा पर केन्द्रित नहीं किया जा सकता। यही जानना काफी है कि वह अेक अहिंसक दिमागसे निकली है। पर अुसमें यह नहीं मान लिया गया है कि जो अिसका स्वीकार करेंगे, वे अहिंसाको भी मानेंगे ही। अुदाहरणार्थ समितिके सारे सदस्य अहिंसाको जीवन-सिद्धान्तके रूपमें नहीं मानते। जैसे, अेक निरामिष-भोजी आदमीका अहिंसक होना जरूरी नहीं है, वह स्वास्थ्यके कारण भी निरामिष-भोजी हो सकता है, अुसी प्रकार यह जरूरी नहीं कि जो भी कोअी अिस योजनाको पसन्द करें, अुन सबका अहिंसामें विश्वास होना ही चाहिये।"

डॉ० बोअर - "मैं कुछ अैसे शिक्षाशास्त्रियोंको जानता हूं, जो अिस योजनाको महज अिसीलिअे स्वीकार नहीं करेंगे कि अुसका आधार अहिंसात्मक जीवन-दर्शन पर है।"

---

* दक्षिण भारतके अेक कॉलेजके प्रिन्सिपाल डॉ० जॉन डी० बोअर नामक अमेरिकन पादरी और गांधीजीके बीच हुआी बातचीतका श्री महादेव देसाओी द्वारा दिया हुआ विवरण।

गांधीजी : "मैं जानता हूं। पर यों तो मैं भी अैसे कअी नेताओंको जानता हूं, जो खादीको अिसीलिअे ग्रहण नहीं करते कि अुसका आधार मेरा जीवन-दर्शन है! पर अिसका क्या अिलाज है? अहिंसा तो सचमुच अिस योजनाका हृदय है और यह मैं बड़ी आसानीसे सिद्ध कर सकता हूं। पर मैं जानता हूं कि यदि मैं अैसा करूं, तो अुसके विषयमें लोगोंका अुत्साह बहुत कम हो जायगा। आज तो जो लोग अिस योजनाको पसन्द करते हैं, वे अिस तथ्यको मानते हैं कि करोड़ों लोग जिस देशमें भूखों मर रहे हों, वहां किसी दूसरी तरहसे बच्चोंको पढ़ा ही नहीं सकते। और यदि अिस चीजको जारी कर दिया जाय, तो देशमें अपने-आप अेक नअी अर्थ-व्यवस्था अुत्पन्न हो जायगी। मेरे लिअे तो अितना ही काफी है। जैसे कि कांग्रेसवाले अहिंसाको अपना जीवन-सिद्धान्त माननेके बजाय अुसे स्वाधीनता-प्राप्तिकी नीति भी मान लेते हैं, तो मैं अुतने ही से सतोष मान लेता हूं। अगर सारा हिन्दुस्तान अुसे अपना ध्येय या जीवनादर्श मान ले, तो हम आज ही यहां प्रजासत्तात्मक राज्य कायम कर सकते हैं।"

डॉ० बोअर : "मैं समझ गया। पर अेक बात और है, जो मेरी समझमें नहीं आ रही है। मैं अेक समाजवादी हूं और अहिंसामें भी मेरा विश्वास है। अेक अहिंसावादीकी हैसियतसे तो आपकी योजना मुझे बहुत पसन्द है। पर जब मैं समाजवादीकी दृष्टिसे अुस पर विचार करता हूं, तो अैसा लगता है कि वह हिन्दुस्तानको संसारसे अलग कर देगी, जब कि हमें तो संसारके साथ घुल-मिल जाना है। और यह बात समाजवाद जितनी अच्छी तरहसे कर सकता है, अुतना और कोअी चीज नहीं कर सकती।"

"मुझे तो अिसमें कोअी कठिनाअी नहीं मालूम पड़ती," गांधीजीने कहा, "क्योंकि हम कोअी सारी दुनियासे नाता थोड़े ही तोड़ना चाहते हैं। हम तो सभी राष्ट्रोंके साथ खुला आदान-प्रदान रखेंगे, लेकिन जबरदस्तीसे लादा हुआ आदान-प्रदान तो बन्द करना ही पड़ेगा। हम यह नहीं चाहते कि कोअी हमारा शोषण करे, न हम खुद ही किसी दूसरे राष्ट्रका शोषण करना चाहते हैं। अिस योजना द्वारा तो हम सब बालकोंको अुत्पादक बनाकर सारे राष्ट्रकी शक्ल बदल देना चाहते हैं, क्योंकि अिससे हमारा सारा सामाजिक ढांचा ही बदल जायगा। लेकिन अिसका यह मतलब नहीं है कि

हम सारी दुनियासे ही नाता तोड़कर सबसे अलग हो जाना चाहते हैं। राष्ट्र भी होंगे ही, जो कुछ चीजें अपने यहां पैदा न कर सकनेके कारण दू राष्ट्रोंके साथ आदान-प्रदान करना चाहेंगे। अिसमें कोअी शक नहीं कि वे अुन चीजोंके लिअे दूसरे राष्ट्रों पर अवलंबित रहना पड़ेगा। लेकिन जो रा अुनकी जरूरतें पूरी करें, अुन्हें अुनका शोषण नहीं करना चाहिये।"

"लेकिन अगर आप अपने जीवनको अिस हद तक सादा बना लें दूसरे देशोंकी बनी किसी चीजकी आपको जरूरत ही न हो, तो अ अपनेको अुनसे अलग कर लेंगे, जब कि मैं चाहता हूं कि आप अमेरिका लिअे भी जिम्मेदार हों।"

"अमेरिकाके लिअे जिम्मेदार तो हम अिसी तरह हो सकते हैं न तो हम किसीका शोषण करेंगे और न अपना ही शोषण किसीको क देंगे। क्योंकि जब हम अैसा करेंगे, तो अमेरिका भी हमारा अनुसर करेगा; और तब हमारे बीच खुले आदान-प्रदानमें कोअी कठिनाअी न होगी।"

"लेकिन आप तो जीवनको सादा बनाकर अुद्योगीकरणको खतम क देना चाहते हैं।"

"अगर मैं ३ करोड़के बजाय तीस हजार आदमियोंसे काम कर कर अपने देशकी सारी जरूरतें पूरी कर सकूं, तो मुझे अुसमें कोअी आपत्ति न होगी, बशर्ते कि अुसके कारण ३ करोड़ आदमी बेकार औ काहिल न बन जायं। मैं यह जानता हूं कि समाजवादी लोग यंत्रीकरणक अिस हद तक ले जायंगे जिससे रोज अेक-दो घंटेसे ज्यादा काम करनेक जरूरत न रहे। लेकिन मैं अैसा नहीं चाहता।"

"क्यों? अिससे तो अुन्हें अवकाश मिलेगा।"

"लेकिन अवकाश किसलिअे? क्या हॉकी खेलनेके लिअे?"

"न सिर्फ अिसीलिअे, बल्कि अुत्पादक और अुपयोगी दस्तकारियों जैसे कामोंके लिअे भी।"

"अुत्पादक और अुपयोगी दस्तकारियोंमें लगनेके लिअे तो मैं अुनसे कह ही रहा हूं। लेकिन यह अुन्हें आठ घंटे रोज अपने हाथसे काम करके करना होगा।"

"तब तो निश्चय ही आप समाजको अैसी स्थिति पर नहीं ले जाना चाहते, जिसमें हरअेकके घरमें रेडियो हो और हरअेकके पास अपनी मोटर गाड़ी रहे। अमेरिकन राष्ट्रपति हूवरने यह तजवीज सोची थी। वे तो चाहते थे कि हरअेक घरमें अेक ही नहीं, दो रेडियो हों और दो-दो मोटर गाड़ियां रहें।"

"अगर अितनी अधिक मोटर हमारे पास हो जाय, तो फिर पैदल घूमने-फिरनेके लिअे बहुत कम जगह रह जायगी," गांधीजीने कहा।

"मैं आपसे सहमत हूं। हमारे यहां हर साल मोटर दुर्घटनाओंसे लगभग ४० हजार आदमी मरते हैं, और अिससे तिगुनोंके अंग-भंग हो जाते हैं।"

"वह दिन देखनेके लिअे मैं जीवित नहीं रहूंगा, जब हिन्दुस्तानके हरअेक गांवमें रेडियो पहुंच जायंगे।"

"पंडित जवाहरलालके ध्यानमें, मालूम होता है, पैदावारकी अिफरातकी बात रहती है।"

"मैं जानता हूं। पर अिफरातसे क्या आशय है? लाखों टन गेहूं नष्ट कर देनेकी क्षमता तो नहीं, जैसा कि आप लोग अमेरिकामें करते हैं?"

"यह पूंजीवादका बुरा परिणाम है। वे अब गेहूं नष्ट नहीं करते बल्कि गेहूं पैदा न करें अिसलिअे अुन्हें पैसे दिये जा रहे हैं। अब तो लोग वहां अेक-दूसरे पर अंडे फेंककर मनबहलाव करते हैं, क्योंकि अंडोंकी कीमत अब गिर गअी है।"

"यही तो हम नहीं चाहते। अिफरातसे अगर आपका यह मतलब है कि हरअेक आदमीके पास खाने-पीने और पहननेके लिअे पर्याप्त भोजन और वस्त्र हों, अपनी बुद्धिको शिक्षित और सुसंस्कृत बनानेके लिअे काफी साधन हों, तो मुझे संतोष हो जाना चाहिये। पर जितना मैं हजम कर सकता हूं, अुससे ज्यादा भोजन पेटमें ठूंसना पसन्द नहीं करूंगा; और जितनी चीजोंका मैं अच्छी तरह अुपयोग कर सकूं, अुनसे ज्यादा चीजें मुझे रखनी ही नहीं चाहिये। पर मैं हिन्दुस्तानमें न तो गरीबी या मुफलिसी चाहता हूं, न मुसीबत और गन्दगी चाहता हूं।"

[illegible] 'बुनियादी' [illegible]
[illegible]
[illegible]

'मुझे मालूम है,' [illegible] मुझे कहा।

हरिजनसेवक, १२-११-'३८

१६

अेक मंत्रीका स्वप्न

"अगर आप प्रान्तीय सरकारों और लोगोंको अिस बातका राजी कर सकें कि तमाम स्कूलोंमें लड़कों और लड़कियोंके लिअे कताअी और बुनाअी लाजिमी कर देनी चाहिये, तो मेरा विश्वास है कि थोड़े ही अरसेमें स्कूलके बच्चे खुद अपना बनाया हुआ कपड़ा पहनने लग जायेंगे। यह पहला कदम होगा। आपके आदर्शों विषयमें मेरी आज भी वैसी ही श्रद्धा है और मैं वह दिन देखनेकी आशा करता हूं, जब हरअेक घर अपनी जरूरतका कपड़ा खुद बना लेगा, और हरअेक गांव भी अपने ग्रामोद्योगों तथा खेतीकी योजनाओंके अनुसार केवल कपड़ेमें ही नहीं, बल्कि हरअेक जरूरी चीजके मामलेमें स्वावलम्बी बन जायगा। आपकी तरह मैं भी यह मानता हूं कि अिस देशमें सच्चा स्वराज्य तभी स्थापित हो सकता है, जब कि प्रान्तीय सरकार अथवा भारत-सरकारका बजट — जिसके पासे मिलानेके लिअे खींचातानी और कतरनें करनी पड़ती हैं — ग्रामवासी जनताके बजटसे मेल खा जायेगा।"

अुपर्युक्त पत्र अेक कांग्रेसी मंत्रीने लिखा है। मेरे पास यदि निरंकुश सत्ता हो, तो मैं कम-से-कम प्राअिमरी स्कूलोंमें तो कताअीको अवश्य लाजिमी कर दूं। जिस मंत्रीमें श्रद्धा हो अुसे अैसा करना चाहिये। हमारे स्कूलोंमें कितनी ही बेकार चीजोंको लाजिमी बना दिया जाता है। तब अिस

यदि अुपयोगी कलाको लाजिमी क्यों न बना दिया जाये? लेकिन लोकतंत्रमें किसी चीजको, यदि वह विस्तृत रूपमें लोकप्रिय न हो, लाजिमी नहीं बना सकते। अिस तरह लोकतंत्रमें अनिवार्यता नामकी ही होती है। वह आलस्यको तो अुड़ा देती है, पर लोगोंकी अिच्छा पर जोर-जबरदस्ती नहीं करती। अिस प्रकारकी अनिवार्यता शिक्षणकी अेक क्रिया है। मैं अिससे अेक हलका रास्ता सुझाता हूं। सबसे अच्छे कातनेवाले लड़के या लड़कीको अिनाम दिलाना चाहिये। अिस प्रतिस्पर्धासे सब नहीं तो अधिकांश अिसमें भाग लेनेके लिअे प्रेरित होंगे। किसी भी योजनामें यदि खुद शिक्षककी श्रद्धा न हो, तो वह सफल होनेकी नहीं। प्रांतीय सरकारें अगर बुनियादी तालीमको स्वीकार कर लें, तो कताअी आदि शिक्षाक्रमके केवल अंग ही नहीं, बल्कि शिक्षाके वाहन बन जायंगे। बुनियादी तालीम अगर जड़ पकड़ ले, तो हमारी अिस पीड़ित भूमिमें खादी अवश्य सार्वत्रिक और अपेक्षाकृत सस्ती हो सकती है।

हरिजनसेवक, २१-१०-'३९

सूची